



अठारहवीं शताब्दी के  
ब्रजभाषा काव्य में  
प्रेमाभक्ति

© गीमनी बमलेग भवत्पी ६८

प्रथम संस्करण अगस्त ६८

प्रकाशक अन्तर प्रकाशन प्रा० लिमिटेड  
२/३६ अन्तारी रोड वरिपागत्र विल्ली ६

मुद्रक प्रिन्समन रोहताक रोड नई दिल्ली ६

आवरण मुनदेश दुग्गल

मूल्य पञ्चीस रुपये



अक्षर प्रकाशन प्रा० लि०

डॉ० देवीशकर अवस्थी

अठारहवीं शताब्दी के

बुजर्भाषा काव्य में

प्रेमात्मिक

आगरा विश्वविद्यालय की पी एच० डी०  
उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध



## प्रकाशकीय

हिन्दी के तेजस्वी आलाचक डा० दबींगकर अवस्थी का यह गाय प्रबंध कुछ अनिवाय कारणावश विनम्व स प्रकाशित हो रहा है। स्कूल-दुघटना न उन्हें आज हमारे बीच से उठा लिया है और व इसे पुस्तकाकार देखने का नहीं है। अमर' पर उनका स्नेह और सद्भाव सदा रहे हैं। उनकी अनुपस्थिति कभी न भर सकनेवाला घाव है।

नेकिन शोध और विनयण की जिस परम्परा को उन्होंने समृद्ध-अमय किया है उसकी उत्कृष्ट उपनिधि व रूप म प्रस्तुत शोध-ग्रन्थ का प्रकाशित करते हुए अमर विनम्र गव का अनुभव करता है।

—

# अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय मध्यकालीन भक्ति नया आन्दोलन और अग्रणी-  
व्यक्तित्व

उत्तर भारत में भक्ति का नया आन्दोलन १७

सूफी सम्प्रदाय सक्षिप्त इतिहास तथा तत्व-दर्शन ४६

द्वितीय अध्याय भक्ति विवेचन

भक्ति के तत्व ६१

तृतीय अध्याय उज्ज्वल रस मीमांसा

मधुर भाव का विकास वृष्टभूमि स्थित विविध तत्व ११३

चतुर्थ अध्याय प्रेमाभक्ति का साधना-दर्शन

लीला-तत्व का परिप्रेक्ष्य १६१

गोडीय वष्णव तत्व वाद की रूपरेखा १६१

ब्रजलीला एवं निकुंज लीला १६४

हरिदासी एवं राधावल्लभीय सम्प्रदाय का अन्तर २१८

रामभक्ति साहित्य में रसोपासना का स्वरूप २४६

गुप्त सम्प्रदाय में उपास्य लीला, धाम परिवार एवं

उपासना भाव की धारणा २६२



ऊपर उल्लिखित सभी प्रयोगों में देखा जा सकता है। प्रस्तुत प्रबन्ध में प्रामाणिकता का अभिव्यक्ति रूप इन सम्प्रदायों एवं इन सम्प्रदायों के साहित्य प्रामाणिकता का मूल्य रक्षक अधिक से अधिक तटस्थ एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण में इस साहित्य पर विचार किया गया है। जहाँ पर पारम्परिक प्रभावा की विवेचना की गयी है वहाँ भी उस प्रभाव ग्रहण की प्रक्रिया के स्वरूप या परिणाम पर ही विचार हुआ है। हमने किसी को श्रेष्ठ या अपेक्षाकृत अमहत्त्वपूर्ण सिद्ध करना नहीं चाहा। पर इसका तात्पर्य यह भी नहीं है कि केवल तथ्यों का विवरण हुआ है अज्ञान नहीं। यथास्थान प्रामाणिकता के इन विविध सम्प्रदायों के प्रत्येक एवं महत्त्व का मूल्यांकन भी होता गया है। तथ्यों की पुनर्व्यख्या के साथ ही पुनर्मूल्यांकन भी प्रस्तुत प्रबन्ध में प्राप्त होगा। इस प्रकार जहाँ एक ओर प्रसंगत प्रामाणिकता पर ही आलोचना पुनः की जायेगी वहाँ दूसरी ओर भक्ति साहित्य को समझने के लिए समुचित परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत किया गया है, वहीं मुख्य रूप से १६वीं शताब्दी के साहित्य का एक नितान्त उपेक्षित अंग भी उदभासित हुआ है। हिन्दी साहित्य का इतिहास का प्रत्येक विद्वान् जानता है कि सन् १७०० से १८०० तक का काल रीतियुग है। इस प्रकार प्रस्तुत प्रबन्ध के उद्दिष्ट अध्ययन की काल-सीमा रीतियुग का पूर्वार्ध है। प्रबन्ध के माध्यम से इस तथ्य को उदघाटित किया गया है कि तथ्यावधि रीतियुग में सज्जन का एक बड़ा क्षेत्र ऐसा भी था जो रीति का बंध से बाहर था। इसी प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि प्रामाणिकता का महत्त्व निसा भी अथवा रीतिवाच्य की अपेक्षा कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। बलि बहना या चान्द्रिका कि इस युग के साहित्य के माध्यम से भक्तिकालीन प्रवृत्तियों का रीतिकाल में सङ्गम होता है। इस प्रकार प्रस्तुत प्रबन्ध में गौण भक्तिकाल एवं रीतिकाल के साहित्यों के पारम्परिक प्रतिष्ठा एवं प्रतिस्पर्धा के अध्ययन की दिशा को भी संकेतित करता है।

### प्रबन्ध नियोजन एवं अध्ययन विधि

प्रबन्ध का नियोजन इस दृष्टि से करने का प्रयास किया गया है कि पीछे उल्लिखित नवीनताओं एवं दृष्टिकोणों की उसमें रक्षा हो सके तथा उनका रूप उभर सके।

प्रबन्ध का प्रथम अध्याय गोध ग्रन्थों का सामान्य परिपाटी से सम्भवतः कुछ भिन्न सा प्रतीत होगा। बलिकाल से लेकर १६वीं शताब्दी तक भक्ति का विकास सूचित करने के स्थान पर इस स्थापना को प्रारम्भ में ही स्वीकार कर दिया गया है कि भक्ति की पुरानी भावधारा १५वीं १६वीं शताब्दियों में उत्तम भारत में एक नये आन्दोलन के रूप में प्रकट होती है। इस भक्ति की प्रथम सम्बन्धी

# अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय मध्यकालीन भक्ति नया आन्दोलन और अग्रणी  
व्यक्तित्व

उत्तर भारत में भक्ति का नया आन्दोलन १७

मूफ़ी सम्प्रदाय सन्धिपन इतिहास तथा तत्त्वज्ञान ४६

द्वितीय अध्याय भक्ति विवेचन

भक्ति के तत्त्व ६१

तृतीय अध्याय उज्ज्वल रम मीमांसा

मधुर भाव का विकास पृष्ठभूमि स्थित विविध शाय ११३

चतुर्थ अध्याय प्रेमाभक्ति का साधना-दान

लीला-तत्त्व का परिप्रेक्ष्य १६१

गोडीय ध्वणव तत्त्व धाद की रूपरत्ना १६१

ब्रजलीला एवं निकुंज लीला १६४

हरिदासी एवं राधावल्लभस्य सम्प्रदाय का अन्तर २१८

रामभक्ति साहित्य में रसोपासना का स्वरूप २४६

गुरु-सम्प्रदाय में उपास्य लीला धाम परिवार एवं

उपासना भाव की धारणा २६२



# अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय मध्यकालीन भक्ति नया आन्दोलन और अग्रणी-  
व्यक्तिरत्न

उत्तर भारत में भक्ति का नया आन्दोलन १७

सूफी सम्प्रदाय संक्षिप्त इतिहास तथा तत्त्व-दर्शन ४६

द्वितीय अध्याय भक्ति विवेचन

भक्ति के तत्व ६१

तृतीय अध्याय उज्ज्वल रस मीमांसा

मधुर भाव का विकास पृष्ठभूमि स्थित विविध तत्व ११३

चतुर्थ अध्याय प्रेमाभक्ति का साधना-रूप

लीला-तत्व का परिचय १६१

गोपीय-वर्णन तत्व का रूपरेखा १६१

ब्रजलीला एवं निकुंज लीला १६४

हरिनामी एवं राधावल्लभिय सम्प्रदाय का अन्त २१८

रामभक्ति साहित्य में रामोपासना का स्वरूप २८६

गुप्त-सम्प्रदाय में उपास्य लीला पाम परिष्कार एवं

उपासना भाव का धारणा २६२

पचम अध्याय विभिन्न भक्ति-सम्प्रदायों का अठारहवीं शती का  
ब्रजभाषा प्रमाभक्ति-काव्य

अठारहवीं शती में अठारहवीं शती के ब्रजभाषा साहित्य

पदभूमि और सक्षिप्त रूपरेखा २७३

हरिदासी सम्प्रदाय का अठारहवीं शती का ब्रजभाषा काव्य २८२

तिलक सम्प्रदाय का अठारहवीं शती का साहित्य ३३५

अठारहवीं शती का राम भक्ति का ब्रजभाषा साहित्य ३३७

प्रणामी सम्प्रदाय के कवि ३६८

षष्ठ अध्याय अठारहवीं शती के ब्रजभाषा प्रमाभक्ति काव्य का  
साहित्य विश्लेषण और मूल्यांकन

प्रमाभक्ति काव्य की तीन परम्पराएँ ४०१

उपसंहार ४६४

(क) शब्द सक्षिप्त सूची ४७३

(ख) सहायक ग्रन्थ सूची

# शोध-प्रबन्ध की प्रस्तावना

हिन्दी का भक्ति साहित्य अपने अविद्य एव सम्पन्नता के कारण पाठक का ध्यान सहज ही आकर्षित कर लेता है। मूल में भक्ति का भाव सुरक्षित रखते हुए भी यह साहित्य नाना वखच्छटायाँ से युक्त रहा है। भक्ति के मूल में प्रेम की जो भावना सतत विद्यमान रही है, वह भी इस साहित्य में अनेक रूपाकार ग्रहण करती है। विद्वानात् प्रेम के इन प्रकारों की आरंभ ध्यान तो निया है पर एक मात्र उन्हें ही केन्द्र बनाकर अध्ययन नहीं किया गया। प्रेमाभक्ति के बहुत से सम्प्रदाय एवं महत्त्वपूर्ण कवि एक लम्बे समय तक उपक्षिप्त ही रह। डा० दान दयानु गुप्त ने 'अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय' में सर्वप्रथम जिस विशेष अध्ययन दिना का उदघाटन किया था उस दिना में चलने के लिए लगभग एक दशक तक अनुमति प्राप्त पथिक ही नहीं मिले। पर ठीक दस वर्ष बाद डा० विजयद्र स्नातक का महत्त्वपूर्ण शोध प्रबन्ध 'राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ का ही सम सामयिक दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रकाशन डॉ० भगवती प्रसाद सिंह का 'राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय' है। डा० सिंह ने एकदम उपक्षिप्त पड़ी हुई एक साहित्य धारा की ओर अध्येताओं का ध्यान खींचा। डा० स्नातक एवं डा० सिंह के इन अध्ययनों से सम्प्रदाय सम्बन्धी अध्ययन को नयी प्रेरणा मिली। डा० बन्दीनारायण श्रीवास्तव ने रामानन्द सम्प्रदाय डा० गोपाल दत्त गर्मा ने हरिदासी सम्प्रदाय तथा डा० नारायण दत्त गर्मा ने निम्बार्क सम्प्रदाय सम्बन्धी शोध-कार्य भी इसी बीच पूरे किया। कुछ अन्य सम्प्रदायों पर भी कार्य अभी हो रहा है। अध्ययन के इस परिमाण ने तुलनात्मक अध्ययन की दिशा का भी बल दिया। डा० गणेश बिहारी गोस्वामी ने इन सम्प्रदायों के एक पक्ष विशेष सखीभाव को लेकर अपना अध्ययन प्रस्तुत किया। अध्ययन की दिनाओं की इस सक्षिप्त रूपरेखा से यह स्पष्ट है कि प्रेमाभक्ति के सम्प्रदायों पर अलग अलग कुछ काम हुआ और किसी एक पक्ष विशेष पर तुलनात्मक ढंग से विचार करने का प्रयास भी हुआ, परन्तु महत्त्वपूर्ण होते हुए भी इन शोध कार्यों में एक बात खटकने वाली प्रतीत होती है। अपने अपने सम्प्रदाय विशेष या पक्ष विशेष (यथा सखी भाव) को ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध करने का आग्रह

उपर उल्लिखित सभी प्रथम देखा जा सकता है। प्रस्तुत प्रबन्ध में प्रेमाभक्ति का अभिव्यक्ति रूप इन सम्प्रदायों एवं इन सम्प्रदायों के सन्तों प्रेमाभक्ति को केंद्र में रखकर अधिक से अधिक तटस्थ एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण में इस साहित्य पर विचार किया गया है। जहाँ पर पारम्परिक प्रभावों की विवेचना की गयी है वहाँ भी उस प्रभाव ग्रहण की प्रक्रिया के स्वरूप या परिणाम पर ही विचार हुआ है। हमने किसी को श्रेष्ठ या अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण सिद्ध करना नहीं चाहा। पर इसका तात्पर्य यह भी नहीं है कि केवल तथ्यों का निरूपण हुआ है प्राक्कन नहीं। यथास्थान प्रेमाभक्ति के इन विविध सम्प्रदायों के प्रत्येक महत्त्व का मूल्यांकन भी हाता गया है। तथ्यों की पुनर्जाँच का साथ ही पुनर्मूल्यांकन भी प्रस्तुत प्रबन्ध में प्राप्त होगा। इस प्रकार जहाँ एक ओर प्रसंगत प्रेमाभक्ति पर ही आलोचक पुत्रों केन्द्रित कर हिन्दी के भक्ति साहित्य को समझने के लिए समुचित परिप्रसंग प्रस्तुत किया गया है वहीं मुख्य रूप से १८वीं शताब्दी का साहित्य का एक नितान्त उपेक्षित अंग भी उद्भासित हुआ है। हिन्दी साहित्य का इतिहास का प्रत्येक विद्यार्थी जानता है कि सन् १७०० से १६०० तक का काल रीतियुग है। इस प्रकार प्रस्तुत प्रबन्ध के उद्दिष्ट अध्ययन की काल सीमा रीतियुग का पूर्वार्ध है। प्रबन्ध के माध्यम में इस तथ्य का उद्घाटित किया गया है कि तय्यकथित रीतियुग में सज्जनों का एक वर्ग क्षय हुआ भी था जो रीति का यम बाहर था। इसी प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि प्रेमाभक्ति का वृत्तित्व किसी भी अर्थ में रीतिकाल की अपेक्षा कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। बल्कि कहना या चाहिए कि इस युग के साहित्य के माध्यम से भक्तिकालीन प्रवृत्तियों का रीतिकाल में सन्तर्पण होता है। इस प्रकार प्रस्तुत प्रबन्ध गौरवत भक्तिकाल एवं रीतिकाल के साहित्यों के पारस्परिक प्रतिमानों एवं प्रतिप्रतिक्रियाओं के अध्ययन की दिशा को भी संकेतित करता है।

### प्रबन्ध नियोजन एवं अध्ययन विधि

प्रबन्ध का नियोजन इस दृष्टि से करने का प्रयास किया गया है कि पीछे उल्लिखित नवीनताओं एवं दृष्टिकोणों की उत्तम रक्षा हो सके तथा उनका रूप उभर सके।

प्रबन्ध का प्रथम अध्याय 'गोध ग्रन्थों की सामान्य परिपाटी से सम्भवतः कुछ निम्न सा प्रतीत होगा। बल्कि काल से लेकर १६वीं शताब्दी तक भक्ति का विकास सूचित करने के स्थान पर इस स्थापना को प्रारम्भ में ही स्वीकार कर लिया गया है कि भक्ति की पुरानी भावधारा १५वीं १६वीं शताब्दियों में उत्तर भारत में एक नये प्राक्कन के रूप में प्रकट होती है। इस भक्ति की प्रथम सम्बन्धित

विशेषता का उल्लेख करत हुए उन पाच परम्पराया की ओर (पूर्वी भारत की महायान तांत्रिक भक्ति दक्षिण भारत की झालवार नायनार भक्ति पच्छिमात्तर भारत से आई हुई सूफी प्रेम भक्ति प्रेम-नाय की साहित्यिक परम्परा मध्य-राज्य की स्मान उत्तरतावानी विचारधारा) सबेन मात्र किया है जिनके मिलन एव प्रभाव की छाया क तल यह भक्ति विकसित हुई है । इसी स्थल से भक्ति क विकास की प्रक्रिया का भी एक भिन्न स्तर पर समझन की चेष्टा की गयी है । मन्थकान वीरपूजा का युग था, व्यक्तिया की कद्र बनाकर ही जन मानस गतिगोल होना था । मामती आत्माों वाल वीरपूजा क युग म कुछ व्यक्ति महत्त्वपूर्ण हो जात हैं एव अन्ध जन उनका ही अनुसरण करत हैं । बष्णव आचार्य न जब महत्तम व्यक्तिया का परात्पर तत्त्व का आवेग रूप माना था तब क वस्तुन वीरपूजा-युग क आदर्शों का ही गाम्त्र मिद्धात द रह थ । अस्तु प्रथम अध्याय म ही भक्ति क्षेत्र के इन महत्तम व्यक्तिया की जीवनी रचनाए मिद्धान तथा सम्प्रदाय प्रतिष्ठापना क विवरण उपस्थित किय गय हैं । इन विवरण का देन समय भी गुप्तक तथा क वगन या उद्घाटन की अपेक्षा उन अज्ञा का अधिक उभारने का प्रयत्न रहा है जिनम कि उनक महत्त्व एव काय की गुम्ना का रूप स्पष्ट हा सक । बहुधा जान तथा की भी नयो याम्या दन की चष्टा की गयी है । सूफीमन किसी एक व्यक्ति का कद्र बनाकर आग नही बन्ना उसक विकास भारत प्रवेग एव भारत म प्रसार का समिप्त विवरण भी लिया गया है । अध्याय क अन्तिम भाग म विविध भक्ति सम्प्रदाया क पारम्परिक आत्मान प्रदान की लिया का सबत प्राप्त हागा । इस प्रकार सम्पूर्ण अध्याय भक्ति विवेचन क निय सामान्य पृष्ठभूमि उपस्थित करता है तथा उन प्रेम लिया की ओर इगित भी करता है जिम आर कि भक्ति का बनाव ग रहा था ।

विकास प्रक्रिया के हम स्पष्टीकरण क पश्चात द्वितीय अध्याय म भक्ति क स्वरूप निर्धारण का प्रयास किया गया है । दीधकान यापी भक्ति का सकुन भाव अनेकानक परिभाषाया द्वारा व्याख्यान है । अत इस अध्याय क प्रथम भाग म भक्ति क भूत म स्थित विभिन्न नत्वा का विन्नेपण किया गया है । द्वितीय भाग के प्रारम्भ म भक्ति विवेचका द्वारा विवेचित निय गय विभिन्न भक्ति प्रकारों का उपस्थित करने ह्य विभाजक रखाया को स्पष्ट करन का प्रयत्न है तथा मध्य भाग म साधनाक्रम-सम्बन्धी विचारा का विन्नेपण है । प्रकारों की स्पष्टता स्पष्ट करन क निए बर्नानिक ढग पर चाटों के उपभाग द्वारा स्पष्टीकरण हुआ है । इस अध्याय क अन्त म गौतीय बष्णव झालकारिका द्वारा विवेचित पञ्चभक्ति रसा का स्वरूप बतान ह्य विभिन्न सम्प्रदाया म उनकी स्थिति की मोमासा भी है ।

पन्त अध्याय क प्रारम्भ म ही हम यह कह आये थे कि भक्ति का नया आत्मान प्रेम की भूमि पर गहा होता है । यह प्रेम मुख्य रूप म मधुर भाव



म परिणत हो जाता है। द्वितीय अध्याय व अन्त म मधुर रस को पच भक्ति भावो म सर्वोत्तम बताया गया है। अत पिछ्छे अध्याय व प्रकृत विवास की दृष्टि से मधुर रस का विवेचन तृतीय अध्याय म हुआ है। इम विवेचन म सभ्ये पह्ने मधुर भाव के विवास की पृष्ठभूमि म स्थित विविध तत्त्वा की सक्षिप्त मोमासा की गयी है। एस ऐतिहासिक रूपरेखा व पञ्चान मधुर रस का स्वरूप स्पष्ट किया गया है। मधुर रस लौकिक शृंगार रस व माय एक करके न दखा जाय एसलिये स्वरूप विन्लेपण व पञ्चात काम और भगवत्प्रम का अंतर भी निरूपित हुआ है। एस रस विवेचन की समाप्ति पर आश्रमिक था कि एसे काव्य गाम्भीर्य वसोटी पर परख किया जाय अत भक्ति रस सम्बन्धी धारणा का काव्य गाम्भीर्य व ऐतिहासिक और सद्भातिक आधार पर विवेचन इसी अध्याय म हुआ है। परन्तु रस सम्बन्धी गौरीय वपणवो की मायता प्रत्येक भक्ति सम्प्रदाय को माय नहीं है। अत तृतीय अध्याय का अन्तिम भाग गौरीय वपणवो नित्यविहा रोपासको रामोपासका निगुणवादिया एव सूक्तियो व प्रम रस सम्बन्धी दृष्टि कोणा का अंतर एव इस अंतर के आधारभूत कारण स्पष्ट करन म प्रयुक्त हुआ है।

समस्त समुलोपासक सम्प्रदाय प्रभु लीला के तत्त्व दर्शन पर विवक्षित हुए हैं। एस नीता-तत्त्व का ऐतिहासिक परिप्रक्ष्य म उपस्थित कर भक्ति काल म उससे स्वरूप एव महत्त्व का निर्धारण चतुर्थ अध्याय व प्रारम्भ म ही हमन करना चाहा है। परास्पर-तत्त्व की नीता का दर्शन जान एव आस्थात्मन प्रत्येक वपणव का काम्य है। परन्तु इमन वाच अनक प्रश्न उठने हैं—उपास्य का स्वरूप क्या है? यन्ति उपास्य मुक्त है तो प्रयक का स्वरूप गण तथा पारस्परिक सम्बन्ध क्या है? एन दोना म प्रश्न कौन है? भक्त पर अनुग्रह किसका होता है? फिर एनकी नीताए कौन मी हैं—पुराण गार्हन वरिणत या और कोई? य नीताए कहाँ पर होता हैं उस घाम का स्वरूप गुण एव प्रभाव क्या है? नीता म भाग एन वाच परिवर म कौन कौन हाते हैं एव उनक नाम गुण रूप किया तथा सम्बन्ध क्या हात है? मानक व निय इत सार विस्तार म क्या करणाय है? एन प्रश्ना का उत्तर विविध सम्प्रदाया म मत वभिन्न प्राप्त होता है। यह भा स्मरणीय है कि समस्त प्रभाभक्ति का काय सृजन जाला सम्बन्धी एन धारणाया पर ही प्राकृत है बिना इन धारणाया के सम्यक-परिशीलन के एम साहित्य व मम का टाक स ग्रहण नहीं किया जा सकता। एसी कारण चतुर्थ अध्याय म विभिन्न नीतागायक भक्ति सम्प्रदाया व उपास्य घाम परिवर लीला एव उपासना सम्बन्धी धारणाया का सम्यक विन्लेपण हुआ है। विन्लेपण करते समय विभिन्न सम्प्रदाया व पृथक्तामूक तत्त्वा अथवा सद्भाताया की और तथा स्थान उचित करन का प्रयास भा गया है। इस प्रकार इस बडे एव अत्यधिक

महत्त्वपूर्ण अध्याय के मध्य एकसूत्रना की रक्षा की गयी है। इस अध्याय में कुछ बातें और भी उल्लेखनीय हैं। हरिणामी एव राधावल्लभोय सम्प्रदाया में इन प्रश्ना पर मतभेद इतना कम है कि उन्हें अलग अलग विवचित करने से प्रबन्ध का बलवर अतिरिक्त रूप से अवश्य बर्ण्य जाता पर उससे लीला सम्बन्धी किसी नवीनता का संकेत न होता। इसी कारण उन्ही बातों के लिए नये उद्धरण जुटाने के स्थान पर दोना सम्प्रदाया में जो यत्किंचित अंतर है उस ही विवचित करने का प्रयत्न प्राप्त होगा। सुक सम्प्रदाय की विवचना भी विशेष दृष्टिकोण से की गयी है। १८वीं गती में निगुण एव सगुण सम्प्रदाया में समन्वय की एक तीव्र प्रक्रिया दृष्टिगोचर होती है। सुक सम्प्रदाय प्रणामी-सम्प्रदाय आदि इसी समन्वयवादी दृष्टिकोण की उपज हैं।

सुक-सम्प्रदाय की विवेचना समन्वय की इस प्रक्रिया को स्पष्ट करने में सहायक होगी। भारतीय भक्ति भावना को सूफिया ने भी बहुत प्रभावित किया है। हमने इस बात के संकेत किये हैं कि सगुणापासक की विरह को महत्त्व देने वाली धारणा सूफिया से प्रभावित है तथा निगुणमागिया का प्रेम दान वस्तुतः सूफिया का ही है—अतः इस अध्याय के अंत में सूफी प्रेम दान की सन्धिपक्ष रूपरेखा भी उपस्थित की गयी है।

लीला सम्बन्धी इन धारणाओं के आधार पर विभिन्न सम्प्रदाया में प्रभूत साहित्य की रचना हुई है। इस साहित्य का लिखने वाले सदैव ऊँची श्रेणियों के या उच्च पदस्थ लोग ही नहीं थे। वह सारा साहित्य सुरक्षित भी नहीं है। सम्भवतः सदैव सुरक्षित रखने के अभिप्राय से यह लिखा भी नहीं गया। जो साहित्य सम्प्रदाया के उत्तराधिकारियों के पास हैं भी, वह गायबर्ती के लिए लगभग अनुपलब्ध रहता है। अविश्रामा एव सन्निवृत्ति के कारण इन ग्रंथों के दान भी कठिन हो जाते हैं। कभी कभी ग्रंथ या रचनाएं प्राप्त हो जाते हैं परन्तु स्पष्ट संकेतों के अभाव में उनका बाल निष्पन्न अत्यंत दुर्लभ हो जाता है। इन कठिनाइयों के होते हुए भी पंचम अध्याय में निम्बाक बल्लभ चतुर्थ हरिदास राधावल्लभ लिखित रामोपासक निगुण मतानुयायी एव सूफी सम्प्रदायो के अस्सी से ऊपर कवियों का परिचय एवं रचनाओं का विवरण हमने उपस्थित किया है। इन कवियों में जो अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान के अधिकारी हैं उनका व्यक्तित्व एवं साहित्य के विवरण तथा मूलशक्ति को अधिक स्थान दिया गया है। इस प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि प्रस्तुत अध्याय के एक उप विभाग में रीतिकाल के सोलह कवियों की सूची भी दी गयी है। हमने इन कवियों को मुख्यरूप से रीति परन्तु गौण रूप से प्रेमाभक्ति का कवि माना है। इस उप विभाग की भूमिका एवं मुख्य कवियों के विवचन में इनके द्वय व्यक्तित्व का प्रकटन करते हुए एवं नये दृष्टिकोण से इनकी मानसिक स्थिति एवं सृजन

प्रक्रिया को समझने का प्रयास भी है। इस प्रकार सब मिलाकर लगभग सौ कवियों को इस अध्याय में उपस्थित किया गया है।

पष्ठ अध्याय में इस उपलब्ध प्रामाणिक-साहित्य के विश्लेषण और मूल्यांकन की चेष्टा है। इस विश्लेषण में भी कृति का आंतरिक अध्ययन (इंट्रिजिक स्टडी) करने वाली समीक्षा विधि का अपना ही प्रयास रहा है। केवल उस अलंकार छंद गत गति आदि के बंध बंधाय चोखटा में डालकर उस साहित्य को परखने की गली स्वीकार नहीं की गयी है। हम लगता है कि इन स्थूल चोखटा में किसी भी साहित्य को डालकर उसे महत्वपूर्ण बताया जा सकता है। वास्तव में किसी भी रचना में अभि यजना के उपादान एवं मूल वस्तु वस्तु एक साथ धुल मिले रहते हैं व एक साथ मिलकर ही रचना को प्रभविष्णु बना पाते हैं। इसी कारण हमने आलोच्य साहित्य की भाव सम्पदा का विश्लेषण करने हुए उस के साथ ही काव्य सौंदर्य का भी विश्लेषण किया है। शास्त्रीय विधि के भेदा प्रभेदों में न जाकर भी मूलतः उस दृष्टि का आग्रह इस विश्लेषण में बराबर बना रहा है। प्रामाणिक की तीन स्पष्ट परम्परा—ब्रजनीला गान निकुंज लीला गान एवं प्रेम प्रतीक भावधारा का अलग अलग विवचन करने हुए भी उनकी पारस्परिक स्थितिया का तुलनात्मक विश्लेषण यहाँ पर हुआ है। इसी अध्याय में मूल्यांकन करते समय पूर्ववर्ती भक्तिकाल एवं समसामयिक रीतिकाल के साहित्य का परिपाठ में रखकर तुलनात्मक प्रविधि का अपनाया गया है। कोई भी रचना अपने समसामयिक कृतित्व के माध्यम से ही काल के साथ ही पूर्ववर्ती परम्परा की अपने समय तक की प्रतिमानी भी होती है। इसी कारण मूल्यांकन के प्रसंग में इन दोनों सदमों को ध्यान में रखना आवश्यक हो जाता है। १८ वीं गति के इस प्रामाणिक साहित्य के विश्लेषण एवं मूल्यांकन में अधिकांश सम्प्रदायों के प्रमुख प्रमुख कवियों के कृतित्व को दृष्टिपथ में रखा गया है। इस अध्याय में लगभग ३५ कवियों की रचनाओं के उद्धरण देकर इस सब प्रकार से प्रातिनिधिक बनाने का प्रयास उपनयन होगा।

इस प्रकार उत्तर भारत में भक्ति के नये आंदोलन से उत्पन्न इस साहित्य का अठारहवीं गति तक का परिणतिया प्रभावा सद्भाषितक आग्रहा तथा अठारहवा गति की कृतिया के आकलन के साथ यह अध्याय समाप्त होता है। उपसंहार में प्रस्तुत अध्ययन का विहंगावलोकन करते हुए मुख्य निष्कर्ष अत्यन्त संक्षेप में उपस्थित किया गया है।

प्रथम  
अध्याय

मध्यकालीन भक्ति  
नया आन्दोलन और  
अप्रणी व्यक्तित्व



## उत्तर भारत में भक्ति का नया आन्दोलन

८

विद्वाना न भागवत धम एव भक्ति माग की प्राचानता क पर्याप्त प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत त्रिय हैं ।<sup>१</sup> इस सम्बन्ध में विस्तृत विवचन में न जाकर हम इतना ही कहना चाहते हैं कि भक्ति-भाग का बबल भागवत (वल्गव) धम क साथ एकात्म करक न देखा जाना चाहिए । जब गावत जन बौद्ध तत्र योग आदि सम्प्रदाया की साधना प्रणालिया में भी भक्ति किमो-न किसी रूप में प्रकाशित हानी रही है । हम तगता है कि भक्ति भाव अत मलिला क रूप में इस दग क लाक-जीवन में बराबर प्रवाहित रहा है और अवसर पात ही उसके सोते फूटत रह हैं । पर इतना अवश्य है कि भागवत धम क साथ भक्ति का सम्बन्ध प्रारम्भ से ही अधिक घनिष्ठ रहा है । सम्भवत भागवत धम की लाका-मुखता

१ दानिए—

- (क) आर० जी० भण्डारकर वल्गविवरम गविरम एण्ड माइनर रिलिजस सिस्टिम्स आफ इण्डिया ।
- (ख) बी० क० गोस्वामी भक्ति क्लट इन एगण्ड इण्डिया ।
- (ग) हेमच द्र राय चौधरी मटीरियल्स फार दि स्टडी आफ दि अर्ली हिस्टी आफ दि वल्गव सेक्ट ।
- (घ) आचाय हजारी प्रसाद द्विवेदी सूर-साहित्य ।
- (ङ) डा० मु गौराम गार्ग भक्ति का विकास ।
- (च) बलदेव उपाध्याय भागवत सम्प्रदाय ।
- (छ) परगुराम चतुर्वेदी वल्गव धम ।
- (ज) डा० दीन दयालु गुप्त डा० विजयेद्र रनातक आदि विद्वानो क भक्तिकाल से सम्बन्धित विभिन्न शोध प्रब धो क एतत्संबंधी अध्याय ।

ने उस सदबोध अधिक प्रथम एवं महत्त्व दिया है।<sup>१</sup>

सन् १००० के आसपास से मध्यदेश की स्मार्त आचार परायेण भूमि में आलवारों की भावभक्ति एवं प्रेम प्रतीकवात् आचार्यों के गान्धर्व मिथ्य व्यक्तित्व के सहारे पहुँचते हैं। पूर्वी भारत की महायान भक्ति और तत्र-साधनाया गुह्य उपासनाया के सम्मिलन से विकसित सहजिया से व्यणव-तत्त्व का प्रेम माग एवं परकीयोपासना (जो आगे चलकर गोपाभाव का रूप धारण करती है) भी इसी में आ जन्त है। इसी काल में पश्चिमोत्तर भारत से प्रेम की पीर के गायक सूफी भी इस देश में अपने सिद्धांतात्मा प्रचार करते हैं। तुर्क सुल्तानों के समय इन मूक्तियों के कार्यों की काफी व्यापकता और सफलता प्राप्त हुई थी। इसी समय मुसलमानों के आक्रमण भी हानि हैं और कुछक समय के लिये लगा कि यह दुर्भाग्य गति भारतवर्ष के अष्टतम को कुचल कर रख देगी। ऐसी दशा में इस अनुभव वृद्ध देश के जन का श्रद्धा एवं भक्ति ने इस भावनात के समक्ष खड़ा रह सकने की शक्ति प्रदान की। एक पाचवीं तत्व भी इसी काल में इस परम्परा में आ जुड़ता है। राधा एवं कृष्ण का प्रेम-लीलाया की साहित्यिक परम्परा धर्म भावना के अदर ध्यान पा जाती है और यह लीलावाद उपयुक्त समन्वय से अदभूत प्रेम प्रधान भक्ति का अपूर्व रस निभर बना देता है।

यही पर एक और तथ्य की ओर ध्यान दिला देना उचित होगा कि इस युग की सत्कृति मन्त्रियों को अन्न बना कर बन रही थी। प्रत्येक गाँव एवं मुस्लिम मछाटे बड़े अन्नक मन्दिर विविध देवी श्वताया के हुआ करते थे। ये मन्दिर एक

१ भक्ति के तत्त्वावधारण की प्रारम्भिक स्थिति में विद्वानों ने भारतीय भक्ति भावना के मूल स्रोत खोजने की ओर अपनी रुचि दिलायी थी। विभिन्न विद्वानों ने इस सम्बन्ध में अलग अलग मत निश्चित करन चाहे। ईसाई सामी पगम्बरी द्रविड आदि विचारों को बहूधा भक्ति के मूल में देखा गया। भारतीय विद्वानों का एक वर्ग उसे प्रायः चिन्ता की उपज मानकर बंधों में उसके मूलतत्त्व खोजता रहा। इस सम्बन्ध विषयन से एक ही सिद्धांत पर पहुँचने की अपेक्षा यह अनुभव किया जान लगा कि भक्ति एवं श्रद्धा जैसे भाव प्रत्येक धर्म मत एवं मुसलमान समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान के अधिकारी होते हैं तथा जीवन्त धर्म-साधनाओं में पारस्परिक प्रभाव ग्रहण की प्रक्रिया बराबर चलती रहती है। इसी कारण साम्प्रतिक तत्त्वावधारण में इन पारस्परिक प्रभावों के अध्ययन की ओर रुचि बनी है। आवश्यकता इस बात की है कि विविध सामाजिक सदर्भों को परिपाश्वर में रख कर इन प्रभावों का अध्ययन किया जाय।

प्रकार का विकृतीकरण का द्योतक थे।<sup>१</sup> बौद्ध विहारों में सामूहिक रूप से निवास प्रायः एव पूजन होता था पर इन स्मात मन्दिरों में व्यक्तिगतता एव सामूहिकता का अभाव समन्वय था। उनमें रहता कोई नहीं था पूजन भी व्यक्तिगत था परन्तु उत्सव अथवा श्रद्धा सामूहिक थी। परिणामस्वरूप जब बम्बिनियार विनयाजस मुसलमानों ने बौद्ध विहारों पर आक्रमण किया तो उन विहारों की विनष्टि का साथ ही बौद्ध धर्म को भी साधनिक आघात लगा पर मन्दिरों को तोड़ने का काम भी मुसलमानों ने ही मन्दिरों के निर्माण का काम ताड़ सका और न मन्दिरों पर श्रद्धा रखने वाले जन की श्रद्धा का नष्ट कर सका। यह दृष्ट्य है कि भारत का अधिकांश श्रेष्ठतम मन्दिर इसी युग में बनते हैं। राजुराहो काणाक भुवनेश्वर हलवीह बलूर आदि के मन्दिर ग्यारहवीं शताब्दी के बाद ही बनते हैं।

विश्रम की पद्धतियाँ शताब्दियों तक आते आते तुर्कों के शासन का अन्त दिव्यायी पटन लगता है। मुसलमानों की अजयता को इससे भरा घबरा लगता है तथा इन देश के हिन्दू के मन में मुसलमानों का आतंक उठने लगता है। यह तथ्य हम अथवा अध्यायिक महत्त्वपूर्ण है कि हिन्दुओं में इससे एक नया आगावादी एव उत्साह का जन्म हुआ। इस उत्साह का मध्य ही पन्द्रहवीं-आठवीं शताब्दियों में भक्ति का नवोदय हमें प्राप्त होता है। उपर्युक्त तथ्य हम अथवा भी महत्त्वपूर्ण है कि हिन्दू मुसलमानों के मध्य पारस्परिक बाध भी इस कारण बढ़ता है एव भूषीमत का फलन-बढ़ने या प्रभावित करने अथवा प्रभावित होने का अवसर मिलता है। नये बन मुसलमानों के कारण यह प्रक्रिया और अधिक गति प्राप्त करती है।<sup>२</sup>

यही पर एक और तथ्य याद कर लेना आवश्यक है। बौद्ध धर्म ने अपनी अन्तिम परिणतियों में साक्षात्कार का रास्ता ग्रहण किया था।<sup>३</sup> विशेष रूप से समाज की निम्न श्रेणियों में इससे आध्यात्मिक आकांक्षाएँ उत्पन्न कर

- १ उस समय राजनैतिक शक्ति भी विकेंद्रित थी। हमारा अनुमान है कि इस विकेंद्रित रूप के कारण ही हिन्दुत्व मुसलमानों के भीषण आक्रमण को बरदाश्त करके भी जीवित रह सका। तथा आगे चलकर बणवधर्म के प्रसार में भी इस स्थिति ने सहायता पहुँचायी होगी।
- २ विस्तार से देखिये हिन्दी साहित्य (भारतीय हिन्दी परिचय प्रयाग) में डा० धनारसी प्रसाद सक्सेना लिखित सांस्कृतिक पृष्ठभूमि अध्याय पृ० ५४-५६।
- ३ हिन्दी साहित्य की भूमिका आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी एव सिद्ध-साहित्य डा० धमवीर भारती में विस्तार से इसकी चर्चा की गयी है।



विद्वाना को माय है)। बल्लभ चतुर्थ हिन हरिवं हरिनाम ग्रन्थि के सम्प्रदाय और भाषनाएँ पत्नी पुष्पित पल्लवित हुई। उत्तर भारत में भक्ति प्रसार में चतु सम्प्रदायों के योग के प्रति कुछ अमृतुलित एवं अत्युक्तिपूर्ण दृष्टिकोण रहा है। यह यागदान अपन प्राप्त में एक स्वतंत्र अध्यायन का विषय है। कमनिय विस्तार में न पाकर हम मात्र इतना बताना चाहते हैं कि निम्बाक सम्प्रदाय का छाड़ कर और किसी सम्प्रदाय की ब्रह्म में अत्रस्थिति बल्लभ चतुर्थ ग्रन्थि के पूर्व की प्राप्त नहीं होती। रामानुज की परम्परा का नाम मिलती अवश्य है परन्तु रामानुज के पक्ष में वह एकत्र ही थी तथा रामानुज गुड रामानुजी कितने रहे। यह काफी विवाद की बात है। कुछ लोग तो उन्हें एकदम पृथक् मानते हैं जो रामानुज के साथ उन्हें सम्बन्ध करते भी हैं वे भी स्वतंत्र रूप से क्षेत्र में बाकी उपासना पद्धति आचार-प्रवृत्तियों के माने और मंत्र में उनकी भिन्नता स्वीकार्य है।

निम्बाक के बारे में भण्डारकर<sup>१</sup> परगुराम चतुर्वेदी<sup>२</sup> बन्देव उपाध्याय ग्रन्थि सभी विद्वानों ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया है कि उनके सम्प्रदाय का प्रसार राज प्रयोग (राजस्थान भी) तथा बंगाल में ही अधिक हुआ। दक्षिण में यह नितांत नगण्य रहा। बन्देव उपाध्याय ने तो स्पष्ट सक्त किया है —

- १ ब्रज प्रांत में कृष्ण वंशी राजाओं के राजत्व काल (ईसा की प्रथम शताब्दी) में जो बहुधा बौद्ध मतावलम्बी थे भागवत धर्म बहुत प्रियतम था। कृष्ण-वंशी राजा कनिष्क ने बौद्ध धर्म को ही प्रोत्साहन दिया। उसके अनन्तर गुप्त वंश के राजत्व काल में बणव धर्म फिर प्रबल हुआ। हूणवदन ने बौद्ध धर्म को अपना कर उसी का प्रचार किया। उस समय एक प्रकार से ब्रज में भागवत धर्म का लोप हो गया। दक्षिण भारत से आनवाले आचार्यों द्वारा बणव धर्म के प्रचार ने ब्रज प्रांत में फिर से बौद्ध और शैव धर्मों को हटा कर भागवत धर्म का उत्थान कर दिया। चार आचार्यों में से आचार्य मध्वाचार्य विष्णुस्वामी तथा निम्बाकचार्य विष्णु के कृष्ण रूप के उपासक थे। इसलिये चारों आचार्यों के मतों में से ब्रजमूर्ति में कृष्ण की जन्मभूमि होने के कारण मध्वाचार्य विष्णुस्वामी और निम्बाक सम्प्रदायों की भक्ति पद्धति का ही १५ वीं शताब्दी तक विशेष प्रचलन रहा।—डॉ० दीन दयालु गुप्त अष्टाध्याय और बल्लभ सम्प्रदाय प्र० पृ० ३६४०

२ बणवधर्म शिवधर्म एण्ड माइनर रिलिजस सिस्टिम्स पृ० ६३।

बणव धर्म पृ० ८५

४ भागवत सम्प्रदाय पृ० १४

'उत्तर भारत म विशेषकर मयुरा मडल म ही इन बध्णवो की स्थिति निम्बाक का सम्बन्ध मण्डल म ही जोडती है।' हम समझते हैं कि यह बात काफी मट्त्वपूर्ण है। यह सम्प्रदाय उत्तर भारत की ही देन है। रामानुज के सिद्धांत के आधार<sup>१</sup> पर उत्तर भारत के अनुकूल विकसित इस सम्प्रदाय को दक्षिण के साथ जोडना उचित नहीं है। भले ही निम्बाक दाक्षिणात्य रहे हों पर उनका सम्प्रदाय उसी प्रकार उत्तर भारत का है जस दाक्षिणात्य बल्लभ का सम्प्रदाय भी उत्तर का ही था। हम कहना चाहते हैं कि निम्बाक और रामानन्द ये दो प्रारम्भिक उत्तर का ही हैं। हम कहना चाहते हैं कि निम्बाक और रामानन्द ये दो प्रारम्भिक कक्षत्र म शकराचार्य पहले ही सेतु बन चुके थे। आगे बल्लभाचार्य एव चतुर्थ महाप्रभु ने अपने को विष्णुस्वामी एव माध्व से संबन्धित किया है। पर यह केवल प्रामाणिकता के लिए है अथवा जसा कि डा० विजयेन्द्र स्नातक ने भी कहा है कि नये सम्प्रदाय चतुर्थ सम्प्रदायो से अपनी प्रतिभा म नितान्त पृथक हैं।<sup>२</sup> प्रदेश विशेष की स्थिति के साथ भक्ति साधना म कुछ विभेद हो जाना असम्भव या अनुचित भी नहीं है। आगे हम उत्तर भारत के प्रमुख बध्णवाचार्यों का सक्षिप्त जीवन विवरण उपस्थित कर रहे हैं। इस विवरण से उस समय की साधना दिशा के परिचय के साथ ही यह भी ज्ञात हो सकेगा कि इन लोगो ने कितना महान् काय संपादित किया था।

निम्बाकाचार्य—यद्यपि ऊत्पापह होने के बाद भी अतक निम्बाक का समय निश्चित नहीं हो पाया है। एक और बलदेव उपाध्याय तथा निम्बाक मतानुयायी अनेक आधुनिक विद्वान उ ह बध्णव सम्प्रदाया म प्राचीनतम मानते हैं।<sup>३</sup> दूसरी ओर भण्डारकर ने (और उनके ही अनुरूप परशुराम चतुर्वेदी दीनदयानु गुप्त हरबग लाल गर्मा आदि हिन्दी के विद्वानो ने भी) उनका समय ११६२ ई० के आसपास रामानुज के बाद माना है। इनकी भक्ति पद्धति पर रामानुज का स्पष्ट प्रभाव भण्डारकर को माय है।<sup>४</sup> यदि राधा नाम को उन्होंने सबसे पहले प्रमुसता दी है तो उससे यह सूचित होता है कि निम्बाक बहुत पहले

१ वही प ३१४।

२ आर० जी भण्डारकर व० श प० ६३।

३ डॉ० विजयेन्द्र स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य प० ५२।

४ भागवत सम्प्रदाय प० ३१६।

५ भण्डारकर व० श० प० ६२ ६३।

विष्णु का माय है)। बल्लभ चतय हित हरिवंश हरिणाम ग्रन्थि के सम्प्रदाय और साधनाएँ यही पुष्पित पल्लवित हुई। उत्तर भारत में भक्ति प्रचार में चतुसम्प्रदायों का योग के प्रति कुछ असंतुष्टि एवं असंतुष्टिपूर्ण दृष्टिकोण रहा है। यह योगदान अपने आप में एक स्वतंत्र अध्ययन का विषय है। इसलिये विस्तार में न जाकर हम मान इतना कहना चाहते हैं कि निम्बाक सम्प्रदाय का छाँट कर और किसी सम्प्रदाय की ब्रज में अवस्थिति बल्लभ चतय ग्रन्थि के पूर्व की प्राप्त नहीं होती। रामानुज की परम्परा काँगड़ा में मिलती अवश्य है परन्तु रामानुज के पहले वह एकदम क्षीण थी तथा रामानुज शुद्ध रामानुजी कितने रहें यह काफी विवाद की बात है। कुछ लोग तो उन्हें एक ही पृथक् मानते हैं जो रामानुज के साथ उन्हें सम्बन्धन करते भी हैं वे भी बवल दान के क्षेत्र में बाकी उपासना पद्धति आचार-व्यवहार निकल माला और मंत्र में उनकी भिन्नता स्वीकार्य है।

निम्बाक के बारे में भण्णारकरों पर गुराम चतुर्वेदों<sup>१</sup> ब्रजदेव उपाध्याय ग्रन्थि सभी विष्णुओं ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया है कि उनके सम्प्रदाय का प्रचार ब्रज प्रदेश (राजस्थान भी) तथा बंगाल में ही अधिक हुआ। दक्षिण में वह नितांत नगण्य रहा। ब्रजदेव उपाध्याय ने तो स्पष्ट सकेत किया है—

- १ ब्रज प्रांत में कुषाण बनी राजाओं के राजत्व काल (ईसा की प्रथम शताब्दी) में जो बहुधा बौद्ध मतावलम्बी थे भागवत धर्म बहुत गिथिल था। कुषाण-बनी राजा कनिष्क ने बौद्ध धर्म को ही प्रोत्साहन दिया। इसके अनंतर गुप्त वंश के राजत्व काल में क्षणिक धर्म फिर प्रबल हुआ। हर्षवर्द्धन ने बौद्ध धर्म को अपना कर उसी का प्रचार किया। उस समय एक प्रकार से ब्रज में भागवत धर्म का लोप हो गया। दक्षिण भारत से आनेवाले आचार्यों द्वारा क्षणिक धर्म के प्रचार ने ब्रज प्रांत में फिर से बौद्ध और गव धर्मों को हटा कर भागवत धर्म का उत्थान कर दिया। चार आचार्यों में से आचार्य मध्वाचार्य विष्णुस्वामी तथा निम्बाकार्काचार्य विष्णु के कृष्ण रूप के उपासक थे। इसलिये चारों आचार्यों के मतों में से ब्रजभूमि में कृष्ण की जन्मभूमि होने के कारण मध्वाचार्य विष्णुस्वामी और निम्बाक सम्प्रदायों की भक्ति पद्धति का ही १५ वीं शती तक विनोद प्रचलन रहा।—डॉ० दीन दयालु गुप्त अध्याय और बल्लभ सम्प्रदाय प्र० सं० पृ० ३६-४०

२ क्षणिक धर्म शिविधर्म एण्ड माइनर रिलिजस सिस्टिम्स पृ० ६३।

क्षणिक धर्म पृ० ८५

४ भागवत सम्प्रदाय पृ० १४

“उत्तर भारत म विशेषकर मयुरा मडल म ही इन वपणवा की स्थिति निम्बाक का सम्बन्धन मण्डन म ही जोड़ती है।” हम समझते हैं कि यह बात काफी महत्वपूर्ण है। यह सम्प्रदाय उत्तर भारत की ही दन है। रामानुज क सिद्धांत के आधार पर उत्तर भारत के अनुकूल विकसित इस सम्प्रदाय का दक्षिण के साथ जोना उचित नहीं है। भन ही निम्बाक दक्षिणात्य रह ह। पर उनका सम्प्रदाय उमी प्रकार उत्तर भारत का है जम दक्षिणात्य बलम का सम्प्रदाय भी उत्तर का ही था। हम कहना चाहते हैं कि निम्बाक और रामानुज ये दो प्रारम्भिक सतु हैं जिन्होंने भक्ति के क्षेत्र म दक्षिण और उत्तर को मिलाया है। दान नान क क्षत्र म गवराचाय पहल ह। सतु बन सुक थ। आग बल्लभाचाय एव चैतय महाप्रभु न अपने का विष्णुस्वामी एव माध्व स सवचित किया है। पर यह केवल प्रामाणिकता क लिए है अथवा जमा नि डा० विजयेद्र स्नातक न भी कहा है कि नय सम्प्रदाय चतु सम्प्रदायों म अपनी प्रतिभा म नितान पृथक हैं।<sup>१</sup> प्रदेश विशेष की स्थिति क साथ भक्ति पापना म कुछ विभेद ह। जाना असम्भव था अनुचिन भी नहा है। आग हम उत्तर भारत के प्रमुख वपणवाचार्यों का सक्षित जीवन विवरण उपस्थित कर रहे हैं। इस विवरण म उम समय की माधना शिक्षा क परिचय क साथ ही यह भी बात हो मकेगा कि इन नागाने कितना महान् काय मपादित किया था।

निम्बाकाचाय—यदेण उपापोह हान क वात् भी अब तक निम्बाक का समय निश्चिन नहा ह। पापा है। एक आर बल्लभ उपाध्याय तथा निम्बाक मनानुयायी अनक आधुनिक विद्वान उ ह वपणव सम्प्रदाय म प्राचीनतम मानते हैं। दूसरा आर भण्डारकर न (और उनक ही अनुरूप परशुराम चतुर्वेदी दीनान्यानु गुप्त हरवग लाल गर्मा आदि हिंदी के विद्वान न भी) उनका समय ११६२ ई० के आसपास रामानुज क वात् माना है। इनकी भक्ति पद्धति पर रामानुज का स्पष्ट प्रभाव भण्डारकर का माय है।<sup>२</sup> यदि राधा नाम को उहने सबसे पहल प्रमुखाता नी है ता उमस यह सूचित हाना है कि निम्बाक बहुत पहल

१ वही प० ३१४।

२ आर० जी भण्डारकर व० ग० प० ८३।

३ डॉ० विजयेद्र स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य, प० ५२।

४ भागवत सम्प्रदाय, प० २१६।

५ भण्डारकर व० ग० प० ६२ ६३।

के तनी थे।<sup>१</sup> इस अथ म वे सवप्रथम आचाय अथय हो जान है कि रागाहृष्य की भक्ति उत्तर भारत म उनक द्वारा ही प्रचारित हुई।<sup>२</sup> उनी की गिष्य परम्परा म आगे चलकर हरियाम देव (स० १६०० के आमपाम) न निम्बाक सम्प्रथाय को अत्यधिक उन्नत किया। विद्वाना ने उह वनारी जिल क गिम्पुर ग्राम म उत्पन्न तलग ब्राह्मण माना है। उनके पिता का नाम जगनाथ था तथा माता का सरस्वती। जन्मदिधि बगव गुवन तनीया बताइ जानी है। मध्ययुग चम त्वारोका युग था। हर साधु महात्मा एव महापुरुष क माय अनरु चमत्कारी कथाए जुड जाया करता थी। निम्बाक क साय नी एक कथा जुनी हुई है कि नीम के वृक्ष पर सुदृगन चक्र का इहान ब्राह्मण कर लिया था जिमसे कि कुछ उपासक मूर्धास्त्र के बाद भी भोजन कर सक। तभी स इनका नाम निम्बाक या निम्बादित्य पड गया था। गोवर्धन के निकट इस स्थान का नाम आज भी निम्ब ग्राम है। निम्बाक के दा अथ मुग्न कहे जात है—वर्णन पारिजात मौरभ तथा दगन्नाकी। अस सम्प्रदाय को हम मनक या दवधि सम्प्रदाय भी कहते है। आगे निम्बाक की परम्परा म तीसवें आचाय कर्ण कादमारी न गीता और ब्रह्मसूत्रा पर पुन भाष्य लिखे। ३१ व श्री भट्ट ने हिन्दी म रचना की।<sup>३</sup> तथा ३२ व हरियास देव न अपने सगठन गक्ति के वन पर सम्प्रथाय का अभिनवीकरण भी किया। हरियास देव के महत्वपूर्ण योगदान क कारण इस हरियासी सम्प्रदाय भी कहा जान गया। निम्बाकीय सम्प्रदाय की देन हिन्दी का अत्यन्त महत्व पूण है। आगे चलकर घनानन्द रूप रसिक देव रसिक गोविन्द जसे अष्ट कवि निम्बाक मतानुयायी हुए हैं।

- १ ११ १२ वीं गीता के पूव राधा का उल्लेख दबी क रूप म कहीं नहीं मिलता। यहीं तक कि जयदेव क गीतगोविन्द मे व अत्यन्त मनोहर, मानवीय अनय प्रमिका हैं दबी नहीं। गीत गोविन्द क दशावतार मे कृष्ण क प्रसंग म राधा का उल्लेख नहीं किया गया है।
- २ अगेनु वामे वषभानुजा मुदा, विराजमानामनुहप सीभगाम। सगोसहस्र परिसविता सदा स्मरेम दवीं सकलेष्ट कामदाम। दगन्नाकी ५
- ३ युगल गतक।
- ४ हरियास देव को माधुय उपासना का प्रवक्तक तथा महावाणी का रचनाकार कहा जाता है। पर जसा कि हम आगे निम्बाक सम्प्रदाय को पट्टति एव निम्बाकीय कविया क विवचन क प्रसंग मे बतलावेंगे कि हरियास देव की अपनेभा रूप रसिक जी को महावाणीकार मानना उचित होगा।

कृष्ण की अनुभूति सौभाग्य राधा का निम्बाक मन मामन लाया यह हम सम्प्रदाय की वृत्त देना देना देना है। (यद्यपि यत् वान काफी विद्यात् स्पष्ट है।) पर माधुय भावना का पूरा विद्यात् सभवतः यत् म इम सम्प्रदाय म दृष्टा और वह भी कभी उम मीमा तक नहीं पहुँचा जिस तक सती राधावल्लभीय या गौरीय-वृष्णव सम्प्रदाय म वह पहुँच सका। माधुय के साथ ही प्रय भावा का भी निम्बाक-सम्प्रदाय के आचार्यों न मान लिया है।<sup>१</sup> परन्तु कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति का उपदेश स्वयं निम्बाक न पहले ही दिया था —

नायागति कृष्णपदारविदात

सदयते ब्रह्मणिवादिषदितात ।

भक्तेषुदयोपात्त मुचित्यविग्रहा

वचित्य गतेरवचित्य साग्यात ।

—दण्डलोकी श्लोक ८ ।

परन्तु यही पर हम उक्त विद्यात् की ओर दृष्टि कर देना चाहते हैं जो दण्डाकी का लक्षण है। विद्यात् का एक वग दण्डाकी को निम्बाक-कृत नहीं मानता। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी न भी उक्त १६ वीं श्लोक की रचना होने का सन्देह किया है।<sup>२</sup> दूसरी ओर सम्प्रदाय के विद्यात् तथा १० परशुराम चतुर्वेदी<sup>३</sup> वन्धे उपास्य आदि उक्त निम्बाक-कृत स्वीकार करते हैं। दण्डा ही पत्नी म पुत्र प्रमाणा का अभाव है। परन्तु दण्डा निश्चित है कि इनके वेदान्त-पारिजात सौरभ और दण्डाकी की भावना के मध्य कोई संबंध नात नही हाता। दण्डाकी म राधा और कृष्ण का भक्ति का विह्वल आह्वान है पर वेदान्त पारिजात सौरभ म रमान्त पुष्पात्तम वामुदक आदि नाम ता आते हैं पर कृष्ण का नाम नहीं आता।<sup>४</sup> राधा और कृष्ण की रमपरक लीलाया की गद्य भी इस भाष्य म नही है। परन्तु केवल इसी आधार पर दण्डलोकी को नितात परवर्ती रचना भी नही कहा जा सकता। इस संबंध म और अधिक अनुसंधान की आवश्यकता है। निम्बाक के श्रीकृष्ण स्तव राज प्रयत्न कल्पवल्मी म न रहस्य पाहसी आदि जिन ग्रन्थों का निम्बाक-कृत बताया गया है अब वे

१ भागवत सम्प्रदाय पृ० ३४७ ४८ ।

२ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य पृ० १६८ १६९ ।

३ बरणवध पृ० ८४ ।

४ भागवत सम्प्रदाय, पृ० ३१८ ।

५ डॉ० गणेश विहारी गोस्वामी ने अपने गोप्य प्रबंध 'हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य में सती भावना' में निम्बाक के श्लोकों पर विस्तार से विचार किया है। देखिये पृ० ८० ८४ [अप्रकाशित प्रबंध] ।

ग्रन्थिका परवर्ती या ग्रन्थ प्रयोग के ग्रन्थ सिद्ध किया जा चुका है।<sup>१</sup>

रामानन्द

भक्तो द्वाविड ऊपजी लाये रामानन्द ।

परगट किया कबोर ने सप्तदीप नवलण्ड ॥

इस कथन से इतना तो पता चलता ही है कि बहुत पहले से ही भक्ति का सबंध दक्षिण भारत से मान लिया गया था।<sup>२</sup> इधर विविध वप्पुवाचाय एवं भक्ता के सबंध में जो अनुसंधान हुए हैं उनसे यह पता चलता है कि उत्तर भारत में वप्पुव साधना का पहला केन्द्र काशी में श्री वप्पुवा का बना। दक्षिण से भक्ति रामानन्द के गुरु राघवानन्द लाय थे। परन्तु सम्भवतः दक्षिण की परिस्थितियों में पल-पुस राघवानन्द उत्तर भारत की मनोवृत्ति के अनुकूल नहीं बन पाय थे परन्तु अपने विद्वोही शिष्य रामानन्द को अलग सम्प्रदाय चलाने की आज्ञा देकर उन्होंने एक समुचित कार्य किया था। स्वामी राघवानन्द के द्वारा कुछ विशेष नाम नहीं है परन्तु किशकिश्या आदि से यह पता चलता है कि व वप्पुव आचार्य होने के साथ ही योग विद्या में भी निष्णात थे। रामानन्द ने भी सम्भवतः अपने गुरु से योग साधना सीखी होगी। काशी उन शिष्यों के अवसर का आखाड़ा भी था अतः यह सम्भवतः कुछ कठिनाई न होनी चाहिए कि वप्पुवों को भी उस चमत्कारिक युग में अपना स्थान सुरक्षित रखने के लिए योग त्रियाय से परिचित अवश्य होना पड़ा होगा। इस पृष्ठभूमि में रामानन्द एक उनक शिष्यों की निगुण उपासना सहज सम्भक्त में आने वाली है। रामानन्द से ही यह याग परम्परा समाप्त नहीं हो जाती। ऐसा लगता है कि राघवानन्द रामानन्द सम्प्रदाय को प्रारम्भ से ही शिवनाथ पथिया से लाया लेना पड़ा और फिर धीरे धीरे इन्होंने उनको अपने भीतर आत्मसात भी किया। डॉ० जी एस० घुर्वे ने श्री वप्पुव पत्रकारी की दास तारानाथ आदि कथाओं का विश्लेषण करते हुए कहा है कि इस प्रमुख साधु की जीवन विधि इस बात का उदाहरण है कि कैसे वप्पुवा विनायक रामानन्दी वप्पुवा द्वारा शिव सम्प्रदाय को विशेष रूप से नाथ पथिया के बीच एक धीमी किन्तु दृढ़ रोग प्रश्रिया (प्रतिम आफ द्रासप्लाष्टेन) चलायी जा रही थी।<sup>३</sup> यानि कि यागमाग के वृक्ष पर भक्ति

१ वही पृ० ८० ८४ ।

२ श्रीमदभागवत माहात्म्य प्रथम अध्याय श्लोक ४८ ।

उत्पन्ना द्वाविडे साह बद्धि कर्णिक गता

श्वचित्तवचिमहाराष्ट्र गजरे जीणता गता ।

३ जी० एस० घुर्वे इण्डियन साधुन पृ० १८४ १६० ।

की कलम लग रही थी। राधवानन्द की साधना योग और भक्ति का समन्वित रूप है।<sup>१</sup> बहुत संभव है कि बष्णव पंथा ने मध्यकालीन योग उपासका को भी अपने में सम्मिलित कर अपने सम्प्रदाय को अधिष्ठान लोकप्रिय तथा व्यापक बनाया होगा।<sup>२</sup>

जन्म — स्वामी रामानन्द के जन्म का लेकर विद्वाना में काफी मतभेद है। भण्डारकर उनका समय १३०० ई० के आसपास मानते हैं।<sup>३</sup> परशुराम चतुर्वेदी ने भी उन्हें १२६६ ई० में उत्पन्न माना है।<sup>४</sup> रामानन्द सम्प्रदाय पर विशेष लाज करने वाले डा० बदरी नारायण श्रीवास्तव ने भी उन्हें सन्त १३५६ से १४६७ (१२६६ ई० से १४१० ई०) तक माना है।<sup>५</sup> गुरु परम्परा का आधार पर ५० रामचन्द्र गुल ने उन्हें स्थूल रूप से विश्रम की १५वीं गति के चतुर्थ तथा १६वीं गति के तृतीय चरण के भीतर स्वीकार किया है।<sup>६</sup> श्री बलदेव उपाध्याय ने भी म० १५६७ के आसपास तिरोधान समय मानकर गुल जी का हा समयन किया है। विल्सन ने भी भण्डारकर इत्यादि के मत को असंगत बताते हुए उन्हें १४वीं गति की अन्त या १५वीं के प्रारम्भ के पूर्व नहीं माना।<sup>७</sup> हमारा विचार है कि गुल जी एवं उपाध्याय जी के लिए अथवा तक संगत है। नामादास के जिस छन्द के आधार पर भण्डारकर इत्यादि ने अपने लिए किये हैं उसकी गुरु परम्परा अधूरी है। इसके अतिरिक्त यदि रामानन्द का इतना पहल रखें तो फिर कबीर आदि उनके पिण्ड नहीं सिद्ध होते और इस प्रकार उनका वह महत्त्व भी नष्ट हो जाता है जो साक-परम्परा एवं शास्त्र विद्वान् दानों के माध्यम से सुरक्षित चला आ रहा है। इसके अतिरिक्त रामानन्द पद्धति को रामानन्दजी की प्राणिक कृति मान लेने के बाद कोई कारण शक नहीं रहता कि स्वयं उनका द्वारा दी गयी गुरु परम्परा को अस्वीकार किया जाय। इस परम्परा के अनुसार रामानन्दजी की १४वीं पीढ़ी में रामानन्दजी का आविर्भाव हुआ। रामानन्दजी का तिरोधान काल वि० ११६४ या ११६६ माना जाता है अतः इस प्रकार उन्हें

१ बलदेव उपाध्याय भागवत सम्प्रदाय, पृ० २४५।

२ वही पृ० २४७।

३ भण्डारकर व० एण्ड ए० पृ० ६५।

४ बष्णव धर्म, पृ० १०८।

५ हिंदी साहित्य कोय मे रामानन्द सम्प्रदाय पर टिप्पणी प० ६४८।

६ हिंदी साहित्य का इतिहास प० १०८।

७ भागवत सम्प्रदाय पृ० २५३।

८ एच० एम० विल्सन एसेज ऑन विरलितजस सेक्टस प्रॉफ हिन्दूज, प० २४।



विश्रम की पद्धती गती के उत्तराद्य में मानना असंगत सिद्ध नहीं होता ।

रामानन्द जी के जीवन का कोई प्रामाणिक विवरण उपलब्ध नहीं होता परन्तु अगस्त्य संहिता एवं भक्तमान के आधार पर इन्हें पुण्य मन्त्र गर्मा एवं मुनीला देवी का पुत्र माना गया है । वे कायकज ब्राह्मण थे तथा प्रयाग के निकट एक जन्म हुआ था । जीवन में उन्होंने उम्बा यात्रा की थी उन यात्राओं में भी संभवतः इनके मन पर समानता सिद्धांत का तब विनाश होगा । डा० बदरी नारायण श्रीवास्तव का अनुमान है रामानन्द ने तीर्थों का भ्रमण करके हाथपैने दृष्टिकाण को युगधर्म के अनुकूल बना लिया था । अनुमान है कि तीर्थयात्रा से लौटने पर गुरु मठ में उनके गुरुभाइया ने उनके साथ भाजन करने में आपत्ति की होगी । उनका अनुमान है कि अपनी तीर्थयात्रा में रामानन्द ने अवश्य ही खानपान सम्बंधी छुआछूत का कोई विचार नहीं किया होगा । अपने गिष्या का यह आग्रह देखकर गुरु राघवानन्द को एक नूतन सम्प्रदाय चलाने की आज्ञा मिली । यह आज्ञा गिष्य के महत्त्व को तात्सूचित करती ही है उम गुरु के महत्त्व को भी सूचित करती है जो गिष्य की स्वाधीन चिन्ता का मूल्य समझता है । यह अनुमान असंगत न होना चाहिये कि रामानन्द में जा आकाशगर्भी गुरुत्व आया जिसके नीचे मगुण निगुण सभी मतवाला पतप सके उसकी एक बनी प्रेरणा स्वयं उनका अपने गुरु का आकाशगर्भित्व है । कहते हैं कि मत्स्य युग की ममप्र स्वाधीन चिन्ता के गुरु रामानन्द ही थे ।<sup>१</sup>

दक्षिण भारत की विविध निषेधपरक जन्तु समाज व्यवस्था के बीच रामानुजाचार्य ने कम उदारता नहीं लिखायी थी ।<sup>२</sup> पर उत्तरी भारत के जावा एवं सारी समाज-व्यवस्था तथा धार्मिक मायताओं को सात मारने वाले अतिम बोद्धा का आममात करने के नियम अति उदार भक्ति की आवश्यकता थी । रामानन्द न उमका और अति मवजन मुनभ बनाया । रामानुज ने ब्राह्मण श्रष्टना का सुरक्षित रखत हुय भी भक्ति का द्वार हजारों लोगों के नियम मुक्त किया था । रामानन्द न उम श्रष्टता को भी समाप्त कर दिया । हिन्दी साहित्य की भूमिका में आचार्य हजारों प्रसाद द्विवेदा ने भारतीय मध्ययुगरसाधना से रामानुज हरिवर दाम की हरि भक्ति प्रकाशिका (भक्तमान की टीका) का लगभग

१ बदरी नारायण श्रीवास्तव रामानन्द सम्प्रदाय तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव पृ० ८५ ।

२ डा० हजारों प्रसाद द्विवेदा हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ० ४७ ।

३ श्री एस० डी० गर्मा हिन्दुइज्म पृ० दि एजेज (भारतीय विद्याभवन बम्बई) व० सी० बरदाचारी आसपेक्स आफ भक्ति (मसूर मुनिवसिष्ठा) १९५६ ।

१०० वष पूव लिखा यह मत उद्धृत किया है — रामानन्द न दया कि भगवान के गणनागत हाकर जो भक्ति क पथ म आ गया उमक लिय बर्णाश्रम का वचन यथ है इसीलिय भगवदभवन का खानपान क भ्रम म नहीं पटना चाहिय। यदि ऋषिया क नाम पर गात्र और परिवार बन मकत है ता ऋषिया के भी पूजित परमदर क नाम पर सखा परिचय क्या नहीं दिया जा सकना ? इस प्रकार सभी भाई भाद है सभी एक जाति के हैं। श्रेष्ठता भक्ति स हानो है जन्म स नहीं।" रामानन्द ने इस आश का तकर जीवन म सभी वर्गों को दाक्षा दी। उमका परिणाम भी सामन है उत्तर भारत म रामानन्दो वरागिया का सखा सबसे अधिक है और उनक ऋष्य दवता राम उत्तर भारत क सबसे अधिक प्रक दयता साक्षात भगवान हैं। उनके महान और गतर व्यक्तित्व स अनुप्ररित उत्तर भारत क श्रेष्ठतम माधक भक्त कवि एक कल्याणकामा कबीर और तुनसा का विभूति स कौन परिचित नहीं है ? एउ उम निगुण भक्ति भावधारा का प्रतीक और प्रतिनिधि है जिसे रामानन्द न अपनी योग-साधना और भक्ति साधना क समन्वय द्वारा नाथ पथिया को आत्ममात करने म प्रमुक्त किया था और दूसरा राम-सोता क उस सगुण आदग स्वप्न का पूजक है जिस रामानुज क लक्ष्मीनारायण स हटकर राम साना क रूप म प्रतिष्ठापित किया गया था। एक राम का दसरथ सुन मानता है दूसरा उनको 'आनमम बतताता है। रामानन्द क जीवन का कोई प्रामाणिक निवरण उपलब्ध न होने पर भी ऐसा लगता है कि क सदव जिनासु एक प्रभाव ग्रहण क प्रति अत्यधिक उदार रह हैं। साय ही हरि का भजनवाली बाल मूल म सदव विद्यमान रही। भक्ति का उदरि रामानुजा चाय की भाँति मात्र उपामना तक नही प्रेम और भजन क वास्तविक अर्थों म प्रतिष्ठित करन म सहायता शी। यागमाग और ज्ञान का उदहन तिरस्कार नया किया पर भक्ति का अग मानर हो उस स्वीकारा और तभी क गवा-बोद्धा का भक्तिमाग के भीतर जीत कर ना मके थे। उनक सम्प्रदाय म प्रभाव प्रगणनीलता का जीवन्त तत्व सख विद्यमान रहा। आगे चलकर कृष्ण भक्ति का मधुर उपामना भा राम-सम्प्रदाय म प्रविष्ट हुई तथा आव्ययता पन् पर एक प्रकार का सनिक रूप ग्रहण करन म भी उनके सम्प्रदाय को देर नहीं लगी। दुष्टान घनुधारी राम क भक्त। म इस स्वर का उभर आना बहुत आश्चर्यजनक नहा है।

अपर हमने रामानन्द की दो प्रमुख विशेषताया का उल्लेख किया है—

१ हिंदी साहित्य की भूमिका प० ४७।

२ रामानन्द के १२ प्रमुख निष्पद कहे जाते हैं। उनम विभिन्न ऊँची नीची जातियों क उपरित सम्मिलित हैं।

निम्नवर्गों का भी दाक्षा देना तथा अपने सम्प्रदाय व अधिष्ठित दरता लक्ष्मी नारायण के स्थान पर राम सीता (जो स्थानीय रगत व कारण अवध का भी अधिक शक्तिशाली रहे हान) की प्रतिष्ठा । डा० भण्डारकर ने उनकी एक तीसरी विशेषता की ओर ध्यान आकर्षित किया है और वह है लाक भाषाभाषी बहुमान देना । यह उनकी ओर भक्तिमार्ग की जनवादिनी शक्ति और विनिष्टता की धातक है । रामानन्द ने बकुण्ठ के स्थान पर साकेत को ही परमधाम माना है । यहाँ स यथाय का आदर्शिकरण एवं उपासीकरण प्राप्त होता है । यह प्रवृत्ति गायद मुस्लिम अत्याचारिया के प्रभाव व फलस्वरूप बलवती हो गयी थी । यह प्रतिक्रिया अत्यन्त स्वस्थ एवं आगावादिनी थी । यदि समाज केवल बकुण्ठ की ओर प्रभावित होता तब उसे हम सुविधा व साथ पनायन कह सकते थे परन्तु अपने ही नगरो एवं तायों का बकुण्ठ ही नहीं परमधाम मानना गहरे आगावादी एवं मानसिक रूप से सधपरत मन का उपज है । रामानन्द की रचनाएँ अनेक कही जाती है पर उपलब्ध केवल दो बष्णव भतात्र भास्वर तथा श्री रामाचन पद्धति है । इसक अतिरिक्त हिंदी में कतिपय स्तुतिपरक पद भी मिले हैं ।

### बल्लभाचार्य

आचार्य बल्लभ के बारे में हम अधिक प्रामाणिक विवरण प्राप्त करते हैं । एक स्वर से सभी विद्वानों ने इनका जन्म स० १५५५ वि० और मृत्यु स० १५८३ वि० में माना है । इनके पिता का नाम चम्पण भट्ट तथा माता का नाम एल्लमागारु था । वे लाग तलग ब्राह्मण थे जो उत्तर में बस गये थे । काशी में यथाचित शिक्षा दीक्षा व पश्चात् तरण वय में ही उन्होंने विजयनगर के राजा कृष्ण दद राय की सभा में मायावादिया तथा नास्तिका को शास्त्राय में पराजित किया तथा बष्णवा का समर्थित किया । इसके पश्चात् ही मत साम्य तथा प्रामाणिकता प्राप्ति हेतु उन्होंने विष्णुस्वामी के सम्प्रदाय में दीक्षा ले ली । पर जस रामानन्द अपनी भक्ति पद्धति आदि में अपने आचार्य रामानुज से ही नहीं बल्कि ही बल्लभ जन्म लाकनता का किसी विशय मतवाद व साथ बंध कर रहना पसन्द नहीं आया । बल्लभ ने भी अपने जीवन में तीन यात्राओं में सार

१ हिंदी साहित्य पृ १०७ १०८ ।

२ डा विजयेन्द्र स्नातक का यह मत भी इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है बल्लभाचार्य की भक्तिपद्धति का नूतन रूप और उसमें कृष्ण के मायुय भाव की उपासना की स्वीकृति अपनी विनिष्ट दम है जो विरह स्वामी के युग में किसी भी रूप में प्रचलित नहीं थी ।

—राधाबल्लभ सम्प्रदाय साहित्य और सिद्धांत प० ५० ।

भारत का भ्रमण किया। तीर्थ यात्रा का वास्तव में इन आचार्यों पर (उस युग की साधना और समाज पर भी) बड़ा प्रभाव पड़ा है। इनमें उह अपन युग और देश का वास्तविक परिचय मिला होगा। य यात्राएँ जहाँ एक और 'व्यक्तित्व के विकास में सहायक सिद्ध होती है वही दूसरी ओर मत प्रचार एवं पारस्परिक संबन्ध भी देती हैं। ऐसी ही एक तीर्थयात्रा में बल्लभ न विजयनगर के शास्त्राथ में बल्लभ मतवाण का झण्डा ऊँचा किया था। इन्हीं यात्राओं में ८४ स्थानों पर उहाने श्रीमदभागवत का पारायण किया था जहाँ पर कि महाप्रभु जी की प्रकृति बनवा दी गयी है, इनमें २२ केवल ब्रज में है। इससे पता चलता है कि श्रीमदभागवत पुराण का अधिकारी प्रथम मानकर य बल्लभवाच्य भक्ति का प्रसार कर रहे थे तथा ब्रज भूमि के लिये भी प्रयत्नशील थे।

सन् १५५६ में उहाने श्री नाथ जी के मन्दिर का निर्माण प्रारम्भ कराया, जो १५५६ वि० में ही समाप्त हुआ। यह मन्दिर प्रायः चलकर न केवल बल्लभ सम्प्रदाय का ही केंद्र पीठ बना बल्कि अष्टद्वार के गायक कवियों की सृजन भूमि भी बनन का गौरव भी इसान प्राप्त किया। हिन्दा के भक्ति साहित्य के निर्माण में इस मन्दिर का स्थान अक्षुण्ण रहगा। ब्रजभूमि की पुनर्प्रतिष्ठा में भी इस मन्दिर का प्रमुख हाथ है। बल्लभ न कृष्ण भक्ति एवं ब्रज भूमि का आदर दिया उनका प्रभाव भी इस क्षेत्र में बहुत था। उनके इष्ट देवता श्रीनाथ जी का मन्दिर भी इसी क्षेत्र में था परन्तु यह आश्चर्यजनक बात है कि वे स्वयं प्रयाग के पास अजल शाम में जीवन भर रहे तथा मृत्यु के निवृत्त काशी में सायास धारण कर रहने लगे।

बल्लभवाच्य जी न विवाह किया था और दो पुत्र भी थे। यह बात रामानन्दी सम्प्रदाय से नितान्त भिन्न है। रामानन्द का सम्प्रदाय वरागियों का था तथा पुष्टिमाग पृथक्था का। संभवतः इसक पीछे भी (रामानन्दी वरागियों प्रधानता) साधना को आत्मसात करने का प्रयास था।

बल्लभ के चौरासा प्रसिद्ध शिष्य हुए जिनके ऊपर 'चौरासी बल्लभन का वार्ता लिखी गयी है। इन्हीं में सूरदास कुभनदास परमानन्ददास तथा कृष्णदास अष्टद्वार के चार प्रमुख कवि भा हैं। पुष्टि सम्प्रदाय गिण्य में डली में श्री बल्लभवाच्य आचार्य श्री महाप्रभु तथा उनके पुत्र विठ्ठलनाथ जी 'गोमाइ जी के नाम से प्रसिद्ध हैं। यहाँ एक आश्चर्यजनक नाम साम्य गोडीय बल्लभ सम्प्रदाय से प्राप्त होता है। गोडीय बल्लभवाच्य भी चतुर्थ श्री महाप्रभु कहा गया है और उनके पद गास्वामी गिण्य के रूप में प्रसिद्ध ही है। यहाँ पर संभवतः बल्लभ के अनुयायी चतुर्थ से प्रभावित हुए थे। यह भी हा सकता है कि गुरु पूजा पर शेर बनवाली उस साधना के भीतर ही गुरु को इतना प्रमुख स्थान मिल गया था। उनका पुत्र गोविन्दलनाथ न सम्प्रदाय के परस्थित प्रचार एवं सगठन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण

काय किया है। इसमें अतिरिक्त मधुर उपासना की भी आधिनारित स्वीकृति उहोने दी थी। पुष्टि-सम्प्रदाय की नीव बल्लभ न रखी पर भवन निमाण विटठलनाय ने किया था।

उपासना के क्षेत्र में बल्लभाचार्य की मुख्य दान बालकृष्ण पूजा का प्रचार है। रामानुज की परम्परा का आग बलात हुय बल्लभाचार्य न भा अपना भक्ति में प्रपत्ति को विशेष स्थान दिया। कृष्ण के साथ राधा की उपासना का भी उहोंने स्वीकार किया। लीला का बल्लभाचार्य ने बहुत ऊचा स्थान दिया।

दगन के क्षेत्र में वे शुद्धादत के प्रतिष्ठाता थे पर दगन विवेचन तो उपरले स्तर पर ही लोगा का प्रभावित करता था बल्लभाचार्य न जिस पुष्टिमाग या सवा माग का विचार आचार के क्षेत्र में किया वह उनका दगन की अपेक्षा बही अधिक महत्वपूर्ण है। भक्ति और उपासना के जिस विधि विधान को उहोंने तथा गा० विटठलनाय न उपस्थित किया वह बडे बडे नरपतिया के लिये भी आकाक्षा की वस्तु था। माना सार मुस्लिम शासन के बभव का इस परब्रह्म की पूजा पद्धति द्वारा चुनौती दी गयी थी। इस सूक्ष्म एवं जटिल विधि विधान के पीछे एक मनोवगानिक प्रक्रिया भी गयी थी कि इसका माध्यम से भक्त के अहकार को दूर रखा जाय क्याकि विनाद पूजन विधान निभाना लगभग असम्भव है और साधक का अपनी सारी शक्ति उसी में लगानी पता होगी। यो तो प्रभु के अनुग्रह को भक्ति के सभी सम्प्रदाया न स्वीकार किया है पर पुष्टिमाग में इसे सर्वाधिक महत्व प्राप्त हुआ। पुष्टिमाग में ही जिस पापण गद पर आधारित है उसका तात्पर्य अनुग्रह है।<sup>१</sup> बल्लभ न स्पष्ट कहा है — 'पुष्टि मागोनुग्रहैक साध्य'। उनका अनुसार कालान्ति के प्रभाव का रोकनवाजी श्रीकृष्ण का कृपा ही पुष्टि है।<sup>१</sup>

सम्प्रदाय में प्रसिद्ध है कि बल्लभ की लिखा हुई ८४ पुस्तक हैं। उनमें स आर्क्रेस्ट के कटलास कटलगोरम में निम्नलिखित नाम दिए गए हैं — अत कारण प्रबाध और टीका आचार्य कारिका आनदाधिकरण आर्या एकात रहस्य कृष्णश्रय स्तान चतुर्लाक भागवत टीका जलभेद जमिनी-सूत्र भाष्य मीमासा तत्त्वशाप निबन्ध (तत्वाय दाप और टाका) त्रिविध लीला नामावली नवरत्न और टीका निरोध लक्षण और विवृति पत्रावलम्बन पथ परित्याग परिवृद्धाण्ड पुरपोत्तम सहस्रनाम पुष्टि प्रवाह मर्यादा भेद और टीका पूव

१ पोषण तनुग्रह श्रीमद्भागवत २।१०।४

२ अणुभाष्य चतुष अष्ट्याप चतुष पाद सूत्र ६ की टीका।

३ तत्त्व दीप निबन्ध भागवताय प्रकरण (डा० हरवलाल शर्मा द्वारा सूर और उनका साहित्य प० २५५ पर उद्धृत)।

मामासा कारिका, प्रेमामत और टीका प्रौचरितनाम बाल चरित नाम बाल बाघ ब्रह्मसूत्राणु भाष्य भक्तिवर्धिनी और टीका भक्ति सिद्धान्त भगवद्गीता भाष्य भागवत तत्त्वदाप और टीका सुबाधिनी टीका, भागवत पुराण एतादौ स्वयं अथ निरूपण कारिका, भागवत-सार समुच्चय भगवद्गीता, यथुरा माहात्म्य यथुराष्टक, यमुनाष्टक, राजलालानाम विवक धर्याधय वस्तुनि कारिका श्रद्धा प्रकरण श्रुतिमार मयाम नियम और टीका सर्वोत्तम स्तान् टिप्पण और टीका साक्षात् पुरुषात्तम-वाक्य सिद्धात मुक्तावली सिद्धात रहस्य मवा फल स्तोत्र और टीका स्वामि-याष्टक, भागवत पुराण दशम स्कंध अनुक्रमणिका भागवत पुराण पंचम स्कंध टीका ।<sup>१</sup>

इनमें से यथुराष्टक और स्वामि-याष्टक तो निश्चित रूप से बल्लभाचार्य के पुत्र गान्धारी विठ्ठलनाथ की रचनाएँ हैं। बल्लभ के ग्रंथों का इस शक्ति में भागवत का सुबाधिनी टीका ब्रह्म-सूत्रा का अणुभाष्य पूर्व मामासा कारिका तत्त्वदाप निबन्ध और उसकी टीका अधिक महत्त्वपूर्ण है। उनका सिद्धात विवक १६ प्रकरण ग्रंथों में भी सम्प्रदाय के सिद्धात और व्यवहार पर पर्याप्त प्रभाव डाला है। सुबाधिनी टीका एवं अणुभाष्य की अनन्त टिकाएँ और भाष्य सम्प्रदाय के परवर्ती विद्वानों ने लिखे हैं। तत्त्वार्थोपम तान विभाग हैं जिनमें से प्रथम गान्धारी प्रकरण में दशमस्कंध प्रवृत्ति की १०२ कारिकाएँ हैं। द्वितीय विभाग सवनिष्णय प्रकरण में कर्तव्य एवं जावन के लक्ष्या पर विचार हुआ है। भागवताथ प्रकरण नामक तीसरे अध्याय में भागवत के १२ स्कंधों का संक्षेप किया हुआ है। इस तीसरे स्कंध पर आगे चलकर पुरुषात्तम जी महाराज और कल्याणराज ने टीकाएँ लिखी हैं। छठे ग्रंथ में सत्यास नियम में कमलाग नानदाग और भक्तिमाग के तान प्रकार के सत्यासा का विवचन २२ श्लोकों में किया गया है। बल्लभाचार्य का संवाक्य में श्लोकों का एक छोटा सा रचना है जिसमें ईश्वर की पूजा के अवरोधों एवं प्राप्तव्या की चर्चा की गयी है। भक्ति-वर्धिनी ११ श्लोकों की रचना है। यमुनाष्टक यमुना की स्तुति में ६ श्लोकों का ग्रहण है। बाल बाघ के १२ श्लोकों में बल्लभ ने बताया है कि ससार में काम्य वस्तुओं का है — दुःख का अभाव और आनन्द। इहा का मान और काम कहते हैं। उनका अनुसार विष्णु का कृपा से माक्ष प्राप्त किया जा सकता है। सिद्धान्त मुक्तावली नामक ग्रंथ के २१ छंदों में भक्ति का विवेचन करते हुए उन्होंने बताया है कि व्यक्ति का अपना सब बुद्ध भगवान् का समर्पित कर देना चाहिए। पुष्टि प्रवाह भयांग में भी छोटा-सा ग्रंथ है

१ एत० एन० दासगुप्ता ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलॉसफी चतुर्थ भाग पृ० ३७२ पर उद्धृत (कम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस १९५५)।

जिसमें २५ लाख हैं इसमें पुष्टि प्रवाह और भक्ति मार्गों का संकत करने का प्रतिरिक्त होने बताया है कि अहंकार बुरा काम कुसंगति विनाश स्थान अथवा काल में जन्म लेना यह पाप स्वाभाविक बुराईया होती हैं । जब सब कुछ भगवान का अर्पित कर दिया जाता है तब ये बुराईया दूर होती हैं । नवरात्र के ६ लाखों में बराह्य एवं सर्वस्व-समर्पण की भावना पर बल दिया गया है । प्रकृत प्रवाह १० छन्दों की पुस्तिका है इसमें स्वपरीक्षण के साथ साथ क्षमा प्राप्त करने के लिये भगवान की प्रार्थना पर जोर दिया है और यह भी बताया है कि व्यक्ति का अपना मन में यह धारणा पुष्ट करनी चाहिए कि प्रत्येक वस्तु भगवान का है । विवेक धर्मार्थ में स्वर पर पूजा विवास रत्न की बात कहा गया है । इस ग्रंथ के अन्त में वह प्रत्येक वस्तु जानता है तथा सर्व हमारे कल्याण की चिन्ता करता है इसलिये प्रत्येक वस्तु का भगवान के आसरे पर छोड़ देना चाहिए । इस ग्रंथ में १७ श्लोक हैं । कृष्णाथय ११ छन्दों की रचना है इसमें भी प्रत्येक बात में कृष्ण पर ही आश्रित रहने की बात कही गयी है । इस ग्रंथ का ऐतिहासिक एवं सामाजिक दृष्टि से बहुत अधिक महत्त्व है क्योंकि इसमें तत्कालीन सामाजिक और धार्मिक वातावरण का सजीव चित्रण हुआ है । चतुर्लाकी में भी भगवान पर आश्रित भाव रखने की बात दुहराई गयी है । भक्तिवर्धिनी के ११ श्लोकों में बल्लभ न बतलाया है कि ईश्वर के प्रेम का वाङ्मय सबके मन में भीतर हाता है परन्तु अनेक कारणों से वह अवरुद्ध रहता है जब इसका अकुरण होता है तब साधक प्रत्येक से प्रेम करने लगता है । इस ईश्वर प्रेम की साद्विध्वन्वासा में साक्षात्क वस्तुप्राप्ति के प्रति तत्काल प्रसम्भव हो जाता है तथा फिर उस नष्ट भी नहीं किया जा सकता है । पंच पाद में कवन ५ लाख हैं तथा जनभक्त में २० । जलभक्त में साधकों के विभिन्न वर्गों एवं भक्ति के विभिन्न मार्गों की चर्चा की गयी है । बल्लभ के ये १६ ग्रंथ ही सग्रहीत होकर पाठ्य ग्रंथ बट्टनात है । इनमें से प्रथम तीन सत्यास निरूपण जलभक्त एवं भक्तिवर्धिनी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं । इनसे ऊपर लिखी गयी टीकाप्राप्त वृत्तियाँ आदि की सहायता काफी बड़ी है ।

### चतुर्थ

भक्ति के कमलाङ्क का बल्लभभाष्य न सुदृढ़ विश्वास एवं उसके सद्ग (समाप्त) धर्म का चतुर्थ न । उनमें अद्भुत पाण्डित्य था और उसी आधार पर जो भक्ति विकसित हुई है उनमें दार्शनिक चेतना तथा ही साथ ही सहजिया ब्रह्मवादी का प्रेम-साधना भी ग्रहण कर ली गयी । श्री कृष्ण चतुर्थ उत्तर मध्य युग के सबसे प्रभावशाली व्यक्तियों में प्रजात हान हैं । जगता है कि उत्तर भारत में बुद्धत्व के बाद चतुर्थ में भक्ति मार्ग और प्रभावशाली व्यक्तित्व द्वारा

नहीं हुआ। तुनसीदाम की ख्याति दूसरे ढंग का है और वह उनका साहित्य का माध्यम से बढ़ी है जबकि चतय की सारी महिमा उनका प्रत्यक्ष व्यक्तित्व में निहित है। जीवन में उन्होंने कुल ८ श्लोक लिखे हैं परंतु उनके व्यक्तित्व की गहराई इतनी मोहक थी कि जो भी उसका सम्पर्क में आया उनका होकर रह गया। उनकी भक्ति पद्धति का कितना गहरा असर श्रम्य भक्ति सम्प्रदायों पर पड़ा है इसकी भीमासा हम आगे करेंगे। यहाँ पर इस माहक व्यक्तित्व के द्वार में इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि भक्तिमार्ग में दाक्षिणत हा जान के बाद शास्त्राथ में उनकी रुचि समाप्त हो गयी, उपदेशक बनने की उन्हें याद नहीं रही तथा जयन्त, विद्यापति, चण्डीदास की कृतियाँ, ब्रह्म-सहिता तथा लीलाशुक चित्तमंगल के कृष्ण कणामत को छोड़ कर अपने भावावग में कुट्ट पन्न का फिर कभी अवसर नहीं मिला। राधाकृष्ण की लीलाओं का स्मरण और भाजन कृष्ण सकीर्तन एवं हरि-श्लोक का निरंतर उच्चारण वस यहाँ उनका नमित्तक कम धम प्रचार में शास्त्राथ था। पर इनके छोड़े सबक की साद्रता, आत्मा की गहनता एवं गूढतम पुकार थी जिससे उन्हें इतना माहक और प्रभावशाली बना दिया। उत्तर से दक्षिण पूर्व से पश्चिम तक उनका नाम और प्रभाव विद्युत्-वग से प्रसरित हो गया उनका जीवन-काल में ही। यह सामान्य उपलब्धि नहीं थी। प्रसिद्ध रामानन्द एवं बल्लभ का भी प्राप्त हुई थी पर वह अपने गिष्यों भक्तों तक सीमित थी। उसमें पावसनन्द का वह प्रवाहन था जो अपने साथ बहा ल जाया। चतय के चरित्र में पवत प्रवाहिनी का बग था और पावसनन्द की गहराई एवं सर्वांगीणता प्रसार भा था।

कृष्ण चतय का बाल नाम विश्वम्भर था। नवद्वीप के विष्णु पण्डित जगन्नाथ मिश्र के घर उनका जन्म स० १५४२ (१४८५ ई०) में हुआ था। बालपन के उद्द विस्वम्भर गीत ही तक विचक्षण पण्डित बन गया और फिर गया करते समय वे उही ईश्वरपुरी के सम्पर्क में आये जिनका एक द्वार व मजाक उठा चुके थे। ईश्वरपुरी के दावन के विरक्त विद्वान भवन माधव द्रपुरी के गिष्य थे। बहुधा चतय के व-कल्प व्यक्तित्व के सम्मुख लाग माधवेन्द्रपुरी को उसी प्रकार धनदत्ता छाड़ जाते हैं जस रामानन्द के समक्ष राधवानन्द का उपक्षित कर लिया जाता है। वदावन के पुत्र उद्दार<sup>१</sup> का वास्तविक श्रम माधवेन्द्रपुरी का ही

१ महमूद गजनवी ने अपने आश्रमियों में मथुरा के दावन को उनका मित्रों की सुगंध भाव से प्रगता कर-करके तुड़वा दिया था। कुछ समय के लिए इस विनाग ने इस प्रवेग को नितांत शीहीन कर दिया था। उसके पश्चात् जो तुक धाते रहे वे इसे नष्ट ही करते रहे। परन्तु गती में वदावन विजन का स्वल्प धारण कर चुका था।



है। माघवेदपुरी बगानी थे तथा बनारस उपाध्याय ने उनका जन्म १४२७ वि० (१४०० ई०) में माना है। चतुर्थ चरितामृत में एक घटना का उल्लेख है कि उन्होंने गायन का मूर्ति का पूजन करने के लिये बगाल से दो ब्राह्मण बुनवाए थे। कहा जाता है कि गायधन के आच्योर ग्राम में श्रीनाथ जी की मूर्ति की सेवा पूजा बगानी बरणाव माघवानन्द करते थे। जब बल्लभाचार्य ने श्रीनाथ जी का विंगल मंदिर बनवाकर उसमें कीर्तन पूजन आदि की व्यवस्था की तब भी सेवा का भार बगानी बरणावों पर ही रहा। इनमें से एक माघवेदपुरी था। बाद में कृष्णरास अधिकारी ने काफी कठनातिक्रम पर इन बगालियों को निकाल बाहर किया। (चौरासी बरणावन की बर्ना क अनुसार इन बगालियों की पूजा पद्धति पुष्टि सम्प्रदाय के अनुकूल नहीं थी) यलोग साथ में एक देवी की भी उपासना करते थे। अतः बल्लभ या अन्य किसी बरणाव आचार्य के आगमन के पूर्व बगाल का बरणाव मत (जिसमें सृष्टिया साधना के अवशेष भी विद्यमान थे) ब्रज प्रदेश में पहुँच चुका था और इससे आगे के बरणाव मता का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रीति से प्रभावित अवश्य किया होगा। बगाल और ब्रज का सम्बन्ध सूत्र जातन वाले नात महापुरण माघवेदपुरी ही प्रतीत होते हैं जो ब्रज में रह कर वहाँ के तीर्थों का उद्धार करने में लगे थे। इन्हीं माघवेदपुरी के गिण्य ईश्वरपुरी से चतुर्थ को बरणाव भक्ति की दीक्षा मिली। संभवतः कृष्ण चतुर्थ में वृंदावन के तीर्थों के उद्धार के प्रति जा गिनरी उदाह प्राप्त होता है— जिसके बनीभूत हैं उन्होंने लक्ष्मण मास्वामा और भूगभ आचार्य को उनकी वृंदावन श्रद्धा के विरुद्ध भजा था—उसकी अप्रत्यक्ष प्रेरणा स्वयं माघवेदपुरी द्वारा ही प्राप्त हुई थी।

बरणाव दीक्षा (म १२६४) मिलने के उपरांत उनका समस्त समय बरणाव नज्ज-कीर्तन में व्यतीत हुआ। भजना कीर्तना की परम्परा पहले भी था पर चतुर्थ ने जिस आवग को उसमें भर लिया उसकी समता भागवत में वर्णित मात्र कृष्ण के बरणाव-गायन से ही का नासक्तता है —

निगम्य गीत तदनगवधन छजस्त्रिय कृष्णगहीतमानसा।

ध्याजगुरयोममलभितोद्यमा सधत्र कातो जवलीतकुण्डला।

—१०१२६४

ता वायमाणा पतिमि पितभिर्घातबन्धुभि

गोविंदाय हृतात्मानो न यवतत्त मोहिता।—१०१२६५

१ इस प्रसंग से यह अनुमान लगाया कठिन नहीं है कि ये बगाली सृष्टिया बरणाव मत के ही उत्तराधिकारी थे और चतुर्थ स्वयं सृष्टिया के ही उत्तराधिकारी बने।

इसी प्रकार चतय व इस मकीतन की सम्पृक्ति जिसे प्राप्त हो गयी वही इसकी माधुरी म आकण्ठ भन हो गया । नवद्वीप म श्रीवास की प्रागन म होने वाले इस कीतन की रयाति धीरे धीरे बट चली । फिर तो इसम गतिपुर के प्रख्यात पण्डित अद्ध ताचाय तथा स यासी नित्यानद ही सम्मिलित नही हुए मुमलमान भक्त हरिदास भी आ जुडे । चतय सम्प्रदाय के विवास म आगे अद्ध त एव नित्यानद (निताई) ने महत्वपूर्ण योग दिया है । नित्यानद की प्रधीक्षता म सहस्रा पथभ्रष्ट बौद्ध नाथ पयी एव गान्त इस सम्प्रदाय के अत गत आ गये ।

चतय का कीतन धीरे धीरे नगर कीतन वा स्वरूप धारण कर लेता है । चतय के बटत हुय अनुयायिया का यह सूचक है कि सहस्रा की सख्या म निमाई (चतय) के नेतृत्व म लाग सडको पर नत्य गान एव कीतन करते करते विह्वल होने लगे । चतय का भी आवेश बन्ता जा रहा था और स० १५६६ म काटवा ग्राम म ईश्वरपुरी के गुरुभाई केगव भारती स सयास दीक्षा लकर वे घर माँ एव तरणी पत्नी का रहा सहा मोह ताड कर निकल पड । यहाँ फिर सिद्धाय की याद हो आती है । अंतर इतना है कि सिद्धाय जग व दु ख से पीणित होकर घर से निकले थे एव चतय ग्रहानद मे डूब कर घर त्यागते हैं ।

सयास लेने के पदचात चतय ग नायपुरी के नये प्रस्थान करते है । यहाँ पर वेदाती पंडित तक गास्नी तथा याय के प्रतिष्ठाता वासुदेव सावभौम इनसे प्रभावित होते है । अद्ध ताचाय के बाद सावभौम की वण्णव परिणति चतय और उनकी भक्ति को विद्वाना म भी गहरी प्रतिष्ठा देती है । 'चतय चन्द्रोदय नाटन म कवि वण्णपूर ने सावभौम वासुदेव के कुछ अग उस समय के उद्ध त किये है जबकि वे चतय की गरण म आत हैं । उससे प्रतीत होता है कि चतय को उनके समय तक अवतार माना जाने लगा था । अपने जीवन म ही इतने जल्दी अवतार की प्रसिद्धि चतय को छाट कर गायद ही अय किसी का भारतवप के धार्मिक इतिह स म मिली हो ।

पुरी म कुछ दिन रहने के उपरान्त चतय दक्षिण की तीथयात्रा पर निकराते हैं । लगभग दो वप तक (स० १५६७-६८) वे इन यात्राम्रा म रह । इनी दक्षिण यात्रा म उनकी भट सुप्रमिद्ध रामानद राय स हुई थी जो स्वय एव उच्च पदस्य गासक थ । राय रामानद से वार्ता करने के बाद सभवत चतय को भक्ति-पद्धति का दार्शनिक धार्मिक स्वरूप भी कुछ स्पष्ट हुआ । दक्षिण से ही चतय ग्रह्य सहिता लाय थे जो आगे चलकर गौडीय वण्णव सम्प्रदाय का प्रधान उपजीव्य ग्रंथ बना । रूप गोस्वामी ने अपन भक्तिगास्त्र के ग्रंथा म इसका उपयोग प्रमाण ग्रंथ व रूप म किया है । इसी यात्रा म चतय दक्षिण

भारत की भक्ति के निकट सम्पर्क में आये होंगे। दूसरी महत्वपूर्ण बात हम यात्रा की यह है कि उन्होंने वल्लभा के साथ ही गवतीशों का भी भक्तिभाव पूर्वक अभिषेक किया। यहाँ तक कि गकराजाय के श्रृंगेरी मठ में भी वे गये। लौटते लौटते चतुर्थ इतने जनप्रिय हो चुके थे कि उन्नीसा के राजा प्रताप सिंह देव भी उनके प्रभाव में आ गये। इसने चतुर्थ-सम्प्रदाय का आगे बढ़ने में और सहायता दी।

चतुर्थ के मन में प्रारम्भ से ही वृन्दावन की यात्रा करने की इच्छा थी पर मार्ग में बराबर अड़चन आती रही। पुरी-यात्रा के तीन वर्ष पश्चात् वे वृन्दावन के नियम निश्चय। उसी यात्रा के रास्ते बंगाल के मुसलमान शासक के दो उच्च पदाधिकारी (जो ब्राह्मण होत हुये भी अत्यजा के समान थे कनेडी ने तो उन्हें मुसलमान ही लिखा है<sup>१</sup>) चतुर्थ के विषय हुये जिनका नामकरण रूप और सनातन किया गया। आगे चलकर इन दोनों भाइयों ने सम्प्रदाय में अत्यन्त महत्वपूर्ण योग दिया। वे नाग सम्प्रदाय के मस्तिष्क बन गए। चतुर्थ मठ का दार्शनिक धार्मिक एवं रस शास्त्रीय आधार पर उन्होंने ही प्रदान किया। वृन्दावन के प्रसिद्ध ६ गास्वामिया में यहाँ वे बंधु अग्र्यतम सिद्ध हुए।

सं० १६७१ में वृन्दावन छोड़कर नौटोने पर प्रयाग में उनकी भट बल्लभ चाय में कुम्भ के अवसर पर हुई तथा बनारस पहुँचने पर गार्कर वेदान्त के प्रस्ताव विज्ञान प्रकाशानन्द सरस्वती उनका मोहक व्यक्तित्व से अप्रभावित न रह सके और ज्ञान की सारी गरिमा को छोड़ कर चतुर्थ के हाँ रहे। चतुर्थ और उनके मन की यह एक उल्लेखनीय विजय थी जिसने उन्हें बौद्धिकता के बीच प्रतिष्ठा दी। यद्यपि चतुर्थ ने कोई भाष्य नहीं लिखा था किन्तु दार्शनिक मत वाद का प्रसार नहीं किया था संभवतः तब तक चतुर्थ सम्प्रदायास उनका सम्बन्ध भी नहीं जुड़ा था परन्तु अद्वैतवाच्य नित्यानन्द वासुदेव सावभौम रामानन्द राय एवं प्रकाशानन्द सरस्वती जैसे विज्ञान का आसपास उपलब्ध समर्थन चतुर्थमठ का (बौद्धिकता के बीच) प्रतिष्ठा देने में अत्यन्त सफल रहा।

बनारस में चतुर्थ पुनः पुरी पहुँचे तथा जीवन के शेष १७ या १८ वर्ष उत्तराखण्ड में प्रमाणाद में वहाँ बिनाय। उनका आवेग और उन्माद वृत्ता ही गया। वे भौतिक जीवन को निदान भुत्ता कर दिनरात विधिपिता का भाँति कवल रागा-वृष्ण-भोताया में ही अस्त रहने लगे। अनुमान है कि ऐसी ही विधिपिता बन्धा में ममुत्त के नील जन पर शुभ चन्द्र की ज्योत्स्ना का उन्होंने यमुनाजन पर हृत्त की प्राडा समझ कर आमा में डूब कर सं० १७६१ (शुलाई १८ ४) में अपने

१ एम० टी० बनडो चतुर्थ मूवमेण्ट प० ४५ ४६ (दाक्सफोड मुनि० प्रस० १९२१)।

प्राण दे दिये ।

चतय ने जीवन म महान काय किया । प्रेमाभक्ति के आवेश को उन्होंने जन साधारण तक पहुँचा दिया । उनके मुरप सहायक नित्यानन्द ने इस परिपाटी का और बड़ा दिया । रामानन्द और बल्लभ व समान ही उनके भी महान गिप्य हुए । रूप सनातन जीव, गोपाल भट्ट कृष्णदास एव रघुनाथ भट्ट य पटगोस्वामी किसी भी गुरु या सम्प्रदाय के लिय ईर्ष्या व विषय हा सकत है । बिना इनका माप्रता व बगाल तक का कोई वप्यत्र श्रय चत य मत म प्रामाणिक नहीं माना जाता था ।

उपर हम सकेत कर चुक हैं कि चतय की गीत ही भवतार माना जागे लगा था । आगे उनकी प्रतिमा व पूजन की भी यवस्था हुई ।

रामानन्द बल्लभ और चतय की इस वप्यत्रवाचाय वृहत्प्रयी व अतिरिक्त कुछ श्रय यक्ति भी साधना एव साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हुए है । गोस्वामी हितहरिवग, स्वामी हरिदास—दा ऐसे ही यक्तित्व थे । वृहत्प्रयी के आचाय स्वय वचि न थे—उनमे से एक नै केवल शिष्यो को दृष्टि दी (रामानन्द) दूसर ने सम्प्रदाय का विधिवत निरूपण और स्थापन किया (बल्लभ) और तीसरे न अपने यक्तित्व के पारस सस्या से जिस लाहे (जनता) को सोना बना दिया उसने स्वय सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा कर दी (चतय) । साहित्य एव कला की दृष्टि स इनकी प्रपेक्षा इनके गिप्या का महत्व अधिक् है (कबीर एव रदास अष्टछाप के ववि तथा वृदावन के पटगोस्वामी ऐसे ही महत्वपूर्ण गिप्य हैं) परन्तु हितहरिवग एव हरिदास ऐसा तगता है आचाय एव गिप्य के समन्वित रूप थे । व सम्प्रदाय प्रतिष्ठापक भी है और स्वय उच्चकोटि व ववि भी बल्कि यह कहना अधिक् समीचीन लगता है कि वे चतय एव अष्टछाप दोनो व मिले जुते रूप है । व चतय की भाँति अपने यक्तित्व से भी प्रभावित करते है तथा अपने साहित्य एव कला स भी । उनम चतय जसी तमयता है एव मूरदास जसा काय सवेग भी । कहते हैं कि हरिराम यास ओरछे म एक वप्यत्र साधु के मुख स हितहरिवग का एक पद मुनवर वृदावन की ओर उमुख हा गय थे । 'स्वामी हरिदास तो अपने युग के श्रेष्ठतम सगीतज्ञ भी थे । प्रमिद्ध है कि अक्बर भी छिन कर उनका गान सुनने प्राया था । इन लोगो ने चतय की ही भाँति अपना कोई साम्प्रदायिक भाष्य भी नहीं लिखा । नीचे हम उनने जीवन और कायों की सक्षिप्त रूपरेखा उपस्थित कर रहे हैं ।

स्वामी हरिदास

आपसी साम्प्रदायिक विद्वेष व फलस्वरूप वृत्तावन के भक्तो आचार्यों

१ चामुदेव गोस्वामी भक्त वचि ध्यास जी, जीवनी खण्ड, पृ० ५४ ।

आदि का ऐतिहासिक स्वरूप निश्चित करना बहुत कठिन हो गया है। जन्म सत्रत जन्म स्थान गुरु निरायण सम्प्रदाय सम्बन्ध आदि का लेकर स्वामी हरिदास के सम्बन्ध में काफी वितर्कवाद खल्ला किया गया है परन्तु उधर जा अनुसन्धान हुए हैं उनका आचार पर स्वामी हरिदास का जन्म सत्रत १५७७ माना जा सकता है।<sup>१</sup> आचार्य प० रामचन्द्र गुप्त ने उनका कविता-काल सत्रत १६०० से १६१७ तक माना है।<sup>२</sup> यह समय निर्धारण उपयुक्त जन्मतिथि मानने पर अनुचित नहीं प्रतीत होता। स्वामी हरिदास जी के पिता का नाम आसधीर था। अलागढ़ जिले के हरिदामपुर ग्राम में उनका जन्म हुआ था। शायद ही उनके साथ भी चमत्कारपूर्ण घटनाएँ श्रद्धालु भक्तों ने जाड़ दी हैं। उनकी चर्चा महा पर प्राप्त नहीं होगा।

यह बात काफी विवादास्पद है कि उनका विवाह हुआ था या नहीं परन्तु यदि हुआ भी था तो रमणी की रूपराशि उन्हें लुभाने लकी और कहते हैं कि राधाष्टमी के दिन अपने पिता आसधीर जी से युगल मन का दीक्षा लेकर बिरकन हाकर य घर में जन्म आय। सम्भवत कुछ दिन इधर उधर घूमते घामत एव तार्थान्तर करते रहे और सत्रत १५६२ में वे वृन्दावन आ गये थे। वम प्रकार हरिदास जी वृन्दावन को अपना केन्द्र बनाने महात्माओं में प्रथम है। चतुर्थ महाप्रभु वृन्दावन सत्रत १५७१ में पहुँचे थे (अपने दो गिण्पा की वे कुछ पहल ही भेज चुके थे) तथा हितहरिवंश जी से १५६१ में वृन्दावन आये थे। स्वामी हरिदासजी के उपास्य बाक बिहारी जी का प्राकटम स १५६७ में हुआ था। हितहरिवंश जी वृन्दावन आ जाने पर वन दोनों अप्रुव साधकों का घनिष्ठ परिषय हा गया था। उस समय के भक्तों (यथा हरिराम यास आदि ने वन दोनों रसिका का नाम बडे आदर से और कभी-कभी साथ साथ लिया है।<sup>३</sup>) हितहरिवंश जी को अपनी उपासना पद्धति के निमाण में स्वामी हरिदास जी से प्रेरणा अवश्य प्राप्त हुई होगी।

स्वामी हरिदास जी अपने युग के श्रेष्ठतम संगीतकार थे। तानसन एव बजू बावरा उनके गिण्प्य कह जाते हैं। यह भी प्रवाण है कि स्वयं अरुबर उनके

१ (क) डा० नारायणदत्त गर्मा स्वामी हरिदास जी का सम्प्रदाय और उसका वाणी साहित्य (अप्र० प्रब०) प० १७ ।

(ख) डा० नारण बिहारा मास्वामी हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य में सखीभाव (अप्र० प्रब०) प० ४१६ ।

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास प० १७२ ।

३ हरिवंश हरिदास जहाँ मोहि करना करि राखो तहाँ भक्त कवि व्यास प० ४०७ ।

सगीत सुनने के लिये उपस्थित हुआ था। सगीत एन एसी कला है जो अपनी नितान्त सूक्ष्मता एवं अगरीरीपन के कारण मनुष्य को रहस्यवादी एवं आध्यात्मिक बना भी देती है। स्वामी हरिदास की रसिकता का अध्यात्म क ऊँचे स्तर तक उठान में उनकी सगीत कला का कितना बड़ा हाथ रहा होगा यह सट्टे अनुमान का विषय है बल्कि कहना चाहिए कि समस्त कृष्ण भक्ति के सम्प्रदायों में सगीत की साधना न लौकिक का अलौकिक के स्तर तक उठान में सहायता दी होगी। यही स्थिति सूफी सम्प्रदायों के बारे में भी कही जा सकती है।

सबसे बड़ा विवाद स्वामी हरिदास जी के सम्प्रदाय का लेकर है। यद्यपि प्राञ्च ने अपने 'मयुरा ममायस' में उह बहुत पहले ही एक पृथक् सम्प्रदाय वाला माना था।<sup>१</sup> सन १६४२ में होने वाले निघुवन के भगवत क फलस्वरूप स्वामी हरिदास की टट्टी सत्यान वाली परम्परा में अपना सम्बन्ध निम्बाक सम्प्रदाय से जोड़ लिया। उसी काल में किशोरदास के निज मत सिद्धांत तथा सहचरिणरण द्वारा दी गया गुरु परम्परा के द्वारा इस मत का समर्थन किया गया है। परिणाम स्वरूप श्री बल्लभ उपाध्याय।<sup>२</sup> डा० हरबलाल गर्मा<sup>३</sup> परगुराम चतुर्वेदी<sup>४</sup> डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित<sup>५</sup> प्रभृति लोगों ने उन्हें निम्बाक सम्प्रदायान्तगत मान लिया। परंतु वास्तव में दोनों सम्प्रदायों में इष्ट मत अचिर का इतना बड़ा अन्तर है कि उह एक मानना उचित न होगा। इसके अतिरिक्त हरिदासी सम्प्रदाय के एक कवि भगवत रसिक ने तो निम्बाकियों के द्वैताद्वैत दान का भी प्रत्याख्यान कर दिया है—

नाहीं द्वैताद्वैत हरि नाहि विगिष्ठाद्वैत।

बंधे नहीं मतवाद में ईश्वर इच्छाद्वैत।<sup>६</sup>

इस प्रकार उनका एक स्वतंत्र मत प्रतीत होता है। अपनी उपासना में उन्होंने एकदम निराला ढंग अपनाया था। लान-वेद की सभी रीतियों का परित्याग कर स्वामी हरिदास ने अपनी साधना पद्धति आरम्भ की थी। राधावल्लभीय भक्त ध्रुवदास ने उनकी इस विशेषता की आर इंगित किया है।

१ श्री स्वामी हरिदास अभिनन्दन ग्रन्थ, प० ८३ पर उद्धृत।

२ भागवत सम्प्रदाय प० ३५१।

३ सूरदास और उनका साहित्य प० १०१।

४ बल्लभ धर्म, प० ८६।

५ हिन्दी साहित्य कोष में सखी-सम्प्रदाय पर टिप्पणी पृ० ८०४।

६ भागवत रसिक अनन्य निश्चयात्मक ग्रन्थ, पृ० ८३।

रसिक अनय हरिदास जू गायो नित्य बिहार ।  
सेवा हूँ मे दूर किय विधि निषध जजार ।<sup>१</sup>

इधर चतु सम्प्रदायो में किसी से अपना सम्बन्ध जोड़ने के चक्कर में मगन बिहारी लाल गोस्वामी ने हरिदास अभिनन्दन ग्रन्थ में अपने निबन्ध श्री हरिदास जी का विष्णुस्वामी सम्प्रदाय (पृ० १०६-१०८) में उह विष्णुस्वामी सम्प्रदायात्गत सिद्ध करना चाहा है। परन्तु यह तो और भी भ्रमात्मक है। उस सम्बन्ध में डा० दीन दयालु गुप्त का मत सवधा उचित प्रतीत होता है। उनके अनुसार यह सम्प्रदाय भी भक्ति का एक साधन माग है और अपने आरम्भिक काल में वेदान्त के किसी वाद अथवा किसी ग्रन्थ दार्शनिक सिद्धान्त का प्रचारक मत नहीं था।<sup>१</sup> डा० विजयेन्द्र स्नातक ने भी इसे पृथक् सम्प्रदाय ही माना है।<sup>१</sup>

स्वामी हरिदास की रचनाएँ अधिक नहीं हैं। वे कवि से बड़े संगीतज्ञ थे। प० रामचन्द्र गुप्त जी ने कहा है उनके पद कठिन राग रागिनियाँ में गाने योग्य हैं पढ़ने में कुछ ऊब-खाबड लगते हैं। इनका संग्रह केनिमाल नाम से प्रकाशित है। सम्प्रदाय के भीतर उसकी अत्यधिक प्रतिष्ठा है।

हरिदास जी की मृत्यु के सम्बन्ध में कोई निश्चित मत नहीं है। अनुमान है कि सवत १६३५ के आसपास इनकी मृत्यु हुई होगी।<sup>१</sup> इधर वृंदावन से प्रकाशित होन वाले श्री सर्वेश्वर नामक पत्र में श्री विश्वेश्वर गरण जी ने स्वामी हरिदास पर एक लेखमाला लिखी है जिसमें जन्म सवत मृत्यु सवत पिता गुरु सम्प्रदाय कुल आदि के बारे में विचार किया गया है। उनके अनुसार सिद्धान्त पक्ष में श्री स्वामी जी महाराज श्री निम्बाक सम्प्रदाय के थे। वे आज्ञा-मन्त्र चारी थे उनका जन्म वि० स० १५३७ भाद्रपद शुक्ला अष्टमी को और निकुंज प्रवेश १६३२ में हुआ था वे सनातन्य कुल के थे उनका जन्म वृंदावन के समीप श्री राजपुर में हुआ था उनका गुरुश्रेष्ठ श्री स्वामी आसधीर देव जी थे अस्तुत वे उनके पिता नहीं थे—पिता तो सनातन्य कुल भूषण श्री गंगाधर जी थे।<sup>१</sup> इनमें से जन्म मृत्यु-संघर्षों से हमारा कोई विरोध नहीं है तथा हम उह निम्बाक का

१ भक्तनामावली (बयालीस लीला) प० २८।

२ अष्टदास्य और बल्लभ सम्प्रदाय प० ६८।

३ राधा बल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य प० ५१-५२।

४ हिंदी साहित्य का इतिहास प० १७२।

५ डा० गरण बिहारी गोस्वामी हिंदी वृद्ध भक्ति काव्य में सखी भाव (अग्र प्रब ) प० ८१६।

६ श्री सर्वेश्वर पृथ ४ अक्ष २ प० २६।

अनुयायी नहीं मानत । शेष प्रश्न हमारे लिए अप्रासंगिक है ।

परिचय-सम्बन्धी इन प्रश्नों का विवाद हम यहाँ नहीं पढ़ना चाहते और इसमें हमारे मतों का भी कोई अंतर नहीं आता । व किन्नर की १६ वीं गीता के अतिम हिस्से एक सत्रहवीं गीता के पूर्वार्द्ध में उपस्थित था । वृत्तान्त के रसिक भक्ता में वे अत्यंत थे । उनका समकालीन एक श्रद्धालु हरिराम व्यास के गीता में —

ऐसी रसिक भयो गीता ह्व है भुजमङ्गल आकाश ।<sup>१</sup>

भक्तमालकार नामादास के अतिरिक्त उनका गुरु स्वामी अग्रदास (रामानन्दो सम्प्रदाय) ने आपकी साक्षात् प्रभावतारा ही माना है —

नमो नमो श्री हरिदास षष्ठी विपिन वास

वर प्राण सवस बाँक विहारी ।

श्याम श्यामा जूगल रूप माधुष्य के

रसिक रिम्भवार प्रेमाशतारी ।

परम वराग्य निधि बसत निधिवन सदा

भावना लीन सुप्रवीन भारी

कामना कल्पतरु सकल सताप हर

अग्रदास भक्ति कल्याणकारी ।<sup>२</sup>

नामादास ने अपने भक्तमाल में उनकी निराली उपासना प्रणाली की प्रशंसा की है ।<sup>३</sup>

जहाँ तक सम्प्रदाय एक सिद्धान्त का प्रश्न है हम समझते हैं कि न तो वे किसी व्यवस्थित सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं और न किसी दार्शनिक मतवादी के प्रचारक । वे तो अपने श्यामा श्याम की लाठ लढान में अपनी सगीत-माधुरी से रिभान्त एक नीला भावन में ह्रा मगन रहने वाले रसिक भक्त थे ।

स्वामी हरिदास जी स्वयं विरक्त साधु थे । आग चलकर उनका अनुयायी का दो दल हा गया । एक विरक्ता का—जिसका टट्टी-म्यान अलग बना तथा दूसरा गृहस्थ गोस्वामियों का—जिनका ऊपर विहारी जा का सवा-पूजा का भार है । उनका विरक्त गिण्या में अष्टाचार्य अत्यन्त प्रसिद्ध हैं और उनका वाणिया का एक सकलन 'अष्टाचार्यों की बानी' नाम से उपलब्ध होता है । इस वाणी को सम्प्रदाय में अत्यधिक श्रद्धा प्राप्त है ।

१ व्यास वाणी ।

२ श्री सर्वेश्वर पृष्ठ ३, सप्त्या २ पृ० १४ पर विश्वेश्वर गरण जी द्वारा उद्धृत ।

३ भक्तमाल, द्वितीय स० ६१ ।



साधना के स्तर पर हरिदास जी म हुआ। उनकी यह साधना नितान्त ऐकांतिक एवं सम्पूर्ण अन यता की है। वास्तव म यह साधना की अत्यधिक ऊची स्थिति का नाम है। हम लगता है कि उनकी साधना को सगुणोपासना कहना बहुत उचित नहीं है क्वाकि कृष्ण क ब्रज-लीला वाले सगुण रूप को वे स्वीकार नहीं करते। उन्होंने कृष्ण नाम तक को स्वीकार नहीं किया। नीना का एक नितान्त गोपनीय रहस्यात्मक प्रकार उनको स्वीकार था। दार्शनिक चिंतना एवं तांत्रिक निरूपण म एकदम असम्पृक्त रह कर वे जिम भावदशा म विभोर रहत थ उसे रहस्यानुभूति की साधना कहना अधिक उचित हागा। वास्तव म प्रामाणिक अपनी सर्वोत्तम परिणतिया का स्वामी हरिदास जो की साधना म पहुँच गयी थी।

उनके सम्प्रदाय म अनग से निरूपित कोई दार्शनिक पद्धति न होकर उपासना का माग एवं तत्संबधी व्यावहारिक कल्पनाएं ही है। अत यहाँ हम उनके दान आदि पर विचार नहीं करगे उनकी लीला उपास्य आदि की धारणाओं की विवेचना चतुर्थ अध्याय म की जायगी। यहाँ हम भगवतरसिक का सम्प्रदाय की उपासना आदि का परिचय देने वाला पद उद्ध त करके इस प्रसंग को समाप्त करत हैं।

आचारज सतिता सखी रसिक हमारी ध्याप।  
 नित्य किंनोर उपासना जगुल मात्र को जाप।  
 जुगुल मात्र को जाप बद रसिकन की वाली  
 थी आदावन घाम इष्ट स्वामा महरानी  
 प्र म देवता मिले बिना सिधि होई न कारज  
 भगवत सब मुखदानि प्रकट मे रसिकाचारज  
 नाहीं द्रत अद्रत हरि नाहि विगिष्टान्त।  
 बधे नहीं मतवाद म ईश्वर इच्छा द्रत।  
 ईश्वर इच्छा द्रत कर सबही को पोपन।  
 घाप रहे निरलेप भगत सौ माने तोपन।  
 भगवत रसिक अनय सग डोले गलबाहीं  
 करे मनोरथ सिद्ध उचित अनुचित क्यु नाहीं।<sup>१</sup>

१ राधामाधवोत्सर्पित यमुनाकुले रह केलय गीत गोविंद।

२ भगवत रसिक अनय निबन्धात्मक ग्रंथ प० ४३।

## गोस्वामी हित हरिवंश

हित हरिवंश जी व जन्म स्थान, जन्म सन्तति पिता व नाम आदि<sup>१</sup> के बारे म विद्वानों म कुछ मतभेद रहा है। पर डधर राधावल्लभोप विद्वान श्री ललिता चरण गाम्बामा एव त्रिहरी विवविद्यालय व प्राध्यापक डॉ० विजयद्र स्नातक<sup>२</sup> व जा गायपूण ग्रन्थ आये हैं उहाँ व आधार पर हम यहा उनका जीवन चरित्र द रह हैं। उन ग्रन्था म विविध प्रश्ना पर गहरी ध्यानवान की गयी है।

गोस्वामी हित हरिवंश का जन्म स० १७१६ म मयुरा व निकट वा<sup>३</sup> नामक ग्राम म बंगाल गुवन एकादशी सोमवार का हुआ था। उनके पिता का नाम व्यास मिथ था जा दक्खिन (सहारनपुर) व रहन वाल विद्वान—राज ज्यानिपी (मम्भवन इब्राहीम लागी म सम्मानित) थ। सस्कृत का शिक्षा स्वभावत पिता म हा इहें प्राप्त हुई हागी। हरिवंश जी का सस्कृत ज्ञान बहुत अच्छा था यह उस बात स ही प्रकट है कि उहोंने सस्कृत म राधा-मुघानिधि<sup>४</sup> काव्य का रचना की थी। उनक बाल्य जीवन म सम्बन्धित, मध्ययुगान ग्रन्थ मत्तपुर्या की भांति अनेक अलौकिक कमत्कार प्रचलित हैं। कहा जाना है कि जब य ६ मास व ये तभी 'राधा-मुघानिधि' इनक कण्ठ स निस्सृत हो पडी थी जिसका लक्षण काय इनक पित्तय श्री नसिहायम जी न सम्पानित किया था। बाल्यकान से ही राधा-वृष्ण की श्रीदाया व अनुकरण म ही उनका मन लगता था।

गोस्वामी त्रि हरिवंश की दोक्षा स्वय श्री राधिका जी स प्राप्त हुई थी। साम्प्रदायिक ग्रन्थों में राधा जी का गुरु रूप म बार-बार उल्लेख हुआ है। इम सम्बन्ध म क्या है कि एक त्रि राधा जी न उहें स्वप्न दिया कि घर के बाहर व पीपल व वक्ष की ऊंची डाल पर एक लाल पत्ते पर एक मन्त्र अंकित है उस प्राप्त करा और उस अचना दोसा-मन्त्र माना। उमा मन्त्र स हित हरिवंश जी दीक्षित हुए। इस प्रकार की धारणा आज व वैज्ञानिक युग म बहुत प्रामाणिक

१ वासुदेव गोस्वामी भक्त कवि ध्यास जी हित हरिवंश जी के निम्न पद को उहोंने सुना था —

भाजू भक्ति राजत द पति भोर।

सुरति रग के रस में भीने, नागर नवल सिंगोर।

जीवनी सण्ड। प० ५४।

२ गोस्वामी हित हरिवंश सम्प्रदाय और साहित्य।

३ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य।

प्रचार प्रारम्भ किया जिससे अय सम्प्रदाय भी प्रभावित हुए । यहाँ तक कि गौरीय सम्प्रदाय के प्रसिद्ध विद्वान भक्त प्रबोधानन्द सरस्वती स० १५६२ में बंदावन पधारे तो हित हरिवंश जी एव उनकी भक्ति पद्धति के प्रति अत्यन्त आकर्षित हुए । उन्होंने हित हरिवंश की स्तुति भी अपने अष्टक में लिखी है ।<sup>१</sup>

बंदावन आगमन के पश्चात् ही सम्भवतः उन्होंने अथ रचना की होगी<sup>२</sup> उनके चार ग्रंथ कहे गये हैं — 'राधा सुधानिधि' राधा की स्तुति में लिखा गया संस्कृत-स्तोत्र ग्रंथ है । हित चौरासी में उनकी भक्ति भावना की अभिव्यक्ति अष्ट काय के माध्यम से ब्रज भाषा के चौरासी पदों में हुई है । सत्ताइस स्फुट पद और दोहे भी ब्रजभाषा में ही प्राप्त हैं जिनमें साम्प्रदायिक सिद्धान्त एवं भावनाएँ हैं तथा यमुनाष्टक नामक संस्कृत स्तोत्र ग्रंथ भी उनका कहा जाता है । इनमें हित चौरासी निश्चय ही सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है काय की दृष्टि से भी एवं साम्प्रदायिक सिद्धान्त की दृष्टि से भी । यह उनकी परिपक्ववस्था का लिखा प्रतीत होता है । इसे सम्प्रदाय का मुख्य उपजीव्य ग्रंथ होने का गौरव भी प्राप्त है ।

वगी के अवतार कहे जाने वाले इस श्रेष्ठ भक्त कवि एवं आचार्य का निधन सन् १६०६ में हुआ । राधा कृष्ण युगल की सखी भाव से आराधना करने का संदेश देकर उन्होंने एक नये प्रकार का वैष्णव रहस्यवाद प्रवर्तित किया । प्रेम या हित तत्त्व का उन्होंने परास्पर तत्त्व की स्थिति तक पहुँचा कर प्रेम को भाव से दर्शन बना दिया । हित हरिवंश जी के योग्य शिष्य हरिरामदास ने राधावल्लभ सम्प्रदाय के उपास्य एवं उपासना विधि आदि का संपिप्त परिचय एक ही पद में दिया है । पद इस प्रकार है —

रतिक अनय हमारी जाति ।

कुल देवी राधा बरसानो खेरी, ब्रजवासिन सो पाति ।

गोत गोपाल जनेऊ माला सिखा सिलखि हरि मंदिर भाल ।

हरि गन नाम वेद धुनिमुनियत मूज पखावज कुस करताल ।

साखा जमुना हरि लीला पटकम, प्रसाद प्राण धन रास ।

सेवा विधि नियम जड सगति वसति सदा बंदावन बास ।

१ त्वमसि श्री हरिवंशायामवद्रस्य दग । परम रसद नादमोहित सव विष्व अनुपमगणदामनिमित्तोऽसि जिजेद्र, मम हृदि तव गायान्निब्रलेख सगना । प्रबोधानन्द ।

२ 'राधामुधानिधि' के बारे में यह क्या है कि वह उन्होंने राधा में ही लिखी थी ।

अमृत भागवत कृष्ण नाम सध्या तपन गायत्री जाप ।  
 बसो रिवि जजमान कल्पतरु व्यास न देत असीस-सराप ।  
 —भक्त कवि व्यास जी—पद सत्या ६३ पृ० २१५ ।

हित हरिवंश जी एव हरिदाम के प्रभाव का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि परवर्ती समस्त कृष्णापामक किमो न किसी स्तर पर मुगल विहार लीलाश्रावण संगीत भावापन गान का अर्पनाते हैं ।

### सूफी सम्प्रदाय सक्षिप्त इतिहास तथा तत्त्व दर्शन

सक्षिप्त इतिहास —सूफी मत के उत्पत्तिमूलक अर्थों की चर्चा मन पड हम उमक उन मामाअर्थ को ही इस विवेचन में अपने मन में रखेंगे जिमक अनुसार यह मत इस्लामी रहस्यवाद के लिये प्रयुक्त होता है । मन् ८०० के लगभग यह मत प्रयोग में आया था ।<sup>१</sup> तथा गीघ्र ही ५० वर्षों के भीतर ही यह इराक तक फैल गया एव ११ वीं शताब्दी तक पहुँचने-पहुँचते यह मत संपूर्ण मुस्लिम रहस्यवादियाँ के लिये प्रचलित हो गया था ।<sup>२</sup>

सूफीमत के मूल में तरह-तरह के सामाजिक आर्थिक कारण विद्वानों ने खोजन चाहे हैं जिनकी चर्चा यहाँ पर अप्रासंगिक होगी परन्तु इतना सकेत कर देना अनुचित न होगा कि सूफीमत के मूल में परम शक्ति के प्रति जो भक्ति भाव एकतत्त्व की भावना आदि बातें हैं वे सम्पूर्ण मानव जाति के अन्तर्गत के निकट की धारणाएँ हैं । निकलसन ने अबुल हसन अलनूरी का एक कथन उद्धृत किया है कि सूफीमत सभार के प्रति घणा एक प्रभु के प्रति प्रेम का प्रकाशन है ।<sup>३</sup> जुनद के अनुसार तस-बुफ ईश्वर द्वारा पुरुष में यकित्तत्व की समाप्ति और ईश्वरत्व की उत्पत्ति का नाम है ।<sup>४</sup> अलगाजारी ने जगत में शक्तिपूर्वक रहत हुय मन् ईश्वर में लीन रहना ही सूफी का लक्षण माना है ।<sup>५</sup> स्पष्ट है कि ये समस्त विनिष्ठताएँ समस्त उन्नत धर्मों में स्वीकृत हैं ।

१—आर० ए० निकलसन लिटरेरी हिस्ट्री ऑफ दि आरब्स पृ० २२८ ।

२—एनमाकबलोपीडिया आफ इस्लाम, प० ६८१ ६८२ ।

३—ए लिटरेरी हिस्ट्री आफ दि आरब्स प० ३६२ ।

४—वही प० ३६२

५—मागरेट स्मिथ अलगाजाली दि मिस्टिक, प० १०४ ।

विद्वानों ने सूफी मतवाद पर अनेक प्रभाव देखे हैं। 'इनमें से एक बग सूफीमतवाद को भारतीय साधना से बहुत अधिक प्रभावित देखता है।' इन लोगों का कहना है कि ईरान की प्रायः विचारधारा ने विजता इस्लाम धर्म के प्रति जो विद्रोह किया वही सूफीमत के रूप में प्रकट हुआ। परन्तु निकल्सन ने अत्यंत जोरदार ढंग में इस मत का खंडन करते हुये कहा है कि यह सत्य है कि सूफी विद्वान्ता पर इस्लामेतर साधनाओं का भी प्रभाव पड़ा है पर इस्लाम से ही उसका उदभव हुआ है। उसके अनुसार इस बात का क्या उत्तर है कि कुछ प्रारम्भिक प्रमुख सूफी प्रयोक्ता ईरान के प्रायः न होकर सीरिया और मिश्र के थे तथा जाति से अरब थे।' उनमें अत्यंत निर्भ्रान्त ढंग में कहा है सत्य यह है कि सूफीमत एक सकल वस्तु है और इसलिये इस प्रश्न का कोई सरल उत्तर नहीं दिया जा सकता कि वह कैसे उत्पन्न हुआ है। यो निकल्सन ने ईसाई नव अफलातूनी ज्ञानवाद बौद्धधर्म एवं वेदांत के प्रभाव स्वीकार किए हैं। उसने सूफियों के पना और बका सम्बन्धी विचारों पर बौद्ध विचारधारा का स्पष्ट ऋण स्वीकार किया है। 'इन प्रभावों के होते हुये भी यह सहज ही कहा जा सकता है कि सूफियों को अपने रहस्य ढंग में स्वयं करान से भी प्रेरणा मिली है। ईश्वर एक है तथा कल्याण और दया करने वाला है।' वह सर्वपापक और सबज्ञ है। इस पृथ्वी और स्वर्ग में जो कुछ है उसी का है और अंत में सभी पदार्थ उसी में विलय हो जाते हैं। ईश्वर असीम सौंदर्यमय है। ईश्वर उन्हें प्यार करता है जो सज्जन हैं। जुरान के ऐसे कथना में रहस्यवाद के बीज विद्यमान हैं। मोहम्मद साहब को करान जिस प्रकार उदभासित हुआ था वह सूफी के लिये अत्यन्त

१—इसमें सब वह नहीं कि सूफियों को अद्वैतवाद पर लाने वाले प्रभाव अधिकतर बाहर वाले थे। प रामचन्द्र शुक्ल जायसी प्रयावली की नूमिका प० १३१ १३२।

२—(क) वही प० १३२।

(ख) डॉ० मणोराम गर्मा भक्ति का विकास प १५१।

३—दि मिस्टिक्स आफ इस्लाम नूमिका प० ६।

४—वही पृष्ठ ६।

५—वही पृ १८।

६—योर गाड इज वन गाड इयर इज नो गाड सेव हिम द बेनीफिट दि मसौकुल—ग्लोरियस करान २।१६३।

७—अस्ताह इव धान एम्ब सिंग आल नोंडग वही ५०।४।

८—वही ५१४।

९—वही ५।१४८।

इच्छिन्व है क्याकि यह इम बात का प्रमाण है कि मनुष्य स ईश्वर योनिता है ।<sup>१</sup> इसी कारण मुस्लिम रहस्यवादा यह आगा कर सकता है कि वह अपन इम नंबर जावन म ही उम अविनांबर अमन तत्त्व की भाँकी उपलब्ध कर ल । इम प्रवाग सूफी साधना का बीज बपन माहम्मद साहब क समय हा हो गया था ।

प्रारम्भिक २०० वर्षों तक सूफी मतवाद वराम्य प्रभाव रहा है । परन्तु इस समय क अन्न हाते हात प्रेम की भावना धर करन लगी थी । एसी समय राबिया (८०० इ० क लगभग) अपनी भक्ति भावना म प्रिया का प्रेम अनन्यता भरकर उपामना करती है । वह ईश्वर क प्रति एक अत्यन्त नकटय का अनुभव करती थी । सूफीमत म दिव्य प्रेम का सिद्धांत सबसे पहल उसी की रचनाया म प्रकट हुआ था ।<sup>१</sup> एक स्थल पर वह कहती है ओ मेरे प्रिय तार चमक रह हैं मनुष्या का आँसे बाद हैं सभाटा न अपन द्वार बंद कर लिय हैं । प्रत्यन्त प्रेमा अपनी प्रियतमा क पाम है और यहाँ में एक मात्र तुम्हारे पास हूँ ।<sup>१</sup> एक अर्थ स्यान पर उमन अत्यन्त मान विभार क ठ स बटा है आ ईश्वर यदि मैं नरक क मय स तुम्हारी पूजा करती हूँ ता मुझनरवाग्नि म जना दा और यदि मैं स्वर्ग की आगा म तुम्हारी उपासना करती हूँ ता तुम मुझे स्वर्ग स निकाल दो परतुयदि मैं तुम्हारी उपामना बवन तुम्हारे लिए करती हूँ ता अपन गान्धत मौन्द्य का मुझे न छिपाया ।

इस प्रकार ईश्वरी मन का नवीं गताली म सूफीमत प्रेम एक अद्भुत चिन्तन न नय क्षेत्र म प्रवेश करता है । बगलाद म यह साधना अपनी पूणता का पहचता है । न्य साधना म दार्शनिक एव सद्भातिव दृष्टि स 'बायजी' विस्तामी का नाम बहुत अधिक महत्वपूर्ण है । उसन तमत्रुक म ईश्वर की सबव्यापकता अतवा एव आवेग का तत्त्व समविन किया । उसन सबसे पहल पना गल का प्रयाग किया था जिनके अनुमार साधक अपनी अहता का मारकर ईश्वर क प्रति विशय भाव स समर्पित हा जाता है । जुनून अल हल्लान आदि न अद्भुत घाने तत्व को और अधिक विकसित किया । ११ वा गताली क उत्तराय म अलतगजाता न गरीयत और तरीकत (गाहन एव व्यवहार) का समन्वय किया ।<sup>१</sup> यह दर्शनिय आबन्धक हा गया था कि धार धीरे सूफी सिद्धांत इस्लाम की मूल विचारधारा स दूर हटत जा रह थ । शजाली न उसे पुन इस्लामी बंद क निकट

१ ए० जे० आरवेरी सूफिज्म, प० १३

२ आरवेरी सूफिज्म, प० ४३ ।

३ भागरेट स्मिथ राबिया विमिस्टिक प० २७ ।

४ आरवेरी द्वारा प० ४२ पर उद्धृत ।

५ मसूफ हसन गिलमसेज आफ मेदीवत इन्डियन कल्चर, प० ३५ ।

ज्ञान का उद्योग किया।<sup>१</sup> यही पर यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि सूफी विचारधारा नबी गताब्दी से कवन प्रेममाग पर ही नहा चली ज्ञानमार्गी धारा भी बराबर प्रवाहित रही है पर प्रमुखता उसकी नहा थी। सूफी साधना प्रारम्भ से ही अपने स्वरूप में व्यक्तिक रही है परन्तु धीरे धीरे यह सामान्य जन को अपनी ओर आकर्षित करने लगी थी। इस कारण यह आवश्यक हा गया था कि सूफी सिद्धांत का एक व्यवस्थित रूपरखा दा जाय एव साधन प्रणाला का स्पष्ट निष्पण किया जाय। गजाली जैसे लोगो ने सूफीमत की इस दार्शनिकता को इस्नाम की धार्मिकता के साथ समन्वित करके साम्प्रदायिक ढांचे में भीतर व्यवस्थित करना चाहा। सनाई अतार एव जलानुद्दीन रुमी इसी परम्परा पर आगे चले हैं। १३वीं गताब्दी तक सूफियो के अनक छोटे माटे सम्प्रदाय बन गये थे। ग्यारहवीं से तरहवा गताब्दी तक सूफियो का स्वरा युग कटा जाता है। जलानुद्दीन रुमी इस युग का अतिम श्रेष्ठतम कवि था। रुमी में ज्ञानमार्गी एव प्रेममार्गी दाना धाराओ का समन्वय भी था एव इस्लाम की धार्मिकता भी सुरक्षित रही। ज्ञान और प्रेम को इस युग में अलग अलग करके नहीं देखा गया। यहां पर सूफिया की एक अय विशेषता की ओर इंगित कर देना उचित रहेगा। नगमग प्रत्येक सफी विचारक ने काय रचना की है। यह बात बष्णव चिंतको में भी सुरक्षित है। गायद ही कोई बष्णव चिंतक आचाय या महत ऐसा मिने जिमने काय रचना नहीं की है। प्रेम प्रधान ईश्वर को जब ग्रास्त्र के विरुद्ध एव उमके साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध अनुचित समझा जाने लगा तब इन कवियो ने लौकिक प्रेम पात्रा (सुदर रमली किगोर) एव वस्तुओ के प्रतीको के माध्यम से अपनी सौन्द्य एव प्रेम की अनुभूति को व्यक्त करना शुरू किया। यह बात दूसरी है कि प्रेम के इन प्रतीका का अवमूल्यन और ह्रास होकर ऐंद्रियता भी बनी—ठीक वस ही जैसे कि राधा और कृष्ण का ह्रास रीतिकान की शृंगारिकता में हुआ है।

### भारतवष में प्रवेग —

उत्तर-पश्चिमी भारत परतुकों के आक्रमण के साथ ही सूफिया का भारत में प्रवेग हाता है। सम्भवत पश्चिमात्तर भारत में सबसे पहले मुहरावदी सम्प्रदाय का आगमन हाता है परन्तु उनका प्रभाव क्षत्र बन्त नहीं बन्ता के सिध एव पश्चिमात्तर प्रांत तक हा सीमित रह। प्रभावगारी रूप में चिन्तिया सम्प्रदाय सबसे पहन भारतवष में प्रतिष्ठापित हुआ था। भारत में इस सम्प्रदाय को अत्यधिक सफलता मिलन का कारण यह था कि य नाग नयी परिस्थितिया के अनुकूल अपने

को बना सकन म समथ हुए थ ।<sup>१</sup> ख्वाजा मुश्नुद्दीन चिन्ता (जम ११४३ ई०) ने गहाबुद्दीन गौरी क आश्रमण के कुछ पूव सन ११६१ म इस सप्रदाय का प्रवेग भारतवप म कराया था । प्रसिद्ध मूफा विचारक अली दुविरी (दाना गकरगज) उसक पूव सही लाहौर म रह रह थ । चिन्ती उही के पाम कुछ तिन रह । तदुपरान्त वे तिली और वहा स अजमर चल गय । मुश्नुद्दीन क यवित्तव का तत्कालीन भारतीय जनतापर अन्त प्रभाव पडा था—विशपकर छोटे वर्गों क लाग उनकी आर आर्कषित हुए थ । अस तथ्य क कारण अजमर राजा क द्वारा उनका निकलवाने की चेष्टा भी टूड थी जा उनक यत्तित्व क प्रभाव क कारण मफल नही हा सकी थी ।

चिन्ती मता का समात क आध्यात्मिक मूल्य पर बहुत अधिक विद्वाम था एव वे सगीतना का अत्यधिक आदर करत थ । सगीत की इन मजलिमा म वे आवेग म आकर मूर्छित तक हो जात थ । मुश्नुद्दीन क गिष्य ख्वाजा कतुबुद्दीन बलियार काकी को एस ही किसी आवेग की अवस्था म मत्यु हो गयी थी । कतुब साहब क बाद इस सम्प्रदाय क प्रधान बाबा फरीद गजगकर हुए और उनक बाद निजामुद्दीन औलिया गद्दी क अधिकारी बन । दिल्ली क तुक सुल्ताना स लकर साधारण जनता तक इनका मवत्र आत्र था । य मभी विरागी एव ऊची कोटि क साधक थ । कभी भी बाग्गाहा एव सामतों क सम्पक को इहान प्राप्साहन नही टिया ।

गयामुद्दीन तुगलक जैसे बाग्गाह तथा धर्माच मुल्तागण उनक बढ़ते हुए प्रभाव तथा सगीत गाण्डिया का पसन् नहीं करत थ परन्तु कोई कठार पग उठान का उनका साहम नही हुआ । निजामुद्दीन औलिया का नाम वास्तव म भारतीय सूफी इतिहास म प्रभाव की दृष्टि स अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है । उनक मधुर यत्तित्व तथा उत्तर दृष्टिकाए न उह अत्यधिक जनप्रिय बना टिया था । उनका जम सवत् १३६३ वि० म बगामू म हुआ था । व कहा करत थे ओ मुस्लिमा में गपथ खाकर बहता हूँ कि वह (प्रभु) उमी को प्यार करता है जा उमक लिय मानवा को एव मानवा क लिय उसको प्यार करत हैं । आग चलकर अकबर क समय क प्रसिद्ध शख सलीम भी इसी सप्रदाय क भक्त थ ।

मुहरावर्दी सप्रदाय क शख वहाउद्दीन जकरिया भी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति थे जा मुलतान का अपना कद्र बनाय हुए थे । उनके गुम्माई हमीदुद्दीन नागारी भी सगीत क बड प्रमी थे । नागारी न तवलितगमन तथा लवाइह दा पुस्तकें भी फारमी म लिखी हैं । जकरिया क एक गिष्य हुसन अमीर हुसनी न भी तसब्बुफ पर अन्क

१ यमुफ हुसन ग्लिम्पसेज आफ मद्दीवत इ डिपन कल्चर प० ३६ ।

२ सियाहस औलिया (यमुफ हुसन द्वारा प० ४३ पर उद्धत) ।



पुस्तक लिखी। इसी संप्रदाय के सत जहांगीर को मुहम्मद तुगलक ने शख उल इस्लाम नियुक्त किया था, पर उनकी प्रवृत्ति उमम रमी नही और वे छोकर चले गये। इस संप्रदाय के अन्तगत मूसा सुहाग और उनका सदा सुहागिन संप्रदाय आता है।

फिर दोसिया संप्रदाय के सफी सत शख गरफुद्दीन माहिया मनरी (मृ १४३७ वि०) का सम्मान फीराज तुगलक बहुत अधिक करता था। इस संप्रदाय ने अपना मुख्य कायदेशन बतमान बिहार प्रदेश का बनाया था। मनरी स्वयं एक बड़े दार्शनिक और विचारक थे। मक्कूनात उनका विचारा का दिग्गक पठ रचना है। यह वह काल था जब इनुल अरबी (१२२२ ई० स १२६७ वि) के बहदतुल बुजु के सिद्धांत का प्रभाव भारतवर्ष पर पड़ रहा था। परन्तु मनरी ने अपनी स्वतंत्र चिंतना के बल पर उसे अस्वीकार किया था। वे इस्लाम की कट्टर विचारधारा के अधिक निकट थे।

कालिरी संप्रदाय की स्थापना बगलान में सवत १२२२ में हुई थी तथा मध्य एशिया एवं पश्चिमी अफ्रीका में इस्लाम को फैलाने में इसने बड़ा योग दिया था परन्तु भारतवर्ष में यह मत ग्राह्य नियामतउल्ताह तथा मखदूम मुहम्मद जीनानी द्वारा १५ वां शती के अंतिम हिस्से (सन १४८२) में लाया गया था। उहान भी गुजरात में सुहरावर्दी संप्रदाय के उच्छ को ही अपना केंद्र बनाया। इस संप्रदाय में और भी अनेक सत हुए हैं। इनमें से दारा गिकोट के गुरु मिया और प्रसिद्ध हैं।

नकाबंदी संप्रदाय हमारे लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह संप्रदाय विक्रम की १७वां शती के मध्य भाग के आस पास भारतवर्ष में ख्वाजा बाकी बिल्लाह (१६२०-१६६० वि) द्वारा लाया गया था। यह संप्रदाय शरीफत की पुनर्प्राप्ति पर बल देता है। ऊपर बह गये समस्त संप्रदाय मनरी को छोड़कर प्रमार्गी थे। मुगलकाल की नीति के अन्तगत वे खूब फल पूरे थे। परन्तु १७वीं शती का अन्त होते होय धर्माघता शास्त्रीयता शुद्धता (और रीति) की प्रवृत्तियां जीवन के सभी क्षेत्रों में बल पकड़ती हैं। नकाबंदी संप्रदाय इस प्रवृत्ति की देन है। बाकी बिल्लाह के शिष्य शख अहमद सिरहिदी मुजाहिद ने भी इनुल अरबी के सिद्धांतों का उदारदार खंडन करते हुए इस्लाम शास्त्रीयता की पुनर्प्राप्ति के लिये बल देना का प्रयास किया। इस प्रयास में हा औरगजब और नकाबंदी संप्रदाय एक दूसरे का सहयोग और समर्थन प्राप्त कर सकें। ऊपर और जीवक क्षेत्र पर बल देना ही उनमें बर्तान्तक अद्भुत तंत्रों के प्रभाव से अपने का अंत कर लेना चाहता।

उन प्रमुख संप्रदायों के अतिरिक्त अय कर्त सूफी संप्रदाय भी भारतवर्ष में प्रचार-लायक कर रहे थे। आर्ने धरवरा में अबुल फजल ने चौदह सूफी संप्रदायों

के नाम इस प्रकार गिनाये हैं —चिन्ती, सुहरावर्दी जदी इयादी, अघमी दुवेरी हवीजी तक जाकरवी सकती, जुनदी वाजहनी, तूसी और फिरदौसी,<sup>१</sup>

निष्कष—इस प्रकार १६वीं गती में हम प्रेमानुक्ति का अप्रतिहत प्रवाह दिखायी देता है। निम्बाक की राधा इस युग में रसोपासना की इच्छा बन गयी। चतुर्थ का राधा भाव ही गोस्वामियों द्वारा श्रेष्ठतम रस प्रतिपादित होता है। हितहरिवंश और हरिदास की माधुर्य उपासना छोटे-बड़े सभी के आकर्षण का केन्द्र बनी। पुष्टि माग में बालकृष्ण के साथ किशोर कृष्ण की लीलाएँ भी शत गत, सहस्र सहस्र पदों की रचना करवाती हैं। इनमें से प्रत्येक की अपनी विशेषता है, परन्तु मूल में मधुर उपासना है और उनके सम्मिलित रूप में परिणाम भी माधुर्यभाव का प्रचार प्रसार ही है। इन विविध साधनाओं के साधकों में आग का जसा विद्वेष भी नहीं था। वे लोग साधक थे—महन्त नहीं। आपस में अत्यन्त सौहार्द्र या इसलिये वे एक दूसरे से प्रभावित भी होते थे। ऊपर हम चर्चा कर चुके हैं कि बल्लभाचार्य जी ने श्री नाथ जी की सेवा पूजा का भार बगाला बण्णवा के पास ही रहने दिया था। वे प्रयाग में चतुर्थ दश से मिले भी थे।<sup>२</sup> प्रबोधानन्द (प्रबोधानन्द सरस्वती जिन्हें काशी में चतुर्थ ने शिक्षा दी थी) हित हरिवंश के अत्यन्त प्रशंसकों में थे तथा हरिराम व्यास ने राधाबल्लभिय हातें हुए भी अपने पुत्र किशोरदास को स्वामी हरिदास से दीक्षा दिलवायी थी। गौडीय पटगोस्वामियों को बदायन में अत्यन्त आदर के साथ देखा जाता था। एवं उनके भक्तिरस-सवधी विवेचनों का प्रभाव निरिच्छित रूप से अन्य आचार्यों पर भी पड़ा। स्वयं चतुर्थ दक्षिण से जो दो ग्रन्थ लाय थे उनमें लीला युक्त बिल्वमंगल का कृष्ण कर्णामृत ग्रन्थ किसी अन्य मतावलम्बी का था। गौडीय बण्णव मधुर रस

१ डॉ० विमलकुमार जन सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० ८३ पर उद्धृत।

२ “भक्ति के साधन पक्ष में श्री बल्लभाचार्य जी के सम्प्रदाय पर श्री रूपगोस्वामी द्वारा विवक्षित भक्ति पद्धति का किसी हृद में प्रभाव श्री विठ्ठलनाथ जी के समय में अवश्य हुआ। संभव है कि श्री बल्लभाचार्य जी ने अथवा गोस्वामी विठ्ठलनाथ जी ने गान और वाद्य की महत्ता चतुर्थ महाप्रभु की प्रेरणा से ली हो।”

डॉ० दीन दयालु गुप्त अष्टछाप और बल्लभ सम्प्रदाय, पृ० ५८।

बट्टघ्य है कि गान और वाद्य की यह महिमा अन्य बण्णव सम्प्रदायों में भी स्वीकार की गयी एवं उसका चरम रूप स्वामी हरिदास में उपलब्ध होता है।

के उपासक थे ही निम्बाक की दशश्लोकी में भी राधा की स्तुति है। निम्बाकिया में मधुर उपासना का प्रवाह श्री भट्ट से प्राप्त होने लगता है। यह बात दूसरी है कि बंगाल में राधा परकीया बनी रही पर वत्सवन में व स्वकीया बन गयी तथा हित हरिवंश एव हरिदास की नित्य लीला में व स्वकीया परकीया निविशेष। यह प्रेम साधना राधा एव गोपिया के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है। पीछे हम माधवद्र पुरी का जिक्र कर चुके हैं। श्रीनाथजी के विग्रह की प्रतिष्ठा बलराम ने की उसके पूर्व पुजारी का नाम माधवानन्द (बंगाली) वार्तासाहित्य में आता है तथा गान्धर्वी विठ्ठलनाथ जी के बाल गुरु माधवद्र पुरी बनलाय गये हैं। यदना यदि एक ही न भी हो तब भी पुष्टिमार्गीय आचार्यों एव गौडीय बध्णव भक्ता का निकट सम्पर्क एव मानिष्य तो सिद्ध होता ही है। विभिन्न सम्प्रदायों के कवियों ने सम्प्रदाय का ध्यान रखे बिना ही भक्तों के नामों का सादर उल्लेख किया है। हरिराम व्यास का एक पद देखिए —

बिहारिंह स्वामी बिन्दु को गाव ।

बिन्दु हरिबसहि राधा बल्लभ को रस रीति सुनाव ।

रूप सनातन बिन्दु को बदादिपिन माधुरी पाव ।

कृष्णदास बिन्दु गिरिधरजू को को भ्रम साड लडाव ।

मोराबाई बिन्दु को भक्तनि पिता जान उर लाव ।

स्वारय परमारय जमल बिन्दु को सब बध कहाव ।

परमानन्द दास बिन्दु को भ्रम लीला गाइ सुनाव ।

सूरदास बिन्दु पद रचना को कौन कविहि कहि आव ।

श्रीर सक्ल साधन बिन्दु को कलिकाल कटाव ।

व्यास दास इन बिन्दु को भ्रवतन की तपन बुभाव ।

भक्तों का गणगान करते समय इन नागा ने निगण-सगण जस अन्तर भी नहीं किए हैं।

राधाकृष्ण की भक्ति का इस स्वरूप ने सगुण मत का दूसरे मुख्य धाराध्य राम का उपासक भक्ता का भी बहुत प्रभावित किया। १७वीं शती से यह प्रभाव पहना शुरू हो गया था तथा १६वां १६वां शती तक यह प्रभाव बढ़ता ही गया। सगुणात्मक न हान का कारण सत-मत में वन दम्पति लीलाया की सीधी अभिव्यक्ति नहीं हुई परन्तु मधुर भाव की जो मूल धारणा थी उसका प्रकाशन साधक एव धाराध्य का मध्य प्रतीक रूप से अवश्य हुआ। इस प्रतीक पद्धति का नियतत्वान साधनाओं में मूफा प्रेम भावना साधी प्रेरक शक्ति का रूप में विद्यमान थी। मूफा प्रेम भावना स्वयं वन प्रेमाभक्ति की विविध साधनाओं को

या। वास्तव में ये सभी साधनाएँ परस्पर एक-दूसरे का प्रभावित करती रही हैं। परन्तु इन प्रभावों का घातक स्वरूप निर्धारण एवं प्रभावित प्रक्रिया की गति का वस्तुपरक निणय कठिन है। जीवित साधनाओं की ग्रहण प्रक्रिया इतनी जटिल एवं सूक्ष्म होती है कि उसकी समस्त गिराओं का विश्लेषण नितांत दुर्लभ हो जाता है। इसके अतिरिक्त ऐसे अध्ययन के लिए व्यापक सामाजिक जीवन व सभी पक्षा के भाँकडे भी इस समय तक उपलब्ध नहीं हो सके हैं। जब तक समाज के विभिन्न पक्षा एवं विचारों के प्रामाणिक इतिहास नहीं प्रस्तुत हो जाते तब तक प्रभावों की व्याख्या के लिए स्पष्ट और दृढ़ आधार नहीं मिल सकता है तथा सामाजिक जीवन के सन्दर्भ में इन सब की निर्भ्रांत व्याख्या भी संभव नहीं हो सकती।





द्वितीय  
अध्याय

भक्ति विवेचन



## भक्ति के तत्त्व

पिछले अध्याय में हम कह चुके हैं कि भक्ति की प्राचीन परम्परा पन्द्रहवीं सोलहवीं शताब्दी में आकर एक नये आवेश और शक्ति से समृद्ध हो उठी है। इसी काल में देश के विभिन्न भागों में विभिन्न भक्ति सम्प्रदायों का उत्पन्न होना आरम्भ हुआ है। यद्यपि बाद का भी कुछ सम्प्रदाय अस्तित्व में आये पर वे सभी मूलतः इन्हीं की शाखा प्रशाखाएँ हैं। इस अध्याय में हम भक्ति के स्वरूप विश्लेषण का प्रयास करेंगे। भक्ति की विविध परिभाषाओं के अनुशीलन से हम ऐसा लगा कि भक्ति के कतिपय सामान्य तत्त्व निर्धारित किये जा सकते हैं। प्राचार्यों ने अपनी पूजा, भाव या दर्शन विशेष के अनुसार इनमें से कभी-किसी एक पर बल दिया है और कभी-किसी दूसरे पर। नीचे हम भक्ति की कतिपय परिभाषाएँ दे रहे हैं —

१ महात्मानस्तु मा पाय दवी प्रकृतिमाश्रिता ।  
भजरथनयमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥  
सतत शीतयता मा यततश्च दृढव्रता ।  
नमस्यतश्च मा भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ॥

(गीता ९।१३-१४)

२ या प्रीतिरविवेकाना विषयेष्वनपायिनी ।  
स्वाममनुस्मरत सा म हृदयाभासपतु ॥

(विष्णु पुराण १-२०।२०)

(अविवेकी पुरुषों की विषयो में जसी अविचल आसक्ति रहती है तुम्हारा अनुस्मरण करते हुये तुम्हारे प्रति मेरी भी वसी ही अविचल प्रीति रहे वह मेरे हृदय से कभी दूर न हो।)

३ सर्वोपाधिविनिमुक्त तत्परद्वयेन निमतम् ।  
हृषीकेश हृषीकेश सेवन भक्तिरद्वयम् ॥



(नारद पांचरात्र कल्याण भक्ति, अंक पृ० २६१ पर उद्धृत)  
तत्परतापूर्वक सम्पूर्ण उपाधिया से रहित हाकर इंद्रिया से विमुक्त भवगत्सवा  
ही भक्ति बनी जाती है।)

४ (क) मदगुणधृतिमात्रेण मयि सबहुहाण्य ।  
मनोगतिरविच्छिन्ना यया मगाम्भसोऽम्बुधी ॥  
लक्षण भक्तियोगस्य निगुणस्य ह युदाहृतम् ।  
अहैतक्यव्यवहिता या भक्ति पुरुषोत्तम ।

(श्री मदभागवत ३।२६।११ १२)

(सागर में स्वतः प्रवाहित गंगा के जल की धारा के समान जो मनोगति मेर  
गुण अथवा मान से कतानुम धाररहित तथा भेदरहित विहीन (अन्य भाव)  
होकर सर्वान्तर्यामी मुझ पुरपात्तम में अविच्छिन्न भाव से निहित होती है वह  
मनागति क्या भक्ति ही निगुण भक्तियोग का स्वरूप है।)

तथा

(ख) देवाना गुणतिगानामानु अविक्कमणाम् ।  
सत्त्व एवकमनसो वति स्वाभाविकी त या ।  
अनिमित्ता भागवती भक्ति

(श्री मदभागवत ३।२५।२२ ३)

(तात्पर्य यह कि सासारिक त्रिषया का ज्ञान देने वाली इंद्रिया की स्वाभाविक  
प्रवृत्ति निष्काम रूप से जब भगवान में लगती है तो उसे भक्ति कहते हैं।)

५ मोक्षद्वारणसामग्र्यां भक्तिरेव गरीयसी ।  
स्वस्थरूपानुसंधान भक्तिरित्यभिधीयते ॥  
स्वात्मतत्त्वानुसंधान भक्तिरित्यपरे जय ।

(गकराचाम विवर चूडामणि २ ५५)

(मुक्ति का कारणरूप सामग्री में भक्ति ही सर्वत्र बतकर है और अपने वास्त  
विक स्वरूप का अनुसंधान करना ही भक्ति कहलाना है। कोई कां स्वात्म  
तत्त्व का अनुसंधान ही भक्ति है—एसा क्तन ।)

६ भक्त श्लेषे बधत्त सवाया परिकीर्तिता ।  
तस्मात् सवा बुध प्रोक्ता भक्तिसापनमूयसी ।

(गरुड पुराण अ० २३१)

(भज धानु का सवन के अर्थ म प्रयाग हावा है इसलिय बुद्धिमाना न सत्रा का ही भक्ति का प्राण कहा है ।)

७ पूज्ये च्वनुरागो भक्ति (पूज्य जना म अनुराग ही भक्ति है ।)  
(दवी भागवत ७।३१)

८ (क) सा परानुरक्तिरीश्वर (वह इश्वर म परानुरक्ति है ।)  
(गाडिल्य भक्तिमून २)

(ख) द्वय प्रतिपन्नभावाद्भक्त्यादाच्च राग । (वही ६)

९ (क) सा तस्मिन् परमप्रेमस्था (वह इश्वर क प्रति परम प्रेम स्था है)  
(नारदभक्तिमून २)

(ख) नारद भक्ति सूत्र म बताया गया है कि भगवान की पूजादि म (अनुराग पारागर क अनुसार भक्ति है तथा क्याशा आदि म प्रेम गग मुनि क के अनुसार भक्ति की परिभाषा है । सूत्र १६ एव १७)

१० (क) स्नेहपूवकमनुष्पानम '—रापानुज विगिष्टाद्वैत काग  
(मपात्रक डी० टी० ताताचाय पृ० १८४)

(ख) महनीयविषये प्रीतिरय प्रीतिरुपापन्नाध्यानम सा एव भक्ति  
योग

परमाभक्तिरतिगयिता प्रीति

(परमाभक्ति अतिगय प्रेम है ।) (बदात दगिन वती  
पृ० १८४)

११ श्री चण्डव मप्रदाय क अनुसार ' भक्ति का सार है प्रपत्ति  
प्रपत्ति की उपासना स भगवत्कृपा सपान्ति होती है और इसी भगवत्कृपा स ही भक्ति की प्राप्ति हाती है ।  
(वती पृ० २१८ १८)

१२ कृपास्य कथादियुजि प्रजायते  
यथाभवेत् प्रेम विनेयलक्षणा ।  
भक्तिह यनयाधिपतमहामन  
सा चोत्तमा साधनरूपिका परा ॥

(निम्बार्काचाय दगदगाका ६)

(स्वादि गुणा स युक्त पुरुष क ऊपर भगवान श्रीकृष्ण की कृपा प्रकट हाता है ।

उस कृपा के द्वारा उन सर्वेश्वर परमात्मा भ्रम विशेष रूपा भक्ति उत्पन्न होती है । यह भक्ति दो प्रकार की है—

(एक साधारण रूपा अपराभक्ति और दूसरी उत्तमा पराभक्ति)

१३ माध्व सप्रणय म मल रहित निर्दोष (निस्वय) भ्रमलाभक्ति को सायुज्य मुक्ति का उपाय माना है ।

(बलदेव उपाध्याय भागवत सप्रणय पृ २२६)

१४ सा तलधारासमानित्य सस्मृति सन्तानरूपेणपरानरक्ति ।

भक्तिविवेकादिकसप्तजया तथा यनाद्वष्टमुबोधकागा ॥

(रामानन्द—ब० म० भा० लोक ६५)

(तेजधारा के समान अविच्छिन्न रूप से नित्य स्मरणपूर्वक परम अनराग ही भक्ति है। वह सात विवेकादि उपायों से उत्पन्न होती है तथा यनादि के आठ भ्रम उसके बाधक हैं ।)

१५ माहात्म्यज्ञानपूर्वस्तु सुदृढ सबतोऽधिक ।

स्नेहोभक्तिरिति प्रोक्तस्तथा मुक्तिनचायया ।

(बल्लभाचार्य त० दी० नि० शास्त्राय प्रकरण ४६)

(भगवान् के माहात्म्य ज्ञानपूर्वक उनमें सर्वाधिक और दृढ स्नेह का होता ही भक्ति है और उसी से मुक्ति होनी है । मुक्ति का अन्य कोई उपाय नहीं है ।)

१६ अयाभिलषितायुज्य ज्ञानकमाधनावतम ।

अनकृत्येन कृष्णानुशीलन भक्तिरुत्तमा ।

(रूप शास्त्रामी हरिभक्ति रसामत मित्र पूर्वक विभाग १।११)

(सम्पूर्ण अभिलाषाभा से रहित तथा ज्ञान और क्रम से अनाच्छादिन शीकृष्ण के अनकृत अनशीलन उत्तमा भक्ति है ।)

१७ इतस्य भगवद्भक्ति धारावाहिकता द्भूता ।

सर्वेणैमनसो यतिभक्तिप्रियभिधीयते ।

(मधमूक्तन मरस्वती भक्ति रसायन १।३)

(भागवत धर्मों का सवन करने से भक्ति दृश्य चित्त का भगवान् सर्वेश्वर के प्रति जा धारावाहिक (अविच्छिन्न) वृत्ति है उसी को भक्ति कहते हैं ।)

१८ भक्तिभनम उत्तासविशेष । (भक्ति भीमासा सूत्र १)

(भक्ति भन का विषय उल्लास है ।)

१९ सर्वात्मनानिमित्तं च स्नेहधारानुकारिणी ।

वक्ति प्रेमपरिष्वक्ता भक्तिर्माहात्म्यं बोधजा ॥

(गाडिल्य संहिता कल्याण भक्ति प्रकृ पृ० २४७ पर उदघत)

२० निसिदिन हरि सौं चितासवित, सदा ठगयो सो रहिये ।

काऊ न जानि सके यह भक्ति प्रेम लक्षण ॥ कहिये ॥

(सुन्दर दाम नान समुद्र भक्ति निरूपण ४०)

इन परिभाषाया तथा सम्बन्धित साहित्य क अध्ययन क पश्चात् हम भक्ति के निम्नलिखित तत्त्व निर्धारित कर सकते हैं —

(१) प्रेम — भक्ति का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व प्रेम है यह कहना तनिक भी अनुचित न होगा । वास्तव म यह तत्त्व ही वह आधार है जो भक्ति का अग्र साधनामार्गों से पृथक् ही नहीं करता श्रेष्ठ भी बनाता है । या तो भागवतकार न कहा है जा पुरुष भगवान म निरन्तर काम श्रोष भय स्नेह ऐक्य या सौहार्द का भाव रखते हैं व भी तमयता का प्राप्त हो जाते हैं । तथा बल्लभाचार्य न भी लिखा है 'सर्वदा सर्वभावेन भजनीय । ब्रजाधिप ।' परन्तु जमा कि पूव कथित परिभाषाओं स जात होगा कि रागतत्त्व का भक्ति क क्षय म जसा श्रेष्ठ प्रकारान् प्रेमभावना (अनुरक्ति स्नेह लगाव) म होता है वसा अग्रय कही नहीं । यह प्रेमभावना अनेक रूप ले सकती है इसकी चर्चा हम आगे करेंगे ।

यही पर प्रश्न यह उठाया जा सकता है कि इम प्रेम स तात्पर्य क्या है ? चतुर्थ सम्प्रदाय म प्रेम को काम से अलग करते हुये उसे वृष्णमुख तात्पर्य

१ (क) तत्त्ववस्तु वृष्ण, वृष्णभक्ति प्रेमरूप ।

घ० घ० आ० ली० परि०२, पृ० १० ।

(ख) प्रीति बिना नहि भगति दृष्टई

रा० घ० मा० उ० का, ८६ ।

२ श्री मवभागवत ३।२६।१५ ।

३ चतुःश्लोकी १ ।

४ दृष्टव्य परिभाषा सन्या २ ७ ८, ९ १०, १२, १४ १५, १८

१९ एव २० ।

कहा ।<sup>१</sup> पुष्पिमार्गीय गायत्रर महाराज ने अपने भक्तिभातण्ड नामक ग्रन्थ में प्रथमम्बुधा कतिपय विचारा का संकन किया है ।<sup>२</sup> संकन के अनुसार भक्ति चित्तमणि में योग विद्या-वृत्ति का प्रथम कहा गया है यानी विद्या में वियोग ही गता और वियोग में योग की उत्कृष्टा ही प्रथम है ।<sup>३</sup> श्री स मिनता जलता गुणावर का मत उक्त है—यथा यागे वियोग वृत्ति प्रेम तथा विद्याये योगवृत्तिरपि प्रथम ।<sup>४</sup> गाविन्द चन्द्रवर्ती का मत है कि जो तमाम आपत्तियाँ के एक कठिनाय्या के बीच में नहीं छोड़ता ऐसा गायत्र यमन ही प्रथम है ।<sup>५</sup> परमाथ टक्कन के अनुसार वस्तु के प्रति एक (गहन) अवलम्बनीय प्रकार (या विचार) को प्रथम कहते हैं ।

इन मतों में एक विशेष आक्षेप या आकांक्षा-तत्त्व का प्रथम के मूल में स्वीकार किया गया है एक मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह अनचित भी नहीं है । विष्णुवराणों रामचरित मानस<sup>६</sup> सुन्दर दास के ज्ञान समुद्र आदि में इसी आक्षेप का स्वीकार किया गया है ।

आक्षेप जो जड़ के प्रति है वह चिद के प्रति हो जाय—गत केवल स्तनी है । जब गास्वामी ने अपने भक्ति सन्देह में स्पष्ट कहा है तब विषयिण स्वभाविका विषय ससर्गे छामय प्रमा राग यथा चक्षुरादीना सीदर्याय तादृश

- १ आत्मेश्वर प्रीति इच्छा तार नाम काम कृष्णोऽय प्रीति इच्छा घरे प्रथम नाम कामर तात्पय निज सभोग केवल कृष्ण सुख तात्पय प्रथम तो प्रबल आत्म सुख दुख गोपी ना करे विचार कृष्ण सुख हन कर सदयगार ।

कृष्णायाम कविराज चतुर्थ चरितामृत आदि लीला परिच्छेद पृ २८

- २ अथ हम आग चन्द्रर देखें कि राधावल्लभ सप्रणय जैसे रसिक मता की प्रथम भावना पर ऐसे मता का गहरा प्रभाव है ।
- ३ गाड़ यसन साहस्र सन्पात पि निरंतरम न हायते यन्नि स्वादु तत प्रथमन्यणम । भक्ति भातण्ड प ० ७५
- ४ वस्तुमाप्रविषयिणी वचनानर्हामभीहा प्रथम —वही
- ५ १। १२०
- ६ अतिम दाहा
- ७ भक्ति निष्पन्न ६३

एवान् भक्तस्य श्रीभगवदपि राग इत्युच्यते।<sup>१</sup> अर्थात् जैसे विषयी पुरुष का स्वभावतः ही विषयों के प्रति विषय ससग की इच्छा से युक्त आकर्षण होता है जैसे आत्मा आदि का सौन्दर्य के प्रति भुक्ताव होता है उसी प्रकार भक्त का जब भगवान् के प्रति आकर्षण उत्पन्न होता है तब उसे राग कहते हैं।

परन्तु गापेश्वर महाराज राग के इस आकांक्षा तत्त्व का स्वीकार नहीं करते। उनके अनुसार आकांक्षा एक दूसरी आकांक्षा (पुरुषाय) का विषय नहीं बन सकती। उनके अनुसार भक्ति में भज धातु है एवं क्तिन् प्रत्यय है। धातु का अर्थ सेवा है और प्रत्यय का प्रेम। इन दोनों से मिलकर यह गण्य बनता है और दोनों ही अर्थों को लक्षित कराता है। बिना प्रेम के सेवा कष्टकर होती है एवं सेवा व बिना प्रेम पूरा नहीं होता है।<sup>२</sup>

इस विवेचन से हम भक्ति व दूसरे तत्त्व पर पहुँचते हैं और वह है सेवा। (२) सेवा— गण्ड पुराण<sup>३</sup> की परिभाषा में युत्पत्ति की आर सक्ते करते हुए ही सेवा की भक्ति का साधन कहा है। नारद पाचरात्र<sup>४</sup> की परिभाषा में भी इन्द्रिया द्वारा सभी उपाधियों से मुक्त होकर तत्परतापूर्वक सेवा करने का ही निर्देश किया गया है।<sup>५</sup> निम्बाक सम्प्रदाय में स्वयं निम्बाक ने कहा है वृष्ण के चरण कमला की सेवा छोड़कर अन्य कोई उपाय नहीं है—

ना या गति कृष्ण पदारविदात  
सद यते ब्रह्मनिवादिबदितात ।  
भक्ते द्योपात मुचितय विग्रहा  
दक्षिण्यगस्तेरविच्चित्य साशयात ।

वास्तव में जहाँ भी सखी भाव या मजरी भाव की उपासना स्वीकृत है वहाँ पर सेना भावना अनिवार्य है। निम्बाक चतुर्थ राधावल्लभिय, हरिदासी एवं राम भक्ति के मधुरापासक इन सभी सम्प्रदायों में सखी द्वारा युगल रूप की सेवा सर्वात्मना स्वीकृत है। पुष्टि माग को तो सेवा माग भी कहते हैं। वहाँ पर तनूजा, वितजा और मानसी, तीन प्रकार की सेवाएँ मानी जाती हैं। बल्लभाचार्य

१ जीव गोस्वामी भक्ति सारभ (षट् सारभ) पृ०—६४८ (प्र० न्यामलाल गोस्वामी, कलकत्ता) ।

२ ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिनासफी (चतुर्थ खण्ड) एस० एन० दास गुप्त पृ० ३५१ ।

३ देखिये परिभाषा स० ६ ।

४ निम्बाक दण्डलोक की श्लोक ८ ।

कहा ।<sup>१</sup> पुष्टिमार्गीय गाणेश्वर मन्तराज ने अपना भक्तिमानण्ड नामक प्रथम प्रथमम्बुकी कल्पित विचारा का गवन्दन किया है ।<sup>२</sup> मन्तराज ने अनुसार भक्ति चिन्तामणि म योग त्रियाग वृत्ति को प्रथम कहा गया है यानी त्रियाग म वियोग शी शशा और वियोग म याग शी उत्कृष्ट ही प्रथम है ।<sup>३</sup> श्री ग मिलता जलता गुणाकर का मत उक्त है—यथा योग वियोग वृत्ति प्रथम तथा त्रियाग योगवृत्तिरपि प्रथम । गोविन्द चम्पूओं का मत है कि जो तमाम प्राणनिषाक एक कठिनाय्याक बीच भी नहीं छोड़ता एसा गान् यगत ही प्रथम है ।<sup>४</sup> परमाथ टक्कनक अनमार वस्तु क प्रति एक (गहन) श्रवणनाय पुकार (या विचाव) को प्रथम कहते हैं ।

इन मतों का एक विशेष आकषण या आनाशा-तत्त्व को प्रथम क मून म स्वीकार किया गया है । एक मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह अनचित भा नहीं है । विष्णुपुराण<sup>५</sup> रामचरित मानम<sup>६</sup> सुन्दर दासक नान समद आदि म श्री आकषण का स्वीकार किया गया है ।

आकषण जा जड के प्रति है वह चिद क प्रति हो जाय—गत केवल तनी है । जीव गोस्वामी ने अपने भक्ति सद्भ म स्पष्ट कहा है तत्र विषयिण स्वाभाविको विषय ससर्गे छामय प्रमा राग यथा चक्षुरादीना सौदर्याय तादृग

- १ आत्मोद्भय प्रीति इच्छा तार नाम काम कृष्णोद्भय प्रीति इच्छा धरे प्रथम नाम कामर तात्पर्य निज सभोग केवल कृष्ण सुख तात्पर्य प्रथम ती प्रबल आत्म सुख दुख गोपी ना करे विचार कृष्ण सुख हेत करे सदा-पह्लार ।

कृष्णदास कविराज चतुर्थ चरितामृत आदि सीला परिच्छेद ४ पृ० २८

- २ अत्र हम आग चलकर देखेंगे कि राधावल्लभ सप्रदाय जैसे रसिक मतो की प्रथम भावना पर ऐसे मतो का गहरा प्रभाव है ।
- ३ गान् यसन साहस्य सम्पाते पि निर तरम न हीयते यदिहेति स्वाहु तत प्रथमक्षणम् । भक्ति मातण्ड, प० ७५
- ४ वरतमात्रविषयिणी वचनानर्हासमीहा प्रथम —वही
- ५ ११०१२०
- ६ अतिम दोहा
- ७ भक्ति निरूपण ४३

एवात्र भक्तस्य थाभगवत्स्यपि राग इत्युच्यते ।<sup>१</sup> अर्थात् जस विषयी पुष्पा वा म्वभावत ही विषया व प्रति विषय-मसग की इच्छा स युक्त आरपण हाता है जस आखा आदि वा सौन्दर्य के प्रति भुकाव हाता है उसी प्रकार भक्त वा जव भगवान व प्रति आरपण उत्प न होता है, तव उस राग कहन हैं ।

पर तु गापेक्षर महाराज राग के इस आकाशा तत्व का स्वीकार नहीं करते । उनक अनुसार आकाशा एक दूसरी आकाशा (पुष्पाय) का विषय नहीं बन सक्ता । उनक अनुसार भक्ति म भज धातु है एव त्तिन प्रत्यय है । धातु का अर्थ सेवा है और प्रत्यय का प्रम । इन दोनों स मिलकर यह गण बनता है और दीना ही अर्थों को लभित कराता है । बिना प्रेम व सेवा कष्टकर हाती है एव सेवा व बिना प्रम पूण नहीं होता है ।<sup>२</sup>

इस विषयन से हम भक्ति व दूसरे तत्व पर पहुचते हैं और वह है सेवा । (२) सेवा— गहड पुराण<sup>३</sup> की परिभाषा म 'युपति की आर सक्त करत हुए ही सेवा का भक्ति का साधन कहा है । नारद पाचरात्र की परिभाषा म भी इन्द्रिया द्वारा सभी उपाधिषों से मुक्त होकर तत्परतापूर्वक सेवा करन का ही निर्देश किया गया है ।<sup>४</sup> निम्बाक सम्प्रदाय म स्वयं निम्बाक न कहा है कृष्ण व चरण कमला की सेवा छोडकर अर्य कोई उपाय नहीं हैं—

नाया गति कृष्ण पदारविदात  
सदभ्यते ब्रह्मिवाविववितात ।  
भक्तेऽद्योपात-मुचिततय विग्रहा  
दचित्यगवत्तरविचित्य सागयात ।<sup>५</sup>

वास्तव म जहाँ भी सखी भाव या मजरी भाव की उपासना स्वीकृत है वहा पर सेवा भावना अनिवाय है । निम्बाक चतय राधावल्लभीय हरिदासी एव राम भक्ति व मुरापासक इन सभी सम्प्रदायों म सखा द्वारा युगल रूप की सेवा सर्वात्मना स्वाकृत है । पुष्टि माय का ता सेवा माय भा कहत हैं । वहा पर तनूजा वितजा और मानमी तीन प्रकार की सेवाए मानी जाती हैं । बलनभाचाय

१ जीव गोस्वामी भक्ति सद्भ (पट सद्भ) पृ०—६४८ (प्र० 'यामलात गोस्वामी, कलकत्ता) ।

२ ए हिन्दू आरु इण्डियन किलामकी (चतुय सत्र) एस० एन० दास गुप्त प० ३४१ ।

३ दलिये परिभाषा स० ६ ।

४ निम्बाक दगालोकी श्लोक ८ ।



के अनुसार कृष्ण सेवा साक्षात् मानसी सा परामना ।<sup>१</sup> बल्लभाचार्य ने अपने ग्रन्थ सेवा फल म सेवा का स्वरूप एवं परिणाम सभी विवेचित किये हैं। उनके अनुसार सेवा के तीन फल प्राप्त होने हैं—धर्तृविजय सामर्थ्य साधुपुण्य एवं सेवोपयोगी देह। इनमें प्रथम सबसे श्रेष्ठ है जो कि मानसी सेवा का परिणाम है। पुष्टिभाग ने प्रतिष्ठित आचार्य हरिराय जी ने भी सेवा का विशेष विवेचन किया है। उनके अनुसार भी तीन प्रकार की प्रभु-सेवा म मानसी सेवा ही पत्र रूपिणी एवं निरोधरूपा है तथा वह ब्रजभक्ता म यही सिंगापी देती है। हरिराय जी ने तो सेवा और पूजा का भी अंतर स्पष्ट करते हुए बताया है कि सेवा म स्नेह व साथ लौकिक युक्ति से परिचर्या होती है तथा पूजा म शास्त्रानुसूत धचना की जाती है।<sup>२</sup> गोस्वामी विठ्ठलनाथ जी ने सेवा विधि की सामोपाग व्यवस्था की थी। इस तत्त्व के अंतगत ही विविध सम्प्रदायों की अष्टयाम सेवा भी आती है। दास भाव की भक्ति का तो मुख्य आधार ही सेवा तत्त्व है। वात्मत्म मे पुत्र की सेवा होती है और सख्य भाव मे भी सेवा का अभाव नहीं है।

सेवा या तो प्रिय की होती है (और प्रेम तत्त्व को हम ऊपर स्वीकार कर चुके हैं) या फिर महत की। इस स्थापना के साथ ही हम भक्ति के तीसरे तत्त्व पर आते हैं।

(३) माहात्म्य ज्ञान—नारद ने अपने भक्ति सूत्र भक्ति भावना के लिये यथाज्ञजगोपिकानाम<sup>३</sup> कहा है। तत्पश्चात् अगले सूत्र मे ही कह दिया है कि इस अवस्था म भी (गोपियों मे) माहात्म्य ज्ञान की विस्मृति का अपवाद नहीं क्योंकि उसने बिना वह प्र म जारो के प्र म के समान है। बोपदेव ने इसी बात को अपने मुक्ताफत्र ग्रन्थ म दुहराया है कि स्नेह निषिद्ध तत्त्व तब बन जाता है जबकि देवता को देवता की तरह न देखकर मिन के समान देखा जाता है।<sup>४</sup> वास्तव म बिना माहात्म्य ज्ञान के जो प्र म होगा वह स्वमुख की और अधिक ध्यान देगा एवं जब तक अहता विद्यमान है तब तक प्रभु प्राप्ति होती नहीं। माहात्म्य ज्ञान होने पर ही प्रेम तत्सुखी बनता है। इसीलिये बल्लभाचार्य ने सुदृढ एवं 'सबतोऽधिक प्रेम को माहात्म्य ज्ञान पूर्वक होने पर ही भक्ति कहा

१ बल्लभाचार्य सिद्धांत मुक्तावली १।

२ गोस्वामी हरिराय स्वमार्गोप सेवाफल निरूपण रूप निणय  
श्लोक ४८।

३ ना० भ० सूत्र २१।

४ वही सूत्र २२ २३।

५ के सी० बरदाचारी 'आसपेकटस आ फ भक्ति (मसूर मुनिव  
सिटी १६५६) म उद्धृत प १५।

है।<sup>१</sup> यद्यपि प्रेम की श्रेष्ठतम स्थितिषो म माहात्म्य ज्ञान का महत्त्व कम हो जाता है ऐसा विद्वाना का कथन है। स्वयं गोस्वामी हरिराय के अनुसार 'श्री भ्राचार्य जी के मारग को स्वल्प कहा है, जो माहात्म्य ज्ञानपूर्वक दृढ स्नेह सो सर्वोपरि है सो ठाकुर जी को बहुत प्रिय है परंतु जीव माहात्म्य राखे। सो काहे ते। जो माहात्म्य जिना अपराध को भय मिट जाय तासा प्रथम दशा म माहात्म्य युक्त स्नेह आवश्यक कहिये सो ठाकुर जी भक्तन क स्नेहवग होय भक्तन क पाछे पाछे डोलते हैं सो जहा ताइ ऐसो स्नेह नाही होय तहा ताइ माहात्म्य राखनो तासो माहात्म्य विचारे श्रीर अपराध सो डरपे तो कृपा होय। जब सर्वोपरि स्नेह होयना तब आप ही ते स्नेह ऐसो पदाय जो माहात्म्य कू छुआय देयगो।<sup>२</sup> पर हमारा विचार है कि इस स्थिति तक पहुंचते पहुंचते माहात्म्य ज्ञान अवचेतन म इतना गहरे पठ चुका होता है कि बिना उपर से ध्यान रहे वह साधक के कार्यों का नियामक बन जाता है।

(४) अविच्छिन्नता या नरन्तय—यदि प्रेम भावना सेवा या माहात्म्य ज्ञान प्राप्ति कभी-कभी ही मन म आवें तो मन म वह तीव्रता प्रा ही नहीं सजती जो भक्त श्रीर भगवान को निजी सबधा म बांध देती है। इसी कारण भक्ति के परिभाषाकारा एव श्यामाताम्रो प्रादि न बार बार भक्ति की अविच्छिन्नता नरन्तय धारावाहिकता या अभिचारित्व एव सातत्य की श्रीर सकेत किया है। पीछे दी गयी परिभाषाओ म गीता भागवत, रामानंद मधुसूदन सरस्वती गण्डित्य सहिता सुन्दरास प्रादि ने इसी तथ्य की श्रीर ध्यान दिलाया है।<sup>३</sup> पुष्टिमाग चतय राधावल्लभ प्रादि सभी सम्प्रदायो म भक्ति के इस नरन्तय वाले तत्व की श्रीर इंगित किया गया है। देवी भागवत भी तलघारा के समान अविच्छिन्नता को स्वीकार करती है।<sup>४</sup>

(५) अनयता—अविच्छिन्नता का ही अलग चरण अनयता है। भागवतकार ने इस श्रम को अत्यधिक काव्यात्मक रूपक म कहा है। उनक अनु

१ (क) परिभाषा स० १५ एव १६।

(ख) वेदात्त बर्णिक (परि० स० १० (ख) ने महनीय विषय म प्रीति कहकर माहात्म्य ज्ञान की ही श्रीर सकेत किया है।

२ अष्टध्याप-वार्ता-कांकरौली, पृ० १८।

३ वे० परिभाषा स० १, २, १४, १७, १६ एव २०।

४ देवी हिमालय से पराभवित के विषय मे कहती है कि उसका साधक सदा सवदा मेरा गुण ध्येयन तथा नाम-कीत न किया करता है एव 'कल्याणगुण रत्नानामाकराणां मयि स्थिरम। चतसो वत्तन चव तेलघारासम सदा ॥ ७।३७।११ १२।

सार सागर म स्वतः प्रवाहित गगाजल की धारा ने समाप्त जत्र मनागति अनय भाव से भगवान म निहित होती है तो उस निगुण भक्ति गटते हैं ।<sup>१</sup> गगा की धारा जहाँ नर तय का छातक है वही सागर म ही गिरना उगरी अनयता है । इसी प्रकार मान इष्ट देव म ही प्रम गगा आत्ति निरंतर गने रहे तभी भक्ति की स्थिति मभव है । जत्र तरु मन म विविधा मगय या पभिचारित्त विद्यमान है तब तक वह एजाप्रता आ ही नहीं सगती ना भवन और भगवान् का एन कर देती है । तुनसीदाम ने अपने चानक क आत्ता न माध्यम स गी अनयता की ओर सन्त किया है । निम्बाक की तयावधित दगा नोरी का नायागति वृष्णपदारविदगत (ग्लोउ ८) इसी अनयता की ओर सवत करता है । गीता इसी अनयता की चाह करती है—

अनयाश्चित्तपतो मां ये जनाः पपुपासते ।

सेवा नित्याभियुक्तानां योगक्षमं ब्रह्ममहम् ॥<sup>१</sup>

अर्थात् जो अनय प्रमी भक्तजन मुक्त परमेश्वर का निरंतर चिन्तन करते हुये भजत हैं उन नित्य निरंतर मेरा चिन्तन करने वाले पुरपा के यागभम का मैं स्वयं वहन करता हू । नारद भक्ति-सूत्र क अनुसार भक्ति निरोधरूपा हाती है । भगवान म अनयता एव प्रतिबूत विषय म उदासीनता की निरोध कहत हैं ।<sup>२</sup> फिर अनयता की यागया करते हुए वे कहत हैं दूसरे आत्रया क त्याग का नाम अनयता है ।<sup>३</sup> वास्तव मे प्रमी भक्त के मन म अपने प्रियतम को छोडकर और किसी की कल्पना ही नहीं होती है । रहीम ने ठीक कहा है —

प्रीतम छवि मनन बसी पर छवि कहा समाय ।

भरी सराय रहीम लखि आपु पथिक फिरि जाय ॥

इसी प्रकार सुन्दरदास ने भी अपने ज्ञान समुद्र म भक्ति निरूपण वाले अध्याय म कहा है—

सुन न कान और की द्रस न और अछना ।

कहै न बात और की सुभक्ति प्रम लछना ॥

१ श्री मदभागवत ३।२६।११-१२ ।

२ छातक चौतीसी, दोहावली-२७७ से ३१२ ।

३ गीता ८।२२ अथवा ११।५४ ।

४ ना भ सू०—७ ।

५ वही-६ ।

६ वही १० ।

७ ज्ञान समुद्र भक्ति निरूपण छंद ३६ ।

प्रह्लाद जब भगवान से अविचल भक्ति म गते हैं तब इसी अनयता की ओर ही इंगित करते हैं।<sup>१</sup> श्री रूप गोस्वामी ने अपनी भक्ति का परिभाषा<sup>२</sup> म यद्यपि अनयता का उल्लेख नहीं किया है पर परिभाषा का विश्लेषण करने पर हम अनयता वाले तत्त्व का निश्चित रूप से उपलब्ध करते हैं। जब कोई अय अभिलाषा नहीं है, तान इत्यादि स अनानुवृत्त है और तान अनुकूल भाव से कृष्णानुशीलन है तो अनयता स्पष्ट प्रतीत होती है। इसी प्रकार नारद पाचरान की परिभाषा<sup>३</sup> म भी अनयता का अभिप्राय निहित है। वास्तव म प्रम भावना के पदचात दूसरा सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व अनयता ही है। श्री संप्रदाय म प्रपत्ति के तीन विशेषण—अनय शेषत्व अनय साधनत्व एव अनय भोगत्व भी इसी तथ्य की ओर इंगित करते हैं। अय भक्तिमार्गों की साधना पद्धतिया भी अनयता को बराबर स्वीकार करती हैं।

(६) शरणागति या प्रपत्ति —अनय या अविच्छिन्न भाव स किय जाने वाले प्रेम और सेवा की वह स्वाभाविक परिणति है कि भक्त अपने को संपूर्णतया भगवान के चरणों म अर्पित कर दे। इस अर्पण का सर्वश्रेष्ठ रूप शरणागति है जहा पर कि भगवान पर ही अपने सारे योग क्षेम का भार सौंप कर वह निश्चित हो जाता है। श्रीमदभगवत्गीता म इस शरणागति एव आत्मसमर्पण के भाव की अत्यधिक विवति हुई है —

तमेव शरणं गच्छ्यं सर्वभावेन भारत ।  
 तत्प्रसादात्परां गतिं स्थानं प्राप्स्यसि पादवत्तम ।  
 ममनाभव मदभक्तो मद्याजी मां नमस्कुर्व ।  
 मामध्वयसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ।  
 सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज ।  
 ब्रह्त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।<sup>४</sup>

अपनी सुरक्षा अधिक गतिशाली क हाथ सौंप देना स्वाभाविक ही नहीं विवेकपूर्ण भी है। पीछे हम परिभाषा सत्या ११ म तथा सम्प्रदाय का मत उद्धृत कर चुके हैं कि भक्ति का सार प्रपत्ति है। बल्लभाचार्य ने भी शरणागति को बहु

१ नाथ योनिःसहस्रेषु येषु ब्रजाम्यहम ।

तेषु तेध्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि । विष्णु पुराण १।२०।१६ ।

२ दे० परिभाषा स० १६ ।

३ , ,, स० ३ ।

४ गीता १।८।२ ।

५ वही १।८।६५ ।

६ वही १।८।६६ ।

मान दिया है। जीव गोस्वामी ने अपने भक्ति मन्त्रम म वधि भक्ति के जिन ११ तत्वों की चर्चा की है उनमें प्रथम गणनागति है एवं अतिम आत्मनिवेदन। मानो एक ही भाव की दो स्थितियों से उसे सम्पुटित किया गया हो। नरपा भक्ति का अतिम तत्त्व आत्म निवेदन तो सर्वत्रिजि ही है। रामानन्द ने भी भक्ति व क्षत्र म आत्मसमर्पण को अत्यधिक महत्त्व प्रदान किया है।

आगम ग्रन्थों म प्रपत्ति का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रबुद्ध्य संहिता एवं नारद पाचरात्र म उसे ६ प्रकार की बताया गया है। प्रथम है भगवान की अनुकूलता का सकल्प अर्थात् जो भगवत्प्राप्त के अनुकूल वस्तु हो उनके पालने का नियम। द्वितीय है प्रतिकूलता का त्याग। तृतीय प्रकार यह विश्वास है कि प्रभु निश्चय ही हमारी रक्षा करेंगे। एवान् म भगवान् से अपनी रक्षा व त्रिय प्रार्थना करना (लक्ष्य निर्धारण) गणनागति का चौथा प्रकार है। पंचम है आत्म निवेदन अपने को सम्पूर्णतया भगवान का समर्पित कर देना तथा वाप्य या कातरता का प्राकट्य (अप्य दिग्गमो म) प्रपत्ति का छत्रा रूप है। पर लौकिक प्रवहार एवं मनोवज्ञानिक दृष्टि से अधिक अनुकूल प्रम या होगा—

(१) काप्य (२) आत्म निवेदन (३) विश्वास (४) गोप्तत्व का वरण (५) प्रतिकूलता का वजन (६) अनुकूलता का सकल्प।

गणनागति और आत्म समर्पण की महत्ता को भागवतकार ने अत्यधिक दृष्ट म दा मे व्यक्त किया है

१ तस्मात् सर्वात्मा नित्य श्रीकृष्णशरण म  
वद्वभिरेव सतत स्थेयमित्यव म मति ।

बलभक्त्याय मवरत्न श्लोक ६ ।

(कल्याण सत वाणी म क मे सकलित)

२ बलदेव उपाध्याय भागवत सप्रदाय पृ० २६५ ।

३ के सी० वरदाचारी आसपेक्टस आफ भक्ति पृ० ४१ ।

४ अनुकूलस्य सकल्प प्रातिकूलस्य वजनम  
रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तत्व वरण तथा ।  
आत्मनिक्षपकाप्य पडविद्या गणनागति

(अ १० ३७।१८) ।

तथा प्रपत्तिरानुकूलस्य सकल्पो प्रतिकूलता ।

विश्वासो यणनन्यास काप्यम इति पडविद्या (नारद पाचरात्र  
वरदाचारी द्वारा उदघत पृ० ४१ ।

मर्षो यदा त्यक्तसमस्तकर्मा  
निवेदितात्मा विनिकीर्षितो मे ।  
तदामतदव प्रतिपद्यमानो  
मयाऽऽम भूयाय च कल्पते ।<sup>१</sup>

याना कि मनुष्य जब सारे कर्मों का त्याग करके मुझ आत्मममपण कर देता है तब वह मेरा विशेष माननीय हो जाता है तथा जीव-मुक्त नाकर मत्सदृश ऐश्वर्य की प्राप्ति व योग्य हो जाता है ।

जब साधक अपने का पूणतया भगवान् क भरासे छोड देता है तब उस परम एश्वर्य परम मधुर एव परम प्रिय से यह आगा करना अनुचित नहीं है कि वह भक्त पर कृपा करेगा । गरणागति क ६ रूपों म हम यह देख प्राय हैं कि उनम म एक है—रक्षा का विश्वास । इस प्रकार जसा कि श्री सम्प्रदाय म कहा है गरणागति या प्रपत्ति स प्रभु कृपा प्राप्त हाती है और वही कल्याण करने वाली होती है ।

प्रभु अनुग्रह — इस प्रकार भक्ति का सातवा तत्त्व प्रभु अनुग्रह सिद्ध हाता है । मध्यकाल क लगभग सभी भक्ति-सम्प्रदायों म प्रभु की कृपा स्वीकार की गयी है । ऊपर हम अभी श्री सम्प्रदायानुसार प्रभु कृपा प्राप्त हान की बात कह चुके हैं । बल्लभ संप्रदाय का पुष्टिमाग नाम ही प्रभु कृपा पर आवत है ।<sup>१</sup> रामानुज प्रपत्ति क द्वारा प्रभु कृपा संपादित करन को कहत हैं बल्लभ नम्रम वदन दिया । यहाँ पर प्रभु-कृपा प्रधान ही गयी । भगवान् क अनुग्रह स ही भक्त के हृदय म भक्ति का उदय हाता है इसलिये भक्त को अपना सब कुछ भगवान को हा समर्पित करना होता है । बल्लभ न स्पष्ट कहा है पुष्टिमार्गीय भक्ति केवल प्रभु अनुग्रह द्वारा ही साध्य है<sup>२</sup> तथा भगवान् का अनुग्रह ही पुष्टिमार्गीय भक्त क सम्पूर्ण कार्यों का नियामक है । हरिराय जी न भा पुष्टिमाग-लक्षणानि म कहा है अनुग्रह एव सिद्धिलोकि की पत्र वदिवी ।<sup>३</sup>

निम्बाक की भक्ति-परिभाषा<sup>४</sup> म भी कृष्ण-कृपा का स्पष्ट उल्लेख है । इस परिभाषा की आत्मा और बल्लभ क विचारों म पर्याप्त साम्य जान पडता है । यहाँ पर भा परमात्मा की कृपा स दयादि गुणों वाले व्यक्ति पर प्रभु की

- १ धीमदभागवत ११।२६।३४ ।
- २ पौषण तदनुग्रह — भागवत २।१०।४ ।
- ३ पुष्टिमागो-नुग्रहैकसाध्य , अष्ट भा० ४।४।६ की टीका ।
- ४ अनुग्रह पुष्टिमागो नियामक इतिस्थिति ।  
बल्लभ सिद्धांत-भुजतावती श्लोक १८ ।
- ५ पुष्टिमाग लक्षणानि—श्लोक २ ।
- ६ परि० त० १२ ।

कृपा का उत्पन्न होना माना गया है और इस प्रभु-कृपा से ही उन मूर्खों पर मात्मा में प्रेम विशेषरूप से भक्ति की उत्पत्ति स्वीकार की गई है। निम्बाक सम्प्रदायानुसार मत्ता का अनुभव या गाता गाता भी कृपा की कृपा में उनका प्रत्यक्ष भक्त को ही होता है तथा प्रभु की कृपा का फल प्रभु का चरण प्राप्ति करना है।

गौडिय ब्रह्मण्य मत में तीन प्रकार की भक्ति माना गया है साधन भक्ति भाव भक्ति तथा प्रेम भक्ति। ये उत्तरात्तर एक दूसरे में अग्र्य है एक एक स्थिति से दूसरी में प्रमाण होता है। परन्तु यह प्रविचय प्रेम नहीं है। कृपा कृपा में किन्ती भी स्थिति में कोई भी प्रेम उत्पन्न हो सकता है। भक्ति का तीन प्रकार से उदभव रूप गास्वामी न माना है

साधनप्रभिनियोगे जा कृष्णप्रसादजा कृष्णभक्तप्रसाद जा।<sup>१</sup> प्रेमभक्ति का भी दो प्रकार का रूप गास्वामी न माना है—भावात्म्य तथा हरिप्रसादात्म्य<sup>२</sup> इस प्रकार हरिकृपा का पर्याप्त महत्त्व यहाँ भी प्राप्त है।

राधावल्लभिय सम्प्रदाय के बारे में डा० विजयद्वारा स्नातक न किया है सहचरी या सखी नाम राधावल्लभ सम्प्रदाय में जीव के निज रूप की पारमार्थिक स्थिति का नाम है। जब तक वह जीव रूप में अपने को मानकर इस लोक में जीने रहता है भ्रम के जाल में भटकता रहता है किन्तु जब उसके ऊपर श्री राधा की कृपा होती है तब वह सहचरी रूप को प्राप्त होकर नैतिक सुख-दुख की अनुभूतियाँ से ऊपर उठकर उस आनन्द को प्राप्त करने का अधिकारी बनता है जो नित्य बिहार के दर्शन से उपलब्ध माना गया है। स्वामी हरिदास के सम्प्रदायानुयायी बिहारिणि दास का भी कहना है कि साधन और उद्यम सब व्यर्थ हैं प्रभु की कृपा ही मुख्य है।<sup>३</sup> वास्तव में भक्त कवियों के दर्शनोच्चारण ऐम दिये

१ डा० नारायणदत्त गर्मा निम्बाक सम्प्रदाय और उसके कृष्ण भक्ति हिन्दी कवि (अप्रकाशित प्रबंध पृ० १२८)।

२ कृपाफल चतुःप्रपत्तिलाभ लक्षणमित्येतत्

निम्बादित्य-दशश्लोकी हरि-यास देव पृ० ३८।

हरिभक्ति रसामृत सिद्ध पृ० वि ततीय लहरी श्लोक ४।

३ वही पृ० वि० चतुर्थ लहरी श्लोक ३।

४ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य पृ० २१६।

५ साधन अथ कष्टु ना कियो ना कष्टुपरिवे योग कृपा बिहारिणिदास की सहज समोगी भोग।

ऐसी स्वामिनि साहि बिनि रसिक अनय उदार बिहारिणि दासि प्रसन धै दियो अहार बिहार ॥

बिहारिणिदास रस के दोहा १५० और १५१।

जा सकते हैं, जिनम कि प्रभु तृपा की महिमा का गान किया गया है। वस्तुतः निर्विशेष समपण की यह अनिवाय परिणति है और यह तत्त्व भी उसे अथ साधन भागों स विनिष्ट बनाता है।

(८) निष्काम एव अहेतुकी वृत्ति — यद्यपि श्रीभदभागवत म सात्त्विक राजस एव तामस भक्तो को सकाम भावना म युक्त बताया गया है पर उसे श्रेष्ठ नहीं माना गया। वहा पर भी निगुण भक्ति को अहेतुक्य-यवहिता कहा गया है।<sup>१</sup> गीता आदि म भक्ति का उद्देश्य या भक्त का काम्य मुक्ति अथवा भगवान की प्राप्ति कहा गया है।<sup>२</sup> भव ने सायुज्य मुक्ति को लक्ष्य माना था।<sup>३</sup> नारद भक्ति सूत्र मे भी कहा गया है कि मुक्त होने की इच्छा रखन वालो को भक्ति ही ग्रहण करनी चाहिये। बल्लभ की परिभाषा मे भी मुक्ति की स्थान दिया गया है।<sup>४</sup> पर ध्यान म रखना होगा कि इन सबने भक्ति को निष्काम भावना ही माना था। नारद भक्ति सूत्र म ही ततीसवें सूत्र तक पहुँचन के पूव ही उसे 'सान कामाय माना' तथा स्वयं 'फलरूपत्वात्' कहा गया है। एसा लगता है कि धीरे धीरे यह विचार उठने लगा होगा कि मुक्ति की कामना भी कामना हा है। अत मुक्ति की बात का भी भगवत्प्रम एव सेवा के आगे छोटा करार दिया जाने लगा। भक्त जब प्रसन्न हा गया तथा भगवान् ने उसके योगक्षेम को वहन करने का भार ले लिया तब फिर मुक्ति की कामना क्या ? सभवत इस बात को सबसे पहले भागवतकार ने स्पष्ट शब्दो म कहा है, (भागवत का समय ई० की ६७ वी० शती माना जाता है।) ऐसे भक्तजन मेरी सेवा क सिवा सालोक्य साष्टि सामीप्य सारूप्य और कवल्य मोक्ष को दिये जाने पर भी ग्रहण नहीं करत 'भागवत म ही वृत्रामुर ने भगवान की सेवा छाडकर सब प्रकार के बभवो एव मुक्ति को ठुकराने की बात कही है।<sup>५</sup> यो गीता म यह भावना अपरिचित नहीं है। गीताकार ने उपलब्ध क रूप मे केवल भक्ति की ही चर्चा की है

१ श्रीभदभागवत् ३।२६।१२।

२ गीता ७।१४ एव ८।५ १५ अथवा १०।१०।

३ भागवत सप्रवाय पृ० २२६ बलदेव उपाध्याय।

४ ना० भ० सू० ३३।

५ परिभाषा स० १५।

६ ना० भ० सू० ७।

७ वही सू० २६।

८ श्री भा० ३।२८।१३।

९ — वही ६ ११।२४ २५।



ब्रह्मभूत प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ।

सम सर्वेषु भूतेषु मदभक्तिं लभते पराम् ॥ १८।५४

इसी भाव की ओर अथिब विवृति आग होना है जय काव क भक्ति कयि एव आचाय मुक्ति का छावर भक्ति का ही अपनान की बात कान हैं।<sup>१</sup> पुष्टि माग म भाव भक्ति द्वारा पराभक्ति (निष्काम प्रम) का प्राप्न करना ध्यय माना है। पराभक्ति ग्रहेतुकी है। उस समय भक्त का भगवान क प्रम क अनिरिक्त काई अय वाम्य पदाथ—धम अथ काम माक्ष—नही चाण्ण। गौरीय वध्याव सप्रदाय मे तो प्रेम का ही परम पुष्पाय माना गया है— प्र मा पुमया मयान्। कृष्णस कविराज ने कहा है

पचम पुरुषाय सेई प्र म महाधन कृष्णर माधय रस कराम आस्वादन ॥<sup>२</sup>

तथा भक्ति पन प्र म प्रयाजन। रायबल्लभीय भक्त धुवदास का काना है कि गोपिया क प्रेम म भी सवामता यी इसी कारण निष्काम भाव सम्पत्तिवाली सखियो की भावना उनसे भी न पठ है

गोपिन के सम भक्त न आहीं उडव विधि तिनकी रज घाही।

तिन मन कहु सकामता आई ताते बिच अतर परयो माई।

दुख को मूल सकामता सुख को मूल निहकाम।

विरह वियोग न तहा कहु रसमे ध्रुव सुखधाम।<sup>३</sup>

परिभाषा स ३४ १३ १६ १९ इमी तथय की ओर सवेत करती है। इस प्रकार हम देयते हैं कि इस तत्त्व क दो विभाग हैं— प्रथम निष्काम भाव दूसरे कामना के क्ष अ म कवन भगवान की सेवा या प्रम को प्राप्त करने की अभिलाषा अर्थात् भक्ति का प्रयोजन भक्ति ही वस युग म स्वीकार कर लिया गया था।<sup>४</sup>

१ जब लिंग भगति सकामता तब लिंग निफल सेव।

कहें कबीर के कपू मिल निहकामी निज देव।

—कबीर प्रयावनी पृ० १६ २०

२ डा दीनदयालु गुप्त अष्टछाप और वल्लभ सप्रदाय पृ० ५३८ (दि० भा०)।

३ चतण्चरितामृत १ ७ १३७।

४ वही २ २३ २।

५ ध्रुवदास अनुराग लता लीना (बयालीस लीला प २७३)।

६ (१) प्र म प्र म ही पाइय तौ कर प्र म को अ ग।

प्र महि प्र म पिछान ल भूठो साचो सग।

(स्वामी विहारिणिदास सिद्धात के दोहा ह लि० प्रति)।

(६) सबजन अधिकारित्व भक्ति भावना प्रारंभ से ही लोकचतना व साथ सम्पृक्त रही है। जो भी धर्ममत लाक व निकट आता है निश्चय ही भक्तिभाव को स्वीकार करता है। गीता में भगवान् कृष्ण ने मुजा उठाकर धारणा की है—

मा हि पाय यथाश्रित्य येऽपि स्यु पापयोनिः ।

स्त्रियो वश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि याति परागतिम् ।<sup>१</sup>

हे अजुन स्त्री वश्य शूद्र तथा पापयोनि में कोई भी हो वे भी मेरी गरण में आकर परम गति को प्राप्त होन हैं। भागवत में भी भगवान् ने कहा है कि मेरी निमल सुयोग सुधा में गाता लगाने से चाण्डाल तक सम्पूर्ण जगत पवित्र हो जाता है इसीलिये मैं विकुठ बहलाता हूँ।

गाडिलय भक्तिमूत्र में भी भक्ति की इस विशेषता की ओर इंगित करते हुये कहा गया है

आनिद्योमधिश्रियते पारम्पर्यात् सामायवत् ।<sup>२</sup>

बल्लभाचार्य ने भी कहा किसी साधन सम्पत्ति द्वारा भगवान् भक्त से सतुष्ट नहीं हाते परन्तु उसक केवल एक दय भाव से ही वे सतुष्ट हाते हैं।<sup>३</sup> तथा जब उद्धाने कहा कि ' भगवान् सबभाव से भजनीय हैं तब भी इसी सबजन अधिकारित्व की ओर ही संकत किया गया था। गौीय कृष्णव मत में भी जीव मान का साध्य भगवत्प्रम ही बताया है।<sup>४</sup> राधावल्लभ संप्रदाय में भी समान रूप से प्रत्येक को प्रम करने का अधिकार है।

इसके अतिरिक्त विषय विरक्ति एवं रगात्मकता भक्ति के दो अय लक्षण कह जा सकत हैं। राधाचार्य व आचार पर भक्ति का एक और लक्षण स्वस्वरूप का अनुसंधान है (परिभाषा स० ५)। भक्तिकाल व कवि को यह नितांत अस्वी कृत नहीं है। सूरदास ने बड़ी सगक्त भाषा में म्म तथय की ओर संकेत किया है। मनुष्य अपना अपुनयो भूल जाता है इधर उधर भटकता रहता है। अपने सहस्रग पदा में इस भरमन वाले की ही वास्तविकता का अनुसंधान भक्ति के

पिछले पृष्ठ का शेष

(२) भक्ति को साधन भक्ति जू आई ।

रसिक देव भक्ति सिद्धांत मणि ६० ।

१ गीता ६।३२ ।

२ भागवत ३।१६।६ ।

३ सुबोधिनो फल प्रकरण अध्याय ४ ।

४ चतुःश्लोकी श्लोक १ ।

५ श्रीमद्भक्तियोग सिद्धांत रत्न-संग्रह हृषीम श्यामलाल पृ० १६५ ।

माध्यम से उहाने कराना चाहा है।<sup>१</sup>

### भक्ति के प्रकार

प्रारम्भ से ही भक्ति व विवेचको का ध्यान भक्ति के प्रकारों की ओर रहा है। यहाँ पर हम विभिन्न विचारकों द्वारा उपस्थित नियम प्रचारों के चाट प्रस्तुत कर रहे हैं। उनके सम्यक् अनुशीलन से प्रतीत होता है कि माध्यात्मिक भक्ति के प्रकार विभाजन के मूलाधार दो ग्रन्थ श्रीमद्भागवत और श्रीमद्भगवद्गीता ही रहे हैं। भागवत (दे. चाट स० २) में गुणा व आधार पर भक्ति का विभाजन किया गया है। आगे चलकर देवी भागवत (चा. ३) नारद भक्ति-सूत्र (चा० ६) मूरदास (चा० १२) एवं बोपदेव (चा० २३) आदि के विभाजन पर हम भागवत पुराण के भक्ति प्रकार निरूपण का स्पष्ट प्रभाव देख सकते हैं। बोपदेव ने तो विस्तारिता तक में भागवत (३।२६।८ ६ १) का अक्षरानुसरण किया है। गीता के विभाजन का आधार भक्त भेद है (चा. १)। गार्डिल्य भक्ति सूत्र (चा. ५) नारद भक्ति सूत्र (चा० ६) में उस पूरी तरह स्वीकार किया ही गया है। उसके अतिरिक्त वल्लभाचार्य ने जब तीन प्रकार के जीव भेद स्वीकार करके तदनुकूल तीन प्रकार की पुष्टि भक्ति (चा० १०) मानी तो वे गीता की ही तक पद्धति पर चले थे। कृष्णदाम वविराज ने भी भक्त भेद के आधार पर भक्ति का विभाजन किया है (चा. १४)। साधनों के आधार पर नवधा भक्ति का जो निरूपण भागवत में किया गया (७।१।२३ २४) उस भी आगे बराबर स्वीकार ही नहीं किया गया। साधन भक्ति के और भी प्रकार निश्चित हुए और उनमें नवधा भक्ति को अन्तर्भावित करने की बराबर चर्चा की गयी। नवधा के आधार पर विकसित दशवा प्रमाभक्ति को विशेष मायता इस युग में मिली।

भक्ति के प्रकार भेद के सम्बन्ध में एक अन्य दृष्टान्त बात यह है कि भक्ति के दो स्पष्ट रूप प्रारम्भ से ही स्वीकार कर लिये गये थे। उन्हें सामान्यतः गौणी

१ अनुनयो प्रापुन ही विसरयो

जसे स्वान काच मंदिर मे भ्रमिभ्रमि भू कि मरयो ।

—सूरसागर ना प्र स० ३६६

तथा

अनुनयो प्रापुन ही में पायो ।

सर्दहि सन्द भयो उजियारो सतगुरु भद बतायो ।

—सूरसागर ना प्र० स०, ४ ७।

श्रीर परा कहन हैं । उही का अपरा श्रीर परा नवधा श्रीर दगाधा साधन भक्ति श्रीर भाव या प्रेम भक्ति, मर्यादा भक्ति श्रीर पुष्टि भक्ति मध्यमा श्रीर उत्तमा आदि अनक नाम दिय गय हैं । भक्ति-श्रम वास्तव म दा याय प्रारम्भ से हा स्वीकार किय गये हैं । मकट किरीट-न्याय एव मार्जार किरीट-याय ।<sup>१</sup> बदर का बच्चा अपनी मा का स्वय पकड़े रहता है पर विल्ली स्वय अपन बच्चे का मुख म दवाकर न जाती है । एम प्रकार प्रथम म साधना की स्थिति आती है । साधना की स्थिति म प्रभु के ऐश्वर्य श्रीर गविन आदि का ध्यान रखत हुये पूज्य बुद्धि की आबन्धनता रहती है । दूसरी दगा म प्रभु अनुग्रह मुख्य हीन के कारण प्रभु क प्रति प्रेम भावना मुख्य हो जाती है । हम भक्ति क अधिनाम प्रकारो म इन दाना धारणाआ की छाया देन मरत है । गा० हरिराय जी एव कृष्णदास कविराज क विभाजन (चा० १३ एव चा० १८) इस तथ्य को भलीभाति उजागर करत है । श्री रूप गोस्वामी (चा० १४) एव मुन्दरदास (चा० २२) ने वही दो मुख्य प्रकारा का तान म बाट दिया है । इन लागान पराभक्ति का हा दो भागा म श्रीर बाँटा है । बापन्व की (चा० २ ) निषिद्धा तो भक्ति म परिगणन योग्य है ही नहीं विहिता क दो विभाजन वास्तव म परा श्रीर गौणी ही हैं । भागवत को सात्त्विकी भक्ति (चा० २) निम्बाक की अपरा भक्ति (चा० ८) बल्लभ की मर्यादा भक्ति (चा० ९) रूप गोस्वामी आदि की बधी भक्ति (चा० १४) एव बापन्व की सात्त्विकी कम मिश्रा (चा० २ ) रमिकदेव की नवधा (चा० २१) एव मुन्दरदास की कनिष्ठा (चा० २२) म काई तात्त्विक अंतर प्रतीत नहीं होता । य सभी साधन भक्ति की ही विविध सगाए है । एमी प्रकार पराभक्ति क लिय भी विभिन्न नामा का मकत पीछे किया जा चुका है ।

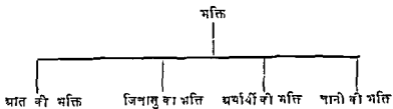
साधन या गौणी भक्ति वास्तविक भक्ति (परा निगुण पुष्टि प्रेम हित उत्तमा आदि)का प्राप्त करन की प्रथम सीढ़ी है । प्रभु का प्रेम प्राप्त करना इसका लक्ष्य है । एम लक्ष्य का प्राप्त कर लेन क बाध और कुछ प्राप्त करना शेष नहीं रहना । यही पराभक्ति की अवस्था है । यही पहुच कर नारद भक्ति-सूत्र के गन्दा म मनुष्य न किमी भा वस्तु की इच्छा करता है न गोक करता है न द्वेष करता है न किमी वस्तु म ग्रामक्त जाना है श्रीर न उम (विषय भागो म) उस्माह होता है । यह प्रेम भाव क सर्वोत्तम अवस्था हाता है यही भक्त का चरम प्राप्य है,

१ इहे आर्यपति क मानकर न चनना चाहिये । प्रथम से दूसरी स्थिति म भी प्रयाण होता है श्रीर धनापास भी प्रभु भक्ति का आविर्भाव हो सकता है ।

२ गा० भा० सू० ५ ।

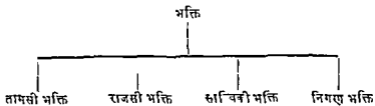
चरम सुख है परम पुरुषाय है ।<sup>१</sup>

घाट स० १



श्रीमद्भगवद्गीता—७।१६

घाट स० २



(यह भेद मनुष्या के स्वभाव एवं गुणभेद के अनुसार है ।

इनमें से प्रथम तीन के पुनः तान तीन भेद हैं)

श्रीमद्भगवद्गीता—३।२६।७

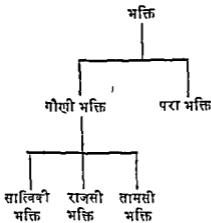
१

भक्ति समानी भाइ में भक्तन म भगवान ।

श्री बिहारीदास साची कहै श्री भागवत प्रमान ।

—श्री बिहारिणदास रस की दोहा ५६६ ।

चाट स० ३

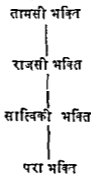


—देवी भागवत—७ ३७

[कल्याण भक्ति अंक, पृ० ६४ के आधार पर]

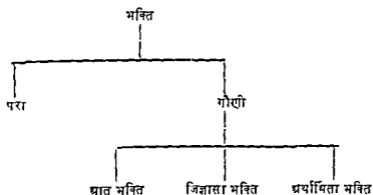
चाट स० ४

गुणभेद से भक्ति तामसी राजसी और सात्विकी प्रत्येक से दूसरी स्थिति में पहुँचा जा सकता है। सात्विकी भक्ति की परिणति अतत पराभक्ति में होती है। इसका चाट इस प्रकार अधिक ठीक होगा।



—देवी भागवत—७।३७।११ १२

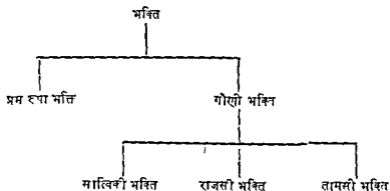
चाट स० ५



गोणी भक्ति को परा भक्ति के साधन रूप में स्वीकार किया है ।

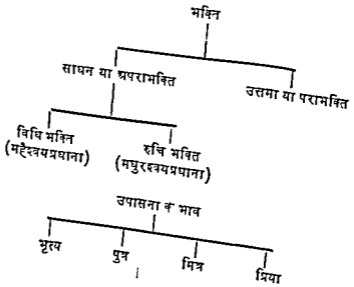
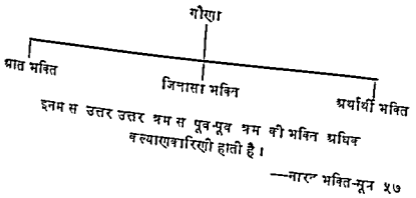
शाण्डिल्य भक्ति-सूत्र—२।२।५६ तथा २।२।७२

चाट स० ६



एक दूसरा विभाजन घातार्थि भेद के आधार पर भी होता है ।

—नारद भक्ति सूत्र—५६

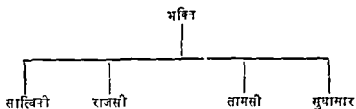


—मत्र रहस्यपोढगी १६

हरियास देव ने नवधा भक्ति को साधन रूप म स्वीकार किया है  
तथा साध्य प्रमनशुणामक्ति का माना है।  
सिद्धान्त रत्नाजलि प० ३७ के आधार पर।  
निम्बाक-सम्प्रदाय

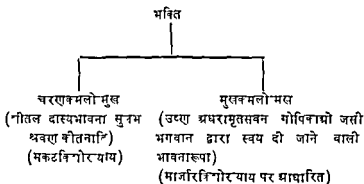


घाट सं १२



—सूरदास सूरसागर ३।१३ प० १३३ (ना० प्र० सं०)

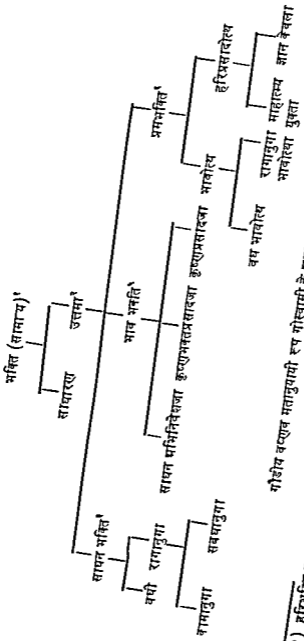
घाट सं १३



श्री हरिराय जी

—श्री हरिराय भक्ति द्व विध्य निरूपणम् । श्लोक १ २ ३ ।

घाट सं० १४



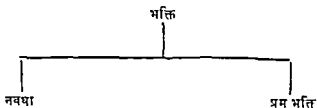
गौडीय वष्णव मतानुयायी रूप गोस्वामी के अनुसार

- (१) हरिभक्ति रसाभूत सिन्धु प० वि० प्रथम लहरो
- (५) वही—वही २/७५

- (२) वही द्वितीय लहरो ?
- (५) वही ३/४

- (३) वही—वही २/३
- (६) वही—वही ५/३

घाट सं० २१

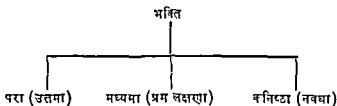


(इस ही दशधा भी कहा है और बताया है कि यह भक्ति गायिया की है। इसी का शुद्ध भक्ति भी कहते हैं जिसमें कि और किसी भाव का मल नहीं होता। इसकी ही परिणति सही भावना में उहाने दिखाई है।)

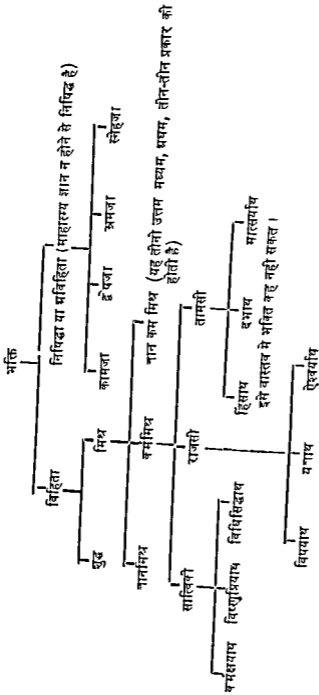
—स्वामी रसिक देव जी (भक्ति सिद्धान्त चिन्तामणि ७२।७२ तथा ८६)

हरिदासी सम्प्रदाय के स्वामी रसिकदेव जी ने तीन प्रकार की भक्तियाँ मानी हैं। इस संबंध में यह ध्यान रहे कि रसिक देव जी इस सम्प्रदाय की आत्मा का वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं करते। सही सम्प्रदाय में भक्ति का ऐसा कोई सद्धार्मिक वर्गीकरण उपलब्ध नहीं है।

घाट सं० २२



—गुरुदास (ज्ञान समुद्र भक्ति निरूपण छन्द ४)



(इस वर्गीकरण की इन विस्तृतियों में भागवत ३।२६ व ८।१० को ही स्पष्ट किया गया है)

बोपदेव मुक्ताफल के आधार पर ।

भक्ति साधना क्रम :

भक्ति के साधना क्रम का सगस व्यवस्थित और प्रारम्भित उल्लेख भागवत पुराण में ही मिलता है। ये साधन नौ प्रकार के हैं (१) ऋण (२) कीर्तन (३) स्मरण (४) पाठ सवन (५) अचन (६) वन्दन (७) दास्य (८) सख्य (९) आत्मनिवेदन।<sup>१</sup> इनमें प्रथम तीन भगवान् के नाम और लीला से सम्बन्धित हैं दूसरे तीन उनके रूप से सम्बन्धित हैं एवं अन्तिम तीन साधन वास्तव में भक्त के मनोजगत से सम्बन्धित वृत्तियाँ हैं। इन साधनाओं में ही नवधा भक्ति कहा गया है। साधना प्रणाली का यह क्रम अत्यधिक दृष्टा के साथ सवन लागू नहीं भी हुआ पर मूल में इसकी अनुसरण में वे बनी रही है। सब भक्ति याग में ऋण कीर्तन और मनन में साधन स्वीकार किया गया है।<sup>२</sup> देवी भागवत में सदगुण श्रवण और नाम कीर्तन का उल्लेख किया गया है।<sup>३</sup> शाङ्ख्य भक्ति सूत्र (५६ ५७ ६५ ६६ ७४) आदि में ऋण कीर्तन ध्यान पूजा पादादक पत्रादिदान का उल्लेख किया गया है। नारद भक्ति-सूत्र में भक्ति के साधन विषय और सग त्याग (सू. ३५) अमण्ड भजन (सू. ३६) भगवत्पुण्य ऋण कीर्तन (सू. ३७) और महापुरुषो अथवा भगवान् की कृपा (सू. ३८) कहे गये हैं। इन सभी उदाहरणों में नवधा के कुछ अंग (विष्णु श्रवण और कीर्तन) स्पष्ट दख जा सकते हैं। नारद भक्ति सूत्र की ग्यारह आसक्तियों में गुण माहात्म्यासक्ति में श्रवण और कीर्तन का उल्लेख प्राप्य है। रूपासक्ति और पूजासक्ति में पाद सेवन अचन और वन्दन निहित है। स्मरणासक्ति दास्यासक्ति सख्यासक्ति एवं आत्मनिवेदनासक्ति नवधा के स्मरण दास्य सख्य एवं आत्मनिवेदन ही है। कातासक्ति एवं वात्सल्यासक्ति बाद की भक्ति विवचका द्वारा स्वीकार की गयी है। नवधा में उनका उल्लेख नहीं है। तमयतासक्ति एवं परमविरहासक्ति वास्तव में पराभक्ति की स्थितियाँ हैं। ये साधन भाग नहीं हैं।

सुन्दरदास ने भी नवधा का ज्या का त्यो स्वीकार किया है। नवधा के आधार पर ही भक्ति काल के कवियों ने दशधा भक्ति की चर्चा की है।<sup>४</sup> यह

१ श्री मद्भागवत ७.५.२२, २४ ।

२ शिव पुराण विद्मेश्वर संहिता १।२१ ।

३ देवी भागवत ७।३७।११ ।

४ ना.भ.सू. ८२ ।

५ सूरदास सूर सारोवती सूर सागर प. ५ तथा ६६ परमानन्द दास ताते दशधा भक्ति भनी (परमानन्द सागर) स्वामी रसिक देव भक्ति सिद्धांत मणि दोहा ७२ ।

दशधा भक्ति सुनो मन लाय । ताको साधन नवधा आय ।

दसवी प्रम लक्षणा भक्ति है। और इसके पूव नवधा को स्वीकार किया गया है।

परन्तु वसवा अथ यत् नहीं है कि भक्ति-नाल क आचार्यों न इमम नवी नता या मौलिकता की स्थापना नहीं की है। तुलसीदास न रामचरित मानस म जिस नवधा का उल्लेख किया है वह ठीक भागवत का ही अनुवाद नहा है। उसका प्रम या है (१) मता का संग (२) राम कथा में अनुराग (३) गुरु-सवा (४) भगवान का गुणगान (५) मत्र जाप और भजन (६) दमनीत्र कम विरति एवं सद्धम भरति (७) ससार का भगवानमय दखना एवं राम स भी अधिक सत का सम्भा करना (८) यथात्रामसताप तथा परदाप देखन की वृत्ति का नितात शभाव (९) छत्रहानता सबसे सरलता, भगवान म भरामा तथा दीनता (दुख) का अभाव और ह्य ।<sup>१</sup> तुलसी न अपनी नवधा म आचारपरायणता का भी सम चय कर लिया है। स्वामी चरणदास न भा अपनी नवधा म जहा भागवत के सारे तत्त्वा का स्वीकार किया है वही तुलसी क समान आचार क भी तत्त्वा— साधु-संगति भक्ता का सेवा धय दृष्टता क्षमा गाल सताप, दया का नवधा के अंतगत ही माना है।<sup>१</sup>

गौरीय वपणवा म वधी क जो ११ लक्षण बताय गय हैं, उनम स अन्तिम ६ भागवत क हा हैं एव प्रथम दा गरणागति तथा गुरु सवा और वटा दिय गय हैं। उन दाना ी बाता को भक्तिकान म अत्यधिक मूल्यवान समभा गया था। वगी भक्ति के चौंसठ साधन गौरीय वपणव गोस्वामियो न बनाय हैं। इतम नवधा का मभाव हो जाता है। इन ६४ अंगो म पाच को चत-यदेव ने सबथप्ट माना था। य पाच साधन हैं साधु-संग नाम सवीतन भागवत श्रवण मयुरावाय एवं श्रद्धा समत मूर्ति पूजन ।<sup>१</sup> हरिव्यास एव (निम्बाक सम्प्रदाय) ने दगाधामक्ति क समान भक्ति का दगा पहिया का उल्लेख किया है। वे एस प्रकार हैं (१) रसिक जना का सेवा (२) हृदय म दयाभाज (३) धमनिष्ठा (४) कथा श्रवण (५) भगवच्छरणा म अनुराग (६) भगवान क रूप म मन को लगाना (७) हृदय म प्रम-वृद्धि (८) ल्य ध्यान, गुण-गान (९) निश्चय और दृढता का ग्रहण (१०) रम की सरिता का हृदय म प्रवाह ।<sup>१</sup> हरि-यास देव का इन दगा पहिया म भागवत की नवधा क कुछ तत्व तो मिल हा जायेंगे पर अपनी मौलिक

१ रामचरित मानस, उत्तर काण्ड ३५ ३६।

२ भक्ति-सागर पृ० १८१।

३ धरो पृष्ठ १८०।

४ गस० क० देव वपणय फेच एण्ड मूवमण्ट प० २८० २८२।

५ चत-य चरितामृत मध्यलोता, परि० २२, पृ० २८४ २८५।

६ महावाणी, प० १८१।

कता भी दृष्ट य है । तुलसी व समान ही उन्ने भी आचार के गुण। ना उल्लेख किया है । यो साधक के आचार और रहन सहा की ओर पन्ने भी ध्यान दिया गया था पर भक्तिकान म आकर भक्ति की लोकवाञ्छिता तथा वाम मार्गी साधनाओं की आचार-हीनता की प्रतिक्रिया के कारण भक्ति व साधना व अतगत ही अनेक मानवीय गुणो एव सदाचार को स्पष्ट स्थान दिया गया ।<sup>१</sup>

गुरु सेवा एव साधु-संग का और अधिक महत्व मिला । हरिनासा राधावल्लभीय आदि रमापामक सम्प्रदायो म यद्यपि साधन भक्ति या नवधा भक्ति का स्वीकार नहा किया गया परन्तु गुरु सेवा रसिक-संग आत्ममगण, नाम स्मरण वाणी अनुगीनन अहंकार और विषय हीनता तथा उपास्य परिचर्या को वास्तव मे साधन ही कहना चाहिए ।

गौरीय वर्णनो का साधनाक्रम अत्यधिक मौलिक एव मनोवैज्ञानिक है । चतुस्रमत्तानुपायी गोस्वामियो ने साधक देह और मिद्ध देह भक्त की दो अवस्थाओ को स्वीकार किया है । प्रथम अवस्था की चरम परिणति प्रम म है और प्रम की अष्टतम परिणति महाभाव मे होती है जिसकी कि अष्टतम प्रतीक राधा हैं । यह क्रम इस प्रकार है (१) श्रद्धा (यह भक्ति का बीज है—श्रद्धा विशेष बीज (भक्ति सद्म) (२) साधु-संग (३) भजन क्रिया (४) मनध निवृत्ति (५) निष्ठा (६) रुचि (७) आसक्ति (८) नाव (रति) । जब आसक्ति रुचि के द्वारा चित्त की मगृण बना देती है तब उसमे शुद्ध सत्व विशेषात्माभाव का जन्म हाता है । यह प्रम रूप सूय व उदम हान व पूव की अरुणोत्प जमा स्थिति है (९) प्रम ।<sup>२</sup> प्रम उत्प ही जाने पर साधक सिद्ध देह म आ जाता है । धार्मिक चेतना (दिरिलिजस का-गसनेस) नामक अपने प्रथम मे जे० बी० प्रट ने रहस्यवादी साधना की तीन स्थितियाँ मानी हैं —(१) निषेधात्मक साधना—इसके अतगत विषय-त्याग नतिक पवित्रता वराग्य अत उपवाम प्राणायाम अनिद्रा आदि का उल्लेख किया है । (२) विधयात्मक—इस स्थिति का ध्यान परक (मडिटिव) या आलोकपरक (इल्युमिनेटिव) कहा है । ध्यान समाधि चित्तन मूर्ति या तीला-कल्पना आदि इस अवस्था के भीतर हैं । (३) तासरी अवस्था का एवात्म (यूनिटिव) स्थिति कहा गया है । इस अवस्था म ईश्वर मिलन का परमानन् प्राप्त होना है । यन् स्थिति बहुधा तीव्र भावंग या मूर्च्छा के क्षणो मे स्वीकार की गई है ।<sup>३</sup>

१ पुष्टि भक्ति के १६ आंतरिक और बाह्य साधनों मे भी साधनो और आचार धर्मो दोनों का ही समन्वय है ।

२ हरिभक्ति रसामत सिंधु पूव विभाग ४ सहरी श्लोक ६ ७ ।

३ ज०बी०प्रट द रिलिजस का-गसनेस अध्याय २७ एव २८ के आधार पर ।

## उपास्य एव उपासक के मध्य भाव सम्बन्ध

भक्त और भगवान् के मध्य एक व्यक्तिगत संबंध का कल्पना भक्तिभाग की सबसे बड़ी विशेषता है। भक्ति का मनोभाव कुछ ऐसा सकुल होता है कि उसमें सम्मम भय पवित्रता निभरता प्रेम विद्वान् आदि अनेक वृत्तियाँ और गुण गुम्फित रहते हैं। ईश्वर की रहस्यानुभूति अनेक रूपों में ही सकती है और उसका स्वरूप का अवधारणा ही यह निश्चित करती है कि ईश्वर और भक्त के मध्य सम्बन्धभाव (रिलेशनशिप) क्या रहे? जीवन में अनेक प्रकार के सामाजिक सम्बन्धों के सम्बन्ध में हम आते हैं। इन सम्बन्धों के साथ व्यवहार में डले-डलाये उपस्थित रहते हैं। और उन्हीं में रहस्यानुभूति का द्रव्य बन जाता है। उसी रूपान्तर के माध्यम में ही उस परम रूप को अभिव्यक्त किया जाता है। इस बात की निश्चितता तब और बढ़ जाती है जब ईश्वर धर्म 'संस्थापनार्थाय' एव विनाशाय दुष्टताय इस पथवा पर अवतार लेता है। इस अवतार-कल्पना के साथ जब रक्षक का रूप मिल जाता है तब उसका प्रभविष्णुता सहस्रगुणित हो उठती है। उसका हम पिता माता गुरु स्वामी प्रिय प्रेमिका या मित्रादि सामाजिक सम्बन्धों के रूप में भावित करने लगते हैं। यह एक प्रकार का प्रतीकवाद है। ऐसे प्रतीकों के माध्यम से दिव्य प्रेम एव अलौकिक प्रेम के मध्य साहचर्य की स्थापना सत्ता के सभी आस्तिक धर्मों की विशेषता है। ऐसे स्वलो पर मूलतः अलौकिक सम्बन्ध प्रस्तुत हैं एव लौकिक सम्बन्ध अप्रस्तुत। प्रारम्भ में तो ये साहचर्यमूलक ही होते हैं और उपमय के एकाध तत्त्वों की ही समानता उपमान में मिलती है पर प्रमाण सम्बन्ध तब सतत ध्यान से धीरे धीरे यथायमूलकता का भी इनमें प्रवेश हो जाता है। हमारे समीप्य युग में ये सम्बन्ध साहचर्य से हटकर यथायमूलक ही होगये थे। वैदिक साहित्य<sup>१</sup> बृहदारण्यक उपनिषत् (४, ३, २१) आदि में केवल साहचर्य तत्त्व पर ही बल दिया गया है। गीता में थोड़ा आगे बढ़कर साहचर्य से यथायमूलकता में लाया गया है।<sup>२</sup>

पर यहाँ भी बल साहचर्य भावना या उपासना पर ही है। नारद भक्ति सूत्र में परम प्रेम रूप में रूपान्तर साहचर्य पर बल देता है एव परम क्षण से जात होता है इससे भिन्न भी कोई प्रेम था। वास्तव में जब यह धारणा बल पकड़ती है कि भगवान् भजनीय ही नहीं सबभाव से भजनीय है<sup>३</sup> तभी सम्बन्धों पर अधिक बल

१ डा० मुनीराम शर्मा भक्ति का विकास पृ० १२८-१३२।

२ पितृपुत्रस्य, सखेव सह्य प्रियप्रियायाहसि देव सोढुम्

—गीता, ११।४४।

३ भागवत १०।२६।१५।



कता भी दृष्ट्य है । तुलसी व समान ही उन्नीस भां आचार के गुणों का उन्नेग किया है । यो साधक के आचार और रहन सहन की ओर पन्ने भी ध्यान किया गया था पर भक्तिज्ञान म आकर भक्ति की आवश्यकता तथा वाम मार्गी साधनाओं की आचार हीनता की प्रतिक्रिया के कारण भक्ति व साधना व अतगत ही अनेक मानवीय गुणों एव सदाचार को स्पष्ट ध्यान किया गया ।<sup>१</sup>

गुरु सेना एव साधु-सग को और अधिक महत्त्व मिला । हरिदासी राधावल्लभीय आदि रमोपासक सम्प्रदायो म यद्यपि साधन भक्ति या नवधा भक्ति को स्वीकार नहीं किया गया परंतु गुरु मेवा रमिक-सग आत्ममरण, नाम स्मरण वाणी अनुगीनन अहंकार और विषय हीनता तथा उपास्य परिचर्या को वास्तव मे साधन ही कहना चाहिए ।

गौरीय वष्णवों का साधनाक्रम अत्यधिक भौतिक एव मनोवैज्ञानिक है । चत यमतायुषायी गोस्वामियो न साधक देह और मिद्ध देह भक्त की दो अवस्थाओं को स्वीकार किया है । प्रथम अवस्था की चरम परिणति प्रम म है और प्रम की अष्टम परिणति महाभाव म होती है जिसकी कि अष्टम प्रतीक राधा हैं । यह क्रम क्रम प्रकार है (१) अद्धा (यह भक्ति का बीज है—अद्धा विशेष बीज (भक्ति सदभ) (२) साधु-सग (३) भजन किया (४) मनय निवृत्ति (५) निष्ठा (६) रुचि (७) आसक्ति (८) भाव (रति) । जब आसक्ति रुचि के द्वारा वित्त को ममृण बना देती है तब उसम शुद्ध सत्व विशेषात्माभाव का जन्म होना है । यह प्रम रूप मूय के उदय होने के पूर्व की अरुणोत्पय जसी स्थिति है (९) प्रम ।<sup>२</sup> प्रम उत्पय हो जाने पर साधक सिद्ध देह म आ जाता है । धार्मिक चेतना (रिजिजस कागसनेस) नामक अपने अर्थ मे जे बी० प्रट ने रहस्यवादी साधना की तीन स्थितियाँ मानी हैं —(१) निवेधारमक साधना—इसके अतगत विषय-त्याग नतिक पवित्रता वराग्य अत उपवास प्राणायाम अनिद्रा आदि का उल्लस किया है । (२) विधमात्मक—इस स्थिति को ध्यान परक (मेडिटेटिव) या आलोकपरक (इल्युमिनेटिव) कहा है । ध्यान समाधि चिंतन मूर्ति या लीला-कल्पना आदि इस अवस्था के भीतर हैं । (३) तीसरी अवस्था को एकारम (मूनिटिव) स्थिति कहा गया है । इस अवस्था म ईश्वर मिलन का परमानन्द प्राप्त होता है । यह स्थिति बहुधा तीव्र आवेग या मूर्च्छा के क्षण मे स्वीकार की गई है ।<sup>३</sup>

१ पुष्टि भक्ति के १६ आंतरिक और बाह्य साधनों मे भी साधनों और आचार धर्मों दोनों का ही समन्वय है ।

२ हरिभक्ति रसामत सिधु पूर्व विभाग ४ सहरी श्लोक ६ ७ ।

३ ज०बी०प्रट द रिजिजस कागसनेस अध्याय २७ एव २८ क आधार पर ।

## उपास्य एव उपासक के मध्य भाव सम्बन्ध

भक्त और भगवान के मध्य एक व्यक्तिगत संबंध की कल्पना भक्ति-भाग की सबसे बड़ी विशेषता है। भक्ति का मनाभाव कुछ ऐसा सकुल होता है कि उसमें सम्भ्रम भय पवित्रता निभरता प्रेम विश्वास आदि अनेक वक्तियाँ और गुण गुम्फित रहत हैं। ईश्वर की रहस्यानुभूति अनेक रूपों में हो सकती है और उसके स्वरूप की अवधारणा ही यह निर्दिचन करती है कि ईश्वर और भक्त के मध्य सम्बन्धभाव (रिलेशनशिप) क्या रह ? जीवन में अनेक प्रकार के सामाजिक सम्बन्धों का सम्पर्क में हम आते हैं। इन सम्बन्धों का साँच व्यवहार में ढले-छाये उपस्थित रहते हैं। और उन्हीं में रहस्यानुभूति का द्रव ढल जाता है। उसी स्थापना के माध्यम से ही उस परम रूप की अभिव्यक्त किया जाता है। इस बात की निश्चितता तब और बढ़ जाती है जब ईश्वर को 'संस्थापनार्थी' एव 'विनाशाय दुष्कृताय' इस पथकों पर अवतार लेता है। इस अवतार-कल्पना के साथ जब रक्षक का रूप मिल जाता है तब उसका प्रभविष्णुता सहस्रगुणित हो उठती है। उमको हम पिता, माता गिणु 'गुरु' स्वामी प्रिय, प्रमिका या मित्रादि सामाजिक सम्बन्धों का रूप में भावित करने लगते हैं। यह एक प्रकार का प्रतीकवाद है। ऐसे प्रतीकों का माध्यम से ही प्रेम एव अलौकिक प्रेम का मध्य साहचर्य की स्थापना संसार के सभी आस्तिक धर्मों की विशेषता है। ऐसे स्थलों पर मूलतः अलौकिक सम्बन्ध प्रस्तुत हैं एव लौकिक सम्बन्ध अप्रस्तुत। प्रारम्भ में तो ये साहचर्यमूलक ही होते हैं और उपमेय का एकाग्र तत्त्वा की ही समानता उपमान में मिलती है पर प्रगत सम्बन्ध एव सतत ध्यान से धीरे धीरे यथायमूलकता का भी इनमें प्रवेश हो जाता है। हमारे समीक्ष्य युग में ये सम्बन्ध साहचर्य से हटकर यथायमूलक ही हागये थ। बौद्ध साहित्य<sup>१</sup> बृहदारण्यक उपनिषद् (४ ३, २१) आदि में केवल साहचर्य तत्त्व पर ही बल दिया गया है। गीता में थोड़ा आगे बढ़कर साहचर्य से यथायमूलकता में लाया गया है।<sup>१</sup>

पर यहाँ भी बल साहचर्य भावना या उपमान पर ही है। नारद भक्ति सूत्र में परम प्रेम रूप में रूप में साहचर्य पर बल देता है एव परम धर्म से जात होता है इससे भिन्न भी कोई प्रेम था। वास्तव में जब यह धारण बन पकड़ता है कि भगवान भजनीय ही नहीं सबभाव से भजनीय है<sup>२</sup> तभी सम्बन्धों पर अधिक बल

१ डा० मुनीराम शर्मा भक्ति का विकास, पृ० १२८-१२९।

२ पितृव्य पुत्रस्य सख्य सहसु प्रियप्रियायाहसि द्रव सोऽनुम

३ भागवत, १०।२६।१५।

—गीता, ११।४४।

दिया जाने लगता है क्योंकि हमारा भाव जगत हमारे प्रत्यक्ष व्यापक गम्यता से ही अनुभासित होता है। या तो भगवान सबभान से भवनीय हैं पर प्रेम भाव ही वास्तविक है। क्योंकि जीवन का सबसे गहरा और स्थायी भाव रति है। यह मनोवज्ञानिका का भी अभाव नहीं है। असनिय रति भाव की विभिन्न छायाओं का ही ब्रह्मण्य विचारको ने मुख्य रूप से उपस्थित किया। उनका अनुसार भाव या रति पांच प्रकार की होती है जिनका अनुकूल है। पांच रस भक्तियाँ हो जाती हैं। राम प्रीति प्रिय वास्तव्य और मधुरा ये पांच रतियाँ हैं जिनमें रति गान दास्य सरस्य वात्सल्य और मधुर भाव की पांच भक्तियाँ (भक्ति रस) उक्ति होती हैं।

स्पष्ट देवता और उसके परिवार के प्रति एक विविष्ट निजी सम्बन्ध की विविध स्थितिमा गौडीय ब्रह्मण्य मत की अपनी मौलिक देत है।<sup>१</sup> क्योंकि उसका बिना यह सम्बन्ध एकदम अरूप साहचर्य का हो जाता है और अचित्त्यभवाभवादी दान के मध्य इस सम्बन्ध को पहचानना कठिन हो जाता है। इमीनिय इन ब्रह्मण्य आलकारिको न भक्ति भाव (कृष्ण प्रीति) की प्रारम्भिक स्थिति गान्त मानी है। इस दाना म भक्त और भगवान का सम्बन्ध स्पष्ट आकार नहीं दे पाता। मसार स विरक्ति एव ईश्वर के प्रति चित्तवृत्तियाँ का उगाव तो हो जाता है। परन्तु ईश्वर को निजी सम्बन्धों की परिधि के भीतर नहीं देना जा सकता।

वास्तव में गान्त का स्थायी भाव राम एक ऐसी मानविक अवस्था का स्रोतक है जहाँ पर परमात्मा के साथ एकत्व की चतना तो आ जाती है पर राग का आवेग नहीं होता। मध्य-युगीन ब्रह्मण्य रहस्यानुभव की आवेगमयी स्थिति का भीतर न समा करने का कारण इसे ब्रह्मण्य आलकारिका न कृष्णरति में सबसे नीचे की अवस्था में रखा है। वास्तव में प्रेम प्रतीकवाद का यह यथाथ भूमि की और सचरस्य है।

### गान्त भक्ति

सकल्प विकल्प से रहित मन की वृत्ति गान्त रति है। इस राम भी कहा जाता है। यह ममता मधु गूय हाता है। भागवत में उसे निष्ठा बुद्धि<sup>२</sup> कहा गया है। कम मानसिक स्थिति की ही गीता में ब्रह्मभूत और प्रसन्नात्मा कहा है।<sup>३</sup> विष्णु धर्मोत्तरपुराण में कहा गया है जहाँ न सुख न दुःख न चिन्ता न द्वेष न

१ एस० के दे व० के सू० पृ० २८६।

२ भागवत ११।१६।३६।

३ गीता १८।५४।

राग न काइ इच्छा है मुनी-द्रगण उम गम प्रधान को गात कहा है।<sup>१</sup> यह भक्ति वास्तव में मूलतः मन में बराग्य भावना का उत्पन्न करनी है। वास्तव में सारे ससार का रहस्यवादिना ने ईश्वर के मिलन के पूर्व बराग्य द्वारा गरीर-काम नाम्ना को नष्ट करने की पद्धति को स्वाकार किया है। गात भक्ति भी बराग्य मूलक है पर यह निषेधात्मक न हाकर विधयात्मक है तथा प्रेम भावना की प्रारम्भिक स्थिति को पल्लवित करती है। प्रथम द्वारा गितायी गया प्रथम धवम्था (परगटिव स्टेज) गात भक्ति के निवट की ही वस्तु है।<sup>१</sup>

गात भक्ति एक प्रकार की जानमिथा भक्ति है और इसका लक्ष्य मुक्ति प्राप्त करना होता है। पर जमा कि पहन ही कहा जा चुना है कि परा या प्रेमा भक्ति का साधक मुक्ति न चाहकर भगवान का प्रेम चाहता है। प्रेम सदैव व्यक्ति गन सम्पक पर ही प्राप्त होता है। इसलिये भक्ति या थडा का तत्व होते हुए भी गात भक्ति श्रेष्ठ स्थान की अधिकारिणी नहीं हो पाती। यद्यपि इसका अस्वा करण नहीं किया गया। इस भक्ति के आदेश सनतकुमार आदि मान गये हैं। पर प्रेमा भक्ति की आदेश तो ब्रजगापिवाण हैं।<sup>१</sup> हमारे आलोच्य काव्य से सम्पन्न वत सम्प्रदाया में गान्त भक्ति का अधिक रूप देखन का नहीं मिलता। निगुण साधका में ही मुख्य रूप से हम इस भक्ति को देख सकते हैं। इनमें भी सूफी एवं कृष्णा पासक प्रेम भक्ता के प्रभाव एवं प्रेम प्रतीकवाद के आग्रह से यन्त्र-दास्य भाव या काता भाव का स्वरूप मिलता है। निगुण कवियों में पतिव्रता कौश्ल तथा

१ हरिभक्ति रसामत सिंधु पत्र चम विभाग प्रथम लहरी श्लोक २६ ३०

तथा नारायण भट्ट भक्ति रस-तरंगिणी पृ० ११३ पर उद्धृत।

२ जे० बी० प्रेड दि रिलिजस कागसनेस पृ० ३७४।

प्रथम ने इसका मनोवैज्ञानिक अध्ययन करते हुये बताया है कि चरित्र और आध्यात्मिकता की भावना को हट करने में बराग्य भाव बहुत सहायक होता है। बल्कि एक मत तो यह भी है कि मनुष्य के मन के जितना निवट अहंकार है उतना ही निवट बराग्य और त्याग भी। आधुनिक काल में उसका जितना अवमूल्यन हुआ है वह ठीक नहीं है (३८५ ३८६)। वास्तव में इन साधनाओं के द्वारा अनावाहित अधोक्षित एवं विभ्रम उत्पन्न करने वाले तत्त्वों को दूर रखन का मूल्यवान काय सम्पन्न होता है।

३ नारद भक्ति सूत्र २१ तथा गण्डिव्य म० सू० १४।

विरहिणी की अगम का तात्पर्य भाव की मधुर अभिव्यक्ति भी हुई है।<sup>१</sup> पर मन्नाकर निगणोपासक सभी संप्रदायों की भक्ति मुख्यतया गान्त भाव की ही है। इन लोगों ने ससार की असारता क्षण भंगुरता आदि को गिनाने हुए बराम्य व अगम की बड़ी चर्चा की है। और इसी प्रसंग में बार-बार राम का नाम रटते राम स भक्ति करने का निर्देश भी करते जाते हैं। डा० वर्मा के निबन्ध में बताया गया है कि चनावनी और उपदेश व अगम मूल्यतः गान्त रस से सम्बन्धित हैं।<sup>२</sup> प्रेम और सख्या तालिका में इनका स्थान तीसरा है। उपदेश और चनावनी से संबंधित साखी और गान्तों की सख्या क्रमशः २६८ और २३५ है। यह इनके महत्व का द्योतक है।

सगुणोपासक सम्प्रदायों में ससार की विरक्ति सम्बन्धी गान्त रस की अभिव्यक्ति अवश्य हुई है पर वह वास्तव में दास्य सख्य वात्सल्य या मधुरभाव की अगमभूत अभिव्यक्ति है। इनके अनुसार ये पाचों भाव एक दूसरे से निरपेक्ष नहीं हैं। उत्तरोत्तर एक का दूसरे में अंतर्भाव होता चलता है तथा सर्वश्रेष्ठ का तात्पर्य (या प्रियता) भाव में पाचों भावों का सम्मेलन रहता है।<sup>३</sup> इस प्रकार सगुणोपासक (चतुर्थ बल्लभिय हरिदासी राधावल्लभिय रामोपासक) सम्प्रदायों में गान्त भक्ति मुख्य नहीं है। यह भक्ति के अगम भावों की पोषक मात्र है। गान्त भक्ति के विभावों की चर्चा करते हुए भक्ति रसामृत सिंधु में भगवान् चतुर्भुज तथा आत्माराम एवं तापस भक्तों को गान्त भक्ति का आलम्बन माना है। सगुणो

१ डा० रामकुमार वर्मा ने भारतीय हिन्दी परिवर्धन प्रयाग द्वारा प्रकाशित हिन्दी साहित्य में पृ० २४१ पर अठ्ठाइस सत कवियों की बानियों के आधार पर विभिन्न अगमों की जो तालिका दी है उससे प्रतीत होता है कि सत संप्रदायों में प्रेम का स्थान काफी ऊँचा रहा है। इस तालिका में प्रेम के अगमों की शब्द और साखी संख्या १६८ है तथा उसका क्रमानुसार पाचवाँ स्थान है। प्रेम प्रतीकों पर आधारित अगमों में पतिव्रता का स्थान १५ वाँ है तथा उसकी गान्त साखी संख्या ३८ है। तथा विरह या विरह का उदाहरण का स्थान प्रेम के बाद है। उसके अगमों की संख्या १४२ है। व्यक्ति चारित्र्य की अगम का स्थान १७ वाँ है और साखी संख्या ८ है।

२ वही पृ० २३४।

३ नारायण भट्ट ने भक्ति रस-तरंगिणी में कहा है कि अगमों में परस्पर अगम भाव रहता है। बल्लभादी गान्तस्य यथा।

— भक्ति रस तरंगिणी पृ० ११० (बाबा कृष्णदास द्वारा प्रणीत)।

४ रूप गोस्वामी हरिभक्ति रसामृत सिंधु पश्चिम विभाग १।१३ १५।

पासक सभी संप्रदायों के अनुयायी कवियों ने अपने पूर्ववर्ती कवियों भक्ता एवं गुरुओं की प्रशंसा में बहुत अधिक स्तुतियाँ की हैं। उन्हें हम शांत रस के अन्तर्गत ही परिगणित कर सकते हैं। निम्बाक सम्प्रदाय के कवियों द्वारा गुरु वन्दन एवं सिद्धांत निरूपण व प्रसंग में ईश्वर के स्वरूप दर्शन गुणगान आदि की चर्चा से युक्त तत्सम्बन्धी प्रभूत साहित्य की रचना हुई है। १७ वीं शती के अन्तिम भाग के निम्बाकीर्ण धारावाह्य और कवि परशुराम देव का परशुराम सागर तो मुख्यतः शांत रस का ही ग्रन्थ है। हमारे धारावाह्य युग में धनानन्द नागरीनाथ ने शांत रस के अष्टोत्तराश्रय मिल जाते हैं।

हरिदासी सम्प्रदाय के अष्टादश सिद्धान्त व पद रसिक दास की रचनाएँ आदि सद्भाषितक निरूपण इसी के अन्तर्गत आदेंगे। इसी प्रकार सेवक हरिराम व्यास ध्रुवदास रूपलाल, चाची हित वृंदावन दास आदि में शांत भक्ति की रचनाओं का विशाल भण्डार प्राप्त है। कृष्णदास कविराज की गौरगणोद्देश्य दीपिका प्रियानाथ की भक्त सुमिरनी भक्तमाल की टीका आदि शांत रस के ही ग्रन्थ कहे जायेंगे। सिद्धांत निरूपण एवं गुरु महिमा गान वाली शांत भक्ति का अभाव पुष्टि भाग में भी नहीं है। रामोपासना की मधुर साधना के अन्तर्गत भी शांत रस का निषेध नहीं है। शांत भक्ति के जिन अनुभावों उद्दीपनों एवं संचारी भावों की गणना वल्लभाचार्यों ने की है उनका भी अभाव उन सम्प्रदायों में नहीं है। पर ये सभी अतन्त मधुर भाव की ओर मोड़ दिये गये हैं।

### दास्य भक्ति

भक्ति के क्षेत्र में निजी व्यक्तिगत सम्बन्धों का प्रथम स्फुरण दास्य भाव में होता है। निजी सम्बन्धों के कारण भक्ति भावना यहाँ पर अधिक प्रगाढ़ हो जाती है। शांत भक्ति की विशेषताओं के अतिरिक्त उसमें एक विशेषता और जुड़ जाती है कि भक्त भगवान् को अपना स्वामी मानकर उसकी सेवा व भाव को जगा लेता है। इस प्रकार रूपवणुहीन शांत की अपेक्षा यह अष्टतर है। इसमें भगवान् शाश्वत स्वामी एवं उनका परिकर शाश्वत सेवक माना जाता है।

- 
- १ रामोपासक कामदेवमणि जी ने शांत रस के उपासकों को भी प्रभु के परिकरों में माना है। उनकी रक्ष और रस रूप दो भागों में बाँटते हुए उन्होंने कहा है कि रस रूप के उपासक महली सेवा और रस भोग का मम जानते हैं। युगल लीला में उनकी आस्था होती है। (भगवतीप्रसाद सिंह रामभक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० २२२-२२३ पर उद्धृत।)

निम्बाक द्वारा भक्ति की परिभाषा में उदघत श्लोक (दाशलोकी) में दयादि गुणा की उत्पत्ति प्रभु-कृपा से मानी गयी है। इस प्रकार दास्य भावना इस सम्प्रदाय में पूज्यतया भाव्य है। यद्यपि निम्बाक-सम्प्रदाय एवं हरिदामी तथा राधावल्लभीय सम्प्रदायों में जिस समय रसोपासना का विकास होता है उसी समय रामोपासना के समान ही सेवक भाव या कर्ष्य अर्गीभाव न रहकर युगल किंशोर क भाधुय का अग और साधन मात्र हो जाता है। जीव का परतत्त्व संसम्बन्ध सेवक-सेव्य भाव का इन सम्प्रदायों में भाव्य है। स्वा हरिदाम जब बहते हैं

श्री हरिदास क स्वामी श्यामा कुजबिहारी प्रानन क भाषारिनि <sup>१</sup>। तब स्वामी श्यामा से यह सेवक सेव्य भाव प्रकट हो जाता है। वास्तव में सखी सहचरी मजरी या किंकरी भाव मूलतः दास्य भावना की ही अभिव्यक्तियाँ हैं। स्थापदवाची हाने संभ्रतरंग विलास में इनका प्रवेश हो जाता है जबकि पुरुष दास्य में सेवक का अधि कार नहीं होता। पर मनोवैज्ञानिक दृष्टि से दाम या दासी में कोई भ्रतर नहीं है।

गौडीय बष्णवा में भी दास्य भाव प्रभाय नहीं है। ऊपर हमने हरिभक्ति रसामत सिंधु के आधार पर ही इसका विवेचन किया है। इस भक्तिरस को रूप गोस्वामी कृष्णदास कविराज एवं जीव गास्वामी आदि ने पांच मुख्य भक्ति रसों में ही माना है। पर उनके अनुसार उत्तरोत्तर विकास क्रम में दास्य का भी भ्रत भाव मधुर भाव में हो जाता है। मधुर भाव ही प्रकृत है इस धारणा के कारण गौडीय भक्त कवियों ने भी मधुर भावातगत ही इसका चित्रण किया है।

निगणी कवियों ने अवश्य इसकी शुद्ध प्रचुर अभिव्यक्ति की है। डा० राम कुमार वर्मा द्वारा विवेचित (पीछे उदघत) तातिका में गीता एवं सखिया की सबसे अधिक सख्या विनय या विनती के अंगों की २८० है।<sup>१</sup> इस प्रकार सर्वाधिक महत्त्व दास्य या प्रीति भक्ति की ही निगण कवियों ने दिया ऐसा प्रतीत होता है। दास्य के दाय विनय आत्मदोष कथन शरणागति आदि क भक्तिरक्त राजा<sup>२</sup> स्वामी पिता<sup>३</sup> जननी<sup>४</sup> आदि रूपों में जहां कल्पना की गई है वे स्थल भी दास

पूव पृ सं पर वास्तव में वास्तव्य और दास्य को उर्होनि भ्रतरत युगल लीला की और प्रयोजित कर दिया है। भ्रत शास्त्रीय दृष्टि से ये अर्गी न होकर अर्गी ही हुये।

१ अष्टादास सिद्धांतके पृ २।

२ हिन्दी साहित्य (द्वितीय भाग) भा० हि परिषद् पृ २४१।

३ कबीर प्रयावली पृ १४३।

४ वही प्रयावली पृ ६।

५ वही प्रयावली पृ १८४।

६ वही प्रयावली पृ १२३।

भाव के ही हैं । इन प्रतीकों के माध्यम से दास्य भाव की ही अभिव्यक्ति हुई है ।

### सख्य भक्ति (प्रेमस रति)

दास भावना में प्रभु के गौरव एवं महत्ता की अनुभूति व कारण साधक का बहुत समीचीन सम्पर्क नहीं हो पाता । स्वामी और सेवक के मध्य एक प्रकार का दुराव प्रवश्य रहता है । इससे अतिरिक्त स्वामी को सेवक के कार्यों में उतनी गाढ रुचि भी नहीं होती ।

प्रति भक्ति की और विकसित स्थिति में जिस सामाजिक भाव सम्बन्ध की कल्पना की गई वह सख्य भाव है । सखाओं में परस्पर सामीप्य बोध अधिक होता है उनमें पारस्परिक अन्तरगता हो जाती है । व एक दूसरे के गुप्त रहस्यों से परिचित ही नहीं होते एक दूसरे के कार्यों में गहरी रुचि भी लेते हैं ।

दास्य भक्ति के सम्बन्ध में हमने सम्भ्रम गण्य का नाम लिया था । रूप गोस्वामी के अनुसार सम्भ्रम की समाप्ति अथवा विश्रम्भ यानी कि बिना किसी प्रकार के अंतराय के गाढ विश्वास को ही सख्य का स्थायी कहना चाहिये ।<sup>१</sup> गाढ विश्वास वाली यह सख्य रति बढ़कर प्रणय, प्रमा स्नेह तथा राग में परिणत होती है ।<sup>१</sup> इनका फिर अनेक स्थितियों का निरूपण रूप गोस्वामी ने किया है ।

सखा भी पुर तथा ब्रज सम्बन्ध से दो प्रकार के माने गये हैं ।<sup>१</sup> ब्रज सखाओं व पुन चार भेद है —सुहृत् सखा, प्रियसखा प्रिय नम सखा । इनमें अन्तिम सब गृह्य होते हैं । सुहृत् सखा कृष्ण से प्रायु में बड़े और कृष्ण के प्रति किंचित वात्सल्य से युक्त माने गये हैं । सखा भगवान से प्रायु में कुछ कम प्रिय सखा समान प्रायु के । प्रिय नम सखा उनसे भी अधिक मान वाले तथा अंतरंग गोपनीय लीलाओं के सहचर होते हैं ।<sup>१</sup>

इन सभी सखाओं के आलम्बन कृष्ण सुन्दर वेग धारण करने वाले सुपण्डित अत्यन्त प्रतिभाशाली दक्ष वीर शेषर विदग्ध बुद्धिमान समद्व एव सुखी हैं । ऐसे भगवान के साथ उपयुक्त सम्बन्धों का अनुकरण करते हुये जा भाव प्रतिभा मन में स्थापित होती है वह सखा भक्ति की ही होती है । इसमें गान्त भक्ति व निरभिमान विरक्ति आदि भी हैं, दास का सा सखा भाव है (सखा सेवा

१ ह० भ० र० ति० प० वि० ३।५४ ५५ ।

२ यही यही ३।५६ ।

३ यही यही ३।६ ।

४ यही यही ३।१० ।

५ यही यही ३।२० ।



पूव कथित भाव दगाय भी वात्सल्य म अतमु क्त हो जाती हैं । जीवन की तीन मूल वृत्तियो — जिजीविषा कामेच्छा एव मृजन-कामना म स एक मृजन-कामना का साकार विग्रह सतान होती है । एम रूप म भी वात्सल्य जीवन का अत्यधिक व्यापक और मावभोम भाव है । लौकिक जीवन व इस अनुभव को भी पारमार्थिक जीवन व क्षत्र म घटाया गया है ।

जिस समय भवत परमात्मा को पुत्रवत मानकर (नए यगोदा दगरय, कोगल्या आदि की भाँति) उह ला लडाता है उनकी सुरक्षा और सुविधा का ध्यान रखता है एव बिना प्रतिदान म कुछ चाहे निष्काम भाव से उनके प्रति स्नेह रखता है तब ऐसी भाव भक्ति को वात्सल्य भक्ति कहा जाता है । यहा पर न ता सम्भ्रम है न विद्मभ बल्कि अनुकम्पनीय पर अनुकम्पा का भाव ही स्थायी है ।<sup>१</sup> यद्द वात्सल्य रति पूवकथित अय रतिया की भाँति ही प्रीत होने पर प्रमा स्नेह एव राग अवस्थाओ का प्राप्त होती है । 'यामल गात हचिर समस्त श्रुष्ठ लक्षणो से युक्त प्रियवाक सरल बुद्धिमान विनयी माननीया का मान करने वाले भगवान कृष्ण (या राम) इस रति क आत्मबन्ध हैं ।

माता पिता ज्येष्ठ भ्राता गुरुजन आदि इस भाव व आश्रय हाते हैं । कुमारादिवय रूप वेप गशव की चपनता जल्पना स्मित आदि सीलाए ही उद्दीपन हैं ।<sup>२</sup> मस्तक का सूघना आगीर्वाण आज्ञा हितोपदेशदान चुम्बन आश्लेष तथा स्तयस्त्राव आदि अनुभाव हैं ।<sup>३</sup>

रामापासको म वृद्ध वात्सल्य एव लघु वात्सल्य य दो भाग किय गये हैं । वृद्ध वात्सल्य से तात्पर्य ऊपर विवेचित वात्सल्य से है पर लघु वात्सल्य है जब राम सीता को पिता माता मान कर साधक स्वय को गिणु रूप म कल्पित करता है ।

जहा तक गिणु की क्रीणाया बाल-सीताओ आदि के वरण का प्रश्न है वात्सल्य भाव की निवृत्ति ससार व समस्त साहित्य मे प्राप्त होती है । सूरदास ता इस चित्रण क अधीनवर ही है । बाल-सीता एव माता पिता की अनुभूतियो का उनमे बडा चितरा ससार म दूसरा उत्पन नही हुआ है पर मानसिक घरातल पर इस भाव की साधना अत्यधिक कठिन है । जो भगवान् है ईश्वर है परमात्मा है समस्त चराचर ब्रह्माण्ड के उदभव स्थिति एव निलय का हेतु है उसे एक

१ हरिभक्ति रसामत सिन्ध प वि० ४।२४।

२ वही वही ४।२७३।

३ वही वही ४।८।

४ वही वही ४।२० २२।

५ रामभक्ति मे रसिक सम्प्रदाय डा० भगवती प्रसाद सिंह पृ० २५०।

नगण्य माधक गिणु मानकर व्यवहार करे—यह म्यति तनिक कठिन है। स्वयं का गिणु एव ईश्वर को पिता मानकर एक प्रकार की प्रतीकापासना संभव है लेकिन यहाँ भी एक सुविकसित प्रौढ व्यक्तित्व वानचेंष्टाए कठिनता सही धारण कर सन्या। इसनिये इस भाव की अभिव्यजना हम मध्यकालीन बष्णव साहित्य में कम मिलता है।

बल्लभ सम्प्रदाय में कृष्ण के बाल रूप का प्रतिष्ठा अवश्य है एक सूर और परमानन्दनाम न वात्सल्य भाव-सम्बन्धी प्रश्न एव उत्तम साहित्य की रचना भी की। परन्तु फिर बल्लभ-संप्रदाय में भी मधुर भाव का साधना ही बढ़ती गयी। स्वयं सूरदास न अपरिचित अतिथ पद में 'युगल रूप में ही अपनी चितवृत्ति कर रहे रहने का उल्लेख किया है।'

गौडीय बष्णव कविया ने इस भाव के प्रवाणन की श्रार बिल्कुल ही ध्यान नहा दिया। उनका मन कृष्ण और राधा की किशोर लीलाओं में ही रमा रहा।

निम्बाक-संप्रदाय में अट्ट हर्षियामनेक वृत्तावुन दव' धनानन्द आदि न बाल श्रीदासों के बणना के अतिरिक्त बघाई के पदों में वात्सल्य की अभिव्यक्ति की है। यो मय मिलाकर इस संप्रदाय का मुख्य काम्य मधुर रस ही है। वात्सल्य के बणनो में भी बहाने से राधा-कृष्ण मिलन के प्रसंग इन्होंने दूरे लिये हैं। गोपाल बन से गाचारण के उपरान्त लौट रहे हैं तो दूल्हा के समान हैं और सखिया के दूध के आगे आगे आ रहा राधा दुल्हिन के समान है। इस सम्प्रदाय के कविया के वात्सल्य रस के बणन में इस रस का बणन कविया का मुख्य उद्देश्य नहीं है। वरन् उससे सम्बन्धित रति बालक कृष्ण और राधा के पोषण में सहचरा भाव का नित्य विहार दान की सुख-लालना द्वियी है।"

हरिदासी एव राधावल्लभीय संप्रदाय में ब्रजलीलाओं का महत्त्व ही नहीं है। बहो तो युगल का नित्य विहार-लालना का ही गान है, अत

१ श्रीरामो बष्णवन की वार्ता भावप्रकाश, पृ० ७८६।

२ व-दासन देव की रचना 'गीतामत गंगा का प्रथम घाट ज-भोस्ताव एव द्वितीय घाट पौण्ड्र-लाताओं का है।

३ गोपाल लाल, दूल्हा बरानी।

गोधन आग सलिन दूध में राधा दुल्हिन लाल गवाती।

दु-बुभि दूध दोहन की बाजी राजा सब गोपाल सजाती।

आरति पसक गहि जल मोती, ओभट रूप पिवाती।

—श्री युगल शतक पद २०।

४ निम्बाक-सम्प्रदाय के कृष्णभक्त हिन्दी कवि डॉ० नारायण दत्त गर्मा  
पृ० ५१७ (म० प्र०)।

वात्सल्य भाव को अभिव्यजना का प्रान ही नहीं उठता । या सखी सप्रणाय (हरोदासी) के अष्टाचार्यों में से एक रसिक दास इसका प्रपञ्च है । उहने वात्सल्य भाव का पर्याप्त अवन किया है । यद्यपि यहाँ भी प्रवृत्ति वात्सल्य व म य मधुर भाव व प्रसगा की योजना की ही रही है । बालनीना नामक एक छान्ती सी ५६ छान्ती की इनकी पुस्तक है उसमें वृष्ण व जम बालपन आदि का बखान है तथा अत में एक गापी राधा को वृष्ण से गाचारण व बहान लाने वन में मिला देती है । युगल मिलन में परिसमाप्ति होत हुए भी सप्रणाय की दृष्टि से यह अथ कछ अनोखा है । यो रसिकदास जी न स्वयं अपनी भावना स्पष्ट करते हुये लिखा है कि युगल किंगोर एक आर मदा नित्य विहार में नग रहत हैं एव दूसरी ओर नद एव वृषभानु के घर ज म भी नत हैं ।

रसोपासक सप्रदाया में वात्सल्य भावना को रामोपासना व भीतर पर्याप्त स्थान मिला है यद्यपि प्रवृत्ति युगल किंगोर के नित्य विहार में सहायक होने की है । राम-सीता का विवाह गौना करा दिया जाय उनक विहार में कोई कष्ट अनुविधान रह यह भाव इन भक्ता में मुख्य है इसका अतिरिक्त राम सीता की बालचेष्टाओं आदि का भी चित्रण शुद्ध वात्सल्य की दृष्टि से भी मिल जाता है । रामप्रियाशरण प्रेमकली ने अपने सीतायन नामक विनाल प्रबंधकाव्य में सीता की बाल शीलाया का अच्छा बखान दिया है

छबोली जनक ललिन की जोरी

करि सिंगार निरखति नयनन भरि जननि सकल तख तोरी ।

छम छम चलति अरति पुनि दोरति मणि प्रतिबिम्ब गहोरी ।

इसी प्रकार सूरकिंगोर जी की जानकी जी में वात्सल्यनिष्ठा थी । कहते हैं कि ये अयाध्या का पानी भी नहीं पीते थे दामाद के नाने राम से परमपद तक की उहोने याचना नहीं की । १० उमापति वसिष्ठ भाव से भगवान का आराधना करते थे । वे इसी कारण राम को प्रणाम नहीं करते थे ।

निगणोपासका में न तो बाल लीलाया का स्थान है और न प्रभु का पुत्र मानन का ही प्रश्न है । इसी कारण वात्सल्यभाव की विवृत्ति वहा पर नहीं के बराबर है । स्वयं ईश्वर की पिता रूप में चर्चा अवश्य आयी है—पर वह मात्र प्रतीक है । हमसे अधिक उसका महत्त्व नहीं है । पिता या माता रूप में अनेक सन्त-नवियों ने ईश्वर को माना है इसकी चर्चा हम पीछे दास्य भक्ति के प्रसंग में कर चके हैं ।

मपूरा या काता भक्ति

वात्सल्य में भी एक प्रकार की दूरी माता पिता और पुत्र के मध्य

अवश्य रहती है। जसा सबस्व समपण, जितना सांद्र प्रेम एव जितनी एका  
 त्मानुभूति स्त्री-पुरुष के प्रेम म हाजी है उतनी अव्यय नहीं। स्त्री पुरुष  
 क मध्य की काम भावना जीवन की गहनतम व्यापकतम एव सावभौम वृत्ति  
 है। इम भावना म पूर्ववर्ती सभी भावा का अन्तर्भाव हा जाता है। पत्नी सेवा  
 भी करना है मन्वा सखी की भाति मनारजन भी करती है माँ क समान हित  
 चिंता भी करती है एव पत्नी क रूप म अपना संपूर्ण यकितत्व पति का अर्पित  
 कर देती है। प्रेमभाव की यह सर्वोच्च अवस्था है एव ससार के सभी आस्तिक  
 धर्मों में इम प्रतीक का व्यवहार किया गया है। पर वष्णवो म यह प्रतीक क  
 स्तर पर न रहकर वास्तविकता क स्तर पर ल प्राया गया है। गाविया इस प्रेम  
 की आत्मा आश्रय हैं एव गाविया म राधा साक्षात् महाभावरूपा हैं। सौंदर्य एव  
 माधुर्य क धनविग्रह श्याम सुन्दर ही इमक आलम्बन हैं। भगवत्तरति का श्रेष्ठतम  
 रूप यह मधुर भाव ही है। हमारे आलोच्य युग म इसी मधुर प्रेम क सूय की  
 किरणा स सारे सम्प्रदाय आलाकिन हा उठे थे। इस साधना की पृष्ठभूमि विवास  
 स्वरूप एव विभिन्न सम्प्रदाया म उसक रूप की विस्तृत चर्चा हम अगल अध्याय  
 म करेंगे।

ऊपर हम जिन पांचा भक्तिया का उल्लेख कर आये हैं उनक अनुरूप भाव  
 सत्ता वाल प्राणी पहले हा चुक हैं। चाहे सनक सनदन जस सन ही या हनुमान  
 धुकदेव साथ विदुर जस दाम हा, अजुन, श्यादामा सुवल जसे मन्वा हा दगरय  
 कौगल्या नर यथादा कमिष्ठ जस गुञ्जन हों या ब्रज गाविकाए (राधा आदि)  
 सीतादि हा—य सभी अखिल भुवन माहिन श्यामसुन्दर क प्रति तत्त भावा की  
 प्रतिमाए थी। इनकी रति रागात्मिका थी। (इष्ट म गाढ तपणा राग का स्वरूप  
 लक्षण एव इष्ट की आविष्टता उसका तटस्थ लक्षण है।<sup>१</sup>) इस रागभाव की  
 भक्ति ही रागात्मिका होती है। ब्रजवासी जनों की प्रीति ऐसी ही थी।<sup>२</sup>

जीव स्वभावत कृष्ण-दाम है वह ब्रजवासी जना क समान ता नहीं है  
 पर उने चाहिए कि अपनी याग्यता एव रुचि क अनुमान ब्रजवार्मिया क उम उस  
 भाव का अनुकरण करे। इस ही रागानुगा भक्ति कहत हैं—यानी कि रागात्मिका  
 का अनुकरण करने वाली। साधक अपन भावानुसार स्वय को दास सखा माता  
 पिता या प्रिया अनुभव करे। अपन ही ऊपरउन का आराध करे। धीरे धीरे अध्यास  
 से वह वस ही भाव एव प्रेम का मन म जगा सकेगा। सारे ससार के साधकों म

१ इष्ट गात्रतणा राग एइ स्वरूप लक्षण।

इष्ट आविष्टता एइ तटस्थ लक्षण॥

—घत-य चरितामत मध्य ली०, परि० २२।२६ ।

२ ह० म० २० सि०, पु० वि० २।६० ६२।

सवेग कल्पना आदि रोमांस तत्त्वा की प्रवृत्तता मनोवचनानिबान् म्बीकार की है ।<sup>१</sup>

उपयुक्त परिगणित भाव भूमियाँ वास्तव में उम मनोवचनानिक प्रक्रिया पर आधारित हैं जिसमें अनुभूति और कल्पनाएँ तथा इन पर उमका विन्वाम एक दूसरे के सहारे बढते जाते हैं तथा इन्हीं के माध उसकी मद्गतात्मक जिन्दगी और उसकी श्रद्धा भी समय के साथ बढती जाती है । (हिज इमानल नाफ एण्ड हिज फ थ इन इट इन्वीजिग विद द इयम) ।<sup>१</sup>

- 
- १ दि मिस्टिक इज इसेशियली ए रोमण्टिसिस्ट । बाइ सेयिंग दिस आइ मीन दट ही एन्जिविडस इन अ लाज डिग्री दट काफिडेस इन इमोशन एण्ड इमेजिनेशन बिच आर एट दि वाटम आफ रोमण्ट सिजम । (रहस्यवादी अनिवायत स्वच्छन्दतावादी होता है । यह कहने से मेरा तात्पर्य है कि वह उन कल्पनाओं और सवगो पर अधिकांशत बसा दि वास प्रदर्शित करता है जो कि स्वच्छन्दतावाद के मूल में होते हैं ।)

—ज० बी० प्रट द रिलिजस नागसनस पृ० ३६६ ।

- २ वही पृ० ३६७ ।

तृतीय | उज्ज्वल रस  
अध्याय | मीमासा



## माव का विकास पृष्ठभूमि-स्थित विविध तत्त्व

ले अध्याय में हम सक्त कर चुके हैं कि मधुरा भक्ति के मूल में स्त्री सबंध की धारणा विद्यमान है। अपने इष्टदेव कृष्ण के प्रति जो (सिखी आविष्टता) ब्रजगोपिकाओं के हृदयों में या उसी का अनुगमन में जो भावचिन्तन किया जाता है, वही मधुराभक्ति में परिणत हो मस्त साधना इसी उज्ज्वल भाव तक पहुँचने के लिए होती है। साधना में जो हम आगे स्पष्ट करेंगे। यहाँ पर हम संक्षेप में इस साधना की पृष्ठभूमि और विकास की रेखा स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।

साधना का प्रारम्भिक और एतत् सबंधी रूप काफी पुराना एवं है। लौकिक सबंध उपमान एवं पारलौकिक सबंध उपमय होता है। आश्रमों के ऐसे आश्रमों की ओर सक्त किया गया है। बृहदारण्यक उपनिषद् में भी इस सबंध में बहुधा उद्धृत किया जाता है —

प्रियया स्त्रिया सम्परिवृक्तो न बाह्यम किंचन वेदनात्तरम ।  
तम पुरुषं प्राज्ञेनात्मना सम्परिवृक्तो न बाह्यम किंचनवेदनात्तरम ।<sup>१</sup>

यहाँ पर वास्तव में सबंधों के भी सादृश्य की ओर सकेत न करके स्थिति को व्यञ्जित किया गया है। इस उपनिषद् वाक्य में यौन सम्मिलन से म्लय को समाधि के आनंद के समतुल्य बताया है। ब्रह्म और जीव के स्त्री पुरुष वाला सबंध दिखाना उद्दिष्ट प्रतीत नहीं होता।

काम जीवन की एक प्रधान और महत्वपूर्ण वृत्ति है। बह्विध ऋषि ने किया था कि जगत् जीवन के मूल में काम है— कामस्तदग्रे समवतताधि त प्रथम यदासीत्<sup>२</sup>। भारतीय समाज चिंतकों में इस गतिशीली वृत्ति को बनाने के लिये विवाह की जिस समस्या का निर्माण किया उसने काम को प्रवस्था में लाकर उसके माध्यम से पितृ ऋण जैसे महत्वपूर्ण काय सम्प्रा

१ बृहदारण्यक उपनिषद् ४।३।२१ ।

२ ऋग्वेद ८।७।१७ अथवा १६।५२।१ ।



दित कराने चाहे। पतिव्रत एवं पत्नीव्रत के रूप में जो आदर्श सामान्य ध्यान हैं वे इस अर्थार्थदित वृत्ति को सीमाबद्ध करते हैं। पति पत्नी विवाह के पश्चात् नौकियाँ वासना तृप्ति करते हुए भी एक अभिनव एवं अपरिवर्तनीय मूल्य में बंध कर जो सुखलाभ करते हैं उसमें काम महत्त्वहीन हो जाता है अथवा या कहें कि अधिक उदात्त बन कर मनुष्य का शक्ति और प्रेरणा देता है। धीरे धीरे स्त्री की सामाजिक हैसियत पुरुष की अपेक्षा गिरती जाती है। पतिव्रत धर्म का महत्त्व बर्ण जाता है एवं एक पत्नीव्रत का आदर्श समाप्त हो जाता है। पत्नी सम्पत्तियों का बन जाती है पति की दुबलताओं एवं तिरस्कार को सहन करके भी वह अपनी अमीम गभीर प्रमत्ति के साथ पुरुष के प्रति अनुरक्त रहती है। उसके चरित्र में एक कोमल मानवीय गहनता के साथ ही दिव्य एवं अनौकिक गुणा का अपूर्व सम्बन्ध दिखाई देता है। इस निष्ठावान् अधिबल प्रेम की प्रतिमूर्ति ही भारतीय काव्य पुराण की नायिकाएँ हम मिलती हैं। हम लगता है कि बहुपत्नीवादी के बोध से फूट कर आये हुये इस निष्ठावान् अखण्ड प्रेम के नारी आदर्श ने मधुर भाव को विकसित होने में मयेष्ट सहायता दी है। एक परमपुरुष की जीवात्मा रूपी अनेक स्त्रियाँ हैं एवं ये स्त्री रूपी जीवात्माएँ अपने प्रियतम से ऐमा ही हट प्रेम करें जसा कि स्त्री अपने पति से करती है—यह आदर्श महत्त्वपूर्ण बनजाता है।

स्त्री पुरुष-मन्त्रों एवं प्रेम-वृत्ति के सामंतीकरण (पयूडलाइजिंग ऑफ लव) का एक और प्रभाव भा हम मधुर साधना में विकसित हाता मिलता है। जैसे एक सामन्त के ऊपर दूसरा सामन्त हाता है और उसकी सीढी दर सीढी सेवा होती है। प्रेम की लगभग वसी ही सेवा हमें उत्तर मध्ययुग में प्राप्त होने लगती है। राधा हैं कृष्ण हैं उनकी प्रधान प्रधान सखियाँ हैं सूयेश्वरियाँ हैं फिर उनकी भी सेविकाएँ दासियाँ या मजरिया है। यह सारा ढाँचा पूरी तौर से सामाजिक व्यवस्था पर आघारित है। मध्ययुग में व्यक्ति का व्यक्ति से प्रेम या घणा अधिक संकल ये। देव भक्ति की भावना की अपेक्षा गरण में आये हुए को रक्षा देने की या मित्र के निय प्राप्त देने की या प्रमिका के लिये सब कुछ बलिदान कर देने की भावनाएँ बड़ी प्रबल थी। इस वयंकिनक आवेग के कारण ही प्रेम और विवासाघात दाना का ही रूप महान् था। मध्ययुग में प्रेम का आवेग एवं नये रूप में शक्तिशाली हो उठा यह बात दूसरी है कि उसकी वेगभूपा कुछ पुराना हा रहा। नम्रता शिष्टता एवं एक प्रकार का व्यभिचार भी इस प्रेम के अंग बन गए। सामन्त और प्रजाजन का संबंध प्रेम के क्षेत्र में नम्रता के रूप में प्रकट हुआ। दरवार शिष्टता के मानदण्ड प्रेम के क्षेत्र में प्रमो प्रमिका के पारस्परिक व्यवहार में प्रतिबिम्बित होते हैं। तीसरे तत्त्व व्यभिचार के कारण और गहरे हैं। सामन्ती विधान के भीतर पत्नी सम्पत्ति के एक टुकड़े की भाँति स्वीकृत थी अतः उसका साथ प्रेम के अति आदर्शीकरण या रूमानी भावना को

जाडने का प्रश्न नहीं उठता था । वह तो 'प्राप्त ही थी । जमींदार के लिये जैसे भूमि वैसे पति व लिय स्त्री—यह सामान्य धारणा थी । इस प्रकार विवाह प्रेम व लिये बहुत उपयोगी नहीं था । यो विवाह की उपयोगिता और पत्नी की आवश्यकता स्वीकृत थी— ऐंद्रिक प्रसन्नता तथा घरेलू सुख भावना के लिये । पर इसम मध्ययुग का वह रोमा स कहाँ उभर पाता है ? परिणाम परकीया प्र म हुआ । वही स्त्री अपने पति के लिये महत्त्वहीन पर वही स्त्री प्रमी के लिये प्राणाधिक भियतमा हो जाती है । सी० एस० लेविस का यह कथन इस प्रसंग म निनात सायक है—एनी फ्राइडियलाइजेशन आफ सेक्सुअल लव इन ए सोसाइटी ह्व यर मरिज इज प्योरली यूटिलिटिरियन मस्ट बिगिन वाई बीइंग ऐन फ्राइडियला इजेन आफ ऐडल्टरी ' । (अर्थात् विवाह को मात्र उपयोगी मानने वाले समाज मे यौनप्र म का आदर्शीकरण निश्चित ही 'यभिचार के आदर्शीकरण से प्रारंभ होगा ।) उत्तर मध्ययुग म परकीया प्रेम के इस आदर्शीकरण व उदाहरण भारतीय भाषाओ व वपणव भक्ति साहित्य मे विरल नहीं हैं ।<sup>१</sup>

इस परकीया प्रेम के पीछे एक और मनोवैज्ञानिक कुण्ठा भी स्वीकार की जा सकती है । पीछे हम कह चुके हैं कि दाम्पत्य जीवन म जिन हिन्दू आदर्शों की प्रतिष्ठा हुई थी, उनम काम का स्थान महत्त्वहीन हा गया था । घीरे घीरे उद्दाम श्रावणमय वासनात्मक प्रेम को घम व वराभयशील पक्ष ने अनुचित ठहराना शुरू किया । स्त्रियो की भाँति भाँति की निंदा व स्वर हम गीतम बुद्ध से लेकर उत्तर मध्ययुग के कवियो साधको तक मे मिलते हैं । परतु साहित्य म चित्रा मे जब जब परकीया प्रेम का चित्रण हुआ वह मानो एक प्रकार से धार्मिक वजन गीलता व प्रति विद्रोह था । विद्रोह की आत्यन्तिक विजय तब होती है जब कि

१ सी०एस० लेविस एलिगरी आफ लव, प० १३ (आक्सफड यूनीवर्सिटी प्रेस, १९४८) ।

२ परकीया प्रेम के इस सामन्ती रूप का धनजाने ही एक प्रकारान भागवत मे हो गया है । शुकदेव से महाराज परीभित ने कृष्ण व परदाराभिमानके औचित्य के बारे मे प्रश्न किया उसका उत्तर उन्होंने दिया— तेजस्वियो के लिये कोई भी चीज दोष की नहीं है जैसे कि सबभुक्त अग्नि (को मलिनता स्पग नहीं करती) ईश्वरगणों का वाक्य ही सत्य है आचरण सब सत्य नहीं होता ।' इस उत्तर मे मानो कोई कह रहा है कि सामध्ययुग गतिगाली सामन्त के लिये कुछ भी दोष नहीं है । उसका गम्द ही कानून है सत्य है और सब कुद्व मिथ्या है । यह उत्तर सामन्ती भावना की आत्मा के एकदम अनुकूल है ।

वास्तविक सामाजिकता का धर्म (इत्युज्ज्वल भाषा रियत्रिणी) बना कर देता है।

यह गतिवाद वप्येव मतवाद का ही नहीं था व गति और बौद्ध-भाषा नामा को भी प्रभावित कर रहा था। वप्येव गति और गति गति म प्राप्त गतिवाद भाव भाषा या विचार किसी भी दृष्टि से परस्पर बहुत भिन्न नहीं हैं।

बौद्ध साधना का भाग जब महायान के अंतर्गत जनमाधारण के लिए उभूक्त हो गया तब सहज ही लागू अपने परंपरागत विचारों का मायताप्रा देवी देवताप्रा भूत प्रत जादू टोने के विनासा समेत उसके भीतर आ गये। उनके साथ ही ह्ययोग लययोग राजयोग मत्रयोग भी पुस और इन सब न एक व्यवस्थित बौद्ध गतिक साधना विधि खड़ी कर दी। जिसका कि नतिक धार्मिक दृष्टि कोण ही मूलरूप से भिन्न हो गया।<sup>१</sup> इसी म मियनयाग भी आ मिला। यही पर धार्मिक निपथ की पूर्वचचित प्रतिक्रिया को हम मान कर सें। इस प्रतिक्रिया के कारण ही इन लोगों ने जिन पंचमकार आदि प्रतीका का प्रयोग किया व मनुष्य का उद्यम यौन वस्तियों से भा सबधित थे।

अस्तु गति गति विष्णु लक्ष्मी शून्यता और कल्या प्रना और उपाय चंद्र और सूर्य ही राधा-कृष्ण तथा राम सीता का रूप उत्तर मध्ययुग म धारण कर लेते हैं। भारतीय धर्म साधना के क्षत्र म गतिवाद तीन रूपों म दिखाई पड़ता है

- १ एक अद्वय समरस तत्त्व निरपक्ष सत्ता है। गति और दोनों गति उसका अंगमात्र है।
- २ गति ही परमतत्त्व तथा गति के मूल आशय है। अत वे ही उपास्य है गति उही मे निहित है।
- ३ गति ही परमतत्त्व हैं और जिसका भीतर व आधारीभूता हैं वे ही गति हैं। अत उपास्य गति है न कि गति।

बौद्ध साधनाप्रा एव सहजिया वप्येव म प्रथम स्थिति अधिक माय रही है गति तथा प्रारंभिक वप्येव सम्प्रदाया (ना निम्बाक एव वल्लभ) म दूसरी स्थिति के निकट पहुंचता हुई मायताए स्वीकृत हैं। गौरीय वप्येव म तीसरी विचार धारा (गतिमत) की और भुजाव होता है जो कि हरिदामी राधावल्लभीय और हरिध्यामी (परवर्ती निम्बार्थीय मत) सम्प्रदाया म अधिक विवसित हुआ है तथा जिसकी चरण पराकाष्ठा व दावन के ललित सम्प्रदाय म दिखाई पड़ता है।

साधना के क्षेत्र म बौद्ध सिद्धा रसश्वर दगना एव कील कापालिक मम्प्रदाया म विण्ड म हा ब्रह्माण्ड की बरूपना करके अद्वय या युगनद्ध स्थिति की

उपलब्धि का प्रयास किया जाता था। उनके अनुसार स्त्री और पुरुष भग (शिव और शक्ति) मनुष्य शरीर के भीतर ही है। उनकी अद्वय उपलब्धि के लिए विभिन्न प्रकार की यौगिक प्रणालियों का आश्रय लिया जाता था तथा स्त्री का प्रयोग साधन रूप में भी स्वीकार्य था। सब मिला कर इनमें यौन यौगिक साधनाएँ प्रचलित थीं। इन्होंने मधुरभाव के प्रसार में पर्याप्त महायत्ना दी।

सहजिया ब्रह्मण्यों में आकर इस विश्वास का रूप थोड़ा बदल गया। यहाँ पर प्रत्येक पुरुष में ब्रह्मण्य और प्रत्येक स्त्री में राधा का तत्त्व स्वीकार किया गया। इनके लिये 'आरोप साधना' की कल्पना की गयी। पुरुष किसी स्त्री में राधा का आरोप कर बसा ही चिंतन करे उसके लिए 'याकुल' हो एव स्त्री पुरुष को ब्रह्मण्य रूप में देखे। इस प्रकार स्त्री पुरुष दोनों के ही शरीर साधन बन गये। इस आरोप साधना के लिये परकीया भाव स्वीकार किया गया क्योंकि मिलन की चेष्टा वही अधिक तीव्र एव मनोवैज्ञानिक दृष्टि से गहन होती है।

गौड़ीय ब्रह्मण्यों को यह सहजिया साधना उत्तराधिकार में मिली। उन्हीं के प्रभाव में उन्हीं परकीया भाव को स्वीकृति भी दी जो कि मध्यम में आकर या तो स्वकीया हो जाती है—(पुष्टि भाग) या परकीया स्वकीया विवर्जित (राधावल्लभ)। पर सहजिया ब्रह्मण्य आरोप-साधना ब्रह्मण्य मतवादों में आकर कुछ भिन्न रूप धारण कर लेती है। यहाँ पर किसी दूसरे की स्त्री पर राधा या दूसरे पुरुष पर ब्रह्मण्य का आरोप करने के स्थान पर अपने मन पर किसी पूर्व रागात्मिका भक्ति के साधक का आरोप करना होता है। इसे ही रागानुगा भक्ति कहा गया है। आरोप की यह साधना मनोवैज्ञानिक शब्दावली में आत्म सुभाव (आटो सजेइचन) कहलायेगी तथा रहस्यानुभूति के क्षेत्र में इसको सबल मायता मिली है। पर दोनों प्रकार के आरोपों में आरोप का बेंद्र बदल जाता है। सहजिया ब्रह्मण्यों में किसी दूसरे को राधा या ब्रह्मण्य मानकर चलना होता है एव ब्रह्मण्य मतवादों में अपने को ही नन्द यन्मोदा हनुमान सुबल उद्धव या गोपी आदि अनुभव करने का अभ्यास करना पड़ता है।

आरोप के इस अभ्यास के सफल हो जाने के बाद ही ब्रह्मण्यों में भाव और प्रेम भक्ति की अवस्थाएँ मानी हैं। उस समय के आनन्द की कोटियों में समानता है। साधना की दृष्टि से बौद्धों नाथ तंत्रों और ब्रह्मण्यों आदि में एक समानता और भी है। तंत्रों के सात आचारों में सबसे बड़े कोलाचार माना गया है जिसमें कि कोई भी नियम नहीं है। ब्रह्मण्यों में यहाँ भी प्रेम की श्रेष्ठ स्थितियों में किसी भी प्रकार के विधि निषेध को स्वीकार नहीं किया गया है।

अस्तु इन मधुर साधना की पुष्टभूमि को सामाजिक प्रेरणा एव सामयिक साधनाओं के प्रतिरिक्त प्रभावित करने वाला तीव्र तत्त्व है—साहित्य की परम्परा। साहित्य का अवनम्बन करके ही राधा का आविर्भाव और

प्रसार हुआ है। इसके अतिरिक्त राधा प्रेम का टीका पूवर्णी प्रेम त्रिना से हा  
निया गया है<sup>१</sup>। भारतीय साधारण कान्य प्राणाली तथा प्रचलित कवि प्रमिद्धिया  
को ही वृष्ण भक्त कवियों ने पूरी तरह ग्रहण कर लिया है। इसमें उन्होंने अपनी  
अपनी प्रतिभा और कल्पना से नये प्रसंगा नयी लोलाघा नये काव्यरूपों एवं  
कथन भंगिमाओं का भी समावेश किया है।

चौथा अग्रतम तत्त्व है दक्षिण की भक्ति का प्रभाव। सी० एच० वाद  
धील ने कहा है कि भागवतधम (महाभारत गीता का) लौकिक प्रेम-संबंध तथा  
लोकोत्तर प्रेम अथवा भक्ति का बीच सादृश्य स्वीकार नहीं करता था। भक्त  
की आत्मा वृष्ण का प्रति बसी ही भावना रख जमी एक निष्ठावती नारी अपने  
पति का प्रति रखती है यह बात कही भी ध्वनित नहीं होती।<sup>२</sup> ललितका के अनुसार  
तमिल शब्द सत माणिक यागकर का तिरुक्कोवह अनजीव का गूँ सबंध का  
व्यक्त करने का लिये लोकप्रिय रोमांस का प्रतीकात्मक प्रयाग का प्रथम प्रयास  
माना जा सकता है। वादवाल ने एक लोक कथा का बहाने इस सम्बन्ध की  
अभियोजना का सबंध सूफी प्रभाव से जोड़ा है।<sup>३</sup> हम इस बात की विस्तृत परीक्षा  
न करके मात्र इतना संकेत करना चाहते हैं कि पुराणों में लोकास्थानों और  
तत्त्ववाद दोनों को समन्वित करके प्रेम प्रतीकवाद का यथेष्ट उदाहरण मुस्लिम  
पूव युग के मिल जाते हैं। जिनमें से भी प्रेम कथाओं का माध्यम से वराय्य के  
उपदेश दिये गये हैं। यह बात दूमरी है कि जिनिया का उपसहार कुछ भन्ने डग से  
आते हैं पर यह तो कलात्मक विकास ही मकता है—तथा लक्ष्यों की भिन्नता के  
का कारण भी संभव है।

अस्तु शिवभक्तों के प्रेमप्रतीकवाद को वास्तविकता के स्तर पर आलवार  
भक्त ले आये। नाम्मालवार तथा आण्डाल ने अपने को गोपी तथा श्री रगम  
की पत्नी मानकर परमात्मा से प्रेम किया। यह भी एक प्रकार से महजिया  
व्यंशवा का आराध भावना के अनुकूल था। नारद भक्ति सूत्र में इस ही यथा  
ब्रजगायिका का कहा गया है। गार्डिल्य सूत्र के स्वप्नेश्वर भाष्य में भी तीसरे  
सूत्र का सस्यागदक अर्थ की ओर एक संकेत दिया गया है। महाभारत के  
एक अवतरण का आधार पर सस्या का आगत्य पति का प्रति पत्नी की भक्ति से है।

१ डा० ए० भू० गुप्त श्री राधा का प्रेम विकास पृ० १४८।

२ सी० एच० वादधील भागवत धम में प्रेम प्रतीकवाद—धनुगीलन  
डा० धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक पृ० २७१।

३ वही पृ० २६६।

४ वही पृ० २७२।

५ वही पृ० २७४।

उत्तर भारत की बष्णव मधुरभाव की साधना में इस भाव के उत्तराभि-  
कारी अधिकांश निगुण माधव और मारावाई हैं। श्रय माधवों ने अपनी  
कल्पना मन्त्रा या मखिया के रूप में का है न कि प्रमिका या पत्नी के रूप में।  
वास्तव में दक्षिण के भक्ता में प्रेम प्रतीकवाद विकसित हुआ था जबकि उत्तर  
भारत में युगल रूप का तत्त्वदर्शन। इसी कारण दक्षिण के उत्तराभिकारी अपने  
का राम की चट्टरिया कहते हैं पर राधा बलभी हरिदासी निम्बार्कीय आदि  
संप्रदायों में नित्य विहार लाला के दर्शन और उम विहार में परिचर्या का महत्त्व  
है। पुष्टिमात्र गुक मप्रदाय एवं स्वसुग्या गाथा के रामोपासका में प्रेम प्रतीकवाद  
दक्षिण की परम्परा में अधिक विकसित हुआ है।

माधुर्योपासना का बनावट देने वाला अनिम मुख्य तत्त्व है—सूफा तत्त्व  
दर्शन। सूफा भी अपने दृष्ट को नौकिक प्रेम प्रतीका के माध्यम में अभिव्यक्त  
करते हैं। विरह भाव का अन्त अत्यधिक प्राधान्य है। इन्होंने भी निगुणोपासकों  
का मुख्य रूप से अपने अर्थ के रग में रगा है।<sup>१</sup> या मगुणोपासकों में बलभ एवं  
गौडीय बष्णवों में जो विरह का भाव है उस पर भी सूफी मतवाद की छाप देखा  
जा सकती है। रसायामकों में नित्य विहार के अंतर्गत विरह की स्थिति सूफी  
भाव से भिन्न हो गयी है।

ऊपर कही हुई सारी बातों का यदि समष्टिकर देखा जाय तो प्रतीत होगा  
कि मधुर भाव के मूल में दो तत्त्व हैं (१) लीलावाट तथा (२) मधुर रस (कीर्तना  
भाव)। प्रथम तत्त्व का विकास शक्तिवाद के माध्यम से विभिन्न साधनाओं के बीच  
से हुआ है तथा द्वितीय तत्त्व का आरम्भ प्रेम प्रतीकवाद के रूप में हुआ है जो  
धार और यथायथा का बाना धारण कर लेता है। मभवत इन दोनों का प्रथम  
बलारम्भ समन्वय श्रीमद्भागवत में हाता है एवं चरम परिणति १६वीं १७ वीं  
श्लोका के बष्णव काव्य में प्राप्त होती है।

### मधुर रस का स्वरूप

वाङ्मय में शृंगार का रसरत्न कहा गया है।

इसी प्रकार रागमूलक शृंगार का भक्ति के क्षेत्र में भी सर्वश्रेष्ठ स्थान  
है। मनावधानिक दृष्टि से नौकिक ध्यानम्बन के प्रति जा गति होती है उसी  
का जब अनयन हो जाता है और उसका विषय स्वयं भगवान हो जाता है तब

१ निगुणोपासक एवं सूफियों दोनों का ही सम्मिलन राजपूताने एवं  
पञ्जाब में मुख्य रूप से प्रारम्भ में हुआ होगा। यह प्रभावपूर्ण  
१३ १४ वीं शताब्दी में ही पूरी तरह हुआ होगा।

वह मधुर रस में परिणत होता है। भक्ति रस दास्य में जसा कि पूरणी कथा जा चुका है कृष्ण विषया रति ही मूल स्थायी भाव होता है और उसका पाँच मुख्य एवं सात गौण प्रकार हाते हैं। उस प्रकार सब मिलाकर १२ रगा (८ काव्यशास्त्र क तथा दास्य सख्य और वात्सल्य) का इस ढाँचे में भीतर स्थापित किया गया है। इनमें पाँच मुख्य (गात दास्य सख्य वात्सल्य और मधुर) में से चार का संक्षिप्त परिचय हम पिछले अध्याय में दे चुके हैं। श्री रूप गोस्वामी जी ने पंचम मधुर रस को भक्तिरसराट<sup>१</sup> तथा निवृत्ता क निय अनुपमागा दुष्क तथा वितताग बताया है।<sup>२</sup> निवृत्तो के लिये अनुपयोगी कहकर उहाने यह पहल ही मनेत कर दिया है कि लौकिक शृंगार रस के यह सदृश है पर वास्तव में यह मादृश्य ऊपरी है। कृष्ण रसशास्त्रियो (रूप जीव विश्वनाथ चक्रवर्ती कृष्णदास कविराज) ने बार बार उस बात के लिये सावधान किया है कि उसे शोक के शृंगार के समान समझने का भ्रम न किया जाय। अस्तु उस भक्ति रसराज क निरूपण क लिये रूप गोस्वामी ने उज्ज्वल नीलमणि नामक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ लिखा। इस ग्रंथ का नाम जिनना ही प्रतीवात्मक है<sup>३</sup> उतना ही सूक्ष्म अटिन एवं विस्तारपूर्ण विश्लेषण है।

अस्तु इस मधुर रस की परिभाषा करते हुये उहाने कहा है कि वक्ष्यमाण विभावादिक द्वारा पुष्ट मधुरा रति मनीषियो (भवता) के हृदय में

१ मधुररसेषु पुरा य सक्ष पेणोदितो रहस्यत्वात् ।

पथगेव भक्तिरसराट स विस्तरेणो यते मधुर ॥

—उ नी० म० पृ० ४।

श्री जीवगोस्वामी ने अपने प्रीति सदभ (प० ७०४ ७१५ तक) में भगवान की दो प्रकार की लीलाए ऐश्वर्य एवं माधुर्य बताया है। तथा इनमें उ होने माधुर्य को अष्ट बताया है। इस प्रकार भी मधुर रस ही अष्ट सिद्ध होता है। (काव्यमाला संस्करण निणय सागर प्रस बम्बई १९३२)

२ निवृत्तानुपयोगित्वाद् बहुरहत्वाच्च रस ।

रहस्यत्वाच्च सन्निध्य विततागोपि लिख्यते ।

—ह भ र सि० प० वि० ५।२ (अच्युत प्र यमाला काशी सवत १९८८)

३ शृंगार के लिये उज्ज्वल नील का प्रयोग भरत ने भी किया है शृंगार का वरुण नील (श्याम) माना गया है तथा मणि समुद्र से निकलती है इस प्रकार हरिभक्ति रसामत सिंधु से निकला हुआ वह उज्ज्वल नीलम है जो सदैव धारण करने योग्य है।

आस्वान्ति हाकर मधुर भक्ति रस कलाता है ।<sup>१</sup> मधुरा या प्रियता रति का स्वरूप व हरिभक्ति रसामृत मिथु में पहन ही स्पष्ट कर चुके हैं । उसक अनुसार आकृष्ण एव गोपिया का दाता का परम्पर मयाग व लिय प्रेरणा न्न बाना मधुरा या प्रियता रति कहा जाता है ।

मधुर रस की यह सारा याजना पूरा तरह म मस्कृत काव्यशास्त्र (गिग मूपात व रसाणव मुधावर' का आधार सत्रम अधिव निया गया है) पर आधारित है । इसक निय प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावला और मायाय धारणायें (जनरल कन्सप्टम) सी- सीध मस्कृत काव्यशास्त्र स उठा ली गया है । परन्तु उन सबका कृष्ण रति का धार किस प्रकार माना गया है जिम न्य स तमाम विस्तारिया का मूम विस्लेषण हुआ है एव फिर समस्त कयना का नाना सानो म समर्थन अनुमादित एव आह्वरण द्वारा पुष्ट किया गया है व सब आश्चयजनक है ।

नामक कृष्ण एव उनका नामिकाया परिवार आदि की विविध मन म्यनियों पहनुमा परिस्थितिया प्रिया चेष्टा, वचन आदि का जमा मार्मिक विवचन एव उद्घाटन श्री रूप गाम्वाभी (नाव गाम्वाभी कृष्णान्तम कविराज विवनाथ चक्रवर्ती नागण्ड मद्र आदि न भी लगभग उनी का अनुकरण समथन किया है ।) न किया है व अथय न्तम है । यही कारण है कि अथय समस्त ममसामयिक कृष्णव सप्रत्याया का इस भक्तिरस शास्त्र न गहर न्य स प्रभावित किया है । मार व सार अलकारशास्त्र का सहान भक्ति का धार जिम प्रकार माना वह उनम व्यक्तित्व का प्रीयता पान्तिय एव प्रतिभा का स्पष्ट परिचायक है । अलकार शास्त्र एव भक्ति भावना का उनम विविध मणि-वाचन मयाग था ।

अन्तु, इस प्रियता या मधुरा रति व भवताभावन अलम्बन है—नायक चूनामणि कृष्ण एव उनका वल्लभाएँ ।<sup>१</sup> नायक व रूप म कृष्ण म विविध (२५) गुण गिताय गय है । और वे स्वभाव स धारायतादि चार प्रकार व बनाय गय

१ उ० नी० म० १—३ प० ५ अथवा ह० भ० १० सि० प० वि०, ५।१

२ मियो हरेम गाध्याच सभोगस्यादिकारणम ।

मधुरा परपर्याया प्रियताऽन्योन्विता रति ॥

—ह० भ० १० गि० ६० वि० ५।७ २६ ।

३ अस्मिनालम्बना प्रीयता कृष्णस्तस्य च वल्लभा ।

—उ० नी० म० पृ० ५ ।

४ वही पृ० ६ ।



है।<sup>१</sup> नायिका की दृष्टि से पति और उपपति के भेद में पुनः कृष्ण के लोभ है। उपपति के रूप में वे कल्याणाएव परीक्षायां प्रमी है। (यही परम यात्रा त्रिणा दना आवश्यक है कि सहजिया कृष्णव मायना तथा कामगाम्य म प्रभाविन अलकारगास्त्र के प्रभाव में उपपति (परकीया भाव) का धारणा का समावेश ता उहोन किया है पर रूप और जाव दानो ही गास्वामिया न यत्र वतान म अत्यधिक परिश्रम किया है कि वास्तव में उपपतित ऊपर स प्रावृत्त जाता म है वस्तुन वे नायक स्वाकीयाया के ही है। गोरीय कृष्णवा म परकीया भाव १८ वीं गती म विश्वनाथ चक्रवर्ती की मुद्रा पाकर ही पूज्यतया प्रामाणिक बन पाता है। इसके पूर्व दार्शनिक स्तर पर जीव गास्वामी आदि न इस स्वाकार नहीं किया था। इस उपपति वान रूप म ही शृंगार की मव अष्ट गता है।

नायक कृष्ण के अनुकूल दक्षिण गठ और घट—य चार रूप प्रमी चरित्र के अनुसार और भी बताये गये हैं।

परम्परागत अलकार गास्त्र के अनुसार ही नायिकाया का विभाजन किया गया है।<sup>२</sup> परन्तु एक मौखिक विभाजन उहान भक्ति एक धमगास्त्र की दृष्टि में किया है। यह विभाजन महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें कृष्णवल्लभा को सीध सीध भक्त की यथायता दे दी गयी है। इस विभाजन का आग दिया गय खाके से समझा जा सकता है। इस विभाजन के अनुसार सब अष्ट नित्य प्रिया नायिकायो में साक्षात् महाभावस्वरूपिणा राधा मव अष्ट है।<sup>३</sup> राधा की प्रामाणिकता तथा इत्यादि के मायम से प्रतिष्ठित करते हुये उह हल्लादिना या महाशक्ति कहा गया है।<sup>४</sup> हरि के समान ही सह्यातीत गुणावाली वृन्दावनश्वरी राधा की पांच प्रकार की सहचरियाँ है—सखी नित्यसखी प्राणसखी प्रियसखी परम अष्ट सखा। सखिया सम्बन्धी अवधारणा मधुरोपासना म अत्यधिक

१ उ० नी० म० पृ० ६

२ अत्रय परमोत्कथ शृंगारस्य प्रतिष्ठित । वही पृ १४  
कृपया सलग्न चाट देखिये।

४ उ० नी० म० प ६१ ६४ ६७ के आधार पर।

५ उ० नी० म० पृ० ७३

६ हलादिनी या महाशक्ति सवशक्ति वरीयसी।  
तत्सारभावहपपमिति तत्र प्रतिष्ठिता।

—उ० नी० म० पृ० ७५ ७७।

७ तास्तु वृन्दावन चर्या सह्य पञ्चविधा मता ।

सह्यञ्च नित्यसह्यञ्च प्राणसह्यञ्च वाञ्छन ॥

प्रियसह्यञ्च परमअष्ट सह्यञ्च विधता । —वही पृ ६७।

महत्त्वपूर्ण है। हम आगे इस पर विस्तार में विचार करेंगे।

नायिका की सखिया व समान ही नायक व भी चेट विट पीठमद विदूषक तथा प्रिय नमसखा आदि महायज हैं। शृगार अभिमार म दूता का महत्त्व पूरा काय हाता है। उज्वल नीतमणि का एक पूरा अध्याय इस विद्वान म लगा है।

नायिका व भाग्यत प्रयोजन की दृष्टि म मधुरा रति साधारणा समजमा और समर्था तीन प्रकार का माना गयी है। साधारण रति म नायिका म स्वमुख का भावना हाता है, जस कि कृष्ण न कृष्ण न अगमग स स्वय आनन्द चाहा या। समजमा म नायक व भा मुख का ध्यान अपन मुख व साथ हा होता है। इसम परनीम्बाभिमान भा रहता है। समर्था रति म अपन मुख की तनिक भी चाह नहीं हाता मात्र कृष्ण मुख का हा कामना रहता है। नायिका का रति ऐमा ही थी। यह महानाव का अवस्था तज मचरण करती है।<sup>१</sup>

कृष्ण एव नायिकाया की कायिक मानसिक एव वाचिक चष्टाया तथा प्रकृति आदि उद्दीपन विभावा का भा लम्बी सूची ह। इसा प्रकार भाव हाव हाता सात्विक आत्ति परम्परागत अनुभाव समट गय हैं। इसक अनिरिक्न नावा विगृसन, उत्तराय स्वलन जस मात उन्मास्वरस अनुभावा का परिगणन लेखक की मौनिकता है। वाचिक अनुभावा का भी निपुणतापूर्वक उपस्थित किया गया है।<sup>२</sup> व्यभिचारी भावा व प्रकरण म भा प्रचलित काव्यशास्त्र व ही सचारिया का गिनाया गया है। उग्रता एव आनस्य का अवश्य छाड लिया गया है। भावात्पत्ति (भावादय) भावमति, भावगता एव भावगति का भी मथिप्त निष्पण इसी प्रकरण म प्राप्त हा जाता है।<sup>३</sup>

स्यायिभाव प्रियतारति का प्रबुद्ध करन वाल कारण अभियाग विषय सवष अभिमान उपमा तथा स्वभाव हात हैं। उत्तरात्तर एक दूमर म इनम श्रेष्ठ हाता है। अभियाग म प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप म अपना भावनाया का आराप हाता है। तज स्पण गय आत्ति इन्द्रियों व विषय दूमरी कात्ति व अनगत आत हैं। मनक कारण भी रति उत्पन हाता है। सौन्दर्य कुल आत्ति व गौरव की भावना सवष है तथा एक विशेष वस्तु ना हा अपन पास रखन का इच्छा अभिमान व अनगत है—जा कि रति प्रादुर्भाव का हतु वन सकती है। किरा सुन्दर वस्तु का कृष्ण सहज देखना उपमा व अनगत है तथा बहिर्हेतुया का अनपक्षी निरुग या स्वरूप दा प्रनार वाला स्वभाव हाता है। यह कृष्ण निष्ठ भी हा सकता है

१ वही प० ४०७ से ४१५ तक।

२ वही प० २६५ से ३४० उद्दीपन और अनुभाव प्रकरण।

३ वही, व्यभिचारी प्रकरण, पृ० १४२ म ३८८।

घोर तलना निष्ठ भा ।<sup>१</sup>

घोरे घोर मधुरा रति सांद्र हाता हुई विभिन्न स्थितियों को पार करके महाभाव की सब अष्ट अवस्था में पहुँचती है । जिस कि रस का बीज है इधु दंड रस गुड खण्ड गकरा मिश्री सितापल (शोला) प्राणि अवस्था में मधुनेक रूप धारण करता है वस ही रति भा प्रम स्नेह मान प्रणय राग अनुराग भाव (महाभाव) की अवस्था तक पहुँचती है ।<sup>१</sup>

(१) प्रम—नाग का कारण होते हुए भी जो कभी नाग नहीं हाता है तथा जो दोना (नायक-नायिका) को भाववधन में बाँधता है वह प्रम है । प्री मध्य और मत् भेद से यह तीन प्रकार का हाता है । प्री प्रम में वियाग एकदम अमह्य होता है । मध्य प्रम में कष्टपूर्वक वियाग सह्य बन जाता है तथा मत् प्रम में भगवान् सम्बन्धी स्मृति कभी-कभी मलिन भी पत् जाती है ।<sup>१</sup>

(२) स्नेह—प्रम के परम उत्कृष्ट की दशा में द्रवीभूत चित्त की वृत्ति ही स्नेह कहलाता है । यह भा श्रुष्ठ मध्यम और कनिष्ठ उत्कृष्टता भेद से तीन प्रकार का होता है । स्नेह भी घृत स्नेह और मधु स्नेह दो प्रकार का हाता है । प्रथम में धारावाहिकता हाती है तथा दूसरे में अत्यंत ममतामय मधुरता ।<sup>१</sup>

( ) मान—जा स्नेह उत्कृष्ट का प्राप्त होकर एकदम अनुभूत आस्वाद का अनुभव करात इय वामता (बाह्य उपक्षा) भाव को धारण करता है वह मान कहलाता है । स्नेह ऊपर दो प्रकार का कह जा चुक है ये ही क्रमग उत्कृष्टता का प्रपन कर उत्पन्न (घृत स्नेह द्वारा) एवं तलित (मधु स्नेह द्वारा) मान में परिवर्तित हा जात हैं । चन्द्रावली प्रथम प्रकार के आदराश्रित मान की प्राप्ति हैं एवं श्री राधा अतिमात्र कुटिलता धारण करने वाले तलितमान की प्राप्ति हैं । यहा यह कह दना भी अनुचित न हागा कि भारताय कामशास्त्र का मान गद अपन आप में अप्रतिम है । इसमें प्रम मिलनोत्कृष्टा उपक्षा कृटना इत्यादि इतन मनोवर्ग मिले हैं कि रस सहज ही दूसरी भाषा बोलने वाले के लिये समझना कठिन हा जाता है ।

१ उ० नी० म० पृ० ६० ४०६ ।

२ वही पृ ४१६ ४१७ ।

३ वही पृ० ४१८ ४२४ ।

४ वही पृ ४२४ ४२६ ।

५ (क) वही पृ० ४२८ ४३१ ।

(ख) मधुसूदन सरस्वती ने भी अपने भक्ति रसायन में चित्त की द्रुति तथा धारावाहिकता को अत्यधिक महत्त्व दिया है ।

६ वही पृ ४३२ ।

(४) प्रणय—जब प्रिय के गौरव का भाव एकदम मिट जाता है तथा विश्रम्भ और विस्वास का उदय होना है तब गाढ़ दुःखा मान ही प्रणय कहलाता है। इस अवस्था में कांत और कान्ता के प्राण मन बुद्धि, दह आदि के मध्य भ्रम का भावना नष्ट रहता है। इसे या भी समझना चाहिये कि मान में ता काम गच्छता होती है पर मान छुटने पर प्रिया अपन प्रियतम से एकमेक होकर मिलती है जम बाध तोड़कर नयी ममुद्र से मिलती है। यह उत्कृष्ट भावावग की अवस्था होता है। प्रणय भी दो प्रकार का होता है—मुमत्र प्रणय एव सुसख्य प्रणय। प्रथम में गौरव का भावना किंचित अवगिष्ट रहता है पर दूसरे में विलकुल नहीं। वास्तव में य उगत और ललित मान के प्रमग विकसित रूप हैं। या विकास प्रम में य भा स्वीकार किया गया है कि कभी मान से प्रमग उदित होता है और कभी-कभी प्रणय से मान भा उदभूत होता है।

(५) राग—प्रणय और अधिक उत्कृष्ट ही जान पर राग कहलाता है। इस अवस्था में दुःख भी सुख में परिणत हो जाता है। यह राग भी रूप गाम्वाभा के अनुसार नालिमा और रक्तिमा दो भाँति का हो सकता है। नालिमा राग के पुन दो भेद हैं (१) नालाराग जो कि व्यय मभाववाहान बाहर अधिक न प्रकाशित होना जाना तथा बहुत कुछ अव्यक्त रहना है। (२) यामा राग नीती राग की अपणा किंचित प्रकाशमान भावता मिश्रित तथा बिलम्ब से सिद्ध होने वाला यामाराग होता है। रक्तिमा राग के भी दो भेद हैं—कुमुम्भ राग एव मजिष्ठा राग। (१) कुमुम्भ राग में चित्त गाँध ही रजित हो जाता है तथा यह अय राग-स्रवि को भा व्यजित करता है। (२) मजिष्ठा राग कभी नष्ट नहीं होता उसे अय राग की अपक्षा नहीं होती तथा उसकी कांति कभी नष्ट नहीं होता। राधा माधव के मध्य यहा राग प्रतिष्ठित रहता है।

(६) अनुराग—यदा अनुभूत होन वाल प्रियतम का भा जा राग नित्य नव-नव रूप में स्थित होता रहता है उस अनुराग कहते हैं। इसमें अनक पहनु हाते हैं तथा परस्पर वशीभाव प्रेमवचिय (मिलन में भी विरह का आगका) प्रप्राणजय जड वस्तुप्रा में जन्म धारण करने का लालसा तथा त्रिप्रलम्भ में विशप स्तूति प्रादि इस अवस्था में विरह में भा प्रिय की भक्तव प्राप्त होता रहता है।

१ उ० नी० म० पृ० ४३० ।

२ वही पृ० ४२८ ।

३ वही पृ० ४६० ।

४ वही पृ० ४४३ ।

५ वही पृ० ४४६ ४५१ ।

६ वही पृ० ४५८ ।

(७) भाव—अनुराग स्वमवेद्य दगा का प्राप्त होकर माना कि जब उसका अनुभव अनुराग का छात्रक अथवा किमा भाव स न किया जा सक प्रना गित ही तब यह वृत्ति भाव कहलाती है।<sup>१</sup> स्वयं कृष्ण का पट्टमपिपा (समजसा रति) भी इस दगा को नहीं पहुँच पाती अत्रदविषो गरा मवेद्य यह भाव ही महाभाव भा कहलाता है।<sup>२</sup> इसके पुन दो भेद हैं

(१) दृढ—इस अवस्था म सात्विक अपने चरम उद्दीप्त रूप म पहुँच जात है। रू भाव की अवस्था म एक क्षण का भी वियोग भ्रमह्य हो उठता है इनम समीपवर्ती वना को भी आलोडित कर गवन की क्षमता होता है कल्प को क्षण (सुख म) एव क्षण को कल्पवत (वियोग मे) समझने की सामर्थ्य आ जाती है। प्रिय व सौख्य म भी आर्ति की प्राग्वा रहती है अमूर्च्छित अवस्था म भी अपने आप तथा अन्य अपने स सम्बन्धी वस्तुमा का विस्मरण प्र भी कर देता है।

(२) अधिदृढ—जिस अवस्था म दृढ व ऊपर कह गय अनुभाव एक विगिष्ट अवस्था का प्राप्त होत है उसे अधिदृढ कहते हैं।<sup>३</sup> इसक भी मादन और मादन दो प्रकार माने गय हैं। (१) सात्विका का अत्यत उद्दीप्त सौष्ठव मोहन व अत गत हाता है। यह राधा यूय म ही प्राप्त होता है। तथा विलप की अवस्था म इस ही मोहन कहते हैं।<sup>४</sup> इस अवस्था व भी अत्यत प्रभावगाली सात्विको का उल्लस इसका साक्षा को सूचित करता है। यह जब राधा म उदित हाता है तो दूर अथ कान्तामा स आलिंगित होत दृय भी कृष्ण मूर्च्छित हो जात हैं।<sup>५</sup> सार ब्रह्माण्ड म क्षाम उत्पन्न हो जाना है। राधा दिव्य उमाद की अवस्था म आ जाती हैं। दिव्य उमाद भी उन्मूलण एव चित्र जलरात्रि आदि अनेक भेदा वाता कहा गया है। काई एक विलक्षण विवगतामयी चष्टा का नाम उदधरण है। प्रियतम व मित्र के साथ भट होने पर रोप स अनेक भावमय जल्पो का उदित होना एव उसक अत म तीव्र उत्कठा का उदय चित्रजल्प कहलाता है। इस चित्रजल्प की भी दस अवस्थाए होती हैं।

(२) मादन जब हलादिनी गक्ति का सार स्वरूप प्र म रति से लकर महाभाव पयन्त सब भावा व उदगम स उल्लसित होता है मोदन मोहन आदि स जा परात्पर है एव श्री राधा म ही जिसकी प्रतिष्ठा है, ऐसे भाव को

१ उ० नी० म पृ० ४५६ ४६० ।

२ वही पृ० ४६२ ।

३ वही पृ ४७२ ।

४ वही पृ० ४७३ ।

५ वही पृ ४७७ एव च० च० म० सी० परि० २ पृ २६ ।

६ वही पृ० ४७७ ।

मादनाप्य' महाभाव कहते हैं ।<sup>१</sup> इस अवस्था म विरह का अभाव होता है । हजारा नित्य लीलाए इस भाव की बिलाम हैं ।<sup>२</sup> उ० नी० म० क स्यायो भान प्रकरण क श्लोक स० २०८ की टीका म विन्वनाय चन्द्रवर्ती ने इसकी विचित्रता की ओर सबत करत हुय कहा है प्रकाण भेद से मिलन और विच्छेद पृथक विद्यमान रहन हैं और, प्रकाण भेद स इन दोनों म अभिमान का भी भेद रहता है । अर्थात् जिस प्रकाण म सभाग विद्यमान रहता ह वहा प्रिया जी को यह अभिमान रहता है कि मैं सयागिनी हूँ और जिस प्रकाण म विच्छेद होता है उम जगह श्री राधारानी का यह अभिमान होता है कि मैं विरहिणी हूँ । जिस समय मादनाप्य महाभाव का स्वय उदय हाता है उस समय चुम्बन, आलिंगन आदि सुखो क अनुभवा क मध्य भी वे विविध प्रकार क वियागा का अनुभूत करती हैं । इस प्रकार एक ही प्रकाण क रहते हुय दा प्रकाण धर्मों का अनुभव होना ही विलक्ष एता है ।<sup>३</sup> इस अवस्था म ईर्ष्या का कारण न होन पर भी ईर्ष्या होती है तथा सभोग काल म भी नायक से सम्बन्धित विविध बातों का चिन्तन स्मरण आदि होना है ।

हम रति के साधारणी समझसा और समर्था तीन भेद ऊपर कह आये हैं । इनम साधारणी रति केवल प्रेम की अवस्था तक पहुँचता है अनुराग तक सम जसा रति का सचरण हाता है पर भावदगा तक एक मात्र समर्था रति ही पहुँच पाती है । भावदगा का ही श्रेष्ठ स्तर महाभाव है । राधा स्वय महाभाव स्वरूपा हैं उनक पूव की जा रति से अवर भाव तक की आठ अवस्थामें हैं व मधुरभाव की साधना की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है ।

अस्तु इस भाव दगा म पहुँचकर मधुरा मा प्रियता रति उज्वल शृंगार रस का प्राप्त होती है ।

परम्परागत काव्याशास्त्र क अनुसार रूप गास्वामी न इस शृंगार क भा विप्रलभ और सयाग दो भेद किय हैं । विप्रलम्भ क विनासयोग पुष्ट नहीं होता है तथा इसक पूवराग मान प्रेम वचित्य एव प्रवास पुन चार भेद हैं ।<sup>४</sup> इनम स १ २ और ४ तो काव्याशास्त्र कामशास्त्र के ही हैं पर प्रेम वचित्य एक नया प्रकार है जिसम कि प्रिय की उपस्थिति म भा विरह की आशका बनी रहता है ।<sup>५</sup> इन विविध विप्रलम्भ प्रकारों क भी अनक उप प्रकार इस ग्रन्थ म गिनाय गय हैं ।

१ उ० नी० म० पृ० ४६६ ।

२ वही, पृ० ५०२ ।

३ वही, (आनन्द चन्द्रिका टीका) पृ० ५०३ ।

४ वही, पृ० ५०६ ५०८ ।

५ वही पृ० ५४८ ।

सभाग शृंगार भी मुख्य और गीर्ण दो प्रकार का होता है—जाग्रत अवस्था में होने वाले प्रत्यक्ष सभोग व भी चार भेद (विप्रलम्भ की चारों दशावस्था व समरूप) होते हैं—सक्षिप्त (पूर्वराग व पश्चात्) मकीर्ण (मान व पश्चात्) सपन (थोड़ी दूर व प्रवाम के बाद) समृद्धिमत् (सुदूर प्रवास के अनन्तर) । स्वप्न आदि की अवस्था में होनेवाला सभोग गौणसभाग शृंगार होता है । इसका भी सक्षिप्त मकीर्ण सपन एव समृद्धिमान चारों भेद रूप गोस्वामि न गिनाये हैं । दान स्वप्न वस्त्ररोषन (राह रोचना) राम वत्सवन श्रीढा यमुना जन केलि नौजाविहार वशीचोरी वस्त्रहरण चुम्बन तथा मागत योनिसंयोग आदि शृंगार के विभिन्न तत्त्व या चट्टाएँ हैं । श्रीरूप गोस्वामी के अनन्तर

अथमुज्ज्वल नीलमणिगहनमहाधोपसागरप्रभव ।

भजत तव मकरकुण्डलपरिसरसेवीचिर्ता देव ।<sup>१</sup>

### काम और भगवत् प्रेम में अन्तर

पीछे हम कह चुके हैं कि भक्ति रस विवेकका न होने सामाजिक उत्तरदायित्व का ध्यान में रखते हुए बार बार भगवत् रस का लौकिक काम से भिन्न कहा है । भक्ति रस के आकर प्रथम ही भगवत् न स्वयं इस रस का ध्यान में रखते हुये स्पष्ट कहा था

न मययावगितधिया काम कामाय कल्पते ।

भजितावधिता घाना प्रायो बीजाय नेत्यते । १०।२२।२६

जिनकी बुद्धि मुग्धम लीन रहती है उनका कामनाएँ ससार के भोगों के हतु नही हाता (उनसे सासारिक विषय सुख नही उत्पन्न होते क्योंकि उनका विषय साक्षात् परमात्मा होता है) जैसे कि भुन या उबन हुए घान अकुर नही उत्पन्न कर सकत ।

श्रीरूप गोस्वामी न जब उसे निवृत्ता के लिये अनुपयोगी बताया था तब भी वयह मन्त कर रहे थे कि यह लौकिक काम से भिन्नता जुलता है । गीतगीय तत्र न कहा भी है प्रेमवगाय रामाणा काम इत्यगमत प्रथाम गोपरा

१ उ० नी० म० पृ० ५७१ ५७६ ।

२ वही पृ० ५६१ ५६२ ।

३ वही अन्तिम छन्द पृ० ६७ ।

भाषो का प्रम ही लोकम काम कहा गया था । परंतु यह वास्तवम लौकिक काम से भिन्न है । इस तथ्य की ओर जीव गोस्वामी एव कृष्णदास कविराज न स्पष्ट ध्यान दिलाया है । जीव गोस्वामी ने भक्ति सदभ और प्रीति सदभ म कहा है कि गोपिया की कृष्ण क प्रति रति लौकिक काम नहीं है । यदि यह काम है भी तो गोपियो म यह प्रेम के रूप म परिवर्तित हो जाता है—तादृशीना कामो हि प्रेमक एव । क्योंकि समस्त कामसभोग सा लगने वाली लीलाग्रा म गोपियो ने कभी भी अपने सुख की चाह नहीं की उनका सारी प्रकृत सी लगन वाली च्छटाए कृष्ण क भ्रान्त क लिये थी । कृष्णदास कविराज ने भी इसी बात को कहा है —

आत्म सुख दु ख गोपी ना करे विचार ।  
 कृष्ण सुख हेतु करे सब व्यवहार ।  
 कृष्ण बिना भ्रार सब करि परित्याग ।  
 कृष्ण सुख हेतु करे गुद अनुराग ।<sup>१</sup>

इसी कारण उनका स्पष्ट मत है कि गोपीगणों का प्रेम शुद्ध और निमग्न है वह काम कभी नहीं है ।<sup>२</sup> कामक्रीडा से बृद्ध साम्य होन क कारण लोग उसे काम कह देते है अथवा वह तो सहज प्रेम है ।<sup>३</sup> काम और प्रेम के अंतर को स्पष्ट करते हुये कविराज ने अत्यंत सही परिभाषा दी है कि --

आत्मेन्द्रिय प्रीति इच्छा तार नाम काम ।  
 कृष्णेन्द्रिय प्रीति इच्छा धरे प्रेम नाम ।

इस कसौटी पर गोपिया के प्रेम को कमन पर उनका निष्पत्ति है कि ' गोपी भाष का तात्पर्य कृष्ण सुख है गोपियो को निजेन्द्रिय सुख वाछा नहीं थी वे कृष्ण को ही सुख देने क लिय सगम और विहार करती थी । '<sup>४</sup>

इस कसौटी पर कुजा की प्रीति व्याघात उपस्थित करती है इसे बिचक्षण पंडित एव दार्शनिक जीव गोस्वामी ने अनुभव कर लिया था । अत वे एव

१ ब० च०, आ० सी० परि० ४, पृ० २८ (पूण्यचन्द्र शील, कलकत्ता) ।

२ वही पृ० २८ ।

३ वही म० सी० परि० ८ पृ० १५२ ।

४ वही आ० सी० परि० ४ पृ० २८ ।

५ वही, म० सी० परि० ८ पृ० १५२ ।



को भी रसरूप में मायता देने की बात जोर पकड़ती गयी तथा अतत अभिनव गुप्त द्वारा यह मायता पूरनया प्रतिष्ठित हा गयी । अभिनव गुप्त का समय वि० ११ वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध स्वीकार किया जाता है । हम जानते हैं कि इस समय तक भक्तिमार्ग का यथेष्ट प्रचार हो चुका था । अधिराज पुराण एवं उप पुराण धन चुके थे । नायनारो अलवारो व भाव विह्वल गान जनमानस को आदोलित कर रहे थे । भक्तिपरक स्तुतियाँ एवं स्तोत्र उस काल तक प्रभूत मात्रा में लिखे जा चुके थे । सम्भवतः नारद भक्ति सूत्र एवं गार्डिल्य भक्ति सूत्र भी इसी युग में आसपास निर्मित हुये होंगे । भागवत पुराण नारद एवं गार्डिल्य व भक्ति सूत्र भक्ति के आनन्द को ब्रह्मानन्द एवं मोक्ष सुख से भी ऊपर बता चुके थे । ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक ही है कि भक्ति को भी रसरूप में परिगणित कराने की बात और जोर पकड़े ।

छठी और सातवीं शताब्दी में भामह और दण्डी ने कथन व एक प्रकार विशेष प्रियतराख्यानम को प्रथम कहा था ।<sup>१</sup> स्मृति नवम शती उत्तरार्ध में प्रथम को दसवाँ रस मानने की बात उठायी । अलग्गिक प्रथम व लिय उठाने प्रथम नाम प्रस्तुत किया था क्योंकि शृंगार वल स्त्री पुरुष व प्रथम के लिय ही प्रयुक्त होता था और यह रति कामग ध मुक्त होती है । इस तरह प्रथम व साथ भक्ति जैसे प्रथम सम्बन्ध की भी कायगात्र में प्रविष्ट होने का रास्ता खलता है । यद्यपि ऋट्ट के कायोलकार में प्रथम को मन्त्राभाव के रूप में ही लिया गया है पर धीरे धीरे चार प्रकार व अलग्गिक प्रथम अलकारिका व समक्ष प्राप्त हैं

(१) मन्त्री भाव (२) वात्सल्य (३) प्रीति—(नेता एवं अनुगतो राजा एवं दरबारिया का पारस्परिक प्रथम) तथा (४) भक्ति—पूज्य व्यक्ति को या परमेश्वर के प्रति अनुराग । इन सभी का अन्तर्भाव प्रथम के भीतर होता रहा । परन्तु धीरे धीरे भक्ति काय व निर्माण व साथ साथ भक्ति (वात्सल्य का भी) का अधिकार बढ़ता गया । अभिनव गुप्त ने स्पष्ट कहा कि लोग ईश्वर प्रणिधान विषयक भक्ति अर्थात् आदि का भी रसरूप में स्वीकार करने को कहते हैं ।<sup>१</sup> पर अभिनव गुप्त उन्हें गान रस का ही अंग मानने का निराश देते हैं । अभिनव गुप्त के समकालीन धनजय ने दण्डपरक में प्रीति और भक्ति का अलग अलग उल्लेख करत हुये उह रूप उल्गाह आदि ऐस ही भावों व अन्तगत परिगणित

१ दण्डी ने भक्ति के महत्त्व को स्वीकार किया था तथा भक्ति और प्रीति को पर्यायवाची रूप में प्रयुक्त किया है ।

करना चाहा है।<sup>१</sup> संभवतः ईश्वर विषयक एकता (आलम्बनगत एकता) के कारण अभिनव ने भक्ति का शांत के अंतर्गत करना चाहा था। इसका अतिरिक्त उस समय तक भक्ति का मुक्ति से नितात अलग भी नहीं किया गया था। बल्कि अभिवादात् उसे भी मुक्ति-प्राप्ति ही समझा जाता था। उधर गात-रस में भी वराग्य एवं माक्ष कामना स्वीकार थी अतः अभिनव अपने समय तक बहुत अनुचित नहीं थे, पर घनजय का हृष्य, उत्साहादि में अतभावीकरण समझ में नहीं आता। संभवतः प्रयासक उत्साह तथा हृष्य के परिणाम (अनुभावादि) को सोचकर उन्होंने यह सम्मिलित किया होगा। मम्मट (१२ वीं शता) ने दवादि विषयक रति को भावदशा के अंतर्गत रखकर उसे रस मानन में इकार कर दिया। हमचन्द्र ने कायानुशासन (पृ० ६८) में स्नेह भक्ति और वात्सल्य रति के ही विशेष रूप माने। गागदेव ने संगीत रत्नाकर में कहा कि कुछ लोग भक्ति, स्नेह एवं लौल्य को तीन रस मानते हैं तथा श्रद्धा आदरता और अभिलाषा इनके स्वामी स्थायिभाव बताते हैं पर यह असत है। ये रति के ही भेद हैं तथा स्थायी न होकर यमिचारी मात्र हैं। चौदहवीं शती उत्तरार्द्ध के प्रसिद्ध काव्यशास्त्री विश्वनाथ कविराज ने अपने 'माहित्य रूपण' में वात्सल्य की तो प्रतिष्ठा कर दी पर भक्ति को रस उहोने भी नहीं माना। अतिम प्रसिद्ध संस्कृत काव्यशास्त्री पंडितराज जगन्नाथ (विजयगीरी १८ वीं शती) के समय तक गौडीय चण्णवा का भक्तिरस संबंधी पांडित्यपूर्ण एवं गहन विश्लेषणशुक्त विवेचन सामने आ चुका था अतः वे उसकी उपेक्षा नहीं कर सके। उन्होंने भक्ति के विभाव अनुभाव संचारी भावा आदि का सम्यक उल्लेख तो किया पर इसमें मुनि वचन छडित होता है यह कहकर परम्परा के सकीर्ण नाम पर उसे रस मानने से अस्वीकार कर भाव ही माना।<sup>२</sup> हिन्दी में देव ने भक्ति रस पर विचार किया है और उसके प्रम शुद्ध एवं प्रम शुद्ध तीन भेद किये हैं। पर उस निर्भांत एवं प्रामाणिक रूप से स्वतंत्र रस की सत्ता दे सकने में वे भी असमर्थ रहे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिक युग के पूर्व तक काव्यशास्त्र में भक्तिरस को प्रामाणिक मायता नहीं मिल सकी। जिस देश में इतने अधिक परिमाण में भक्ति-काव्य की रचना हुई है उसमें यह स्थिति बदती याघात की प्रतीत होती है। हम सारी परम्परा में केवल कवि कण्ठपूर का अलंकार कीस्तुम एक अपवाद है जो परम्परागत अलंकारशास्त्र का ग्रंथ होकर भी प्रेमन् और

१ दश रूपक ४।८३ (साहित्य निवेदन कानपुर संस्करण)।

२ काव्य प्रकाश ४।३५ (श्रीलम्भा प्रकाशन)।

३ संगीत रत्नाकर पृ० ८३६।

४ रस गणाय, पृ० ४१, ४६।

भक्ति को रस के रूप में स्वीकार करता है।<sup>१</sup> पर अनकार कौस्तुभ भारतीय का यथास्त्र का बहुत माय प्रय नहीं है। इसमें अनिरिक्त कण्णपूर स्वयं चतय के जीवनीकार एवं मनानुयायी थे।

एसी स्थिति में भक्ति की रसात्मकता की स्थापना का भार स्वयं भक्ति शास्त्रिया पर पड़ा। भागवत नारद एवं गण्डिल्य व भक्ति मत्र हरिभक्ति रसामृत मिधु उज्ज्वल नीलमणि भक्ति सदम प्राति सदम कृष्णराम कविराज का चतय शरितामृत नारायण भट्ट की भक्ति रस-नरगिणी मधुसूदन सरस्वती का नाकरसायन आदि प्रथा के माध्यम से इस रस का प्रतिष्ठित करने का प्रयास हुआ है।

भागवत के प्रारम्भ में ही भगवान् सम्बन्धी अनौचित्य रस तथा उमरा अहरह पान करने वाले भावुक रमिका का उल्लेख किया गया है। नारद भक्ति सूत्र में उसे परम प्रेम रूपा और अमृत स्वरूपा<sup>२</sup> बताकर रसता की और भी मकेत किया गया है। कमजान याग से अधिक बनाकर नारद ने मानो उस गान्त रस से सन्निविष्ट करने व अभिनव गुप्त व प्रयाम का अत्याख्यान किया है। गण्डिल्य ने उस रस गान्त से प्रतिपाद्य रागस्वरूपा बताया है।<sup>३</sup>

उही बातों की अधिक व्यवस्थित वाक्यशास्त्रीय ढंग पर मधुसूदन सरस्वती ने अपने भक्ति रसायन में उपस्थित किया है। उक्तान भक्ति को परम पुष्टपाय<sup>४</sup> माना (धम अथ काम माक्ष व अनिरिक्त) तथा जान का उसका सवारी बना दिया। इस प्रकार माक्ष और जान दाना से अलग करके उन्होंने अभिनव गुप्त व आचार पर ही प्रहार किया। उन्होंने यह भी कहा कि जान और

१ कवि कण्णपूर को अनकार कौस्तुभ में प्रमन की धारणा कुछ विचित्र सी है। वरुण्य अलकारिको के मधुर रस को उन्होंने यह सजा दी है। ऐसा प्रतीत होता है कि राधा कृष्ण की प्रमन्तीला जब सखी भाव से सेय ही गई तब इस रस की कल्पना की भाव शयकता पड़ी। इसी कारण इसे अ गौरस भी उन्होंने स्वीकार किया है। कण्णपूर के अनुसार प्रमन अ गौ है और शृ गार अ ग। बल्कि अय सारे रस इस रस समूह में उठने वाली तरंगों के समान है।

(अनकार कौस्तुभ पृ० १४८)

२ श्रीमद्भागवत १।१।३।

३ ना० भ सू सख्या २३।

४ वही २५।

५ गा भ० सू० ६।

६ भक्ति रसायन १।१।

भक्ति पृथक् पृथक् अधिकारिणी क निर्ण हैं । इस प्रकार आश्रय भिन्नता क द्वारा भी भक्ति का शान्त के अन्तर्गत मानने का निरसन कर दिया ।

अपन विवेचन म उहोने भक्ति को एक नया मनोविज्ञान ही किया । इसके अनुसार अत करण की भगवदाकारता ही भक्ति है । भक्ति की पीछे दी गयी परिभाषा म भी वही तथ्य की ओर मकेन है । चित्त तरल होकर भगवान की आर प्रवाहित होता है एव उस साचे म वही आकार धारण कर लेता है । इस बात को उहोने टीका मे और अधिक स्पष्ट कर दिया है ।

उनके मतानुसार भगवान आत्ममय हैं तुलसी चरनादि उद्दीपन विभाव हैं, नेत्र विक्रियादि अनुभाव हैं निर्वेत्तानि व्यभिचारी हैं तथा भगवदाकार चित्त वृत्ति ही स्थायीभाव है ।<sup>१</sup> स्थायी भाव के नाम से मुख्य नवीनता प्रवच्य है पर आगे पृ० १६ पर उहोने इस चित्तद्रुति का प्रथम अनुराग स्नेह आदि रति क विभिन्न पर्यायों से भी अभिहित किया है । इस संयोग से परमानन्दरूप जिस रस को निष्पत्ति होती है वह स्वयं भगवान है । (भगवान को रस क साथ पर्याय रूप म देखने की यह प्रवृत्ति आगे रमोपामकों का बल देती है ।) भक्ति क अतिरिक्त उहोने काम प्राध भय स्नेह हृष ह्रास विस्मय, उत्साह गोक जुगुप्सा और काम उन ११ स्थायी भावों का रस रूप म परिणत होने वाला माना है । इनम से उदाह क धमवीर त्यावीर बीभत्स क्षम, इर्ष्या से उत्पन्न द्वेष, भय, रोष और भयानक य भक्ति रस क अंग नहीं बन सकते । शेष म भक्तिरस क अंग बनने की क्षमता है । इस विभाजन म सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मधुसूदन सरस्वती ने त को भक्ति स पृथक कर दत है । शास्त्र को वे अद्भुत चित्त क चित्त मानते हैं पर भक्ति क लिय चित्त द्रुति अनिवाय है । सम्प्रति शास्त्र क अतिरिक्त विषयारति का उत्तर देते हुये क कहते हैं कि यह बात अत्यन्तव्या (असंभव) क लिय लागू होती है परमानन्द रूप परमात्मा के लिय नहीं । इत्यन्त म भक्ति ही वास्तविक रस है वह मूल के समान है तथा शृणुगति अ प्रथम मय के मुख्य है ।<sup>१</sup>

अद्वैतवादा मधुसूदन सरस्वती के पश्चात् सर्वप्रथम श्री १५५५ ५५ पूणतम काम भक्तिरस शास्त्र के दात्र भं गौडाय वषणु क १५ १ - १ ५१५ रूप गास्वामी का रचनाकाल विजय की सोलहवीं शती का १५५५/५५ ५५ का प्रारंभ है । भक्ति रसामृत सिंधु का रचनाकाल १५५५/५५ ५५ ५५ नौ नमालि इससे कुछ बाद का होगा इस समय तक १५५५/५५ ५५ ५५ स आत्माविन हो चुका था । वषणु प्रमवाच्य की १५५५/५५ ५५ ५५

१ भ० २० प० १३ [टिप्पणी, भाग] ।

२ वही, प्रथम उल्लास, पृ० ७४ ५-१ ।

का प गुणा की दृष्टि से य रचनाएँ सब अष्ट काव्य में परिगलन योग्य हैं पर परम्परागत काव्यशास्त्र या तो इन्हें भाव मात्र मानता है या फिर तौरिक शृंगार रस के अंतर्गत इनका विवेचन करता है—जो कि इन भक्त कवियों का रिमी भी प्रकार अभिप्रत नहीं है। रीतिकाल की शृंगारी कविता भक्ति काव्य का सही परिप्रक्षय में न लेकर उस सामान्य शृंगार की प्ररणाभूमि के रूप में ही स्वीकार करती रही उसका मुख्य दोष समीक्षका (काव्यशास्त्रिया) पर है।

अस्तु रूप गोस्वामी ने अपने दो ग्रंथो हरिभक्तिरसामृतसिंधु एवं उज्ज्वल नीलमणि में इस वपणव प्रम भक्ति काव्य का पूरा याकरण और शास्त्र उपस्थित कर दिया। भक्ति का रस कहकर उसकी भावात्मकता को प्रतिष्ठा देने के बाद उन्होंने उसके मनोविज्ञान को पूरी तौर पर विवेचन किया। इस विवेचना की सारी गणवली और धारणाएँ परम्परागत काव्यशास्त्र या कामशास्त्र की ही हैं। सहृदय का स्थान भक्त न लेता है। उस भक्त के हृदय में कृष्ण रति रूप स्थायी भाव समुचित विभाव अनुभाव और सचारी भावा से पुष्ट होकर भक्ति रस का रूप ग्रहण करता है। इस सम्बन्ध में हरिभक्ति रसामृत सिंधु का यह अंग दृष्ट्य है। विभाव अनुभावादि का परिपुष्टि से भक्ति परम रस रूपा हो जाती है। विभाव अनुभाव सात्विक भाव तथा यभिचारी भावों से भक्तों के हृदय में आस्वात्त्व को प्राप्त कराया गया जा कृष्ण रति रूप स्थायी भाव है वह भक्ति में परिणत होता है। जिनके हृदय में प्राप्त प्रथवा प्रायुक्तिक जन्म की मन्भक्ति की वामना या सस्कार हैं भक्ति रस का आस्वात्त्व उही के हृदय में जाना है।<sup>१</sup> उसे सहृदय भक्तों के और भी गुण गिनाय गया है। इस प्रकार काव्यशास्त्र को अत्यन्त चतुरतापूर्वक भावनात्मक भक्ति के क्षेत्र में व्यवहृत किया गया है। एवं इन समस्त स्थापनाओं का अंगभग ६० उद्धरणों (स्वयं रूप द्वारा रचित तथा प्रचलित भावनात्मक एवं धार्मिक साहित्य में गृहीत) द्वारा समर्थित किया गया है। सारा का सारा दृष्टिनाएँ मानवित्वक शृंगारिक एवं धार्मिक पृष्ठियों का विचित्र समन्वय है एवं समस्त याजना अत्यधिक जटिल है।<sup>१</sup>

रूप गोस्वामी ने कृष्ण रति का ही मुख्य स्थायी भाव माना और फिर उसी के पांच प्रमुख तथा सात गौण भेद किया। उसी के अनुसार ५ मुख्य भक्ति रस गान्त क्षम्य सत्य वात्मत्य एवं मधुर माने तथा ७ गौण रस हैं—हास्य प्रदमुन वीर कर्ण रीत भयानक और वीभत्त। इस सारी याजना को ध्यान

१ ह भ० र० सि० द वि १।५७।

२ एस० के० दे व० फ० मू० प० १२५।

(जनरल प्रिन्टस एण्ड पब्लिशिंग कलकत्ता सस्करण १९४२)।

स दखन पर पात होता है कि उहीने काव्यशास्त्र क नवा रमा को भी इसी कृष्ण भक्ति रस क अन्तगन ल लिया है । उनक शांत एव शृंगार मुग्ध रमा म परिगणित है तथा शय गीग रस है । इसके अतिरिक्त भामह और दण्डी के युग स ही जो सरय और वात्मत्य (और प्रीति दास्य भा) क सम्बन्ध म मत चन आ रह थ उनको भी मुख्य भक्तिरमा म परिगणित कर लिया । इन तरह दानो परम्पराभावा समन्वय उहाने अपन ग्रन्थ म किया । लौकिक काव्यशास्त्र का रसराज शृंगार यहाँ भक्ति क क्षय म मधुर नाम से 'भक्तिरसराज कहा गया है । इस सारी योजना के लिय श्री भुगीन कुमार के द्वारा दिग गये चाट हम प्रागे उपस्थित कर रहे हे यहाँ अलग स इनका विवेचन हम विस्तार नय स नही कर रह है ।

कृष्णशास किराज जीव गोस्वामी एव नारायण भट्टानि न रूप गोस्वामी का ही मुख्यत अनुसरण किया ह । जीव ने कुछ काव्यशास्त्रीय प्रश्ना का उठा कर प्रवक्ष्य अपनी मौलिकता का परिचय देते द्ये इस विवेचन को और अधिन पूरा बनाया ।

रस गोस्वामी ने भक्ति को रसरूप म स्थापित ता कर निपा था पर उ हान काव्यशास्त्रियो क भक्ति का रस न मानने क आपेयों का उत्तर नही दिया था । भक्ति का रस कहा जाता चाहिय इसक पक्ष म जीव ने शक्तिशाली ढंग स तक उपस्थित किया । वास्तव म गीव गोस्वामी की प्रवृत्ति कुछ सांत्विक थी । यह सारा विवेचन अत्यधिक शास्त्रीय शाली पर ह । उनक अनुसार भगवन् प्रीति ठाक हा स्याथा भाव मानी जानी है । प्रीति क नाते नम भावत्व तो है ही तथा साथ ही लौकिक का पशाम्ना द्वारा निरूपित स्वायी भाव के रक्षण भी नम विद्यमान है । भक्ति रसावस्था का नही पहुच सकती, मम्मट आदि क इस तक का उत्तर उ हाने भा मधुसूदन सरस्वती की ही भाति देत हुय कहा है कि यह सामान्य देवताप्रो स संबंधित रति (प्रकृत देवाति विषया) क बारे म सा कहा जा सकता है परमत्त्व कृष्ण क बारे म नही । कृष्ण रति म सार तत्त्व विद्यमान हैं । उनक अनुसार वास्तव म कृष्ण रति स संबंधित विभाव अनुभावादि हा अलौकिक होते हैं । काव्यशास्त्र क विभावानि लौकिक एव इतीलिय दायपूर एव हीनतर हात हैं । उनका अलौकिकत्व कवि की प्रस्तुतावरण की चतुराई क कारण लिखता है । लौकिक प्रीति मायागिन द्वारा उपन प्राप्त नवगुण का ही मगाधित रूप है और नमनिय स्वर्गागिन द्वारा उत्पन्न भगवत् प्रीति क सुख और रसत्व की वह समता नग कर सकती । लौकिक रति क्षणिक एव अन्त दु स लान वाली हागी है । पर अलौकिक रति स्वायी एव किणुद्ध ध्यान है । इसलिय यह कहना गलत है कि लौकिक विभावादि स ही रस उदबुद्ध हो सकता है । वास्तविक रस तो अलौकिक कृष्ण आदि ही जगा सकता है एव रस क सभान्वित मारे तत्त्व कृष्णरति क साथ विद्यमान है ।

रस की निष्पत्ति किसके हृदय में होती है—इस प्रश्न को भी जीव गोस्वामी ने उठाया है। उन्होंने काव्यशास्त्र के चार मन उद्धृत किये हैं (१) अनुकार्यो म (२) अनुकर्त्ता म (३) सहृदय सामाजिक मे (४) अनुकर्त्ता एव सामाजिक मे। जीव के अनुसार भगवन् प्रीति रस के रूप में अनुकाय अनुकर्त्ता (भवतादि) एव सामाजिक (भक्ति-काव्य आदि का पत्न बनाता) तीनों में निष्पन्न होती है। पर अनुकार्यो (भगवान का परिकर) में रस की उत्पत्ति मुख्य है। वही रागात्मिका है और उसी का अनुकरण अनुकर्त्ता रागानुगा भक्ति के नाम से करते हैं। इस रस के लिये भक्ति होना आवश्यक है और इस प्रकार अनुकर्त्ता और सामाजिक दोनों भक्त ही होते हैं। इसके अनिर्दिष्ट उन्होंने आत्मस्वन उद्दीपन अनुभाव सात्त्विक भाव व्यभिचारी भाव रसाभाव आदि का भी लगभग रूप गोस्वामी से मिलता जुनता विस्तृत निरूपण किया है। विस्तार भय से हम उसे यहाँ पर नहीं दे रहे हैं। इसी ग्रंथ में उन्होंने गीता के प्राकृत अप्राकृत तत्त्वा को समझाते हुए उसकी काम से अनौचित्य तथा परकीया भाव का वास्तविक ग्रन्थ भी विवेचित किया है।<sup>१</sup> आगे १८ वीं गीता में विश्वनाथ चक्रवर्ती ने इस परकीया भाव को पूरे शास्त्रीय सिद्धता प्रदान की तथा उस अष्टम रति बनाया। परम्परागत काव्यशास्त्र परकीया प्रेम को शृंगार रस के अन्तर्गत नहीं रखता पर विश्वनाथ चक्रवर्ती की दृष्टि से रसास्त्र को यह प्रमुख देना थी। यद्यपि परकीया की धारणा भागवत बल्लभ चतुर्थ रूप मनात्मन जीव आदि में भी प्राप्त होती है पर उन लोगो ने उसके दार्शनिक एवं प्रतीकात्मक ग्रन्थ करके नैतिक दृष्टि से सम्माय बनाने का प्रयास किया है जबकि विश्वनाथ चक्रवर्ती ने उसे परम रूप से स्वीकार करके प्रामाणिकता दी।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का अनुमान है कि बल्लभ हितहरि वगैरे एवं रसिकीपासक राम संप्रदाय में भी कोई न कोई आध्यात्मिक रस सिद्धांत अवश्य होगा।<sup>१</sup> अब तक की हुई खोज के अनुसार फुटकर सिद्धांत ग्रन्थ एवं संकेत तो प्राप्त होत हैं किन्तु पूर्व चर्चित ग्रन्थों की भाँति सागोपाग विवेचन करने वाले ग्रन्थ प्राप्त नहीं हुए। राम भक्ता के रसिक संप्रदाय में १८ वीं गीता में गलना गद्दी पर मधुराचार्य थे। उनका जीव गोस्वामी का टक्कर का लिखा गया छ सद्भावों का ग्रन्थ पूरा प्राप्त हो जाने पर गायद अग्रोष्ठ की पूर्ति कर सके। अभी तक उसका केवल सुंदरमणि सद्भाव ही प्राप्त है। (वदिक मणि सद्भाव का केवल एक भाग मिला है।) प्राप्त भाग में सीता जी का चरित्र ही मुख्यतः वर्णित है रसास्त्रीय मन्त्रेन यत्र-नत्र अवश्य मिल जाते हैं। हम आशा करते हैं कि गायद

१ एस० के० दे० व० के० मू० पृ० ३०४ ३०६ के आधार पर।

२ आलोचना अंक ६ पृ० ८६ ८७।

भविष्य म यह पूरा ग्रन्थ प्रकाश म आ सक । या अब तक उपलब्ध सामग्री क आधार पर हम अत्यन्त विभिन्न संप्रदायों की रसापामनाओं का तुलनात्मक ग्रन्थ यन् प्रस्तुत करेंगे ।

अस्तु ऊपर किय गये विवेचन स इतना स्पष्ट प्रकट होता है कि भक्ति रस और काव्यरस की दा गार्हस्थ्य परम्पराएँ मध्यकाल म अस्तित्व म आ गयी थी । भक्तिगार्हस्थ्यी भक्ति का ही एकमात्र रस मानता था तथा काव्यगार्हस्थ्यी भक्ति को भाव से आग स्वीकार करने का प्रस्तुत न था । गायद दाना ही अनुभव करत थ कि सचमुच ही इनकी सत्ता अलग है । वस्तुतः विभावन-यापार का बहुत बड़ा उत्तर इन दोनों क मध्य म है एव दाना क सामाजिकों के लिए जिस सस्कार या साधना की आवश्यकता हानी है वह परस्पर बहुत भिन्न जानि की हानी है । का य का सामाजिक एक सामांय सांस्कृतिक वातावरण एव अभिरुचि स मव धित हाना है जबकि भक्त व्यक्तिक साधना क द्वारा भक्तिरस क रमास्वाद क लिए अपने वात्स्यार करता है । हमारा विचार है कि दानों को अलग अलग मानने का मध्यकालीन विवेचकों का आग्रह अनुचित नहीं था ।

**गोडोय वषणव, नित्य विहारोपासक, रामोपासक, निगु रावादी  
एव सूफियो के प्रेम दृष्टिकोण सम्बन्धी अंतर**

भक्ति विवेचन के प्रमग म पीछे हम देख चुक हैं कि प्रेम उसका एक अनिवाय एव सवप्रधान तत्व है । प्रेम ही वह मुख्य साधन है जो भगवान का खीच लाता है । श्रीमद्भागवत म भी भगवान् की प्रेमव्ययता स्वीकार की जा चुकी थी । यह प्रेम मानव सम्प्रदाय क पाच आकारों म मुख्य रूप से दलता है जिनम कि सवथ पठ माधुय भाव है । इन सबका विस्तृत विवेचन करत हुए हम यह भी देख चुक हैं कि रूप गोस्वामी एव मधुमदन प्रभति विद्वाना ने इह रूप म प्रतिष्ठित कर दिया था । यह सब हान क वावजूद प्रेम की भावना थी साधन ही—गाध्यवस्तु थी भगवान् की कृपा या स्वयं भगवान् । रस की प्रतिष्ठा प्राप्त करन क पूर्व लौकिक या मानवीय प्रेम सादृश्य-व्यजक था पर चूकि भक्ति म सम्बन्धमूर्तता का आग्रह अनिवाय है इसलिय जो प्रेम प्रतीकवात् था वह भक्ति रस तक आते आते भाव उगत का मत्य बन गया । मवन्ता एव गहरी भावनामूर्तता स यह क्षेत्र आप्यायिन हा उठा । परन्तु यह अतिम परिणति न थी धीरे धीरे प्रेम साध्य हो गया रस सत्य बन गया कायगार्हस्थ्यी चिन्तन म ही न रहकर वह स्वयं गार्हस्थ्यवा दान बन गया । इस क्षेत्र म भक्ति की वै समस्त विस्तृतियाँ, जिनका मत्यन्त परिश्रमपूर्वक उद्घाटन रूप गोस्वामी ने किया



धा बहुत अथवान नहीं रही। आगे के पृष्ठा में हम उच्च रस एवं रमापागको के विभिन्न सम्प्रदायों के साम्य वपम्य विकास या मन्त्र तथा पारस्परिक प्रभाव की रेखाओं का अध्ययन प्रस्तुत करेंगे।

गौडीय वपणव रस शास्त्रियों का सामने एक समस्या और भाषी जिमको कि उह शास्त्रीय तत्सिद्ध रूप देना था। भागवत विष्णु ब्रह्मवत आदि पुराणों एवं वपणव तथा आदि म श्रीकृष्ण की नानाप्रकार की लीलाए थी। रूप सना तन जीव प्रभृति गोस्वामिया ने इन लीलाओं को भक्ति नाय शास्त्र के रस विवेचन क अंतगत स्वाकार करने का उत्तरदायित्व भी निभाया एवं उह दाग निव पीठिका पर प्रतिष्ठित भी रहन िया। ासी कारण उसक रम विवचन म कनिषय असगनिया भा प्राप्त हाती है। सबसे विचित्र असगति यह है कि ये काव्य शास्त्र की परिपाटी तो स्वीकार करते हैं पर का य सजन प्रक्रिया को स्वीकार नहीं करना चाहते। का य प्रक्रिया म कवि प्रतिभाजय विभावन-यापार का महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यह यापार ही का यक क्षत्र म लोक की प्रत्यक्ष एत्क अनुभूतियों का प्रलौकिक रसास्वादन वल दता है—इसी कारण अनुशासों म रस की स्थिति मानने वाले लोलट एवं गबुक के मन का रमनिष्पत्ति के क्षत्र म अमाय करार दिया गया। परन्तु जस कि हम पीछे मधुर रस क विवचन क प्रसंग म कह चुके हैं जीव गोस्वामी न भक्ति रस की अत्रौकिकता विभावानि (अनुशाय आदि) निष् कर दी न कि विभावन यापार निष्ठा। का य रम की सत्ता क्षणिक है पर विषय (आत्मबन) की गरिमा एवं भवन का समस्त रहनी करनी आदि को दृष्टिग्य पर रखने क कारण उहोंने रस की सत्ता का भक्ति के क्षत्र म नित्य स्वीकार किया। या प्रायनिक मनो विज्ञान प्रथम तक का उत्तर देते हुय कह सकता है कि अनुकाय एवं सामाजिक क रस म कोई मौनिक अंतर नहीं है एक का ही परिष्कृत एवं परिवर्तित रूप दूसरा है। तथा गौीय वपणव रस शास्त्रियों ने राशात्मिका एवं रागानुगा का जो अंतर पढ़ते हैं विवेचन कर दिया है वह रस की मनाविगत सम्मत प्रत्य न एवं परो न अनुभूतिया क प्रौचित्य की कसौती पर खरा उतरता है। जहाँ तक रस की नित्यता का प्रश्न है यहा भक्ति रस शास्त्रा भी नही कहते कि सदव भवन रसावेग म ही रहता है। परन्तु इन विवचन क बा भी यह तक अनुत्तरित ही रहता है कि काव्य म नन की प्रक्रिया क स्वीकार नहीं करते। यह बात काव्य शास्त्र का एक मायाय विद्यार्थी भी जानता है कि कवि प्रतिभाजय विभावन यापार रम सिद्धान्त म मूनत छनिवाय है। उसक स्थान पर अब आलम्बन की

प्रतीकितता, महत्ता गुणों का प्रभु अनुग्रह अथवा भक्त (मामाजिक) की अपनी साधना पर बल दिया जाना चाहता है तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह रस काव्य रस में कुछ भिन्न प्रकार का है। वास्तव में ऐसी त्रिमूर्तियाँ घमण्डान एव काय दान को एव ही मिला उन में उद्वेग होती हैं। इस त्रिमूर्ति के हात हुए भी गौडीय वष्णुवा का यह विवेचन काव्यशास्त्र का विस्तृतियाँ में इतना सूक्ष्म और प्रामाणिक है तथा वृष्ण की समस्त काव्य पुराणों में वर्णित लोलाओं को इतनी निपुणता से माय अपने भीतर समेट लेता है कि साधारण बुद्धि को तक को प्रावश्यकता ही नहीं पड़ती। इसलिये इस रस शास्त्र का बड़ा गहरा प्रभाव हम अत्यन्त समकालीन एवं परवर्ती विचारों पर प्राप्त होता है। निम्नानुय हरि-व्यास दर्श की सिद्धांत रत्नाजलि में उसी के प्रकार धारण में उनका अनुगमन किया गया है।

गान्ध दास्य च वास्त यम सत्यमुज्वरमेव च ।

अमो पच रसा मुह्या ये प्रोक्ता रसवदिभि ॥

(सि० २० रस प्रकरण पृ० १२५)

रामाभासक सम्प्रदाय की रसिक भाव की साधना का रस शास्त्र गौडीय वष्णुवा का हा है जिस कि राम के प्रचलित स्वरूप के अनुभार डाल दिया गया है। गुण सम्प्रदाय के भी ऊपर इस रसशास्त्र का प्रभाव है। पुष्टि माग का अनुभव कोई रसशास्त्र प्राप्त नहीं होता। पुष्टिमार्गीय भक्ताने सम्भवतः उसी शास्त्र का स्वीकार किया था हा प्रभु अनुग्रह सवागनी धारण के क्षेत्र में उनका अपना दान है। रामाभासका (सखी एवं राधा बल्लभ प्रभति सम्प्रदाय) ने यद्यपि रस विवेचन के क्षेत्र में एकदम नया रास्ता अपनाया पर जान अनुभव गौडीय वष्णुवा रस विचारों से प्रभावित हुए रह (मन वन प्रभावित बल भी रह है)। इन सम्प्रदायों ने काव्यशास्त्र का पल्लो पकड़ा ही नहीं—प्रारम्भ से ही इन्होंने भक्ति रस का अक्षर रस भक्ति को बात

१ हरिव्यास देव को लोग १६ वीं शती के पूर्वार्द्ध तक धींचते हैं पर श्री गोपालदास शर्मा के मन (हरिदासो सम्प्रदाय और उसका वाणी साहित्य अ० प्र०) से हम सहमत हैं कि उनका समय १७ वीं शती के पूर्वार्द्ध है। सिद्धांत रत्नाजलि का रस विवेचन भी उन्हें परवर्ती ही सिद्ध करता है। यदि वे पूर्ववर्ती होते तो वे गोस्वामी निश्चित रूप से उसी प्रमाणरूप में उद्धृत करते। सिद्धांत रत्नाजलि के श्लोक के रस वदिभि, भी हम गौडीय वष्णुवाण मालूम करते हैं।

कही और अतः मधुर भाव रस को प्रतिष्ठित किया। अपने इस रस उन्होंने काय के रस या लोक के रस से भिन्न ही रस—उह समान स्तर पर रखने की आवश्यकता जानही थी। यहा पर न आत्मभवन है न आश्रय।<sup>१</sup> भगवान स्वयं रस स्वरूप हैं आत्म स्वरूप हैं प्रेम स्वरूप है यह प्रेम बाढा परायण होता है और इसीलिये युगल के रूप में अवतरित होता है। यह युगल सहज ही प्रकट होता है अजन्मा है नित्य किणोर है, सम वयस है। वे पहले भी थे अब भी हैं आगे भी रहेंगे।<sup>२</sup>

यह स्थापना उन तमाम भागवत एवं काव्यात्मि में वर्णित कथाया का अर्थ कर देती है जिनको ऐतिहासिक रूप से सत्य मानने के कारण रूप गास्वामी प्रभृति विद्वानों को नाना प्रकार के सम्बन्धों का कल्पना करनी पड़ी थी। कोई कृष्ण का दास है कोई सखा है कोई माता पिता है तो कोई बल्लभा के रूप में हृदय दबठा है। इन्हें भवन मानते हुये नाना प्रकार के संबंधों के आधार पर भक्ति रसों को कल्पना करनी पड़ती है। स्वयं मधुर भाव वाले उज्वल शृंगार रस के क्षेत्र में नाना प्रकार की हरिवत्सलभाएँ सखियाँ सखा दूती विरह मिलन आदि को स्थापित करके गौणीय वृष्णवों ने समस्त कृष्ण लीलाओं को औचित्य प्रदान कर दिया है। चूँकि इन लौकिक सामाजिक सम्बन्धों का उदात्तीकरण विवेचना में हुआ था इसीलिए लौकिक कायगात्रों की परिपाटी को भी ग्रहण करना आवश्यक हो गया था। बिना उनकी राह का स्वीकार किया व सफल हो नहीं सकते थे। वास्तव में गौणीय वृष्णवों ने इस अर्थ में भी अत्यन्त गुरुतम दायित्व को वहन किया कि समस्त निखिल या मौखिक परम्परा को कुरस स्वीकार कर लेने के बाद उस अध्यात्म की राह मीठ किया। साधारण भक्ति का काय यह नहीं था। हम सारी परम्परा का उहोने एवं अनोखा व्याख्या दे दी।

रसोपासक (हरिदासों राधावल्लभों परवर्ती निम्बार्कीय आदि)

१ तहाँ न नायक नायिका रस करवावत केलि

—ध्रुवदास रति मजरो लीला (बयालीस लीला, पृ १६४)।

२ माई रो सहज जोरी प्रकट भई रम को गौर इयाम धन दामिनि जसे प्रथमहुँ हुती अबहुँ आगेहुँ रहिहें न टरिहें तसे।

अग अग की उजराई सुपराई घतराई सुदरता ऐसे।

ओ हरिदास के स्वामी स्यामी, कुजबिहारी समबसे जसे।

—स्वा हरिदास कलिमाल पद १।

तथा

मेरे नित्य किणोर अजन्मा विहरत एक प्राण द्व तन मा

(विहारिणदास चौबोता १४२।

चूँकि इस मारी परम्परा को अस्वीकार कर सक थे इसीलिये उनका रस सबधी चिन्तन भी परम्परागत वाच्यचिन्तन स पृथक रह सका । प्रेम या रस या हित ही वह परतत्त्व है जो सङ्घि म प्रवाहित हो रहा है । युगन किशोर उसी के साक्षात् विग्रह हैं । वे दिन रात प्रेमकलि मे पड़े रहते है । अप्राकृत प्रेम और काम के दा सिधु उनके प्रहृदया म प्रवाहित हैं ।<sup>१</sup>

प्रेम क रूप का बड़ा मार्मिक चित्रण ध्रुवदास ने किया है 'प्रेम को निज रूप चाह चटपटी अधीनता उज्वलता कोमलता स्निग्धता सरसता नूतनता सदा एक रस रुचि तरंग बद्ध रहे । महज सुध्द मधुरता मादिकता जाका आदि अन्त नही छिन छिन नूतनता स्वाद ।<sup>१</sup> नेम मदन काम आदि को लगभग समानाधिक रूप म इस साहित्य म प्रयुक्त किया गया है । पर यह काम भी सामान्य नही है । इस प्रेम का प्रकाशन अथवा प्रेम की अभिव्यजना भी कह सकते हैं । लेकिन इसकी अलौकिकता इस बात म है कि यह सब प्रेम द्वारा यन्त्रित हाता है । लोक म काम स्वतन्त्र होता है पर यहा प्रेम द्वारा यन्त्रित होने म ही उसकी सायकता होता है ।<sup>१</sup> निज प्रेम ही नेम है जिसे शृंगार रस के पोषण क लिये अलप स कहा गया है । प्रेम तो अनादि अनन्त है पर काम या मदन या नेम साङ्घि और सात है । काम श्रोडा है प्रेम मून बत्ति है । श्रोडा म चतयता आवश्यक है भाव बत्ति अपने म विवग कर लेती है—इस मनोबना निब तयय को ध्रुवदास प्रतिष्ठापित कर सके थे ।<sup>१</sup> इस प्रकार प्रेम और काम दाना ही नित्य विहार मे बने रहत हैं ।<sup>१</sup> ललित किशोरी दव क मत से प्रतीत होता

१ प्रेम मदन के सिधु द्व बहत रहत दिन हीय ।

कयहू विवस चतत कयहू छिन छिन प्यारी पीय ।

छिन छिन प्यारी पीय मधुर रस विलसत ऐसे ।

सूक्ष्म प्रेम की बात कहो कोउ बरने कसे ।

—ध्रुवदास सिद्धांत विचारलाला बयालीस लीला पृ० ४६ ।

२ ध्रुवदास सिद्धांत विचार लीला (ब० ली० पृ० ४३ ४४) ।

३ वही, पृ० ४५ ।

४ वही, पृ० ४७ ।

५ जब प्रेम रूपी सिधु के तरंग छाव तय विजस होइ ।

जय मदन रूपी सिधु के तरंग छाव तब चतय होहि ।

कयहू खिलारी खेल बस कयहू खिलारी बस खल । वही पृ० ४६ ।

६ जहाँ काम तहू प्रेम है, जहा प्रेम तहू काम ।

इन दोउन की सधि मे विससत श्यामायाम ।

—वही० पृ० ४६ ललित किशोरी दव, साखी स० ६६६ ।

मधुर भाव का विकास पृष्ठभूमि स्थित विविध तत्त्व । १४८

प्रकार मान के भी यहा स्यूत कारण नही है पर मान म रम की जो प्रतिक्षण वद्ध मान स्थिति होती है उसक लिय प्रिया प्रियतम इस छन्द मान का भा धारण करत है । इसे लाड भाव भी कहा गया है—

अति प्रवीण है लाडिली रतिपति चाह बड़ाय ।  
लाड मान रखी भई कपट प्रगट भसकाय ॥<sup>१</sup>

मान म भनाने का जो सुख है और रठने म प्रिय क उगाव का जो अनभव है उनसे यह नित्य जोड़ी बचित कसे रह सकती है ? इसी लिय उन्हें तूठने से रठना अधिक पसन्द है —

रठनी तूठनी रस बूठनी तूठन त अति रठनी भाव ।  
प्रेम प्रवीण प्रिया पिया आतर चातुर केलिकला गुरु गाव ।  
नाहि कर तब पाई पर, हस आसल यों मन मोद बढ़ाव ।  
श्री बिहारीदास के प्रम अभग सुरगमें रम अनग लडाव ।  
(विहारिण्येव सबदा १४५)

एसे ये युगल केनि म रत रहते है । वास्तव म वे दोनो प्रम क ही खिलोन है । प्रम के खेल ही खेलते हैं प्रम के पुष्पो से ही उनकी प्रमगाया रचित है । उनकी चितवनि मुमुकानि प्रम की ही है । प्रेम से रजित बातें करत है एव दोनो के मध्य प्रम कलि मची है।<sup>१</sup> या सूरदाम ने भी कहा है कि प्रम प्रम से हा उत्पन्न होता है प्रम स व्यक्ति पार हाता है प्रम स हा समार बधा है एव प्रम से ही परमाय की प्राप्ति होती है । और प्रम का जा निश्चय है उससे गोपाल मिलत हैं । जबकि इन रसोपासनी का युगन नही युगल केलि रस की बाछा रहती है और इसा म उहे रस मिलता है । उनक प्राणा का आधार यह निकु ज माधुरी ही है ।<sup>१</sup> नारद गाडिल्य भागवतकार आदि ब्रज दविया क प्रम को अष्ट बताते हैं ।

१ ललित किशोरी देव साखी ६१४

२ प्रम के खिलीना बोऊ, खेलत हैं प्रम खेल ।

प्रम फूल फूलनि सों प्रम सेज रची है ।

प्रेम ही की चितवनि, मुमुकनि प्रम ही की ।

प्रम रगी बातें करें प्रम केलि मची है ।

—भ्रुवदास (ललिता चरण गोस्वामी द्वारा गो० हित हरिवन  
सिद्धात और साहित्य म पृ १८२ ।

३ भ्रुवदास सिद्धात विचार सोला ब० ली० पृ ४५ ।

हरिमक्ति रमायून सिंधु म गीतमीय तत्र का उल्लेख हुआ है कि 'प्रमैव यज गोपराभासाकाम व्यगमत प्रथाम ।' पर कहा यह जाता है कि उनके काम म कृष्ण मुख की चाह ही अधिक थी । कृष्णदास कविराज न भी गापी प्रम की 'कृष्ण मुखक तात्पमप्राप्त ही कहा है । पर वास्तव म प्रग-मग द्वारा मुख ता बहा प्राप्त होना है और इस प्रकार से गरीरिबता की गंध बनी ही रहती है । पर इन रसोपासकों ने महवर्गिया को केवन कम निकुंज माधुरी रस स ही प्राप्ता पिन हाना माना है और इसीलिय इसे गोपिया क प्र म स भी ऊपर कहा है —

गोपिनु के सम भवत प्राहीं, उद्व विधि तिनकी रज चाहों,  
तिन मन कल्ल मकामतां माई ताते विच अंतर परपी माई ।  
दुख को मूल सकामतां, सुख को मूल निहकाम ।  
विरह वियोग न तहां कछु रसमे ध्रुव मुखयाम ।<sup>१</sup>

इन गापिया क मन म तनिक भी विकार नहीं है । इस बात का स्वय राधा भी जानती है कि जा उनको अर्द्धा लगना है वही सखियो को भी रुचना है—

मो मन माहे सावरो मरे नहीं विकार ।  
हौं तोहि पूछो लाडिली ताकी कहा विचार ।  
तब हसि बोली राधिका सखि कत पूछन मोहि ।  
जो मरे मन म बस सो मोहत है तोहि ॥

—स्वामी रसिक देव सि० क टोना ५ ६ ।

सहचरिग्या इम रम श्रीडा का प्रनिवाय प्रग हैं । 'सखी सम्प्रदाय म ता हरिदाम स्वामी का लिताडी तथा लाडिली लान का मेन कह दिया गया है । इस प्रकार खल विनाडी क वग म रहना है ।' प्रम की उत्तुग तरगा वाली नदी म विहार क श्रावत म पडे पुगल का सखी ही अपने माहम म विनार लाना हैं । यह लीलारस सखिया

१ प्रस्तत लेखक को गीतमीय तत्र की उपलब्ध प्रति म यह कथन प्राप्त नहीं हो सका है ।

२ भवदास अनुरागलता खोला बयालीस लोलापृ० २४०-२४१ ।

३ ललितविनोरी देव सिद्धांत की साखी ७७३ एव ८४१ ।

४ तदन तरगिनि म परे उरभे बार सिवार ।

परहि साहस सपी के प्रति भावत विहार ॥१२६

अमह निवारत कर धरत, बबहूँ लावत तीर ।

श्रीबिहारिनिदास हुतास मन देत अधीरन पीर ॥१३०

—बिहारिणिदाम सिद्धांत दाहा ।

के लिये ही है।<sup>१</sup> इन मयिया का प्रेम सर्वोपरि है कम ऊपर न और मुग है न और रस।<sup>२</sup> तान लाचिनी के प्रेम से ही इन सखियों का प्रेम भी सरम है —

लाल लाडिली प्रेम ते सरस सतिनु को प्रेम ।  
अटकी हैं निज प्रेम रस परसत तिनाह न नेम ।<sup>३</sup>

सखिया ही इस रम की इस प्रकार प्ररक भी हैं। और वे इस प्रेम रम का आस्वादन भी करती हैं। युगल रूप भी रम रूप है— रसावम तथा भोक्ता और भोग्य (जाल और लाचिनी) रूप में प्रकट ाकर आस्वात्क भा हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि रम ही वाय है रस ही कारण है और रम ही प्रयाजन है। प्रिया प्रियतम एक हैं वे रम बनियेहा दा हैं और जाव स्यानाया सहचरियो का भी परम प्रयोजन रम रसक्ति का आनन्द नना है। मोडीय बप्युव प्रमा पुमर्षो महान तक पहुँचे थ पर इहाने एक काटि और आग स्थापित की कि युगल प्रेम का रस हा परम पुरपाय है। कवन प्रेम कह दन म तो स्वयं भगवान के प्रति किसी भी भाव से (प्रिया भाव से भी) भजन हो सकता है पर इम रमचिन्तन म इमके लिये अवकाश नहीं छोटा गया। रसिक उपामक का प्रेम युगल स्वल्प जाल लाचिनी की प्रेम मदन मयी बनि सरम रूप बना रहता है। जा प्रेम श्यामा श्याम क हृदया म प्रवाहित है उसी का प्रकार उपामक के चित्त म भा है। इस प्रकार यह रस अनुवाय निष्ठ हात हुए भा सामाजिकनिष्ठ भी हा जाता है। इस त्रिवचका न वृन्दावन रम<sup>४</sup> कहना चाहा है। वृन्दावन रम इसलिए कि इमम ब्रजनीला का मर्यादाण नहीं हैं। यो इम उल रस मधुर रम आदि नामा से प्राचान वाणाकारा ने अभिहित किया है। कम रम की प्रकृति को ठीक ही पहचान कर हरिराम याम ने कहा था —

१ दिव्य केलि कल जगन विराज ।

सीतारस सखियन हित काच ।

—गो हितरूपलाल रस रत्नाकर हस्तनिखित प्रति ।

२ ध्रुवदास सिद्धांत विचार सीता ब० ली० पृ ६५

३ यही प्रेमलता लीला २४५

४ जब रसिन्तन र रस मुनि पायो रस समुक्ति रसिकन ने आयो ।

रस स्वादो रस स्वाद बतायो स्वाद पाइ रस गाइ बतायो ।

—स्वा बिहारिण्डिदाग रम के चौवाला सं० १५ ।

५ रसिक अनयनि कृपा मनाऊ वृन्दावन रस कछु इक गाऊ

—ध्रुवनाम रम मुक्तावती ब० ली० पृ० १४७ ।

यहिरम नवधा भक्ति उबोटी,  
रति भाषीति क्या की।  
रहनि कहनि सब हो तें यारी,  
'ध्यास' अनय सभा की।

—याम वाणी पृ० ७६ (भ० कवि० याम जी पृ० २११)

रम मन्वरी इन अंतरा के हात हुए भा यह भक्ति अपन चरित्र और स्वभाव म रागानुगा हा है। ब्रज न जना की भक्ति रागात्मिका कहा गयी है तथा उनका अनुकरण करन वाला भक्ति रागानुगा है जिसम कि विधि निषेध की मर्यादा नहीं हानी। कूनों का उच्चारता नदी सी इसका गति होता है। ठीक वही स्थिति नित्यविहारापासका का भी है। अंतर इतना ही है कि वहाँ ब्रज के परिवार म अनक भावनाया वान यक्ति हैं पर यहाँ पाच सखियाँ हैं अत उन सखिया क ही गुणा का मान करत ह्य उनका सवा का ही हृदय म विचारत रहना चाहिए। ध्रुवदास ने मिद्वान विचार लाला म स्पष्ट कहा है या रस का अविचारनी मत्वा है क जिन भक्तनि क सखियन का नाव है।<sup>१</sup> उनका निर्देश है कि इनका भाव धरि याही रम की उभामना म कपट छाडि भ्रम छाडि निगिन्ति मन दें यह विचार म रहे।<sup>२</sup> अयत्र उन्होंने सखिया क नाम रूप एव क्रिया आदि की चर्चा करत ह्य कहा है कि गौतमा तत्र म अन नवक नाम दिष हुए हैं मवम प्रथम इनक चरणा की वदना कर्ते स्यामास्याम का सवन करा। सखिया की इन सवा का जो नित्त विचारना रहना है उसे यह प्रेम रम निश्चित ही मिलता है तथा उमा मुख म उमका चित्त रगीन रत्ता है।<sup>३</sup> इम स्थिति पर पदुचन के लिय आक्यक है कि मन से पुष्प भाव एरन्तम ममाप्त हा जाय। रागानुगा की श्रेष्ठतम अवस्था यही तो है जब भक्त अपनी भौतिक देह के स्थान पर भावदेह ग्रहण कर लता है। नित्य विहार को रम साधना का परिणाम और फल यहा है कि जब तक यह हाड मांस का गारार है तब तक प्रिया का भजन एव तन छूट जाने पर प्रिया क मग क नित्य परिवार म प्रवेश।<sup>४</sup> रागानुगा क समान ही विधिनियम क ज जान

१ ध्रुवदास व० ली० पृ० ४६।

२ वही पृ० ४५।

३ यही रस मुक्तावली लीला, पृ० १५०।

४ राणी भाष तब जानिये पुरस भाष मिट जाई

—स्वा० रामकदव मिद्वान क दाहा, १३।

५ जो तन रहे तो प्रिया भज तन दूट प्रिया सग

बोड विधि धानव क्षति निरव कति धमग।

—कलित किशोरी देव मासी ३२५।



को दूर करके ही स्वा० हरिदाम की गढ़ति प्रारम्भ हुई है ।<sup>१</sup>

श्री बाके बिहारी जा की मवा पद्धति म स्वा० हरिदाम जी ने विधि निषेध का निकालकर रमोगामको की माधुय की भावना व अनुकूल पूजा पद्धति बनाई ।<sup>२</sup> राधावल्लभ मप्रदाय के मुख्य भक्त एव सिद्धान्त प्रतिपात्क भक्त जी का भी मत है या रम म विधि नहीं निषेध तहां न नगन ग्रहन व वध तथा बुद्धि दिन म कछु नहीं । नहा शुभ अशुभ मान अयमान स्नान क्रिया जप तप नहीं ।<sup>३</sup> भक्ति म न जनेऊ का प्रन्त है न जाति का । वास्तव म विधि निषेध के बंधन तो अ य धम रूपी भगो के लिये हैं भागवत धम ता केहरि व ममान निबन्ध है उमके लिय इन नियमो की क्या आवश्यकता । यों पर इतना ध्यान टिना देना हम आवश्यक समझते हैं कि विधि निषेध की मर्यादा व उल्लंघन का तात्पर्य सामाजिक आचार एव नतिक मर्यादा का अस्वीकरण नहीं है । ममस्त भक्ति सप्रदाया म नतिकता वराग्य परापकार निरभिमानता अत्रोष कर्णा और सहानुभूति आदि नतिक मानवीय मूल्यो का महत्त्वपूण माना गया है । इन भक्ता का नतिक प्रदय वास्तव म अपने आप म एक स्वतंत्र अध्ययन का विषय है इमीनिये हम उसे यहा विस्तार से विवचिन नहीं कर रहे हैं । विस्तार मे जाना हमारे निय प्रसगान्तर भी हागा । वस्तुतः विधि विषेध के अस्वीकरण का तात्पर्य मात्र इतना है कि बाह्य साधना पर अधिक अवलम्बित रहन की अपेक्षा अपने वयक्तिक परिष्कार चिंतन (कटेम्पेगन) एव प्रभुवृषा पर अधिक विश्वास रखना चाहिए । इन सप्रदाया म साधन भक्ति (वधी भक्ति मर्यादा भक्ति गौणी भक्ति विहिता भक्ति अपरा भक्ति ग्रास्त्र भक्ति आदि) का कोई स्थान न होकर मात्र फन भक्ति (रागानुगा प्रमा परा अविहिता साध्य पुष्टि आदि) का ही विवेचन हुआ है ।

१ रतिक अन्तर्गत हरिदास जू गायो नित्य बिहार सेवा हू मे दूरि किय विधि निषेध जकार ।

—ध्रुवदाम भक्तनामावलि लीला पृ० २८ ।

२ गोपालदत्त गर्मा स्वामी हरिदास जी का सप्रदाय और उनका बाणो साहित्य पृ० ४४१ (अप्र प्र०) ।

३ सेवक बाणो पृ ८२ ।

४ भक्ति में बहा जनेऊ जाति

—हरिराम यास पद १०४ (भक्त कविब्यास जी पृ० २१७) ।

५ विधि निषेध के बंध हैं और धम भग मानि ।

केहरि पुनि निबन्ध है भगवत धमहि जान ।

—ध्रुवदाम भजन सत लीला ब० ली० पृ० ७२ ।

रामोपासक संप्रदायों में भी रागानुगा भक्ति ही विकसित हुई है। जो छोटे मोटे अंतर प्राप्त होते हैं, वे राम की ऐतिहासिक—पौराणिक सीला के अप्रग्रह के कारण हैं। जब कि ऋष्ण के प्रसंग में द्वारका मथुरा की लीलाओं को उपेक्षित करके माधुय भाव को ही सर्वोत्तम बताया जा सका था वहीं पर राम का राजा रूप इतना अधिक प्रतिष्ठित था कि उसकी उपेक्षा संभवतः साधारणी कृत भावों के विपरीत बढती। इसी कारण माधुय के साथ ऐश्वय भाव भी उस साधना में प्रतिष्ठित बना रहा।<sup>१</sup> ऐश्वय भाव की इस स्वीकृति के कारण परिवार धाम सेवाविधि एवं भाव सम्बन्धों में भी कुछ छूट देनी पडती है। जिस समय नित्यविहारोपासना में लोग स्वीकार करते हैं उस समय भी ऐसे जनो की कल्पना अनिवार्य हो जाती है। जो राज्य की व्यवस्था करते हैं परामर्श देते हैं या अर्थ ऐसी व्यवस्था करते हैं जिससे कि युगल के विहार में याघात न उपस्थित होने पाये। परिवार का यह विस्तार ही जान से गान्त, दास्य, सत्य या वास्तव्य के वे सबध जीवित रूप से स्वीकृत हो जाते हैं जिनका कृष्ण भक्ति माधुय के वेग में कृष्णोपासक संप्रदायों में अभाव हो गया था। राजा को राजभवन में अनिवार्य रूप से रहना ही चाहिए वन विपिन उनके लिये कुछ काल के लिये ही हो सकते हैं। इसी कारण वृंदावन धाम जसी कल्पना इस संप्रदाय में नहीं हुई। वनक भवन अवश्य कल्पित हुआ पर वृंदावन का जसा माहात्म्य प्रतिष्ठित नहीं हुआ। वास्तव में रामोपासकों में सखी भावना एवं गांधा भावना जसा स्पष्ट अंतर बहुत विकसित नहीं हुआ। सीता की भी श्रेष्ठतम परिणति इस संप्रदाय में बसी नहीं हुई जमी कि कृष्णोपासक राधावल्लभीय या गलित संप्रदाय में हुई है। इस हम या भी समझ सकते हैं कि रामोपासकों में विविध संप्रदायों का स्पष्ट विभाजन एवं धारणाओं का स्पष्ट अंतर नहीं हुआ। गदिया एवं अखात्रे अलग हुए पर जसे संप्रदाय वृंदावन में अलग अलग विकसित हुए हैं उसका रामोपासकों में अभाव रहा है। इसी कारण रामोपासना अति समन्वय प्रधान रह सकी है। संभवतः इसी कारण डा० भगवती प्रसाद सिंह ने उसे मध्यम मार्ग की साधना कहा है।<sup>२</sup> परंतु इस कतिपय सीला-संघर्षों अंतरा के होत हुये भी राम दृष्टिकोण रामोपासकों का गौणीय वक्षणा से अभिन्न है। जो कुछ वहाँ कृष्ण एवं राधा को

१ गहि केवल ऐश्वय करि माधुरि रीति में सक ।

तेहि न उपासक मानिये महाकृत मति रक ॥

गहि केवल माधुय पुनि धर न चित्त ऐश्वय ।

रसिक ताहि मति मानिये राम उपासक धय ॥

—जनक राज निर्गारी गरण रसिक अली । धनयनरगिनी पृ० ३ ।

२ रामभक्ति में रसिक संप्रदाय, पृ० १४८ ।

ध्यान म रखकर कहा गया है उसी का राम एव सीता तथा परिवर व लिय अपने पक्ष मे मोह लिया गया है । मूल रस दृष्टि की इस एकता के कारण ही हम उसका अलग से विवचन नहीं कर रहे हैं ।

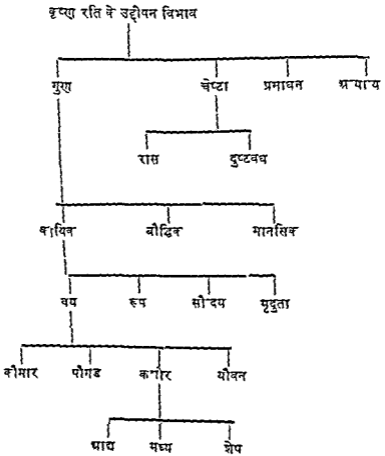
जहा तक निगुणवादियों के रस दान का प्रश्न है उस पक्ष भक्तिरसो व विभाजन के अंतगत लाया तो जा सकता है परंतु एक विगिष्टता का ध्यान म रखना होगा कि ये लाग किमी प्रकार की ऐतिहासिक पौराणिक सगुण लीला एव अवतारतत्त्व का स्वीकार नहा करते । इस कारण रागानुगा विधि उन पर लागू नहीं होती । अपने भीतर पूर्ववर्ती किसी शक्ति के भावा को जगान व स्थान पर प्रत्यक्ष रूप से (बिना किसी माध्यम के) प्रभु स संबध जाचते हैं । पर प्रभु की कोई सगुण साकार कल्पना भी उहा स्वीकार नहा है दूसरा धार भक्ति म प्रभु व साथ एक निजी संबध की कल्पना अनिवाय है । इस द्व ध स्थिति म एक ही रास्ता शेष रहना है कि भगवान व निये प्रताप पद्धति म हा व जनक जननी स्वामी व रागा प्रियतम या भरतार हो जाने हैं । एव भक्ति के आवग म जब ये प्रतीक वास्तविकता प्रहण करने लगते हैं ता उसे हम रागात्मिका भक्ति कह सकते हैं न कि रागागुगा ।

सूफिया म भी प्रेम प्रताप वाली भाव पद्धति ही स्वीकार्य है पर काय के क्षत्र मे उसका प्रकाशन कहानी के माध्यम स होना है । स्पष्ट है कि कहानी मे पात्र घटनाए परिस्थितियाँ एव स्वल विशय होंगे । इस रूप म एक प्रकार की लीला कल्पना अपने आप हो जाती है सूफी साधक उस प्रकार सगुण लीला गायका के कुछ निक्क आने प्रतीत होत हैं । पर एक दूसरा अंतर यहा ध्यान म रखना होगा सगुणोपासको की लीला ऐतिहासिक एव पौराणिक सदर्भों द्वारा अनुकूलित होकर जन मानस म प्रतिष्ठित रहती है एव मौडीय कल्पना आत्मी को उस सीमा के अंतर ही मिदधान कथन तथा कनात्मक अभियोजनाए करनी पडी हैं । पर सूफिया व सम्मुख ऐसा कोई कथन नहीं रहना । व कथा का मधुन प्रतीका एव अभि प्राया का प्रयोग करने मनानुत्पन्न करने के निये स्वतंत्र हात है । इतना हा नहीं कथा के य पात्र घटनाए आत्मी भी प्रतीक ही हाते है । अत यदि कहानी का तत्त्व धनग कर लिया ता अपनी प्रतीक पद्धति एव भक्ति योजना म य निगुणोपासका य निक्क आ जायेंगे । इतना अवश्य है कि कहानी तत्त्व एव सुदूर वस्तु म परमात्मा का स्वरूप देखने की प्रवृत्ति के कारण सूफियों की अभिव्यक्तियाँ अत्रिक भाव प्रवण एव रमात्मक प्रतीत हात लगना हैं ।

अगल अध्याय म हम उन विविध भक्ति-मप्रदाया के सद्धानिक रूप को अधिक विस्तार स विवचन करेग । उपास्य धाम परिवर उपासना भाव एव आना-भक्त का य विस्तृत विवचन उन मप्रदाया व साहित्य का समझने की समुचित दृष्टि दे सकगा ।

परिशिष्ट क [ भक्तिरस सबधी विविध चाट ]

डा० सुशीलकुमार दे के आधार पर



मुख्य भक्ति रस

रस गान्त	प्रीत	प्र यत्त	वात्सल्य	मधुर (प्रियाप्रीतम)
भाव गान्त	विचस्त	मिन्नता	स्नेह	दयाम
रस श्वेत	चित्र	श्रृणु	गोण	उज्ज्वल
दयता वपिल	माघव	उपेद्र	नसिह	वृष्ण

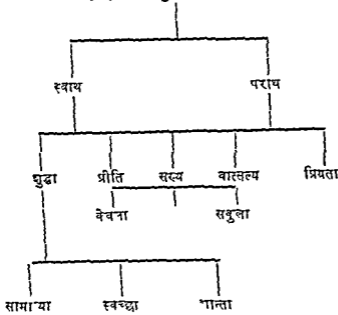
—पृ० १४५

गौण भक्ति रस

रस हास्य	अदभुत	वीर	करुण	रोद्र	भयानक	वीभत्स
रस-पाण्डुर	पिगत	गौर	धूसर	रक्त	काला	नील
देवता अलराम	कूम	कल्कि	राघव	भागव	वाराह	मत्स्य

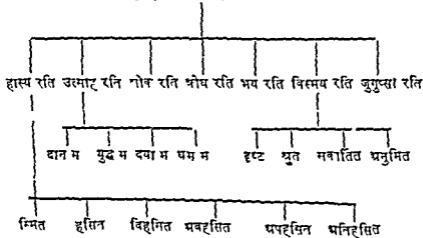
—पृ० १४५

कृष्ण रति के मुख्य स्थायी भाव



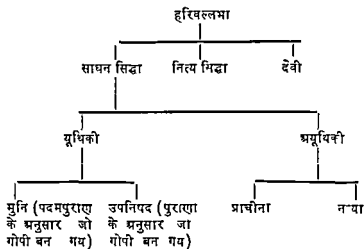
—पृ० १४४

कृष्ण रति के गौण स्थायी भाव



—पृ० १४४

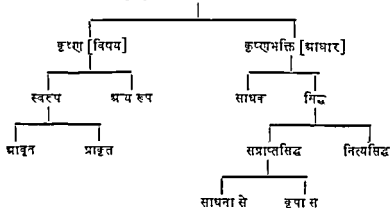
(१)



—पृ० १५६

(२)

कृष्ण भक्ति के प्रालम्बन विभाव



—पृ० १५६

चतुर्थ  
अध्याय

प्रेमाभक्ति का  
साधना दशन





## लीला-तत्त्व का परिप्रेक्ष्य

पीछे हम ब्रज लीला एवं वृन्दावन अथवा निकुंज लीला का अनेक बार उल्लेख कर चुके हैं। ब्रज एवं निकुंज लीलाओं के पीछे स्थित धारणाओं का मुख्य अक्षर लीलाओं के इन स्वरूपों का लेकर हुआ है। मध्य युग के वष्णव साहित्य की दो मुख्य विशेषताएँ कही जानी हैं—लीलावाद तथा मधुर रस की प्रधानता। या तो हरि-लीला-तत्त्व की परम्परा विद्वानों ने बने स दूढ़ निकाली है।<sup>१</sup> पर उसमें ऐतिहासिक त्रम विकास को खिलाना हमारा उद्दिष्ट काम नहीं है। इस ऐतिहासिक त्रम विकास में हमारे लिए महत्वपूर्ण बात है कि लीला मृष्टि त्रिशा से प्राग यद कर स्वरूप गति में सबधित हो जाती है। प्रारम्भ में मृष्टितत्त्व की 'यास्या' रूप में ही लालानत्त्व सम्मुख आना है मूल में इसके गकिततत्त्व था। गकिततत्त्व मानसताक प्रथा का प्रदेय है धम-साधना का। गकत प्रथा में किन्दुपापिनी आद्या गकित का यानिरुपा बना गया है। पाचरात्रा में भी परमारम धमधर्मी लक्ष्मी रूपा गकित का जगत की योनि सवाधित किया गया है।<sup>२</sup> इसी पाचरात्र संहिता में भगवान् पुष्पात्तम को लीलारस समुत्सुक भी बताया गया है।<sup>३</sup> इस प्रकार स्त्री पुरुष सिधुन के प्रतीक रूप में यह कल्पना आ जाता है। गव दगना में भी प्रसरन्दकितकलनाल जगल्लहरि केलय कह कर धारामयी गकित के कल्लोल के अदर से हा मसार रूपा नहरी की समुक्ति मानी है। इस जगत-सहरी का लेकर ही परमेश्वर कति या लीला करत हैं। इस प्रकार लाना का क्षेत्र बहि मृष्टि तक रहा। पर था वष्णवा ने लीलावाद का ब्रह्म की स्वरूपभूता गकित के साथ सबद्ध कर दिया। पत्रम पुराण में भी इस सबध में एक प्रस्पष्ट सबत प्राप्त होता है जिसमें कि पर-योम (विष्णु के स्वधाम) का भोगाय एवं निपिल जगत-लीला के लिय कहा गया है। भाग में ही उनकी नित्य स्थिति

१ डा० मुनीराम गर्ग भारतीय साधना और सूर साहित्य चतुर्थ अध्याय।

२ या च सा योनिलक्ष्मीस्तद्धमधमिणी—ग्रहियु ष्य संहिता ५६।७।

३ यही ४१।४

भी स्वीकार की है। भाग्य और नीला दाना हा उनका गतिमत्ता पर प्राधृत है पर अभी भोग गद लीला स अलग बना हुआ है। श्री बष्पगवो न उस पूरी तरह स्वरूपगति के साथ सबधित कर दिया। यामुनाचाय ने जिस भाव विभार बठ से लीला गान किया है परवर्ती बष्पगव का य का रस विदग्ध नीलाए दानिक दृष्टि स भी ठीक उसकी परम्परा म गान हाती है —

अप्रूबानारसभावनिभर प्रबुद्धया मुग्धविदग्धलीलया ।  
क्षणान्धवत क्षिप्तपरादिकालया ग्रह्यपेत महिषीं महाभजाम ॥<sup>१</sup>

अर्थात् परादिकाल जहाँ क्षण क समान नगण्य है ऐसी अप्रूब नाना रस भाव निभर प्रबुद्ध मुग्ध और विदग्ध लीला द्वारा ही विनाल भुज (पुरपात्तम) अपनी बल्लभा को दृष्टयुक्त कर रहे है।

इस उद्धरण म निर्भात रूप स लीला स्वरूप गति क साथ सबधित ही नही हाती मधुरता की आर भी प्रयाण करता है। इसी म मिलाकर बारहवी गती म रचित नीलागुक् विल्वमगल के कृष्ण वर्णामृत का निम्न लोक पदा जाय तो जात होगा कि यामुनाचाय म जो नीला वणनमात्र है वह भक्त का प्रयोजन बन जाती है। नाक मो है —

यानि त्वच्चरितामृतानि रसनालेह्यानि ध्यात्माना  
ये वा गशवचापलध्वतिकरा राधाबरोधोमला  
ये वा भावितवधुगीतगतयो लीला मलाम्मोदहे  
धारावाहिकया वहत हृदये तापेव तापेव मे ।<sup>१</sup>

अर्थात् तुम्हारा जा चरितामृत ध्यात्मानो द्वारा प्रास्वादन योग्य है तथा गगव एव चपनना स उत्पन्न राधा क अत पुर (म केचि करने क लिए) की ओर उमुक्त जा श्रीगाए हैं अथवा तुम्हारे मुक्तारविन्द पर जा भावयुक्त बणु गीन गति लागाए हैं वे ही धारावाहिक रूप स निरन्तर मेरे हृदय म बहनी रहे।

इम प्रकार स्वरूपगति क साथ का जाने वाली य लीलाए प्रधान ही नहा हा उता हैं उनका प्रास्वादन परमपुरपाय भी बन जाता है। लीला दान लीला प्रास्वादन एव नाला-गान हा भक्ता का ध्यय बन जाता है। सहस्रो कविया भक्ता न तस लक्ष्य पत्ता म नाना भाव स रसा का उपलब्ध करना चाहा है। स्वय

१ पदम पुराण २२७।६ १० ।

२ यामुनाचाय श्री स्तोत्र रत्न ४४ ।

३ लीलागुक् कृष्णामत १०६ ।

जयन्व न भी दूर न ही इस लीला का गाया है।<sup>१</sup> वहिर्लोका का एक प्रयाजन था—मृत्ति रचना पर स्वस्वरूप-लीला का कोई प्रयाजन नहीं रहा। बल्लभाचार्य न स्पष्ट कर लिया—'नहि लीलाया किञ्चित् प्रयाजनमस्मिन् लाता एव प्रयाजनत्वान् ।' इस दृष्टिकोण की ही तकमिद्ध परिणति है जब यह कहा गया कि लीला आम्बान् हा अपन आप म चरम ध्यय है, मुक्ति या भगवत्प्राप्ति भी नहीं। मध्य युग का सारा ब्रह्मण्व माहित्य इस दृष्टिभंगी स पूरी तरह अनुरजित है। यही पर यह याद कर लेना भा अनुचित न हागा कि साहित्य की प्रेमदबी राधा जब ब्रह्मण्व तत्त्व-ज्ञान स सम्पृक्त हुई ता व साक्षात् भगवान की स्वरूप गति की श्रष्टनमवृत्ति ह लादिनी गति की सारभूत विग्रह मान ता गया। उन पर आधा रित मारा प्रेम काय इस नव-तत्त्वदर्शन व आलोक म एक नय अय से भर ही नहीं उठा उलग आगे व साहित्य व लिय जा राजपथ उपाटित हुआ वह १६वीं गता-नी तक बराबर जनाकुन बना रहा।

पद्मपुराण व पीछे उद्ध त अंग म पर-योग का हा भाषाय बहकर उनके धामत्व का सक्त किया था। परन्तु ऐतिहासिक, पौराणिक, साहित्यिक एव दार्शनिक अनेक उपानान आदि आ जुड़े ता वज मयुरा द्वारका वृंदावन गोकुल स्वत-द्वाप, साक्त प्रयाध्या आदि तत्त्व्यानीय बन गय। इसी क्रम म परिवर, उनक नाम रूप सवा उपास्य एव परिवर व मध्य विविध मवध आदि भी सम्मिगिन एव विवचित हात गय। परवर्ती वैष्णवा व विविध सम्प्रदाया व अन्तर मुख्या इन विस्तारिया की लेकर हो हैं। परात्पर-तत्त्व की लीला का दान जान एव आस्वात्न सबका नाम्य है (निशु गियो एव मूकियो की चर्चा हम अलग से करेंगे)। इस सबध म हम तनिक भा मन-वमिन्य प्राप्त नहीं हाता। समी इस लीला की मुख्य प्रवृत्ति प्रेम रति या भक्ति का जयमान करत हैं। पर इनक बाट अन्त अन्त उठ खे हात है—युगल का स्वरूप क्या है? उनम से प्रत्येक का अलग अलग स्वरूप एव गुण तथा पारस्परिक सबध क्या है? इन दाना म प्रधान कौन है? भक्त पर अनुग्रह किसका हाता ह फिर इनकी जागाएँ कौन सी हैं? नाम्य पुराण-वर्णित या और काइ? य लीलाएँ कहा पर हीनी हैं तथा उग धाम का स्वरूप गुण एव प्रभाव क्या है? इस लीला म भाग तेन धाम परिवर म कौन कौन है? उनक नाम रूप, गुण क्रिया एव सबध क्या हैं? साधक व लिए इस सार विस्तार म क्या करणाय है? य ही कुछ अन्त हैं जिन पर विभिन्न ब्रह्मण्व सम्प्रदायों म हम मन वमिन्य दिखाई पड़ता है और जिनक

१ राधाभाष्यव्योजयति यमुनाकूले रह बेलय —जपदेवरचित शात गोविन्द-श्लोक ।

२ बल्लभाचार्य अष्टभाष्य पृ० ६०१ (बहामुद्र २।१।३३ का भाष्य)।

आधार पर प्रत्येक अपनी स्वतन्त्र सत्ता की घोषणा करता है। आगे हम इन्हीं प्रश्नों की चर्चा करते हुए इन विविधताओं में पृथक्तामूक तत्त्वां अथवा समानताओं का रूप स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।

## उत्तर मध्य सम्प्रदाय में कृष्ण, राधा, बंदावन, गोपा एवं सखी सबधा धारणाओं का सद्भाक्तिक विवेचन

### उपास्य धाम एवं परिकर का स्वरूप

उत्तर मध्य युग का समस्त हिन्दू वाय धारा राम और कृष्ण इन दो नामों के चतुर्दिक ही प्रवाहित है। इन दोनों नामों में इतिहास एवं तत्त्वज्ञान का कुछ ऐसा विचित्र मेल हुआ है कि इनका यकिनत्व अत्यंत प्रबल आकर्षण से भर उठा है। यद्यपि हमारे आलाच्य काल तक आते आते इन देवताओं का रूप बहुत कुछ स्थिर हो चुका था परन्तु फिर भी नयी नयी लीलाएँ कल्पित होती रहीं नये सदभक्तों के प्रतिष्ठित किये जाने रहे। साराण यह कि सबसे १५०० से स० १००० वि० तक के काल में उनका रूप निरन्तर नवनवानमान हो रहा। उनकी रूप माधुरी उनकी लीला उनका विलास उनका अनुग्रह अप्रतिरोध्य गति से हिन्दू प्रदेशों में जनमानस में संचरण करता रहा। वे कृष्ण वन गोपीवल्लभ हुए राधा अघर सुधा लपट हुए कुंज विहारी हुए भक्त पर सहज अनुसम्भा का द्वारि बरसानवाले वारिद भा बने। मयुरापीठ द्वारकापति रक्मिणीकांत, गोपसखा नदपुत्र यशोदा सुवन आदि नाना प्रकार के स्वरूप भी उनके हुए। राम गान्धर्वाणि जो धरा का भार हटाने आये थे तथा गीता में जिनके लिये कहा गया था—राम गन्धर्वाणामहं वे भी तुनसी के मयादा पुरुषोत्तम बने पर वही तक न रुक कर और विकास होता है। इस विकास में परिकर द्वारा नाना भाव से सवित और उपास्यता है ही साथ ही— जानक्य सहस्रप्रान आडारसविन्मपट तथा महारासरसाल्लासी विनासी सबदहिनाम भी शामिल। आगे विविध सम्प्रदायों का अन्वधारणाओं के अनुसार इन लीला विग्रहों का रूप स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।

### शैशव ब्रह्मण्य सम्प्रदाय में कृष्ण, उनका धाम एवं परिकर सम्बन्धी धारणा

शैशव ब्रह्मण्य-सम्प्रदाय में कृष्ण का पूरा ब्रह्म माना है। ब्रह्म की साथ ही एतत्त्वा निर्वाण माना जाता है पर इस सम्प्रदाय में व सविशेष एवं सगति

हैं । भागवत के श्लोक —

वदति तत्तत्त्वविदस्तत्त्व यज्ञज्ञानमद्भ्यम  
ब्रह्मति परमात्मति भगवानिति श्रुते ।—१।२।११

म कहे गये ब्रह्म, परमात्मा एव भगवान् इन तीनों शब्दों में भगवान् शब्द का ही स्वाकार करके सर्वोच्च माना गया । दाशनिक दृष्टि से शक्ति प्रकाश के प्रकार भेद और तारतम्य को लेकर एक ही अद्भ्य अलङ्कार परमनस्त्व की तीन अवस्थाएँ ब्रह्म परमात्मा एव भगवान् हैं । पर भगवान् में सभी शक्तियाँ अपने सर्वश्रेष्ठ रूप में रहती हैं, इसलिये उनको इस मत में श्रेष्ठतम माना गया है ।<sup>१</sup> इस प्रकार पश्चात् भागवत के आधार पर कृष्ण को स्वयं भगवान् माना गया ।<sup>२</sup> इस प्रकार कृष्ण ही अवतारी हैं शेष अवतार हैं ।<sup>३</sup> पुरुषावतार गुणावतार लीलावतार सब उन्हीं के प्रकार हैं । अद्भ्य ज्ञान और तत्त्वस्तु कृष्ण ही हैं<sup>४</sup> तथा कृष्णवास कवि राज के अनुसार

कृष्ण एक सर्वाभय कृष्ण सर्वधाम  
कृष्णर गरीर सब विश्वर विश्राम<sup>५</sup>

व सर्वकारण कारण है<sup>६</sup> । वे विरुद्ध धर्माश्रय हैं । यों तो भगवत् तत्त्व की अनन्त शक्तियाँ हैं पर इनमें तीन प्रधान हैं—स्वरूपशक्ति माया शक्ति और जीव शक्ति । इन्हें अन्तरगा बहिरगा और तटस्था शक्ति भी कहते हैं<sup>७</sup> । अन्तरगा या स्वरूपशक्ति सर्वश्रेष्ठ है । कृष्ण का स्वरूप सत् चित्त और आनन्दमय है अतः यह स्वरूप शक्ति भी तीन प्रकार की है । आनन्द वगैरे उदभूत शक्ति हं लादिनी

१ जीव गोस्वामी तत्त्व सद्बभ (पट सद्बभ संस्करण) ।

२ एते चाशक्ता पुत्र कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्—भागवत १।३।२८ ।

३ अवतार सब पुरुषैरक्ता अग स्वयं भगवान् कृष्ण सब अवततस  
ध० घ०, आ० ली० परि० २ पृ० १४ ।

४ वह पृ० १४ ।

५ वही पृ० १६ ।

६ ईश्वर परम कृष्ण सच्चिदानन्द-विग्रह ।

अनादिरादिगोविन्द सर्वकारणकारणम् । ब्रह्म-गहिता ५ । १ ।

७ धीमवषट्पञ्च सिद्धांतरत्न सग्रह पृ० ५८ ।

८ शक्तिचरित्रा अन्तरगा बहिरगा तटस्था च

—जीव गोस्वामी भगवत्सद्बभ, पृ० ६५ ।

और सत अंग से उद्भूत गक्ति म बनी और चित्त अंग म उद्भूत गक्ति म बित्त  
 कहनाती है ।<sup>१</sup> स्वरूप गक्ति क अन प्रकारा का चचा हम प्राग था राधा क प्रमग  
 म करेगे । वही पर हम देखेगे कि गौरीय वृष्ण म नत्रा म अनका स्थान मिनना  
 महत्त्वपूर्ण एव अनिवाय है । बहिरगा या मायागक्ति है ता जगत का कारण है  
 तथा तटस्थ गक्ति जीवगक्ति है जा अनन्त है ।<sup>२</sup> एम गक्ति कल्पना क पीछे  
 विष्णु पुराण की परा क्षत्रज अविद्या गक्तिया का कथन प्रियमान है । स्वय जीव  
 गोस्वामी न उह प्रमाण रूप म उद्ध त किया है ( भगवत म ऋभ पृ० ६६ ) । यही  
 पर यह भी याद रखना हागा कि य गक्तिया भगवान की हा है । भगवत-तत्त्व म  
 स्वरूपगक्ति एव माया गक्ति दाना का ही याग है—( कवन एक न ) । बहिरगा  
 गक्ति के रूप म भी भगवान का ही बभव प्रकाशित एव विकीर्ण होता है ।  
 इस गकर की माया क नमान भ्रमात्मक न ममभना चाहिए । इस प्रकार जगत  
 का उत्पत्ति भगवान की ही बहिरगा गक्ति म बनाकर जगत को मापक्ष रूप से  
 सत्य हा नती भगवान की गक्ति का परिणाम भी बना दिया है । वास्तव म  
 सारे वृष्णव भम्प्रदाय परिणामवादी हैं विवतवादी नहीं । जीव यबधी इनकी  
 धारणा भी मन्त्वपूर्ण है । जीव न ता अंतरगा गक्ति है न बहिरगा । उमम दानो  
 मीमात्रो की ओर जान की क्षमता या प्रयुक्ति होती है—वह दानो स ही सबधित  
 है और दाना से अलग एक प्रकार स तटस्थ हा नहीं मयस्थ जनी उनकी स्थिति  
 है ।<sup>३</sup> इन गक्तिया क अनिरिक्त भी भगवान की अनन्त गक्तियों की कल्पना की  
 गयी है तथा भगवततत्त्व का नराकार कल्पना म अन गक्तिया को स्त्री रूप म देखा  
 गया है । एम नराकार बयक्ति क भगवततत्त्व क माय ही लीला धाम एव परि  
 कर की कल्पना यायाचित हा है । जीव मास्वामी न अनका विस्तृत विवेचन भग  
 वत परमात्म तत्त्व एव वृष्ण मदभ म किया है यहा हम उस सारी दार्शनिक

१ चत० चरि० म ली परि० ८ प० १४६ (स० क्षीरोदचन्द्र गोस्वामी  
 पूणचन्द्र गीत कलकत्ता ।

२ (क) च चरि आ० ती परि २ पृ १६ ।

(ख) तत्रांतरगया स्वरूपगक्त्याहयया पूरणेव स्वरूपेण वकुण्ठादि  
 स्वरूप बभव रूपेण च तदवतिष्ठत तटस्थया रश्मि स्थानीय  
 सिद्धेकात्मगुद्धजीवरूपेण बहिरगया मायाहयया प्रतिद्विगत  
 वषणावल्पस्थानीय तदीय बहिरगवभव जडात्म प्रधानरूपेण  
 चति चतर्थात्वम । जीव गोस्वामी, भग सदभ पृ० ६५ ६६ ।

३ (क) एत० ब्र० दे० य० प्र मू० पृ० २१२ २१३ ।

(ख) जीव मास्वामी भग० सदभ पृ० ६५ ७४ ।

४ जीवगोस्वामी भगवत-सदभ पृ० २६८ ।

धार्मिक चर्चा में नहीं पड़ेगी ।

पर इससे यह न समझ लेना चाहिये कि कृष्ण कुछ अजीब अनुभूत है । कृष्ण कवि की स्पष्ट धोपगमा है कि कृष्ण के जितने भी खेल हैं उनमें सर्वोत्तम नरलीला है । नरवपु ही उनका स्वरूप है व गापवेगधारी हैं वणुकरधारी हैं नव गिणोर हैं नरवर हैं और अपने अनुभूत ही नवलीलाएँ करत है

कृष्णर जतक खला, स-बोत्तम नर लीला नरवपु ताहार स्वरूप  
गोपवेगवेणुकर नवकिणोर नरवर नव लीला ह्य अनुभूत १।

भगवत्तत्त्व का चर्चा करत हूय गौधीय वधुणव दागनिवा न उम विगिण्ट  
रूपाकार एव गुणावाला पूगतम व्यक्तित्व प्रदान किया है । इस व्यक्तित्व प्रदान का यह स्वाभाविक विकास है कि देवता का एक अपन ही अनुभूत सबका प्रतिपात करता हुआ धाम है । उमका अपना वणु एव प्रसाधन सज्जा हा तथा अपन सहाया (परिकर) हा । यद्यपि यह सत्य है कि वह जीव में भाँ रहता है एव जगत में भी उमकी व्याप्ति है क्यारि म सब उमकी गतिगो व हा अग हैं परतु माया गति और जावगति का आवाम परमात्मा है न कि साक्षात् भगवान् । भगवत्त्व के रूप में उमका अपना एक पृथक् धाम रूप एव परिवर है । रग उमका धाम है एव आवार के रूप में मानवाकृति की बल्पना है । नाना प्रकार के प्रतीकार्यों जाने उमका आभरण भी गिनाये गये हैं उन सबकी चर्चा में पहना हमारे नियम प्रमगातर हागा ।

धाम का परमात्मा की स्वरूपभूत प्रवागगति कहा गया है १। तात्पर्य यह कि भगवान् और उनके परिवर का आवाम और धाम स्वरूपगति की हा अभियोजना है । स्वरूपगति के प्रवाग इस लाक की स्वरूपगति के हा एक अय प्रवाग भक्ति के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है २। इस प्रकार धाम भगवान् का नित्य और सत्य अग हो जाता है । भगवत्विग्रह के समान ही माय होत हुए भी यह उग साधक के लिये ही प्रकट होता है जा द्वारका मयुरा, कृदावन प्रादि भोमिज स्थानों में नित्य होत वाली लीला की धारणा करता है ।

१ म० व० म० ली० परि० २१ पृ० २७५ ।

२ जीव गोस्वामी भगवत्-सदभ, पृ० १६६ ।

३ यहा पृ० १६४ ह सादिनी सारांगप्रधान गृह्यविद्या एव भक्ति तरप्रयतकतक्षणा वक्ति द्वयक्या गृह्यविद्यया तदव्युत्तिरुपा प्रीत्यात्मिका भक्ति प्रवागते ।

४ एत० वे० व० व० क्ले० सू० पृ० २२२ ।



यही बात भगवान् के परिवर के निय भी कही जा सकती है। परिवर भी ह लादिनी गक्ति का विनाम है।<sup>१</sup> परिवर उनके माधुय का उपभाग करता है न कि ब्रह्मत्व का। यह धारणा महत्त्वपूर्ण है। इसी से सम्प्रतिगत गापीभाव एवं सखीभाव आदि की साधनाएँ हैं। एम सम्बन्ध में हम आगे अधिका विस्तार में विवेचना करेंगे। जीव गोस्वामी ने भगवत सदभ के अन्त में अपने सार भगवत तत्त्व विवेचन को सक्षेप में अत्यन्त सारगर्भित गान्ध्या में उपस्थित किया है। इसमें कहा गया है कि जो सच्चिदानन्दक रूप स्वरूपभूत अचि त्यद्विचित्र अनन्त गक्तियुक्त है जो घम होकर भी धर्मो है निर्भेद हा कर भा भेदयुक्त है अरूप होकर भी रूपी है आपन हाकर भी परिच्छिन्न है जो परस्पर विरोधी अनन्त गुणो के निधि हैं जो स्थूल सूक्ष्म विनक्षण स्वरूपकागड स्वरूपभूत श्रीविग्रह है स्वानरूपा स्वगक्ति की आविर्भावनिक्षण लक्ष्मी के द्वारा जिनका वामांग रजित है जो निजधाम में स्वप्रभाविशपाकार रूप परिच्छिन्न और परिवर-सहित विराज मान है जो आत्माराम मुनिगणा के चित्त को भी स्वरूप गक्ति के विनामरूप अदभुत गुणोतीति द्वारा तीतारम से चमत्कृत करते रहते हैं जो स्वयं सामान्य प्रकाशाकार में ब्रह्मताव के रूप में अवस्थित हैं जो जीवात्म्य तदस्यागक्ति के और जगत प्रपच की मूनीभूता मायागक्ति के आश्रय है वही भगवान् है।

भगवान् सम्बन्धो एन दार्शनिक स्थापनाया की रूपरक्षा देने का तात्पर्य यहाँ पर मात्र एतना है कि आगे के विवेचन के लिये अपक्षित परिप्रक्षेय बना रहे। जब कृष्ण को स्वयं भगवान् बना गणा ता उमका अथ स्पष्ट रूप से यह है कि कृष्ण में वे समस्त विभूतियाँ नित्यत्व एवं विनिष्टताएँ स्वीकार की जाए जो भगवततत्त्व के वार में कही जा चुकी हैं। इसी स्थान पर गौरीय वष्णुवा की महत्त्वपूर्ण दन प्रारम्भ हाती है। उद्दे सारी कृष्णलीला का दार्शनिक प्रास्था करनी थी उस गान्ध्या एवं घम की मायता दनी थी। ऐमा गगता है कि कृष्ण ज्ञाना वणन के क्षत्र में भी दा स्पष्ट परम्पराएँ थी जिनका समझना एवं समन्वय उह करना पडा है। एवं परम्परा भाग वत पुराण की थी जिसमें गापिया का सबथ ए भक्त मान लिया गया था नारद एवं गण्डिव्य के भक्तिमूत्र एमा परम्परा को हट करते हैं। दूसरी परम्परा त्रीविव (सम्पूजर) साहित्य की थी जो राधा को कृष्ण की प्रमिका के रूप में उपस्थित कर रहा था। वारहमा में गान्ध्या तीव आते आते एम दूसरीपर म्परा का घम एवं तत्त्व-द्वान के भीतर स्थान मिलता प्रतीत होता है। एम प्रकार एक एर गापिया प्रम की आग्या थी जिहोंने अपना सब बुद्ध कृष्ण के अलग

१ जीव गोस्वामी भगवतसदभ पृ १६८।

२ वही पृ १६६ २००।

कर लिया था और दूसरी ओर राधा थी जो प्रेम का मन्वथेष्ठ प्रतीक थी। भक्ति व धर्म का तात्पर्य भाव का ही अन्तर्गत सामन्य था। पर भागवत पुराण में गोपीभाव का ही स्वाकार किया गया। यहीं पर एक प्रन्त उद्यत्ता है कि भागवत का नाम राधा नाम क्यों नहीं अपनाया। इस सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि या तो भागवतकार को राधा नाम जान नहीं था या वह राधा भाव का विराग था। परन्तु नाता अनयाराधितानून (१०१-०१२४) बाल श्लोक से लगता है कि एक कष्णप्रिया गाथा में वह परिचित है भन ही उसका उपयोग गवहरण में नतिव उपलब्ध व लिय किया गया था। भागवत के पहले के विष्णुपुराण<sup>१</sup> और विन हृदय में भी एक विशेषप्रिया गाथी का उल्लेख मिलता है अतः इस गाथी से भागवतकार यदि परिचित था तो कोई आश्चर्य का वान नहीं है। इसका अतिरिक्त राधा कष्ण का प्रेमगीतिया का परम्परा हान का गाथा मतसह से लगातार प्रकाण रूप में उपलब्ध होती है। भागवतकार जसा सिद्धांत साहित्यकार हम परम्परा से अपरिचित रहा था भी स्वाकार करने का मन नहीं करता। एसा प्रनात नाता है कि भागवत के तत्त्व दर्शन के बहुत अनुमान राधा नहीं पत्नी थी। गाथिमाता जीव की प्रतीक है जो मवस्व अपिन कर देती है मत्त स्थानीया है जा निस्मरौच निर्विशेष भाव से कृष्णपरश्यापन हा जाता है पर राधा का स्वरूप परम्परा से एसा न था। वे कृष्ण करावर की हृत्कार थीं। गीत गाथिमाता में हम म्यत्त न्वत है (इस लौकिक काव्य परम्परा की सर्वोत्तम परिणति इसमें ही हुई है) कि राधा ही कष्ण के विरह में व्याकुल नहा हानी कष्ण भी राधा प्रभाव विह्वल कियायी पडत है। ऐसा वाच भागवत पुराण की प्रतीक योजना के बहुत अनुकूल नहीं प्रतीत होता। परन्तराम एवं वमतराम का जिन पृथक् परम्पराओं का अनुमान आचाय हजारी प्रमाद द्विवेदी न लगाया है<sup>२</sup> सम्व है कि वे गापीभाव एवं राधाभाव अथवा भागवत प्रेम प्रतीकवाद एवं लौकिक शृंगारिक भावना मूनन प्रेम की परम्पराओं से संबंधित रहा है। गौण्य के एव दर्शनिका न एन दर्शा परम्पराम् एव आत्मीयों का अत्यंत निपुण भाव से घम-एगन स्तर पर सामजस्य किया। इस सामजस्य में राधा कष्ण लालागान का परम्परा को अत्यधिक वन मितता यही नहीं एतत्सबधी तत्त्व विवचनाने पूर प्रेमाभक्ति के साहित्य के मून की दार्शनिक आधार भूमि का वाय किया। ऊपर के निर्माण गिल्प में कुछ

१ अत्रापविश्य सा तन कापि पुष्परलक्ष्मता।

अथ जन्मनि सर्वात्मा, विद्वेषुरभ्यर्चितो यया। विद्वेषुपुराण

५।१३।३५।

२ आचाय हजारी प्रमाद द्विवेदी, मध्य कालीन धर्मसाधना

पृ० १३५।

कपूरे या जानिया अथवा बाह्य साजा म भले ही कुछ अंतर हो पर मूलाधार वही रहा ।

गौरीय वक्षणा का सामन एक दूसरी समस्या और भी थी गौरीय गोस्वामियो का आविभाव का बहुत पहल ही वृत्तावन मयरा द्वारका म श्रीकृष्ण की विचित्र नीचा काय पुराणादि म बहुप्रकार से पल्लवित हो उठी थी । सोल हवी गतानी का पढ़ने राधा की कहानी भी लोकमानस का आरपण बन चुकी थी । वृत्तावन का गोस्वामियो को जय राधा-कृष्ण-तत्त्व की व्याख्या करनी पड़ी तो श्रीकृष्ण की विचित्र नीचा से सम्बन्धित उपाख्याना को उह नना पडा और उनका मून सिद्धान्त से समति रखकर व्याख्या करनी पनी । अस्तु ब्रज मयुरा द्वारका आदि विविध स्थाना पर फली विविध प्रम प्रसगा को कल्पित करनेवाली उस अनन्त बचिन्धवाली लीला की भी शूल अपने सिद्धांत का साथ उह मिलानी थी । एन गौरीय तत्त्व विवेचको न इस समस्या का भी सामना अपनी प्रतिभा का बल पर किया । बल्कि कहना या चाहिए कि दोना ही समस्याओ का समाधान उहने एक ही स्तर पर किया । आगे हम इसी की चचा कर रहे हैं ।

यह सारा दुःख सा प्रतीत होनवाला काय वास्तव म भगवान की शक्ति बलपना पर आधारित है । प्रमुख शक्तिया की चर्चा हम पीछे कर चुके हैं तथा यह भी कह चुके हैं कि एक ही ब्रह्म परमतत्त्व शक्ति की बचिन्धो एक स्फुरणा का आधार पर ही ब्रह्म परमात्मा या भगवान कहा जाता है । ब्रह्म म शक्ति का अस्तित्व या लाभाबचिन्धो का अनुभव नही हाता परमात्मा म जीवशक्ति एव माया तत्त्व से प्रत्यक्ष संबध हाता है परन्तु भगवान-तत्त्व म इन तटस्थ एव बहिरंग शक्तियो का मून आशयत्व ता रहता ही है साथ ही स्वरूप शक्ति के साथ प्रत्यक्ष लीला ममता भा विद्यमान रहती है । इस प्रकार भगवान नीलानन्दमय एव महैश्वर्याना पुरुषात्तम सिद्ध होत हैं ।

भगवत तत्त्व के प्रकटीकरण की एक और प्रमपद्धति भी इस सम्प्रदाय म स्वाकार की जाता है । शक्ति का त्रिधा भेद का स्थान पर प्रकटीकरण की चार भूमिकाए भी मानी गया हैं । प्रथम तो सदा स्वरूप म अवस्थान श्री कृष्ण परमतत्त्व का एम ही प्रथम अवस्थान हैं । दूसरी भूमिका तदरूपधभव म अवस्थान की है । भगवान कृष्ण का अवतारादि गुड सत्वयुक्त वकुण्ठादि धाम एव धाम का नित्य परिवरणण इस त्रितीय भूमिका का ही प्रकाशन हैं । यह दोनो ही भूमिकाए स्वरूप शक्ति से संबधित हैं । तटस्था शक्ति द्वारा परमतत्त्व का अवस्थान की तृतीय भूमिका जीव है एव बहिरंग माया शक्ति द्वारा जगत के रूप म परिणति इस

१ डा० गणभूषण दास गुप्त श्री राधाकाश्रम विकास पृ० २१५

२ श्री जीव गोस्वामी का भगवत सदभ का आधार पर ।

तत्त्व के भवस्थान की चतुर्थ भूमिका है। यह मूख भगवान की अचित्य शक्ति द्वारा समझा जाता है। अचित्य होने के कारण ही ये शक्तियां बरपना होकर स्वाभाविकी हैं।

इस प्रकार हम ज्ञान हैं कि स्वरूपशक्ति के द्वारा पूण भगवान धाम परिवार आदि के रूप में परमत्त्व यजित जाना है तथा माया शक्ति के द्वारा जगत रचना का काम जाना है। माया शक्ति का रूप बहुत कुछ परम्परा प्राप्त ही है पर उस परमत्त्व के ही एक रूप में परमात्मा से संबंधित करके माया सृष्टि का मिथ्या नहीं सत्य सिद्ध कर दिया गया है। इस बात का उल्लेख हम पीछे भी कर चुके हैं। गौणीय ब्रह्मण्य के शक्ति सिद्धांत में तटस्थशक्ति की कल्पना बड़ी महत्वपूर्ण है। साधारण जीव को माया शक्ति के अंतर्गत माना जाता है पर तटस्थ सिद्धांत में वह तटस्थशक्ति है जो न तूरी तरह माया शक्ति के अधीन है और न वह स्वरूपशक्ति के ही अंतर्गत है। वह जाना और जा सकता है। माया यदि विमोहित कर लेता वह विषय-वामनामा में निपट हो जाय पर यज्ञि भक्ति (जो स्वरूपशक्ति ही है) जाय जाय तो वह स्वरूपशक्ति की लीला वचिनी का ध्यान-दयान करने में मग्न हो जाता है। माया चू कि जग है अतः वह इस चतनशक्ति की विमोहित कर सकने में सदैव मग्न नही जाती। लीला के साथ ही भगवान् की स्वरूपशक्ति सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। स्वरूपशक्ति के साथ ही भगवान् का विचित्र लीला विलास चलता है। इसी शक्ति के सत्त्व में भगवान् में पूण ऐश्वर्य एवं पूण माधुर्य की सत्ता होती है। भगवान् के पूण सच्चिदानन्द हैं—यानी कि उनका पूणस्वरूप में सतचित्त और ध्यान-दय तीन धर्म होते हैं। इन्हीं तीनों धर्मों का भवन्म्वन करके स्वरूपशक्ति भी विधा हुई—सधिनी भवित् और ह्लादिनी। सधिनी शक्ति सत्ताकारी है उसका द्वारा भगवान् स्वयं सत्ता रूप होकर भी सत्ता धारण करत है और करता है इस सबदेवका लक्ष्यदि प्राप्तिकारी भी कहा गया है। सवित विद्याशक्ति है—भगवान् स्वयं ज्ञान रूप हैं पर इस शक्ति के द्वारा वे स्वयं जानत हैं और दूसरों का भी ज्ञान है। गुणोत्कथ से उत्तरात्तर श्रेष्ठ जान हूय इनमें सर्वोच्च ह्लादिनी जाती है—यह वह शक्ति है जिसका द्वारा स्वयं ह्लादेव भगवान् ह्लाप्ति होत हैं एवं दूसरे को भी ह्लाप्ति करत हैं।

१ डॉ० ग० मू० गुप्त रा० प्र० वि०, पृ० १८८ ।

एव

जीव गोस्वामी भगवत-सदभ, पृ० ६/ ६७ ।

२ यही-परमात्म सदभ, पृ० ७१ ७३ ।

३ जी० गो० भगवत सदभ पृ० १८१ ।

भगवान की इस मूल गति का भीतर एक स्वप्रकाशता-लक्षणवृत्ति विशेष है। इस स्वप्रकाशता लक्षणवृत्ति विशेष का द्वारा जब भगवान का स्वरूप या स्वरूप गति का आविर्भाव होता है तो उसी को विगुद्ध सत्त्व कहते हैं।<sup>१</sup> भगवान की यह स्वरूप गति दो प्रकार से प्रकट होती है—एक अपने स्वरूप में और दूसरी अपने स्वरूपविभव में। विगुद्ध सत्त्व से ही पूजा भगवान श्रीकृष्ण के घाम परिकर सबवादि रूप विभव का विस्तार होता है। अपने इस विभव का साथ ही रसमय श्रीकृष्ण का लीला वचित्रय होता है। त्रिम प्रकार भगवान नित्य हैं उसी प्रकार उनका घाम नित्य है पापद परिकर और भवक नित्य हैं तथा वृत्त की लीला भी इसीलिये नित्य है। वास्तव में यह सब एक ही हैं कवल भगवान के प्रकार विशेष वचित्रय को प्रकट करने के लिये हैं।

जीव गोस्वामी ने भगवत सदभ की इन स्थापनाओं को स्पष्ट एवं व्यावहारिक धरातल पर श्रीकृष्ण सदभ में उपस्थित किया है। वस्तुतः एमा लगता है कि कृष्ण की काव्य पुराणादि वर्णित लीला उन लीला का लिये ठोस ऐतिहासिक सत्य थी और उसकी ही सब प्रकार से प्रामाणिक एवं सब प्रकार से सायक सिद्ध करने के लिये श्री पूर्वालाचित तत्व विवेचन का मिस्टम खडा किया गया था। श्री कृष्ण सदभ में इमीलिय उन्होंने कृष्ण लीला से सबधिन सभी स्थाना यकिनया एवं घटनाओं का नि को पूर्व विवेचित भगवत लीला का ही प्रकट रूप माना। लीला प्रकार की लीलाओं को अभिन्न बतान का प्रयास गोपीय तत्व विवेचकों ने बराबर किया। रूप गोस्वामी का प्रयास लौकिक धार्मिक स्तर पर न हाकर का प्रसास्त्रक स्तर पर है। जीव गोस्वामी का प्रयास दार्शनिक धार्मिक स्तर पर हुआ। का प्रक वलुन प्रमगा के प्रमगन कृष्ण दाम कावराज ने उस ही उपलक्ष्य करना चाहा। नारायण भट्ट बलदेव विद्या भूषण एवं विठ्ठलनाथ चक्रवर्ती प्रभृति समस्त चतुर्थमतानुयायियों का प्रयास इसी दुष्कर प्रनीत होने वाले काय को सुकर बनाना था।

इस काय को लीला का प्रकट और अप्रकट<sup>१</sup> विशेषता का माध्यम से सम्पन्न किया गया। श्रीकृष्ण के वपु लीला घाम परिकरानि का स्वरूप प्रकट भी है अप्रकट भी। इस प्रकट और अप्रकट में कोई भेद नहीं है। दोनों स्वरूपत एक ही हैं। श्री कृष्ण की अचिन्त्य प्रकृत गति के द्वारा युगपत् यह प्रकट और

१ तदेव तस्या मूलगतीस्त्रयात्मकत्वे सिद्ध येन स्वप्रकाशतालक्षणेन तदवतिविशेषेण स्वरूप स्वयं स्वरूपगतिर्वा विगुष्ट आविभवति तत्र विगुद्ध-सत्त्व । यही—पृ० १६१ ।

२ जी गो० श्रीकृष्ण-सदभ पृ० ४०४—' श्रीकृष्ण लीला निविद्या अप्रकटरूपा प्रकटरूपाच ।

अप्रकट धाम और लीला विस्तारित होती हैं ।

धाम

बकुण्ठ गोलोक आदि धामों की चर्चा ब्रह्मण्यों के शंभु पहले म ही होनी चायी है । जीव गोस्वामी ने इ ही का चतुर्गतापूर्वक उपयोग करते हुय पुराणादि के अनुसार ही मण्डि के लोको आदि का चर्चा करते हुय बकुण्ठादि धामो म गानाक को सर्वोच्च धाम माना ।<sup>१</sup> यही गाकुन भी है—तदेव गालाक ब्रह्मण्यत्वा तस्य गाकुलन सदाभेदमाह ।<sup>२</sup> यह गालाक भी श्री कृष्ण के समान ही प्रापचिक और अप्रापचिक (प्रकृत और अप्रकृत) वस्तुओ म प्राप्त हाता है तथा नाना रूपो म व्यक्त हाता है ।<sup>३</sup> जब भगवान प्रकृत जगत म अपने स्वरूप को प्रकट करत हैं तभी धाम भी परिवर समत प्रकट हाता है पर तु भगवान के महान ही वे अपने अप्रकृतत्व का कभी नहीं खात क्याकि धाम परिवर आदि भगवान के समान ही शुद्ध मत्व के प्रकाश हान के कारण माया प्रकृति स पर होते हैं । कृष्ण दाना ही स्थानो पर विराजमान रहत है । वास्तव म जैसे भगवान विग्रह की कल्पना नराकार रूप म हुई है वस ही धाम की कल्पना पौराणिक स्थानो के आधार पर ही इस सम्प्रदाय म हुई है । गालाक (अप्रकटधाम) म बसो ही नदी वृक्ष कुज तथा गापी गोपी आदि की कल्पना की गयी है जसी इस लाल की पौराणिक कथाओ म ब्रह्मण्यित है । दोना प्रकार के धामो म अन्तर रहता ही है कि ताक कुलवन म कृष्ण एकट और अप्रकृत दोनो रूपो मे रहत हैं पर अप्रकृत गोलोक म बवन अप्रकृत रूप म हा विद्यमान हैं । यदि कोई यह कहे कि एक ही साथ धाम की यह दुरी सत्ता नहीं हा सकती ता जीव गोस्वामी का जवाब होगा कि जस एक ही श्री विग्रह बहुत रूपो म प्रनागित हा सकता है वस हा धाम भी अनन रूपो म समानगुण और नाम से प्रनागित हा सकता है । इस प्रकार गालाक गाकुलधारभेदेनकोकनम ।<sup>४</sup>

धाम सबधी एकता के प्रतिपादन के पश्चात भी एक समस्या जीव

१ जी० गो० श्रीकृष्ण-सदभ पृ० ३६६—तदेव सर्वोपरि श्रीकृष्ण लोको स्ताति सिद्धम ।

२ वही पृ० ३६६ ।

३ स गोलोक सबगत श्रीकृष्णवत सब प्रापचिकाप्रापचिकवस्तु रूपायक महान भगवद्रूप भूत एव ।

—जीव गोस्वामी श्रीकृ० सदभ पृ० ३६६ ।

४ वही पृ० २७१ ३७१ के आधार पर ।

५ वही पृ० ३७४ ।

गोस्वामी व सामने शेष थी कि वृष्ण की पौराणिक लीला बचन गोकुल (वृंदावन) ही नहीं मथुरा एव द्वारका व साथ भा घनिष्ठ रूप से संबंधित है। अतः जीव गोस्वामी ने प्रकाश भूत से वृष्ण-लोक व तीन रूप मान हैं—द्वारका मथुरा और वृंदावन। इन तीनों घामा में लीला परिकरादि भी तीन प्रकार के हा जाते हैं।<sup>१</sup> प्रकाश भेद से तात्पर्य है कि भगवान के जिस रूप में जमी नीना जहाँ पर है उसी के अनुसार अंतर हो जाता है। य घाम मात्र ऐसे स्थान नहीं हैं जहा भगवान की प्रतिभा स्थापित हा या जहा पर परम शक्त का सूक्ष्म रूपत्व हा बल्कि भगवान के साक्षात् निवासस्थान हैं तथा ये प्रपचातीत नित्य अलौकिक एव भगवान नित्यास्पद हैं। इन तीनों घामा में भी वृंदावन लीला ही सर्वोत्तम है। यणी पर माधुय अपने विशुद्ध रूप में है ऐश्वर्य से आच्छन्न नहीं है।

भगवत सत्त्व में जीव गोस्वामी ने माधुय को ह्लादिनी शक्ति का हा एक पक्ष बताया है। माधुय की अभिव्यक्ति के लिये ही वे यहा सुन्दर किंगोर रूप में रहे। अपनी समस्त प्रकट लीला में तो वे यहा किंगोर रूप में रहे ही<sup>२</sup> उसके बाद वृंदावन में अप्रकट लीला में वे किंगोर रूप में ही विद्यमान हैं। इसानिय किंगोरावस्था को ही लीला की वास्तविक वय मानना चाहिये। चू कि यह वय वृंदावन में ही है अतः वृंदावन का ही सर्वश्रेष्ठ घाम मानना होगा।<sup>३</sup> गोकुल व्रज और वृंदावन को इस सम्प्रदाय में समानाथन रूप में प्रयुक्त किया गया है।

## लीला

पौछे हम भगवान की प्रकट और अप्रकट लीला<sup>४</sup> की चर्चा कर आय है और यह भी कहा था कि गौडीय वष्णव विवेचन में लीला के इन दो रूपों की धारणा अत्यधिक महत्वपूर्ण है। दोनों ही लीलाएँ नित्य हैं बल्कि यो कह कि एक ही लीला दो रूपों में प्राकृत जीव की सामाग्रा के कारण यक्त होती है। माया शक्ति-बद्ध जीव के लिए लीला अप्रकट है पर अपने साधकों के

१ वही पृ० ३७ (सब लोकस्तत्त्वलीला परिकरभेदेनागभेदात् द्वारकामथुरागोकुलाहपस्थानप्रयात्मक इति निर्णयितम्।

२ अत्र पूरुणकिंगोरव्यापि-देव व्रज प्रकटलीलारोपा जीव गोस्वामी  
—श्रीकृ० स पृ० ४२१।

३ (क) श्रीमदवष्णव सिद्धांतरत्न सप्रह राधा गोविंद नाथ  
(हिंदी अनु० हकीम श्यामलान) पृ ७५।

(ख) एत० के० दे० व० क० मू० २६४ २६४।

४ श्रीकृष्णलीला त्रिविधा अप्रकट रूपा प्रकट रूपा च

—जी० गो० श्रीकृ० स० प० ४ ५।

ऊपर क्या दया तथा प्रेम के कारण वह प्रकट होती है इस प्राकृत जगत में भी अप्रकट-लीला प्राकृत जगत और उमक विषया से एकदम अस्पष्ट रहती है—प्रापचिक् लोकस्तदवस्तुमिद्वामिथा ।<sup>१</sup> उसकी निरन्तरता के बारे में जीव गोस्वामी का कहना है कि काल के समान यह भी आदि मध्य और अखसान में रहित स्वप्रवाहा है—कालव्यादिमध्यावसान परिच्छेद रहितस्वप्रवाहा ।<sup>२</sup> इस लीला में भी यादवेन्द्रक ब्रजयुवराजत्व आदि बन रहते हैं (मानो कि ब्रज द्वारका आदि के पौराणिक चरित्र नित्य अप्रकट आता में भी विद्यमान ब्रता कर समस्त पौराणिक लीला का दबीरदरा बना दिया गया) । प्रकट लीला भी भगवान् के विग्रह के समान ही कालादि में अपरिच्छिन्न है पर स्वरूप गति की इच्छा के कारण आरम्भ और अन्त भी प्रतीत होता है प्राप्त होता है प्रापचिक् और अप्रापचिक् के मिश्रण के साथ ही कल्प के जन्म मृत्यु आदि की बातें भी आभासित होती हैं ।<sup>३</sup>

अप्रकट लीला पुन दो प्रकार की है—मन्त्रोपासनामयी तथा स्वारमिकी । इनमें से प्रथम एक स्वान विषय में सीमित नियत स्थिति की एक उमी उमी मन्त्र ध्यानमयी होती है । यानी कि जिस मन्त्र का ध्यान होना है उमी के अनुसृत्य स्वरूप धाम एव परिवर्त होता है । इस प्रकार भगवान् की विराट लीला बहुत सीमित एक पक्ष विषय में ही साधक को अनुभूत होती है । (मन्त्रोपासनामयी लीला ही मानो भक्ति के क्षेत्र में साधन या यधी भक्ति है) । स्वारमिकी लीला में भगवान् स्वयं प्रेम एवं उपासना अपनी अन्त लीलाएँ भक्त के लिए प्रकट एवं सुखम कर देने हैं । मन्त्रोपासना की भी पयवमति स्वारमिकी में ही सकती है (जैसे कि यधी रानानुगा में परिणत हो जाती है ।) अन्य स्वारमिकी अप्रकट लीला का कोई एक नियत स्थान या समय नहीं है यह यथावसर विविध स्वेच्छामयी जाती है । अपने नाना लीला प्रवाह रूप में यह गंगा की धारा के समान होती है जबकि एक-एक लीलावती मन्त्रोपासनामयी उस एक विसी हूँ (मरोवर) या हूँ य गी के समान होती है जो मुख्य धारा से मभूत है<sup>४</sup>)

१ जी० गा० श्री कृ० सं० पृ० ४०४ ४०५ ।

२ वही, पृ० ४०५ ।

३ जाव गोस्वामी श्रीकृष्ण-सदभ, पृ० ४०५ ।

४ वही, पृ० ४०५ ।

५ वही, पृ० ४०६ ।

(क) मन्त्रोपासनामयत्वे वि स्वारमिकीयमेव पयवमति ।

(ख) यथावसरविविध स्वेच्छामयी स्वारमिकी ।

(ग) तत्र नानालीलाप्रवाहरूपतया स्वारमिकी पयोव । एककलीलात्मतया मन्त्रोपासनामयी तु सम्यततत्सम्भव हृदयानि रियाजेया ।



पौराणिक कृष्ण लीला के सदभ म उपयुक्त विवेचन से सबधिन एक प्रश्न उठाया जा सकता है कि जब स्वरूप घाम परिवर आति सब एन हा हैं नित्य हैं तब वृत्तवन से मथुरा चले जाने पर कृष्ण का गोप गाविया म वियाग अथवा द्वारका नीना की समाप्ति पर यात्रा म विद्युक्ति को कम समुचित ठर्राया जाय ? जीव गोस्वामी का जवाब होगा कि वास्तव म प्राकृत प्रकट रूप म ही यह वियोग है अप्रकट रूप म वनी नित्य भिन्न और विन्न ही है । एक ही स्वरूप अनक प्रकार प्राप्त करता है और प्रकाश भ म अभिमानभ (सबध भेद) तथा क्रिया भेद हो जाता है जा अलग अलग भी मत्य है तथा एक ही समय म भगवत स्वरूप अनेक रूपा म अलग अलग प्रकाशिन होकर अलग अलग लीला म भो कर सकता है । अत जब एक प्रकट लीला म वियाग है तब उसा समय अप्रकट नीना मेसयोग की स्थिति भी वनी रहती है । और यह सब भगवान की अचि त्य गति क कारण है । यह ध्यान रहे कि गौडीय वृष्णवा म अचि त्य वट्टम्प का है जिमका प्रयोग प्रत्येक विरोध की गान्ति क लिए वे कर लन हैं ।

## परिवर

पछे हम घाम की चर्चा म परिवर क सिद्धान्त को स्पष्ट करते हुए कह चुक हैं कि परिवर स्वरूपगति का ही प्रकार है । म सिद्धान्त क अतमत ही गोकुल मथुरा एव द्वारका के परिवर की साधकता घाम के साथ ही सिद्ध की गयी है । रूप गोस्वामी के परिभक्ति रसाभूत मिधु एव नोनमणि म इस परिवर को ही विभिन्न प्रकार के भक्तिरमा म अतभुक्त करने का पाण्डित्यपूर्ण एव निपुण प्रयास किया गया है । यह भी क्ता जा चुका है कि भगवान स कान्ता भाव का सबध हा सब अठ माना जाता है—माधुय गुण ही भगवान की ह ला त्ति गति म सबधिन ाना है । एमी स्थिति म एक प्रश्न उठता है कि पौराणिक नीला म कान्ता भाव को अपनाने वान विविध पात्रा का जो वगन मिलता है उनम मात्र गाविया का कम अठ है ? द्ज म गाविया मथुरा म कुजा और द्वारका म कृष्ण की १६०८ महिपिया ३ त्रिनम ८ पट्ट महिपिया भा हैं—सभी कृष्ण की पति या प्र भा रूप म चाहती हैं अत उनम पराण द्वारा स्थापित गोपीभाव की अठना का कम वनाय रखा जाय ?

गोपाय तत्व-व्याख्यान क्त्वा दो प्रकार स उत्तर दे सकत हैं । प्रथम उत्तर ता स्वनाया परकाया भाव क छापर पर लिया जा सकता है । कृष्णनास कविगत ३ कृष्ण म्मा न्ज म उत्तर लिया या कि —

परकीय भावे अति रसेर उल्लास  
 ब्रज बिना इहार अयत्र नाहि वास  
 ब्रजवधूगणर इह भाव निरवधि  
 तार मध्ये शीराधार भावेर अवधि

च० च०, आ० ली० परि० ४

यदुनन्दन ने अपने कर्णानन्द मे भी परकीयावाद को ही मृत्यता दी। उनका अनुसार तो जीव गोस्वामी का भी वास्तविक तात्पर्य परकीयाभाव से ही था। प्रागे चलकर जीव व श्यामानन्द एव श्रीनिवास ने भी परकीयावाद को ही महत्त्व दिया है। श्री निवास की शिष्य परम्परा म राधा मोहन ठाकुर न तो मुनिदावाद के नयाव जपर अली के दरवार म बहते है स्वकीयावादियो को बिल्कुल निरस्त कर दिया था। इस सबध मे गीला भट्टारिका के य कौमार हर एव रूप के प्रिय सोऽय वृष्ण <sup>१</sup> का बहुधा परकाया-समथन मे उल्लेख किया जाता है परतु वास्तव म इनकी 'याग्या स्वकीयात्व के आधार पर भी की जा सकती है। इस परकीयावाद को विश्वनाथ चक्रवर्ती ने अपने ग्रंथों एव टीकाओं मे पूरी तरह स्थापित कर दिया था। परतु प्रारम्भ म रूप एव जीव की विचार पद्धति स्वकीयावाद के ही पक्ष म थी। यद्यपि उज्ज्वल नीलमणिकार ने परकीया म शृंगार के परमोत्कप की बात कही है फिर कुछ स्पष्टीकरण करते हुए बताया है कि इस भाव की हानता केवल प्राकृत नायके के सदम म ही है रमनियसिस्वादायम अवतारी वृष्ण व प्रसंग मे यह लघुत्व को प्राप्त नहीं होता। वास्तव मे परकीया सूत्र का कथन एव उसका स्पष्टीकरण ठीक भागवन की ही परम्परा म है। भागवत म गोपियो का वरण बहुधा कया या परस्त्री के रूप म हुआ है—रास व समय वृष्ण की मुरली के स्वर से गृहीतमानस गोपियो अपने सार घर गृहस्थी

१ बाह्यायबुभये ताहा स्वकीया वलिया।

मितरेर अयमात्र केवन परकीया।

श्री जावर गभोर हृदय बुभिया।

बहिर्लोक वार्तालिपे स्वकीय वलिया।

—यदुनन्दन कर्णानन्द, पृ० ८८।

२ रूप गोस्वामी पदभावली श्लोक ३८२ ३८३।

३ अयत्र परमोत्कप शृंगारस्य प्रतिष्ठित (१७)

—उ० नी० म० पृ० १४।

४ लघुत्वसूत्र यत प्रोक्त तत् प्राकृतनायके न कृष्णे रमनियसिस्वादायम वतारिणि। वही पृ० १४ १५।

पौराणिक कृष्ण लीला के सदभ म उपयुक्त विवेचन से सत्रयिन एक प्रश्न उठाया जा सकता है कि जय स्वरूप घाम परिवर घादि सब एन ही हैं नित्य हैं तब वृ दावन से मधुरा चले जाने पर कृष्ण का गोप गापिया म वियाग अथवा द्वारका लीला की समाप्ति पर यात्रा स वियुक्ति को कम समुचित ठहराया जाय ? जीव गोस्वामी का जवाब होगा कि वास्तव म प्राकृत प्रकट रूप म ही यह वियोग है अप्रकट रूप म वनी नित्य मितन और विहार ही है । एक ही स्वरूप अनेक प्रकाश प्राप्त करता है और प्रकाश भेद म अभिमानभेद (सबध भेद) तथा क्रिया भेद हो जाता है जा अलग अलग भी मत्त है तथा एक ही समय म भगवत स्वरूप अनेक रूपों म अलग अलग प्रकाशित होकर अलग अलग लीला म भो कर सकता है । अतः जब एक प्रकट लीला म वियाग है तब उसी समय अप्रकट लीला म संयोग की स्थिति भी वनी रहती है । और यह सब भगवान की अचिंत्य शक्ति व कारण है ।<sup>१</sup> यह ध्यान रह कि गौडीय वृष्णवो म अचिंत्य वट्टट्टम्प-काड है जिनका प्रयाग प्रत्यक विरोध की शक्ति क लिए वे कर लन हैं ।

### परिकर

पौछे हम घाम की चर्चा म परिकर क सिद्धान्त को स्पष्ट करते हुए कह चुक है कि परिकर स्वरूपशक्ति का ही प्रकाश है । हम सिद्धान्त के अतगत ही शाकूल मधुरा एव द्वारका क परिकरो की सायकता घाम के साथ ही सिद्ध की गया है । रूप गोस्वामी के हरिभक्ति रसाभूत सिधु एव नीनमणि म इस परिकर की ी विभिन्न प्रकार के भक्तिरमा म अतमुक्त करने का पाण्डित्यपूर्ण एव निपुण प्रयास किया गया है । यह भी कहा जा चुका है कि भगवान से काता भाव का मवध हा सब श्रेष्ठ माना जाता है—माधुय गुण ही भगवान की ह ला दिनी शक्ति म मवधित होता है । ऐसी स्थिति म एक प्रश्न उठता है कि पौराणिक लीला म काता भाव को अपनाने वान विविध पात्रा का जो वगन मिलता है उनम मात्र गापिया शीकम श्रुत है ? अज म गापिया मयरा म कुजा और द्वारका म कृष्ण की १६ ८ महिपिया ३ जिनम ८ पट्ट महिपिया भा हैं—सभी कृष्ण को पनि या प्रमी रूप म चाहती हैं अतः उनम पुराण द्वारा स्थापित गोपीभाव की श्रुतता का कम वनाय रखा जाय ?

गोपीय तत्त्व-व्याख्यान २सका दो प्रकार से उत्तर दे सकत हैं । प्रथम उत्तर ता स्वकाया परकाया भाव क आधार पर दिया जा सकता है । कृष्णास कविराज न बुद्ध म्मा न्ज म उत्तर दिया था कि —

<sup>१</sup> जीव गोस्वामी श्रीकृष्ण-सदभ पृ० ४०७ ४०८ ।



व काय पति पुत्र आदि को छोड़ कर कृष्ण की ओर दौड़ पड़ी थी।<sup>१</sup> उनके पति पिता माता और बंधुओं ने उन्हें बहुत कुछ रोका कि तु मी गाविन्द न उनक चित्तो को ऐसा खीच लिया था कि वे मुग्धा बालाएँ उनके राक न रकी—

ता वायमाणा पतिभि पितमिभ्रतबधुमि  
गोबिंदापाहृतात्मानो न यवतत्त मोहिता ।१०।२६।८

इस प्रत्यक्ष अनतिक्रम-सी दिखने वाली श्रौडा के प्रति परीक्षित ने सदेह प्रकट किया था कि जगदीश्वर भगवान् श्रीकृष्ण ने घम की स्थापना और अघम के उच्छेद के लिये ही अपने पूण अंग स अवतार लिया था फिर घमसेतु के वत्ता मृष्टा एव रक्षक होकर भी उहीने परस्त्रीगमन जसा प्रतीप आचरण क्यों किया ?<sup>२</sup> भागवतकार ने जो उत्तर दिया था रूप गास्वामी का उत्तर ठीक उमी की प्रति ध्वनि है। भागवतकार ने स्पष्टीकरण करते हुए कहा था कि जो गोपियो उनके पतिया और सपूण देहधारियो के अत करण म विद्यमान हैं उन सब (बुद्ध्यादि) साक्षी भगवान ने हा लीला से शरीर धारण कर भूलोक म अवतार लिया था।<sup>३</sup> अर्थात् तत्त्वत जो समस्त प्राणियो के शरीर और अत करण मे विराजमान रहकर निरंतर रमण कर रहे हैं उनक लिये परस्त्री जसी कोई चीज नहीं है और इसीलिये परदाराभिमगन जसा कोई प्रश्न ही नहीं उगता। रसनिर्घामस्वादाय अवतारी कृष्ण की बात उठाकर रूप गास्वामी ने दूसरे गदो म इस ही दुनराया है।

रूप एव जीव दोना ही विग्न स्वकीया के पक्ष म थे। रूप ने ललित माधव नाटक क १० वें अंक में राधा और कृष्ण का विवाह करवाया है। विदग्ध माधव क प्रथम अंक म भी देखत हैं कि राधा का अभिमयु गोप से विवाह सच्चा नहीं है यह बबल योगमाया का काय था। यो राधादि कृष्ण की नित्य प्रयसी है। रूप की ही विचारधारा का अनुकरण करते हुए जीव गास्वामी ने भी परकीया वाद को मायिक कर्कर नित्य प्रयसीत्व पर ही बत दिया है। उ होने स्वकीयावाद का समयन नतिक परम्परा एव रसगास्त्र दोना दृष्टियो से करना चाहा है। साहित्य-दपण में कहा गया है— उपनायक सस्थाया मुनिगुरुपत्नी गताया च। बहूनायक त्रिपयाया रती तथानुभयनिष्ठायाम। प्रतिनायकनिष्ठस्वे तद्बद्धमप्यात्र

१ श्रीमद्भागवत १० २६ ५ ७।

२ श्रीमद्भागवत—१०।३३।२७ २८।

३ गोपीनां तत्पतीनां च सर्वेवामेव देहिनाम। योत्तश्चरति सोऽप्यस्य श्रीडनेस्नेहदेहभाक्-श्रीमद्भागवत १०।३३।३६।

तियगान् गते । शृगारुनौचित्यम् ।<sup>१</sup>

भक्ति का रम मानने वान नाव गाम्वामी न यह सिद्ध करना चाहा कि गोपिया न कृष्ण का पति रूप में प्राप्त किया था जार रूप में नहीं । जार रूप का प्रयोग कबल उनके प्रमाधिक्य की एक मानसिक अवस्था विशेष का छोनक है ।<sup>२</sup> भागवत में प्राय कात्यायना व्रत<sup>३</sup> स भा जान हाता है कि कृष्ण का वर रूप में ब्रजक-याश्री ने वाछा का थी और भक्तवाछाकल्पतरु कृष्ण उनका वामनाश्री का पूरा न करे यह कममभव है । इमक अतिरिक्त सिद्धांत रमगास्त्र-सम्भता भा इम लीला की उहाने माना । जाव न अपन मूर रूप गाम्वामी क ललित माधव वाले राधाकृष्ण विवाह की ओर भी मकत किया है । जाव क अनुसार गापियों क माय न ता गोपा न कभी विवाह किया और न गोपिया का कभी स्पर्श हा किया व्रत परकीयात्व या परम्परात्व क अधम का दाप उन पर नहीं लगता । वस्तुन गोपा के साथ गापिया क मायिक गारर का ही विवाह हुआ था और माया गक्ति गारा उत्पन्न दृ क साथ ही गोपगणा का सयाग होता था । इस सबध में उहाने भागवत क इम दनाक का भी उपयोग किया है—

नासूयल्लु कृष्णाय मोहितास्तस्य मायया

मयमाना स्वपावस्यास्वानस्वान दारान श्रजौकस १०।३.२।३८

अर्थात् भगवान की माया म माहित हा जान क कारण श्रजवामिया न अपनी अपनी स्त्रियों की अपने पाम हा ममक कर कृष्णवद्र क प्रति तनिव भी शमूया नहीं की ।

इसी आधार पर उनका मत है कि यदि कभी पति प्रादि गान्धी का प्रयोग होता भी है तो उस वाहगी समभना चाहिय न कि आन्तरिक ।<sup>४</sup> इसी प्रकार पोछे उद्धत भागवत क श्लोक (१०।२१।८) म प्राय पुत्र गान्धी क वार म उनका कहना है कि यह दूमर क पुत्रा क निग है क्योंकि पुत्रवना मी क साथ भी प्रेम सबध रम गास्त्र की दृष्टि स परिपक्व नहीं हो पाता । इस प्रकार भागवत क प्रमगा का

१ साहित्य टपण ततोय परिच्छद श्लोक २६३ २६४ (श्रीलम्भा चारणसो १६५७) ।

२ जीव श्रीस्वामी श्रीकृष्ण सदभ, पृ० ८२८ ।

३ श्रीमद्भागवत—१०।२२।४ ।

४ जीव गोस्वामी श्रीकृष्ण सदभ, पृ० ४२६ ।

५ अचिन्ताभरेय तेषुपत पतिगार प्रयुक्तस्तद्विहसो क ध्यवहारन एव  
—नातदृष्टित वही पृ० ४ १ ।

अपने अनुकूल अथ करत हुए जीव गोस्वामी की सम्मति है कि मायिया उनकी स्वरूपगति का प्रकाश है नित्य प्रयत्नी है उनका साथ कृष्ण का मलय मलिय अथमपूण यमिचार का काय नहीं है । रूप गोस्वामी व पीछ उद्धत नाना की टीका म भी इस सवध म उ होने विस्तत विवेचन करक यही को है—तत्र श्रीकृष्णन तामा नित्यदास्पत्य सति परकीयात्व च मायिक सति ।<sup>१</sup>

ऊपर क विवेचन स यह स्पष्ट है कि जाव और रूप दाना मास्वामी पर कीया भाव क समथक न थ । परकीया का उल्लेख उ ह राजा कृष्ण एव कृष्ण मायिया क परम्परा प्राप्त न क कारण करना पडा था । कृष्ण नाम कविराज ना पाछे हमने परकीया नमथक रूप म उद्धत किया है पर आति नाता क चतुथ परिच्छेद म ऐस सकत मिल जात है कि वकृष्ण लाला म उपपति भाव का प्रचार नहीं है —

वकृष्णोद्य नाहि य लीतार प्रचार ।  
स सेलाला करिव पाते मोर समत्कार ।  
मो त्रिषय गोपीगणेर उपपति भाव ।  
योगमाया करिबेन आपन प्रभाव ।

सभवत परकीया भावना सहजिया वक्षणो की देन है । प्रारम्भ म कृष्णान गोस्वामिया न इस पूण गान्धीय प्रतिष्ठा नहीं मिलने दी परतु उनके पचात परकाया भावना एस सम्प्रदाय म पूणरूपेण स्वीकार कर ली गयी ।

अस्तु एस उपयुक्त प्रसगातर क पचात हम फिर अपने मून प्र न की ओर घात है कि क्या कृष्णान की ब्रज गोपरामाण को इतना महत्वपूण स्थान मिला । कमक निय एक तक ता परकायावात् का है जो प्रारम्भिक गोस्वामियो का बहुत दूर तक माय नहीं है । जीव गोस्वामा न एक तक और दिया है । भगवत सदभ म उहान भगत तत्त्व की स्वरूपगति को उनका लाना सहायिका माना है और वहाँ उसका नाम लक्ष्मी वतलाया है लक्ष्मी का भू रूप पृष्टि आति आति विनिष्टता रूपा त्रिप्रो का भी चर्चा की गयी है । द्वारका मथुरा म स्वरूपगति मटिपी नाम म अभिहित हावी है । इनम से रत्नमणो स्वय लक्ष्मी है तथा आठा पट्ट मटियिया स्वरूपगति की ही अ य पन्सू भू कृपा आदि है । सामूहिक रूप स व तन्मा म एकात्म है पर तु गोकुन म कृष्ण की स्वरूपगति का प्रकाशन ब्रजविया क रूप म हमा है । व कृष्ण का उद्धतम ह नाि ना गति

१ उ० नी मणि पृ २ ।

२ जीव गोस्वामी श्रीकृष्ण सदभ पृ ४५६ ४४२ ।

का विषय अभिव्यक्ति है। इसलिए मथुरा एवं द्वारका की भक्तिविषया म श्लेष है।<sup>१</sup> व सत्र का सब वृन्दावन-सदस्यो हैं—श्री वृन्दावन लक्ष्म्यभवेता एवति।<sup>२</sup> गापाल तापना उपनिषत् म गापिका को आविष्टा कला प्रेरक कहा गया है।<sup>३</sup> मका ध्याय्या करत हृण नक्षक न कर्ता है आ का अर्थ है सम्यक् विद्या परम प्रेम रूपा है और कर्ता उनही वृत्तिरूपा है।<sup>४</sup> ह लादिनी की तत्तत श्रियाया म प्रवतक हैं ब्रज वधुण—<sup>५</sup> मनिए तास्तु नित्यसिद्धा एव। ह तात्त्रिणी की मारवृत्ति प्रेम है और उमा क रममार विषय का उनम प्राधाय है एव मसीलिष उनका प्राधाय है—

‘आता महत्तत ह तात्त्रिणी सारवर्त्तिविशेषप्रेमरससारविशेष प्राधायत।’<sup>६</sup>

य गापिषा ध्यान चिन्मय रस प्रतिभाविता कही गयी है। अतएव एम प्रेम प्राच्युय क प्रकाश ह्नुं श्री भगवान का भी एतम परमास्तास प्रकाश होता है एम उमा म भगवान म रमणच्छा प्रादुभूत होती है।<sup>७</sup> एम प्रकार एक भिन्न दार्शनिक आधार पर ब्रज दक्षिणा की उच्यता प्रतिपादित की गया है।

परन्तु समस्त ब्रज विषया का नित्यसिद्धा या नित्यप्रिया मान तन पर एम अमगति सामन ध्याती है। जीव का तटस्थानवित क अतगत रखा गया है एव नित्यसिद्धा गापिषा स्वल्पगति क अतगत नित्य सहचरी हा जाती है। एमी स्थिति म गापीभाव की साधना क क्या अर्थ शेत है ? दूसरे शब्दा म हम यह भवन है कि नित्य सिद्धत्व साधना की वस्तु नहीं है। इस असगति स वचन क लिए गापिषा क साधनपरा दक्षी और नित्यप्रिया नीन भद किय गय है।<sup>८</sup> पूर्वजन्म की साधना म जो भक्त जन गापीन्ह पान हैं क साधनपरा गापिषा है। इनक अनक भक्त किय गय हैं पर उम विस्तार म हम नहीं जाना। पर साधना शारा गापीभाव की प्राप्ति एम प्रकार स्वीकार कर ली गयी है। जब जब कृष्ण भग रूप म देय यानि म जन्म तत है तब-तब उनक सतोप साधन क लिए नित्य प्रियाया क भगों का भी जन्म होना है, यही श्रिया है। कृष्ण के ब्रज प्रवतग्य

१ जीव गोत्वामी श्री कृष्ण मदम पृ० ४४२ ८४४।

२ यही , पृ० ४४३।

३ यही, , पृ० ४४३।

४ यही पृ० ४४३।

५ ध्यान-दक्षिणधरसप्रतिभाविताभिरिति। अतएव तन प्राच्युयप्रकाशेन श्री भगवतोऽपि तानु परमोस्तासप्रकाशो भवति येन तामो रमणच्छा जायत।  
—यही पृ० ४४ ४४४।

६ उ० नो० मणि पृ० ६३।



म यही देवियाँ गोप कन्याओं के रूप में नित्य प्रियामा की प्रिय सखी स्थानीय होती हैं।<sup>१</sup> इस प्रकार देवी के रूप में सखी भाव का इन सागाने स्थान लिया। साधनपरा के प्रकार में गोपीभाव को महत्त्व मिला। यह ध्यान रहे कि साधनपरक गोपी तत्व ही जीव का साध्य है नित्य प्रिया गोपीत्व कभी भी साध्यवस्तु नहीं है यह नित्य सिद्ध है। यो सब मिलाकर उस सम्प्रदाय में साधना की दृष्टि से गोपीभाव की अपेक्षा सखी भाव का ही उत्कृष्ट है।

## राधा

पीछे हम कह चुके हैं कि गोपी लीला एवं राधा लीला की दो परंपराओं का समन्वयन गौरीय कृष्णों ने किया है। इस समन्वय में राधा प्रमुख हो उठी हैं एवं अन्य गोपियाँ उन्हीं की अग्रभूता या अग्ररूपा हो गयी हैं। रूप गोस्वामी ने नित्यप्रिया हरि बल्लभाओं के नाम गिनाने हुए बताया—

तत्रापि सवधा श्रुत राधा चन्द्रवलीत्पुम  
ध्रुवयोस्तु ययो सति कोटिसख्या मगोदरा<sup>१</sup>

इन सब श्रुत राधा और चन्द्रवली में भी उनके अनुसार गुणों में प्रति वरीयसी एवं महाभाव स्वरूपा राधा ही सर्वाधिका हैं—

तयोरत्पुमयोमध्ये राधिका सवधाधिका  
महाभावस्वरूपेय गुणरतिवरीयसी ।<sup>१</sup>

इसी में मिलती जुलती बात जीव गोस्वामी ने भी प्रतिपादित की है। उनके अनुसार इन परममधुरप्रमवत्तिमयों में भी राधा ततमारान्गोद्रेकमयो हैं राधिका में ही प्रेमोत्कृष्ट की पराकाष्ठा दिखायी पड़ती है। ऐश्वर्यादि समस्त शक्तियाँ इस प्रमवत्तिमय का अनुगमन करती हैं अतः वदावन में श्री राधिका

१ देवेष्वनेन जातस्य कृष्णस्य दिवि तट्टये  
नित्यप्रियाणामगास्व या जाता देवयोः ॥ ५० ॥  
अत्र देवावतरण जनित्वा गोपकन्यका  
अग्निना नामवासा प्रियसहयो भवन्नज ॥ ५१ ॥

म ही स्वय लक्ष्मीत्व है ।<sup>१</sup> यानी कि ह लादिनी का सार प्रेम प्रेम का भी सार भाव और भाव की भी पराकाष्ठा का नाम महाभाव है । और राधा टकुरानी यही महाभावस्वरूपा हैं ।<sup>२</sup> तात्त्विक दृष्टि से व भवगति वरीयसी ह लादिनी गति ही है ।<sup>३</sup> तथा भगवत रति का परिणति के सर्वोच्च गिखर महाभाव की साक्षात विग्रह है । व प्रेम का साक्षात स्वरूप है उनका वह प्रेम से विभावित है व कृष्ण की प्रेयसा है यह समस्त ससार म विदित है । कृष्ण का रसपान कराव व पूण काम करती हैं ।<sup>४</sup> वास्तव म लक्ष्मीगण महिषागण एव ब्रज देवागण उही का भग हैं । उनम ब्रज देवागण आकार भेत् स राधा की हा कामब्यूह रूप हैं । य रस का कारण हैं उही की महायता स राधा कृष्ण का रसपान करती हैं । राधा पूणगति है कृष्ण पूणगतिमान है । कृष्णम कविराज न तो यहा तक कह लिया है कि व रास्त्र म एक ही है लीला रस के आस्वादन व लिय ही दो रूपों म वह प्रकट हुए हैं —

राधा पूणगति कृष्ण पूणगतिमान  
दुइ वस्तु भेत् नाहि गिखर प्रमाण  
राधा कृष्ण एक मदा एवइ स्वरूप  
लीला रस आस्वादिते धरे दुइ रूप ।<sup>५</sup>

१ तदेव परममधुर प्रभवृत्तिमयोपु तास्वपि तत्सारान्गोद्रेकमयो  
श्रीराधिका तस्यामेव प्रेमोत्कषपरिकाष्ठाया दग्निनत्वात् तत्  
प्रेमवर्णित्यथ एवमादिरूपा आया गतयो नात्पाहा अप्यनु  
गच्छतीति श्रीव वाचन श्री राधिकायामेव स्वय लक्ष्मीत्वम ।

—जीय गोस्वामी श्रीकृष्ण सदभ पृ० ४४४ ।

२ ह लादिनी सार प्रेम प्रम सार भाव ।

भावर परमकाष्ठा नाम महाभाव ।

महाभाव स्वरूपा श्री राधा टकुरानी ।

सवगुणस्तानि कृष्णकान्ता गिरोमणि ।

च० चरि०, आ० ली० ४ परि० पृ० २४ ।

३ ह लादिनी या महागति सवगतिवरीयसी ।

—उ० नी० म०, पृ० ७५ ।

४ प्रेमर स्वरूप वह प्रम विभावित कृष्णर प्रेयसी श्रेष्ठ जगते विदित ।

च० चरि म० ली० परि ४, पृ० १४६ ।

५ यही, पृ० १४६ ।

६ च० चरि०, आ० ली० परि ४ पृ० २४ २५ ।

वन पर है यही अचि त्य भेदाभेद है ।

पीछे हम कह चुके हैं कि भगवत सदम म भक्ति को भी ह लादिनी गक्ति का ही एक पक्ष माना गया है । राधा भी ह लादिनी है । भगवान का स्वरूप रसमय है । रस रसमयता का कारण = लादिनी गक्ति है । इस गक्ति के द्वारा भगवान स्वयं आप् नादित होते हैं और दूसरा का भी आह्लादित करते हैं । इस प्रकार उनका प्रवर्ग दाता और है । भगवान के साथ वह लीला सहचरी बन कर उन्हें रसास्वादन कराती हैं तथा भक्त के हृदय म भक्ति बन कर भगवत आनन्द म उसे लीन कराती हैं । चूँकि ह लादिनी की सारभूत विग्रह राधा है अतः राधा का भी दाता पक्षो म प्रवर्ग गोस्वामियो न विवेचित किया है—

ह लादिनी कराय कृष्ण आनन्दास्वादन  
ह लादिनी द्वाराय करे भवतर पोषण ।<sup>१</sup>

वस्तुतः इन तत्त्व विवचना ने एक ओर उन्हें कृष्ण की नित्य प्रियतमा के रूप म अष्टतम स्थान पर पहुँचा दिया दूसरी ओर भक्ति के क्षेत्र म सबश्रेष्ठ भक्त भी कह दिया । इस हम या भी कह सकत हैं कि राधा की प्रतिष्ठा स्वरूप गक्ति की अष्टतम वक्ति के रूप म भी की गयी भगवान के प्रति पाच मुख्य भाव सबधा म भी अष्टतम कातारति के अष्टतम रूप समर्था रति की अत्यतम प्रतिनिधि भी व ही मानी गयी और प्रेम भाव के विकास की अष्टतम परिणति महाभाव के साथ उन्हें एकार्म ल्पित कर सब अष्ट भक्त भी सिद्ध कर दिया गया । इस प्रकार व सर्वोच्च गक्ति है सर्वाधिक मधुर वान्ता हैं और सब अष्ट भक्त हैं ।

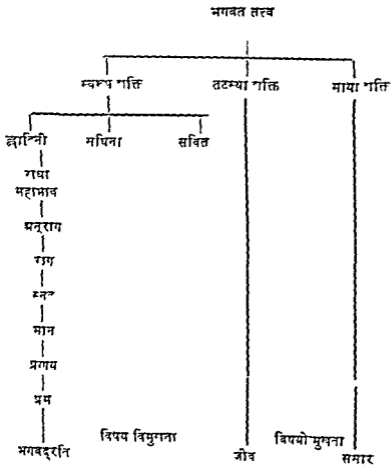
१ जीव गोस्वामी श्रीकृष्ण सबभ पृ० ४४७ ।

२ अतः सदतो पि सा आनन्द चमत्कारकरश्रीकृष्णप्रकाशे श्रीवन्दा यनपि परमादभुनप्रकाशे श्रीराधया यगलितस्तु श्रीकृष्ण इति ।

—वही पृ० ४४७ ।

३ च चरि० आदि लीला परि० ४ पृ २४ ।

एसा भक्ति है जहा पर कि अय मायका की पहुच नहीं हा सकती । राधिका की रम अवस्था का आण दिय गय चाट म भली भाति समना जा सकना है



## सखी

भारतीय प्रेम काय की एक अनिवाय रूति के रूप में सखी की सत्ता सदब माय रंगी है। एवं जिस प्रकार प्रेम काय की रसनिभर नायिका राधा घम और दान के सिंहासन पर भली भाँति आसन हो जाती है वम ही सखा भी साधना कौशल्य में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान को प्राप्त करती है। लगता है कि सखी भाव धीरे धीरे जड़ पकड़ता जा रहा था एवं १६वीं शताब्दी में अनेक सम्प्रदायों में प्रचलित हो पट पडा। हरिदासा राधावल्लभों एवं चतुर्थ सम्प्रदाय इसके प्रारम्भिक उत्सव एवं बाण को तो इसने अपने समकालीन प्रत्येक सगुण भक्ति सम्प्रदाय को प्रभावित किया। पृष्ठ दार्शनिक नीति पर स्थापित पुष्टि माय भी इससे प्रसूना नहीं रहा और मयाता का स्थापक राम सम्प्रदाय तथा इसमें आकृष्ट मग्न हो गया। निगु गोपासक गुण (चरणदासी) सम्प्रदाय के बारे में तो यह कहना कठिन हो गया है कि यन्त्र निगु गोपासक है या मन्वीभावापन मधुर रस का उपासक। ऐतिहासिक दृष्टि को ध्यान रखकर केवल मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार किया जायता हवारा विचार है कि सखी भाव साधना उम शान की मानसिक आवश्यक्ता भाषी। जब लीलावतु उपास्य हो जिसके भिन्न भिन्न धामा में भिन्न भिन्न परिचरों के साथ नित्य लीलाए चल रही हो और उनमें भी नक्षत्री रुचिमणी सत्यमामा कुञ्जा या राधा जमी का नाए भी हो तब कांताभाव के क्षेत्र में अपने का भी एक प्रिया मानना अपने को कुछ खा देने ही जसा है। फिर वह नीता भी क्या कुछ कम माहक है। इसमें अतिरिक्त प्रियतमा बन सकने की योग्यता का भी तो सम्मान करना चाहिए। मामूली में किमान की बन्की भाग्य से रानी बन जाय—यह बान दूमरी है पर वन्त्रिमी तत्कालीन सामान्य बान्गाह की प्रिया बन सकने की अपनी उम समय सेविता हा अधिक बन सकती थी। ऐसी स्थिति में यदि इन मायकों में मन्वीभाव का प्रचार हुआ हा तो उम ऐतिहासिक मनोवैज्ञानिक प्रावश्यकता हा समझनी चाहिए। ऐतिहासिक दृष्टि से गोपीभाव राधा भाव एवं सखाभाव—यह विकास का अम रटा है तथा साधनागत विकास की दृष्टि से हम समझता है कि गोपीभाव का अम परिणाम राधा भाव है। राधा कृष्ण प्रियतमा हान के साथ साथ सब अष्ट भक्त भा हैं जहाँ तक कि अम भक्त पहुँच ही नहीं सकत जिसका कि दानमात्र दूमर का भक्ति का ध्यान दन वाला है। ऐसी

परम निष्ठा एक ने ही प्रति हो सकती है—इन तथ्यों \* गापियों के स्थान पर एक प्रमुख गापी राधा की कल्पना अनिवाय करा दी (चाहे वह स्वकीया हो या परकीया । रस त अतिरिक्त भक्ति क क्षेत्र म सेवक सेय भाव भी सबथा मनो वानिक है । ईश्वर अपने स बड़ा है—भल ही उम अधिक बभवशाली न कहकर सवताभावेन रसमय कह दिया जाय इससे कोई अंतर नहीं पड़ता—उसके प्रति सेवाभाव अनिवाय है । अतः जब काताभाव या मधुर रस का जार बड़ा तब उसी क भीतर स स प्रसन्नक सम्बन्ध पर श्रावत सखीभाव भी उभर कर आ गया । पुराने दास्यभाव से इसका अकुर मात्र इस बात म है कि वहा पर प्रभु म विमुक्त अधिक है यहाँ पर रसमयता प्रदान है । एक दूसरा अंतर यह भी है कि यहाँ पर सेवा म भी अंतरगता अधिक है । स्त्री पुरुष की रतिकर्तृक मध्यकालीन विश्वा एव मूर्तियों मे मभाग काल म दामिया की उपस्थिति दिखायी गया है भक्ति माधना की दृष्टि मे उनमे अंतरगता का तत्त्व और जोड़कर सखी का स्थान न दिया गया । इस प्रकार सखीभाव को साधना मधुर रस के मध्य स सेय सबक सम्बन्ध का ही पुनरुत्थान है ।

चतय सम्प्रदाय मे इन सखिया का महत्त्वपूर्ण स्थान है । यह कहना ठीक नहीं है कि चतय सम्प्रदाय म सखीभाव को पर्याप्त स्वीकृति नहीं मिली है । अय सखीभाव/पासको म जा कुछ कहा गया है उसका सारतत्त्व यहाँ पर भी विद्यमान है पर यह सब कृष्ण की समस्त लीलाश्रा उनके बारे म प्रचलित धारणाश्रा का स्वीकार करनी ही है और जिस ढाँचे क भीतर उस सबको स्थान दिया गया है उसी के भीतर ये भी हैं अतः म से इस भाव को स्फीत उर्होने नहीं करना चाहा ।

उज्वल नीलमणि म वल्लभ राधा क क गुणा म से एक गुण यह भी है कि वे सखी प्रणयानोना है ।<sup>१</sup> इन सखियों को भी रूप गोस्वामी की विष्णुपण प्रवण प्रतिभा ने पाँच भागो मे बाँटा है— सखी नित्यसखी प्राण सखी प्रिय सखी और परम श्रेष्ठ सखी । इनक नाम भी गिनाय गए हैं । परम श्रेष्ठ सखिया मे ललिता विगाखा विश्वा चम्पकलना तुगविद्या दुलम्बा रगदेवी और सुदेवी हैं य आठा सवश्रेष्ठ एव भवगुणाप्रिमा बताया गई हैं ।<sup>२</sup> तथा इनका राधा और कृष्ण दोनो के प्रति पराकाष्ठा का प्रेम रहता है । कभी राधा के प्रति यह प्रेम अधिक होता है (विश्वनाथ चन्द्रवर्ती ने अपनी टीका म बताया है कि यह समय वह है जब राधिका खण्डिता नायिका होती है) एव कभी कृष्ण क प्रति इनका प्रमाधिक्य हो जाता है (विश्वनाथ चन्द्रवर्ती क अनुसार जब राधिका मानिनी होती है) ।<sup>३</sup>

१ उ० नी० म० पृ० ६५ ।

२ उ० नी० म० पृ० ६७ एव ६८ ।

३ वही पृ ६८ ।

भक्ति है। इसका तात्पर्य है उही क अनु रूप सेवा का आवरण तथा श्रवण स्मरण आदि क द्वारा अनुरूप राग स रुचि उदबोधित करके लीला का आस्वादन। डा गणिभूषणगुप्त का यह मत य इस सम्बन्ध म दृष्ट्य है राधा प्रम ही पूण मधुर रस का रागात्मक प्रम है वह एक राधा क सिखा और कही भी सम्भव नहीं है। इस राधा की काय रूह स्वरूप हैं सखियाँ मजरीगण उन सखिया की अनुगता सवात्मासा हैं श्री रूप मजरी आि य मजरीगण भी गानाक श्री नित्य परिकर है अनुग भाव स उनकी सवा और लीला आस्वादन ही जीव का श्र पठ काव्य है। ' इस प्रकार का सेवा का ही रूप अष्टयाम की सवा और लीला मे विक सित हुआ है। चत य चरितामृत की भूमिका म श्री राधा गोवि दनाय न सखियो एव म श्रियो क स्वरूप को और अधिक स्पष्ट किया है। उनक अनुसार सवा क प्रकार नद स गोपिया को दो मार्गों म विभक्त किया गया है — सखी तथा मजरी। जो गोपियाँ श्री राधा की समजाताया सेवा से श्रीकृष्ण की प्रीति का विधान करती है उन्हें सखी कहत हैं। जो श्री राधा गोवि द क मिलन एव सवा का आनुकू य ही सम्पादन करना अपना प्रधान कतव्य समझती है उन्हें मजरी कहत हैं। ये राधा की शिखरी हैं एव अतरंग सेवा की अधिकारिणी हैं। अनतरंग सेवा म सखिया की अपेक्षा मजरीया का अधिकार अधिक है। मजरीगण सखीगण स यून वयस्था हैं। ये भी स्वरूप गति है। सावनमिद्धा गोपीगण सब मजरी ही हैं। मजरीवग म नित्यसिद्ध जीव भी हैं। '

हम इस बात का जोर देकर कहना चाहन हैं कि चत य सम्प्रदाय म भाग वत का गोपिया की नित्य प्रमसा वान रूप को साधक की साधना क स्तर पर स्वाकार नहीं किया गया। राधाभाव स भजन का ता वाई प्रान ही नहीं उठना साधक क लिए लाना का आस्वादन ही रह जाता है और उसके लिए सखिया क भाव का अनुगन हाना पडता है। परिकर क रूप म इस लीला का स्मरण और लीला का आस्वादन—यहा गौडीय भक्ता का परम साधन और माध्य है। गौडाय वष्णव भक्तिरस दान म सखिया का कितना महत् पूण स्थान है इस बात पर श्री मुगलकुमार क इस वक्त य का उद्धत करके हम इस अंग को समाप्त करेंगे। डा द क अनुमार —

चत य सम्प्रदाय क धम गान (धिय लाजी) एव रस गान्ध म सखी एक महत्त्वपूर्ण ध्यति व है। बिना उनक राधा और कृष्ण की सरस एव मधुर (शृ गा रिफ) कलि न ता विस्तारित हाना है और न पुष्ट हाती है। इस कलि म सखी

१ गणिभूषण गुप्त रा० का० कि० पृ० २ ८।

२ हकीम ग्यामलान द्वारा अनूत्ति उक्त अंग क हिंदी रूप धामव वष्णव सिद्धांत रत्न सग्रह पृ० १ ३१ ४।

एव उत्तक भाव का अनुकरण करने वाल (रागागुणा ढग स) भक्त का छाडकर  
अथ किसी का प्रवग नही है।<sup>१</sup>

यही पर यह कह दना भी उचित हीगा कि प्रारम्भ म तो माधनपरा गापी  
भाव की माधना इस सम्प्रदाय म स्वीकाय रही परतु धार धोर अय सम्प्रदायो  
क प्रभाव एव राधा ने अधिक उरूप क साथ (यह परवर्ती सहजिया का भी प्रभाव  
या जा नित्यानन्द क साथ सम्प्रदाय में प्रविष्ट हा गए थ) मखीभाव का ही प्राय य  
हो गया । निया ध्यारी की जोडा का हा गत गत पना म गान लिखाइ पढन गना  
है अय गापिया मात्र मखिया क रूप में ही लिखाइ दती हैं । स्वय रूप गाम्पामा  
की पद्यावला एव उनक गिप्य माधुरीदास का माधुरी वागा' म यह अन्तर दखा  
जा सकता है । सा गोस्वामी म गापी प्रम के चित्र उपलब्ध हा जान हैं<sup>२</sup> पर  
माधुरीवाणी म स्वय वृष्ण का रात्रा-सग विहार ही वर्णित दृषा है । माधुरावाणी  
का वक्त प्रसव मिनाकर मखीमावापासका क अधिक निकट बठना है ।<sup>३</sup> इन प्रवृत्ति  
का हम आगे और विकसित हाता दृषा अठारहवीं शती क कविया म देख  
सकत हैं ।

### गौडीय वृष्ण तत्त्ववाद की रूपरेखा

- (१) वृष्ण हा परास्पर भगवत्त्व हैं । ब्रह्म और परमात्मा उनस  
हीनकाटि का अवस्थाए है ।
- (२) वृष्ण ही अवतारी ह शेष अवतार ।
- (३) वृष्ण की तीन मुख्य गतियाँ हैं—अन्तरगा स्वरूपगति ग्रहि  
रगा माया गति और तटस्थ्या जीवगति । इनम स्वरूप गति  
हा श्रेष्ठ है ।
- (४) स्वरूपगति क द्वारा हा भगवान अपनी लीला का विस्तार  
करत हैं ।
- (५) धाम परिकर लीला सब उमा स्वराज गति क प्रकार हैं ।
- (६) स्वरूपगति का तीन मुख्य वक्तियाँ—ह्लादिना सधिनी एव  
सविा हैं । इनम ह्लादिनी ही मवश्रेष्ठ है ।

१ एत० क० दे य० के० मू० पृ० १५८ ।

२ रूप गोस्वामी पद्यावली सहया १५४ १५७ ।

३ माधुरी वाणी प्रकाशन थाबा वृष्णदास कुमुम सरोवर मपुरा ।



- (७) ह्लादिनी परम मधुर गक्ति है यहा भगवान का नित्य सहचरी राधा क रूप म आनन्द देता है एव भक्ति न रूप म नीव को लीलारस का आस्वाद करा कर आनन्द प्रदान करता है ।
- (८) राधा इस प्रकार कृष्ण की सर्वोत्तम ह्लादिनी-गक्ति भा है और सर्वोत्तम भक्त भी । उनका और कृष्ण का आनन्द गक्ति और गक्तिमान का है ।
- (९) घाम गोलोक है । गालोक और गाहुल म का भेद नहीं है ।
- (१०) इस घाम का भा त्रिषा प्रकार हाता है—व आवन (ब्रज) मधुरा और द्वारका ।
- (११) प्र यक घाम का परिवर एव नीता भिन भिन है । इनम सर्वोत्तम लीला एव परिवर व दावन घाम का है ।
- (१२) लीला क प्रकट और अप्रकट दो रूप है ।
- (१३) भक्त का साध्य न ता नित्यप्रिया गापीत्व है और न राधात्व की प्राप्ति ही उमका लक्ष्य है ।
- (१४) गापीनाथ स साधना का तात्पर्य साधनपरा गापियो का अनुगत्य स्वीकार करना है ।
- (१५) राधात्व की निकटता का दृष्टि स राधा की सखी रूप म नीला का विस्तार नीला मे समाभाव और नीता का आस्वादन करन वाल का अनुगत्य है ।
- (१६) साध्य की दृष्टि से भगवान का लाला ही यहाँ साध्य है ।
- (१७) भगवततत्त्व चूनि स्वय कृष्ण है अन इस सम्प्रदाय म तात्त्विक दृष्टि स प्रधानता कृष्ण की है । यद्यपि राधा का भी पर्याप्त मान मिना है एव १७वी गती से राधा का भी कृष्ण क बरा बर स्थान प्राप्त होने लगा था ।
- (१८) प्रारम्भ म भा इस सम्प्रदाय म परकीया का कुछ न कुछ स्वा कृति प्राप्त रहा है और बाद म ता १८वी गती तक पहुँचन पहुँचत परकीया भाव का पूणतया प्रधानता मिल जाती है तथा परकायात्व क ही आधार पर गापिया कृष्ण प्रियामा म गण्ट गिनी जाती है ।
- (१९) परकाया भाव का एम स्वाकृति का परिणाम है कि इस सम्प्रदाय क कविया न प्रम-वर्णन क क्षम म विरह और उत्कटा भाव क प्रभून रमानक चित्र प्रस्तुत किए हैं ।

## इस सम्प्रदाय की साधना की समीक्षा के संक्षिप्त संकेत

- (१) कृष्ण म मवर्णित ममम्न परम्पराया का प्रात्मसात करन का प्रयत्न हुआ है ।
- (२) इनम स नो परम्पराए मुख्य है— मानवनामि पुराणा एव महाभारतानि ग्रथा मवर्णित नया एव काव्य क धर्म म राधा कृष्ण की ललित प्रमगाथा ।
- (३) प्रथम म गोपिया कृत्रा महिषिया उनकी प्रमिकाए एव पत्निया हैं दूसरी म राधा । प्रथम म सर्वोत्तम प्रेमिया (स्मिन्ने भक्त भा) गापिकाए हैं एव दूसरा परम्परा म इस पद की निर्विवाद रूप म अधिकारिणी श्री राधा ह ।
- (४) अपने समवेय म इस सम्प्रदाय क आचार्यों ने पहल तानो धर्मो ब्रज मथुरा एव द्वारका—म ब्रज का गापिकाया का श्रेष्ठ माना श्रीर फिर इन गोपिकाया म भा राधा का सर्वोच्च स्थान प्रदान किया ।
- (५) पर इन समवेय क बावजूद का प्रकार की साधनाया क आदना मायक क सामन उपस्थित हान ह —
  - (क) पहला आदना ता गापिया का है पर इहें स्वरूपगति का जा चुका था अत मात्नपरा गापिया क भाव का अनुमान करन का आशं दकर गापीभाव का साधना का परम्परा सुरक्षित रखा गया ।
  - (ख) राधावात् का प्राधा यद देने क दाद जिस साधना-पद्धति का उदय हुआ उसी का मसीभाव कहा गया । कृष्ण एव गापिकाया की श्रोता नहा, राधा कृष्ण की कति का म सम्पादन श्रीर रमाम्वात्न करता ह ।
- (६) इस समवेय एव अभिनेवीकरण म उहान अपने गति मिद्वान का अत्यधिक उपयोग किया है । बिना इन गतियों की कल्पना क यह काय सम्भव हा नहीं था ।
- (७) अथ बावजूद तमाम परस्पर विराधा अग्न कालो बाता का नमाहार एव समाधान उन्नेन भगवान का अचिन्त्य गति क बन पर कर लिया है । जब अतना तक प्रवण मया वात पडिता क सम्प्रदाय का यह हाल है ता मद्दक ही यह जाना जा सकता है कि अतिजात तर्काधित या बुद्धिप्रवण न हाकर राग-परक है और इनका अज्ञ वस्तुन रहस्यपरक है । एत साधना का

प्रम रहस्यवा (Love Mysticism) का ही अधिक माना जाना चाहिए ।

### ब्रजलीला एवं निकुंज लीला भिन्नता की मानसिक पृष्ठभूमि

गौरीय वष्णव तत्त्व ज्ञान का तनिक विस्तार से उपस्थित करने का तात्पर्य मात्र इतना है कि पृष्ठभूमि में स्थित ज्ञानिक विचारधारा से परिचित हुआ जा सके । मध्यकाल के विविध भक्ति सम्प्रदायों में काव्य पुराणादि बलिष्ठ लाला का इस प्रकार ज्ञानिक स्तर पर साक्षात्पिन करने का यह प्रयास अपन भाष्य में प्रथम है । दान की दृष्टि से बल्लभ-सम्प्रदाय बहुत ही पुष्ट एवं हृत् है पर वहाँ भी लीला के बारे में ऐसा सागोपाग विवेचन प्राप्त नहीं होता । प्रागे चल कर १८वीं शताब्दी में रामारासना ने राम कथा को भी ऐसा ही मान्यता दना चाहा है (उनकी चर्चा हम प्रागे करेंगे) । लेकिन उस पर गौरीय वष्णव साक्षात्पिण्डित एवं विचारधारा का बडा गहरा और गायक प्रभाव है । गौरीय वष्णवों के ममकाचीन अथवा वृंदावनीय सम्प्रदायों ने साधना के शुद्ध व्यावहारिक घरातली और प्रपनी रहस्यानुभूतिया के आधार पर ही इस लाला का ग्रहण किया । पर लगता है कि इस सबके मूल में दार्शनिक दृष्टि लगभग वही रहा है जो गौरीय वष्णवों की थी । हमारा अनुमान है कि विष्णु भागवत पद्य ब्रह्मवत पुराणादि के माय ही वष्णवाचार्यों द्वारा कल्पित स्वरूपित से सम्बन्धित लीला का दान सामान्यतः स्वीकार कर लिया गया था । इस कारण प्रायः सम्प्रदायों में भी गौरीय वष्णव तत्त्वज्ञान में मिलती जुनती अभिव्यक्तियाँ हम प्राप्त हो जाती हैं जिनमें स्थानों के बाह्य पारस्परिक आदान प्रदान का क्रम भी दाना रहा । इसमें भी समानताएँ उत्पन्न और विकसित की । पर तु फिर भी कतिपय साधना एवं मिद्धातगत अन्तर प्राप्त होत ही हैं ।

हमारा अनुमान है कि जिन अन्तर की मुख्य कारण है कि गौरीय तत्त्व ज्ञान रहस्यानुभूतिया पर आधारित न हाकर परम्पराप्राप्त साहित्य का नीव पर बना है । उस साहित्य का व्याख्या अथवा अन्तर्गत में उलाने की है पर व्याख्या में पर्याप्त स्वतंत्रता की सुविधा हान है भी उस सार साहित्य एवं विचार की अन्तरी कथ सीमाएँ और मयाएँ भी हाती हैं । यद्यपि स्वयं चतय मम्भवन मध्यकाल के अन्तर्गत एवं अन्तर्गत रहस्यानुभूतिया वाल अथिथ पर स्वयं उीन कृष्ण लीला नहीं है किन्तु कि उन रहस्यानुभूति के आधार का पना लगता । उनक जीवनचरित्रकारों ने भी कृष्ण चतय के मुम में बहलवासा है । उनक बार में यह बहना कटिन है कि कितना चतय का है और कितना उनक मुम में जावनाकारा

न अपना आरंभ रच दिया है। उसकी जीवना में बस इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि व का ताभाव को स्वीकार करते थे एक मधुरभाव की प्रतीति सा द्र स्थितियां मगहन आवेग में मग्न भी हो जाते थे। अपनी पिछनी गीतों में कहना चाहता कह सकते हैं कि महाभावम्बरूपिणी श्री राधा व भाव का माना मूर्तिमान विग्रह थे। चतुर्थ मत्तानुयायी तत्त्व विवेचकों ने कुछ उनसे सख्त लफार गात्रा व आघार पर अपना दार्शनिक व्यावहारिक साधना का ढांचा तैयार किया था। पर तु हरिदासों या राधावल्लभाय सम्प्रदायो में इससे भिन्न स्थिति रही। इनके सस्यापनों स्वामी हरिदास एवं श्री हितहरिवंश न अपनी रहस्यानुभूतियां का स्वयं ही अभिषेक किया है इसमें लिए किसी प्राप्त प्रणाम का उन्हें खाजन की आवश्यकता नहीं पड़ी। उनका अपना अनुभव स्वयं ही प्रमाण रहा। प्रमाण की दृष्टि से एक और मजदार विकास हम देख सकते हैं— पुष्टिमात्र में प्रमाण चतुष्टय की मायता है। गौडीय वृष्णवा में बस भागवत को ही पूरा प्रमाण स्वीकार किया गया परंतु हरिदासी एवं राधावल्लभाय सम्प्रदायो में भागवत इत्यादि को सम्मान तो दिया गया परंतु प्रमाण रूप में उन्हें स्वीकार करने का प्रयत्न नहीं उठा। अतः प्रमाण स्वानुभव ही रहा। इस तथ्य ने एक दूसरे परिणाम पर इन सम्प्रदायों को पट्टी बाँटा दिया। इन्हें वृष्ण की विविध काव्य पुराणादि विगिन लीलाया का गिरम स्वीकार करके अपने सद्भाविक ढाँचे में भीतर स्थान देने की आवश्यकता का अनुभव ही नहीं हुआ। इस हम यों भी कह सकते हैं कि वृष्ण-लीलाया में भीतर सार रूप से जा राधा वृष्ण व प्रेम का तत्त्व है उस ही उलाने स्वीकार किया। माता पिता गुरुजन सखा गापी गोप मधुरा, द्वारका नृत्यवध अत्याचारी का विनाश धर्म का स्थापना आदि जितनी भी वास्तव बातें हैं उन्हें छाड़कर मात्र आंतरिक प्रेम तत्त्व का स्वीकार किया गया। इसी कारण इन सम्प्रदायों में हम लीला एक भिन्न स्तर पर दिखाया देती है एक लीला की इस भिन्न स्तर वाली स्थिति में भीतर ही साधना व धर्म में सखीभाव का चरम विकास हुआ। आगे हम इन सम्प्रदायों की उपास्य उपासक एवं लीला सम्बंधी धारणाया का विवेचन करेंगे।

१ अहमक याम अय न पायो काहे को पन्थि देव पुराना ।

कागद क अकनि उमाना ।

अनुम करि प्रीतम पहिचाना मया प्रतिदिन कष्ट प्रवाना ।

—स्वामी विहारिलि देव घोबोता ६-७ ।

रुचि के प्रकाश परस्पर खेलन लागे ।<sup>१</sup>

वे रुचि या प्रेम क प्रकाश है यह तथ्य भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है यानी कि 'याम श्यामा वास्तव म एक अय तत्त्व रुचि या प्रेम या रम क प्रकाश है । गौरीय वपुण सिद्धांत म हमन दला था कि राधा कृष्ण की स्वरूपगति का प्रकाश हैं उनका सम्बन्ध गति और शक्तिमान का है पर यहाँ एक ही तत्त्व रुचि क ये दाना ही प्रकाश हैं और इस प्रकार गति गतिमान वाली शक्तियों की आवश्यकता नहीं पत्ती । इस उपपत्ति का परिणाम है कि दानो का समानता का स्तर प्राप्त हो जाता है । परस्पर खेलन लागे कथन प्रकटीकरण की अलौकिकता पारस्परिक प्रेम भावना एव श्रोडा परायणता की आर सचेत करता है ।

इस महजता अनादि तत्त्व आदि का ध्यान म रखने क कारण ही सभवत स्वामी विरिणि दाम (इम सम्प्रदाय के सर्वश्रेष्ठ सिद्धांत व्याख्याता) न कहा था —

मन नसा आसा मगन तन की कछु न सनार ।  
श्री बिहारीदास नाम न कहै निरप नित्य बिहार ।  
नामो नाम न भावई तन मन मनसा प्रान  
आसा दास विहार कियो बसि रसिकाने धाम ।  
नाम न कछु विहार बिन ठाली नाम निवारि ।  
नामो नाम मुहावनो जब देख्यो करत बिहार ।  
कहा नाम नामो कहा सखी सुख पूछी तोहि  
तन मन मगन बिहार मे तहा बूझि ल मोहि ।<sup>२</sup>

इस प्रकार मुख्य बात नित्य विहार है नाम नहीं । तात्पर्य यह कि इस युगलरूप का मुख्य परिचय नाम स नही नित्य विहार-तत्त्व से लिया जा सकता है । यदि कोई नाम लिया भी जायगा तो युगल क पारस्परिक विहार प्रेम एव केलि को प्रकट करने वाला ही होना चाहिए । या नाम और नामो का संबन्ध अत्यन्त उच्चि बीज एव तदुत्पत्ति का माना है जिसम कि साधनरूपी अपार पुष्प खिलते हैं ।<sup>३</sup>

वास्तव म युगल एक ही हैं कवल इच्छा सहा दा होते हैं । इस कारण बत स लाग क सम्प्रदाय क दान का नाम कछा दत्त बताते हैं । पर वास्तव म कछा मे दो हान का सिद्धांत लगभग सभी वपुणव सम्प्रदाय स्वीकार करते हैं । अन्तर त्तना ही है कि यहाँ पुष्प-तत्व (याम) की ही प्रधानता नहीं है । दानो को

१ कतिपाल २ ।

२ स्वा० विहारिणि दास साखी १३० १३३ ।

३ नाम बीजु नामा तदुत्पत्ति साधन पट्ट अकार—वही सिद्धान्त के पर १४४ (पृ० १०४) ।

समान पद प्राप्त है । बिहारिणि दास ने उनका एकत्व की एक बड़ी घनांगी उपमा दी है कि चना जैसे एक ही होता है पर उसका भीतर दो दासों हो जाती है वैसे ही एक हाते हुए भी ये दा है

बहुत भाति इनको कहे श्री बिहारिणि दास विचारि ।

विकल बिना आलिंगन एक चना द्व दारि ।<sup>१</sup>

अथवा जैसे एक ही मूल के दो स्कंध एक ही समय म हात हैं वैसे ही ये भी हैं—

एक मूल अस्पूल ली, द्व स्कंध समवस ।<sup>२</sup>

यह जोड़ी ऐसी विचित्र बनी है जसी कि किसी ने देखी है न सुनी है और न भनी है ।<sup>३</sup> प्यारे को प्यारी प्रच्छी लगती है और प्यारी को प्रियतम ब्रूत भाते हैं दोनों की ही युगल क्रिगोर जानना चाहिए । जस 'घन दामिनी' सदा साथ रहने हैं वस ही य भी हैं । ऐसी अश्रुत जोड़ी है कि मन वचन और कर्म स इन्ही का संग करने का मन होता है फिर और किसी आर दृष्टि टलती ही नहीं है ।<sup>४</sup> जिस प्रकार पृथ्वी म गंध है पर तु उसका रूप सूक्ष्म है उसा प्रकार श्याम के रूप म गौर अग सूक्ष्म रूप स विद्यमान ही रहता है —

ज्यो पृथ्वी मे गंध है सूक्ष्म घरे सख्य ।

यो गौर श्याम म मिल रह्यो भिन न कहिये रूप ।<sup>५</sup>

न य लक्ष्मी और नारायण हैं और न ही य ब्रज क राधाकृष्ण हैं—वे लाग तो इनके रम के लिए ललचाते और बिललाते रहते हैं —

अभिमानी दरवान ज्ञान की कौन कहे कुसरात ।

याहो त दुल मता सकौ लक्ष्मीपति ललचात ॥

यद्यपि राधा कृष्ण वसत ब्रज बिन बिहार बिललात ।<sup>६</sup>

वेदान्ति में जो निगण ब्रह्म की चर्चा आती है मुनिगण जिस निराकार की बात कहते हैं वह सब एन नित्य बिहारी की आभा मात्र है —

१ स्वा० बिहारिणिदास साखी ११४ ।

२ यही यही १११ ।

३ स्वा० हरिदास केलिमाल ३१ ।

४ यही—यही ३ ।

५ यही—यही ४ ।

६ ललितकिगोरी देव सिद्धान्त के बोहा (कालक्रम से परवर्ती इस उद्धरण म कृष्ण का रूप गतिमान् का-सा प्रतीत होने लगता है) (श्या० ६० सम्प्रदाय और आणी साहित्य, पृ० २६५ पर उद्धृत) ।

७ बिहारिणिदास सिद्धान्त के पद १४२ ।

निगु न ब्रह्म जो बनत वेद ताकी सुनौ जुदो इक भेद ।  
सो नित्त बिहारी की आभा आहि  
निराकार मुनि बढत जो ताहि ।'

यदि कोई यह प्रश्न करे कि विविध अवतारों का कारण क्या है तो स्वामी रसिक देव का उत्तर हागा कि इन अवतारों ने उन्मत्त का कारण युगल का यह नित्य विहार ही है —

नारायण आदि सबल औतार तिन कारन नित्य विहार ।

या वे और किसी न आश्रित नहा है पर मन के लिए तो कोई सहारा चाहिए और वह अगोचर भी है अतः सिखाई कैसे पड । मन उस दिव्य कलि रूपी आत्मबन्धन के सहारे टिका रहता है इस प्रकार नीला का भी कारण नित्य विहार प्रतीत होता है । यह अग हम मूरदास के अवगति गति कछु कहत न आव को याद दिला दता है । स्वामी ललितकिशोर देव ने इस नित्य विहार लीला का कारण प्रभु का वह अनुग्रह माना है जो मन्वी को आनन्द दना चाहता है अ यथा उनका रूप तो वेदा के लिए भी अन्तर्गत और अगोचर है —

निगम अगोचर अलख है क्यों हू लक्ष्यो न जाय ।  
प्रम सहचरी भाव सों युगल रूप दरसाय ।

यों जानो ही विहार के इतने लालची हैं कि शून्य बिना जा समय बीतता है वह उनका शरीरों का अत्यधिक गिथिल कर दता है उन्हें वे विरह के क्षण प्रतीत होने लगते हैं —

याकुल विरह विहार बिनु नखसिख लोभी लीन ।  
श्री बिहारिणि दास अग सिथिलई स्वासन गनत अधीन ।

एनके विहार को ही देखकर मन्वा सम्प्रदाय के भक्तों ने मन्मो दादा पदों के वित्त सबया म रम की धारा बहाई है । पर किसी को यह न समझना चाहिए कि एनके बिहार में प्राकृतिक मन मयन या काम का आवेग है —

१ स्वा० रसिकदेव भक्ति सिद्धांतमणि ८७ ।

२ वही ८८ ।

३ निरालम्ब नहीं मन को विष्य बचन अगोचर क्यों करि लख ।

दिग्ग्य कलि औत्सव्यन दोनों लीलारस यो जनहित कीनो ।

— वही रससार १२ १३ ।

४ स्वा० सलिनकिशोरीदेव सिद्धांत के दोहा । (स्वा० १० स० वा मा० पृ २६८ पर उद्धृत) ।

५ वही साखा १३५ ।

इतक मल मधुन फछु नाहीं ए दिव्य दह विहरत बन मांहीं  
काम प्रेम रस विवस बिहारी, सावधान सहचरि सुकुमारी ।<sup>१</sup>

‘स अतीविक’ काम प्रेम क रस म व इतना मग्न हा जात है कि उह अपना सुधुध ही नहीं रहती । सावधान मगी उतकी चिन्ता ऐमे क्षणा म करती है ।

ऊपर के विवेचन से य स्पष्ट हा जाता है कि सखी सम्प्रदाय का उपास्य मीचीय वरणवो से पृथक् है । वहाँ पर उसे सत चित्त आनंद कहा गया है पर इनकी विहारिणी और वत्सल उममे भी उज्ज्वल है —

विहारिनि वल्लभ दुलभ जातु ।

सत् चिद् आनन्द ब्रह्म जोति तिनह ते उज्वल मातु ।<sup>१</sup>

### युगल मे प्रधानता

जब उपास्य का रूप युगल हा जाता है तब यह प्रश्न बहुत समीचीन नहीं रहता कि दोनो म कौन श्रेष्ठ है ? पर इधर हि दो समीक्षा क क्षत्र म जब स युगलोपासना और मखी भाव का महत्त्व प्राप्त हुआ है तब से घुमा फिरा कर राधा को अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध करने का प्रयाम किया जाना है और उ म राधा प्राधाय का इन सम्प्रदायों का विशेष प्रदेय माना जाता है ।<sup>१</sup> इस साहित्य के

१ स्वामी ललित किशोरी देव रस के चौबोला, ११ ।

२ किशोरदास सिद्धांत-सार सग्रह ११।१।

३ (क) इस प्रकार लार्डली जी प्रधान उपास्य हैं । डा० गोपाल दत्त गर्मा स्वामी हरिदास और उनके सम्प्रदाय का वाणी साहित्य, पृ० ३०६ ।

(ख) श्रीकृष्ण का स्थान राधा की तुलना मे इसलिये और भी कम महत्त्व का हो जाता है कि इस सम्प्रदाय म उसे परतत्त्व न मान कर राधा को परतत्त्व के रूप म स्थापित किया गया है । डा० यिजयेन्द्र स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य पृ० २१५ ।

(ग) राधावल्लभ सम्प्रदाय मे प्रधान रति राधा के चरणो मे मानी जाती है ।

सत्सिताचरण गोस्वामी गो० हितहरिवंश—सम्प्रदाय और साहित्य पृ० २०४ ।

(घ) प्रथम उपास्य स्वरूप निश्चय करियो ही ठीक है जाकू आगम निगमादि समस्त आय पीरय मया उचित ध्यान कर तो



प्रातिरिक्त अध्ययन से मुक्त यह निष्कथ एकांगी प्रतीत होता है। यह सत्य है कि राधा की श्रद्धा सम्बन्धी अंग इस साहित्य में यथेष्ट है परन्तु कुजबिहारी को ही श्रद्धा मानने वाला उद्धरणों की भी कमी नहीं है। वास्तव में ये श्रद्धाएँ सापेक्ष हैं और भिन्न भिन्न स्तरों पर हैं। जहाँ पर सद्भावित परात्पर तत्त्व आदि की चर्चा आ जाती है अतएव सप्टिमात्तिक प्रसंग आ जाता है वहाँ पर कृष्ण की श्रद्धा का निदर्शन होता है परन्तु जहाँ पर निकुञ्ज विहार की प्रेम पद्धति है वहाँ पर राधा अधिक गभीर एवं प्रधान दिखाई देती है। पर यह विशेषता तो प्रेम भाव का कारण है। गोडीय कृष्णों ने महाभाव की जिस अवस्था का तादात्म्य राधा के साथ किया था उसी की अत्यन्त स्वाभाविक परिणति प्रेम के प्रदेग में राधा की यथा श्रद्धा है। अथ प्रतिरिक्त ज्ञानिनी शक्ति की जिस भक्ति का अर्थ देन वाली वृत्ति की चर्चा हम पीछे कर चुके हैं उसका अनुसार राधा का उपास्य मानना कृष्ण की अवमानना नहीं है— इसी प्रकार जैसे कि स्वा० हरिदास या गुरु का भा उपास्य से भी कभी कभी अधिक महत्त्व देना युगल रूप का अपमान नहीं है। अपनो स्त्री सुनभ कोमलता से राधा भक्त के लिए अधिक सुलभ है तथा राधा एवं सखी दानों के ही स्त्रीरूपा होने में तत्सुखित्व का भाव भी अधिक सहज एवं स्वाभाविक हो जाता है। कृष्ण को उपास्य रूप में अधिक मायता देने से गोपीभाव से कृष्ण का कात मानने की अभिलाषा भी जग सकती है। हमारा विचार है कि प्रधानता सम्बन्धी द्वैत की स्थापना इन सम्प्रदायों की युगलापासना एवं नित्य विचार की आत्मा के विरुद्ध है। अस्तु अंगे पृष्ठों में हम विहारी एवं विहारिणों दोनों के स्वप्न का स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।

### प्रियतम

अपन श्रद्धादाग सिद्धांत के पक्षों में स्वा० हरिदास ने उह हरि नाम से सम्बोधित करत हुए बनाया है कि उनकी मायाबाजी विचित्र रूप से फली हुई है। और उसमें मुनिगण तक भूमित हो जाते हैं। मग कृष्णा रूपा जगम हरि का ही सब खेल व्याप रहा है।<sup>१</sup> हमको प्रयत्न के बुनत भी हैं और उधड़ते भी हैं इस प्रकार प्रपंच के इस सागर (जगन् का निर्माण और विनाश सब उहा की माया है) —

पूर्व पृष्ठ से —

न्याना उपास्य रहों। दा० कहेयादास श्रीस्वामी हरिदास  
जु की उपासना गली (श्री स्वा० हरिदास अभिनन्दन ग्रन्थ  
पृ० ३५ ३६)।

१ तुम्हारी माया बाजी पसारी, विचित्र

मोटे मुनि मुनि काफ़ मूले कोड। — अष्टादाग सिद्धान्त के पद ५।

२ वहा १३

निशिदिन बुनत उधेरत जात प्रपन्न की सागर ।<sup>१</sup>

मगार को माया का परिणाम एक माया का भगवान स सम्बद्ध करके वे बल्गव तरु-द्वान एक सगिट त्रिधा के मानन वाल ही सिद्ध होते हैं । जो कुछ प्रभु चाहत हैं वही ज्ञाता है । जीवन किनना हा फडफणाव पर प्रभु इच्छा के पिजडे म बद्ध हैं और उमी प्रभुरूप बह काय कर मकने म ममय हाता है —

ज्यो ही ज्यो ही तुम राखत हो त्यो ही त्या रहियनु हों हरि ।

और तो अचरखे पाइधरों, सो तो कही कौन के पेड भरि ।

यद्यपि कीयो चाहो, अपनी मनभायो

सो तो बयो करि सकी राख्यो हों पकरि ।

कहि श्री हरिदास पिजरा का जनावर ज्यों,

फडफडाय रह्यो उडिबे को कितोउ करि ।<sup>१</sup>

उन परात्परत्व की छार मन्वी सम्प्रदाय के थोठे दास्याता स्वा० विहारिणी देव जो ने बडे स्पष्ट मनन किय हैं । उनके अनुसार वे मान अपनी इच्छा से लीला गरीर रूपी विप्र घारी बनते हैं भयया वे ता अवतारी है और मन्न भल ही अवतार हा । तक्ष्मीपति नारायण ही नहीं ब्रजाधीन वृष्ण के लिय भी वे मुक्तम नहीं हैं उनसे बडा और कौन अधिकारी है—मनसे बड के स्वय हैं । ईश्वरो के भी ईश्वर हैं । भय अवतार उनकी अगकलाए हैं मृकुटमणि कु जविहारी अवतारी हैं पति हैं —

इच्छा विप्रह धर लीला वपु सब अवतारन पर अवतारी ।

तक्ष्मीपति यज्ञपति को डुरलभ, इनत कौन बडी अधिकारी ॥<sup>१</sup>

एव

सकल ईग के ईग हैं अगकला अवतार ।

श्री कज विहारी मुकुटमणि अवतारी भरतार ॥

अथवा

निगुण ब्रह्म जो भरनत वेद, ताकी सुनी जुदो इक भेद ।

सो नित्त विहारी को आमा चाहि, निराकार मुनि बधत जु ताहि ॥<sup>१</sup>

१ अष्टादश सिद्धांत के पद १४ ।

२ स्या० हरिदास कतिमात, पद १ ।

३ विहारिणीदास सवया २८ ।

४ तत्तित्तविगरी देव सिद्धांत की साखी, (स्वा० ह० स० वा० सा०, पृ० ३०६ पर उपरत) ।

५ रसिक देव भक्ति-सिद्धांत-मणि ८७ ।

या

अस कला सब अवतारनि को अवतारी भरतार ।<sup>१</sup>

ऐसे विराट का यह ममभना भी भूल होगी कि वे चतुभुज हैं पड्यत्र हैं या कि अजे वर कृष्ण हैं वे मान द्विभुज धारी हैं। हाँ अनुपम कजविहारी अवश्य हैं। इस प्रकार अत्यन्त कोमल मानवीय स्तर पर उनकी कल्पना की गयी है —

चतुभुज द्विभुज मये ब्रजमूप कजविहारी दुभुज अनुप ।<sup>२</sup>

यद्यपि उनका अन्त काई नहीं पाना<sup>३</sup> पर फिर भी जो पंडित लोग माहात्म्य का मिश्रण करके उनका स्वल्प का वर्णन करते हैं वे माना इस माहात्म्य का आक्षर पर व्यापार करते हैं —

कागद मसि लिखि लीक तिवारी बहुमत रत पंडित पटवारी ।

महातम मिश्रित ते रुजिगारी जना जाति वचिन जगारी ।

यह माहात्म्य रहित वहाँ गान वाजा अत्यन्त कोमल मानवीय व्यक्तित्व सत्ता सवना मन्त्रके ऊपर है और नियन्ता है। काई यन् भी न ममभ कि उनमें लीला का अभाव है— यन् लीलामागर नटनागर आनी रचि म रमावे ।<sup>४</sup> सनका यह स्वामी आदि मध्य एव अवमान मभी म एक रस रहना है ।<sup>५</sup> वास्तव में स्याम ही एकमात्र मिह है—शय मभी तो गृहानवत् है। वस्तुतः प्रपन्न प्रपन्न भाव का अनुसार ही नाग प्रपने उपास्य का लक्ष्य है। रमिका का लिए ता मोहन अत्यन्त मृदुल वेपथारी हैं। यो मन्वी मम्प्रदाय का आचाय ब्रज लीलाप्रो का तिरस्कृत नहीं करते उनका अनुसार ब्रज लीला आदि का उपासन उन लीलाप्राप्त म भी उसे दत्त लेने हैं (पर उनका रूप तो वही है जो रमिका को दृश्यमान है।) —

जिहि जसा तिन तसा देखा रमिकन को मोहन मृदु भेसा ।

विधि निषेध तजि भक्ति कर निदरि

दुविधा गये हिये आवे दृष्टि ।

इक मन साधन कर धृज जाई इक चितचौर हरन सुखगार् ।

मुरली रव रसिक रमार् ते वनिता सय जूय कहार् ।

१ विहारिण्यस सिद्धांत कपद १४१।

२ वही रस का चौबोला १६।

३ ताकी अन्न न कोऊ पाव—इही रस के चौबोला १८ (पृ० ५५)।

४ वही रस का चौबोला १३ (पृ० ५३)।

५ वही—सिद्धान्त कपद ८३।

६ वही वहा ८।

७ वहा वही ११७।

८ वही रस का चौबोला १६२ २१।

परतु जमा कि ऊपर मवन कर चुक हैं प्रम क धन म निकुज लीला क क्षेत्र म यहा भवतारा भरतार माया की बात्री पमारन वाल ऋटि नाम लावण्य विहारा राधा का मुग जात रहन हैं—उनकी कृपा की अभिलाषा रखत हैं । राधा की छांह म ही उनम सुरराई आयी है ।<sup>१</sup> उनका मन हाता है कि प्यारा क प्राण से प्राण मिन रहें एव तन म तन ममाया रह छाहा स आशें नगी रहें राधा क वगीभूत उहें भू तप भी बरदा न नही है ।<sup>२</sup> उनकी जिननी विमुना म पीछे देख चुक हैं वह मव प्रमराज्य क लिय नही हैं । यहाँ ता महता मूचक ठाकुर मन्दाघन उहें सकुचिन कर दता है । प्रिया की जूठन खान क निण व लानासित रहन हैं एव मखिया म याचना करन हैं कि प्यारी क साम मुक विहार का अवसर प्रगत करती रन । स्वा० विहारिणि दास न इन कोमल चतुर चिक्निय लाल क लिय लिखा है —

अति टौडक अति चिक्निया अथिच चतुर इतराड  
 कित विमो कित ठकुरई जूठन को ललचाड ।  
 जाच जूठन पाइय पा परि हा हा खाड ।  
 जो ठाकुर करि बोलिय, सकुचि तनकु हव जाड ।  
 साहि सुरार् न ठकुराई बडो प्रनाप विस्तार ।  
 जाचत है दिन जीव का सखी मोहि अहार विहार ।  
 प्राण पलित पाइनि पर परस होत निहाल ।  
 यहै बसा सेवत सखी डूलह दुलहिन लाल ।<sup>३</sup>

राधा

हम यह पहले हा कह चुक ह कि राधा का परम्परा प्राप्त स्वरूप प्रम मूर्ति का था एवय, वभव का परम्पराए उनक माय सम्बन्धन नहीं थीं इसी कारण राधा का स्वीकारन म उहें बहून सकाच नही हुषा । पर म वान तव राधा ब्रज सालाषा क भीतर मनय भाव स गु फिन हा चुकी था इसी कारण १८वीं गती क पाचाय ललितकिंगारी दब का यह वान कहन की आवश्यकता पठी कि य राधा न ता ब्रज का ह भीर न हा रास बिनास वाली हैं यह ता तीमरी राधा है जा कुत्र म स्वा० हरिदास द्वारा दुहराड जाता हैं यानी कि जो निकुज-लाला बिनास म मग्न हैं व हा य हैं । न ता इनका ज म हाता है न कम—दाना हा समान वय वाले एक रग निकुज विहार म रत रहन है । यह ता साधक का रुचि

१ कनिमाल २४ ।

२ यही २८ ।

स्वा० विहारिणि दास साली, १३८ १४१ ।

पर निभर करता है कि उन्हे राधा कह या कुजविहारिणी सजा स सम्बानित करे।  
वास्तव म नाम और नामा (वस्तु)म भेद है भेद जाना का परिणाम मात्र है —

एक राधा ब्रज मे बस एक राधा रास विलास ।  
तीजी राधा कुज म दुलराव हरिदास ।  
राधा नाम विभाग करि समभी रसिक मुजान ।  
जनम कम जाको नहीं इकरस बस समान ।  
भाव तो राधा कही भाव कुजविहारिणि नाम ।  
नाम वस्तु भेद है लीला भेद परिणाम ।<sup>१</sup>

भवभूति की उक्ति क्षणभंग्य नवतामुपति तदव रूप रमणायताया उनक निए  
पूरा तरह लागू होता है। प्यारी राधा का मुख जया जया लाल दखते है उन्हे  
प्रतिक्षण नया ही लगता है —

प्यारी धू जब जब देखीं तेरो मुख तब तब नयी नयी लाग ति ।<sup>२</sup>  
उनका मुख नहीं है माना भ्रमृन की पक है जिसम प्यारे क नयन फस गए हैं ।<sup>३</sup>  
वास्तव म कृष्ण की जितनी भी सुधराई है सब उहा का छाह म रहने क कारण  
है —

मुधर मये बिहारो याही छाह ते ।  
जे जे गटी मुधर जानपने की ते ते याही बाह ते ।

स्वय प्यारे धपने मुख स कहत हैं कि जहा जहाँ प्रिया क चरणा की छाप पडती है  
वही वही उनका मन छाया करता रहता है —

जहा जहाँ चरन परत प्यारी जू तरे तथा—  
तहा मन मेरी करत फिरत परछाहीं ।

यों ता ब्रह्माण्ड म भ्रमणित नारिया हैं व रूपवता एव विलाकपिणी भी हैं पर  
जा गोभा जा सौत्र्य जा सुपमा वनम है वह न दव नारिया म है न नाग-नारियो  
म और न किमो और मन्त्रिा समाज म । वसक अनिरिक्त यह भवन माहन सौदय  
न पहन मुना गया है न भ्रमो है और निश्चित रूप रु प्राग भा नहा हागा —

देव नारि नाग नारि और नारि  
त न होंहि और की और ।

१ सन्निकि गोरी देव मिहान्त की साथी (गोपान दत्त गर्मा द्वारा  
रुवा ह० स० वा० सा० म पृ० ३०३ पर उद्धत) ।

२ कलिमाल ३४ ।

३ वहा ७ प्यारी तरौ बदन भ्रमृन की पक ताम बोधे नन द्व ।

४ वही २४ ।

५ वही ५३ ।

पाछे न सुनी ऐसी अर्थहूँ प्राणे हू न ह य है,

यह गति अद्भुत रूप की अद्भुत और की ओरे ।<sup>१</sup>

नाल का इसी बान का भय रहना है वि प्यारी जा कभी उसन कुमया न कर जाए —

प्यारी जू एक बात की चाहि उर आवत है री ।

मति कबहू कुमया करि जाति ।<sup>१</sup>

ब्राम्हण म किंगारी हा मुख का सार समूह है । रूप का प्राणार रग की साक्षात् सागर परम विचित्र एव अत्यन्त लाभो द्यामा जी क प्राण श्याम सदव प्राधीनी करत है ।<sup>१</sup> श्याम भाक्ता एव द्यामा भाग्या हैं अपन इस रूप म वे ब्राम्हण रूप भी हो जानी है, यही उनका प्रधानता है । श्याम रूप म वे लाल क प्राणो का पोषण करती हैं सम्पूर्ण सुख दती हैं एव प्रिय क जीवन क लिए रमिकता का प्राणार हैं —

भोगी श्याम भोग हैं प्यारी पोषत प्राण लाल हितकारी ।

स्वामिनि सब मुख पूरण दानि पिय की जीवन रसिक निधानि ।

भोग्य की इस सहज प्रधानता क बगीभूत होकर अपन प्रताप का दुरा कर पति रति की याचना करते हैं अपनी इस रसरति का प्रकट करत के बाद क प्रिया क धरणा म प्रणन हाकर अपना को धर्य मानते हैं क सबक स्वामी हैं पर उनका भी स्वामिनी राधा है —

मानदान दे प्राण प्रिया पति रति जाचत परताप बुरायन ।

बिनु रसरति प्रतीति प्रकट करि धर्य जन्म मानत परि पायन ।

कर ककन दरपन देषहु न श्रीविहारिनि दास लहे मन भाइन ।

सब ठाकुर को ठाकुर हरि ता ठाकुर को ठाकुर ठाकुराइन ।<sup>१</sup>

इस प्रमादग म ही एक अर्थ स्थान पर वे सर्वोपरि कुजविहारिनी रानी बता दी गई हैं । यही तब कि ब्रजराज भी उनका प्रजा है ।<sup>१</sup> इस प्रेमाधिक्य क कारण ही प्रिया की भौह का मना होना भी नाल क लिए प्राणात्क हाता है ।

१ कतिमात् ५४ ।

२ यही ७८ ।

३ मुख को सार समूह किंगारा । रूप निधान रग का सागर परम विचित्र महा प्रतिभोरी दिन दिन साल करत प्राधीन सदाइ प्रसन रही तुन गोरी ।  
—सलितकिंगोरी देव रस क पद २० ।

४ स्वा० सलितकिंगोरी देव रस की साली घोषाई ।

५ विहारिणिदास सवया, ११६ ।

६ यही यही ११६ ।

७ कतिमात्-१० ।

या एक स्थान पर यह भी प्रतीत होता है कि कृष्ण क अनन्य बलनभाए थीं । राधा मान किय है सखी उनस आकर कहती है कि यदि सर्वोपरि हाना चाहती हो ता चला —

आजु अनु दूटत है ललित त्रिभगी पर ।

घरन घरन पर मुरली अघर धर चितवनि वक छबोली भू पर ।

धसहु न वेगि राधिका पिय प जी भयो चाहति ही सर्वोपरि ।<sup>१</sup>

परन्तु इस एक ही प्रसंग का अधिन खीचना उचित न होगा । इसक अतिरिक्त सर्वोपरि की 'यास्या अय अर्थों म भी की जा सकता है ।

परन्तु जसा कि पीछे हम अपना म तव्य प्रकट कर चुक हैं राधा की यह प्रधानता निकु ज लाला क प्र माधार को दिखलान क लिए है । उनका वास्तविक रूप युगल का ही है—प्रधानता अग्रधानता की यहाँ चर्चा न हानी चाहिए । पर धनना अव्यय ध्यान रह कि गौणीय वक्षणावा जसा गक्ति एव गक्तिमान का यहाँ पर कोई विभाजन नहा है । इन दोनों क मध्य निरवधि नित्य विहार की कलि होनी रहती है । इस कति महारस म ही व भी डूब है एव सखिया भी उसी रस म आनन्द लाभ करती रहती है । विहारिणिदाम न दोना का समन्वय एक स्थान पर अत्यन्त सुन्दर रीति स किया है । उनक अनुसार विहारिणी पर भाव रक्त कर कु ज विहारो राध का भजन करा —

यो भजि कुज विहारो राध ।

श्री विहारनि राधा पर धरि भाव ।

### परिकर

जसा कि पीछे उगित किया जा चुना है लीला क विस्तृत रूप क स्थान पर सारभूत तत्त्व का अपनान क कारण मरी सम्प्रदाय म परिकर की बसा कोई व्यापक एव पुष्ट धारणा नहा है जसा कि गौणीय वक्षणावा म हम उपलब्ध हाती है । यहाँ पर कवल मात्र कुछ सखिया का मकन मित्रता ह । सखिया क भा नाम रूप मवा प्रकार आदि का पृथक विवचन नहा हुआ है । कवन सवाकाय या मान क ममय मनान आदि क प्रसंग म कुछ सखिया का उल्लेख हा जाता है । कलिमान म हरिनामा नाम मवा क रूप म उल्लिखित हुआ ।<sup>१</sup> एव कवन एक अय स्थान पर 'विना का उल्लेख है । अय स्थाना पर एक वचन या बहुवचन

१ कलिमाल १८ ।

२ विहारिणिदास सिद्धांत क प १६ ।

३ कलिमाल ५ ।

४ वही ६६ ।

म सखी की ही चर्चा थाया है । परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी हरिदास सखिया का भगवान का ही अरा मानत थ । कम स कम एक पद म तो उहाने सखिया का कृष्ण मूर्ति हा कहलाया है । लाल कह रह है —

जहा जहा चरन परत प्यारी जी तेरे लहा  
तहा मन मरो करत फिरत परछाहीं ।  
बहुत मूरत मरो चीर दुरावत कीऊ  
बीरी खवात एक व आरसी ल जाही  
ओर सेवा बहुत भाति की जसी ये कहै  
कोऊ तसी ये करी ज्यो रुचि जानो नाहीं ।  
थी हरिदास के स्वामी स्यामा का ।  
भले मनावत दाइ उपाहीं १

सखियों बेलि की व्यवस्था करती हैं मानिनी को मान व समय मना कर बेलिसमुत्सुक बनाती हैं गाय म छिरका खेलती हैं रास के समय भी साथ रहती है एक उस गोभा का पान करत रहन को ही उनको आकाशा रहती है— ऐसे ही दसत रहौ जनम सुफल करि माना तथा हसत खेलत बोतत भिनत दखा मेरी आखिन सुख । १

इन विविध सखिया म एक सखी अधिक प्रमुख है इसका भी सबत अनेक स्थाना पर मिल जाता है । हरिदासी एक खलिता नाम का उल्लेख हमने अभी किया है तथा सम्प्रदाय म इन दोनों का एक ही स्वीकार किया जाता है अत यह निष्कथ अनुचित न होगा कि मुख्य सखी हरिदासी या खलिता ही है । एक अन्य स्थान पर स्वयं प्रिया ना कहता है कि अनन्त जिह्वाघ्रा स भी तरे गुणो का गान नही ही सबता —

रोम रोम जो रसना होता तोऊ तेरे गुन न बखाने जात ।  
कहा कहौ एक जोम सखीरा भात की बात । १

बाद क सम्प्रदायाचार्यों ने इन अन्तरगा सखिया क रूप का ओर अधिक विवसित किया है । परवर्ती लोग ने युगल क समझ ही हरिदासी सखी का स्थापित कर लिया है । बिहारिलिदास क अनुसार ता प्र म की तदण तरगावाल

१ केलिमात, ५३ ।

२ यही ३ तथा ३२ ।

३ यही ४० ।



हम जानते हैं कि जीवन का चरम लभ्य यहाँ नित्य विहार रस ही है ।

### धाम

स्वामी हरिदास म धाम की बसी कोई पुष्ट दार्शनिक कल्पना हम प्राप्त नहीं होती जसी कि गौडीय ब्रह्मवाक्य सम्प्रदाय म है । इम सम्प्रदाय म सबसे महत्त्वपूर्ण धाम निकुज है । निकुज का ही मता वृन्दावन म स्वीकार को जाती है एव वृन्दावन ब्रज म है इसनिए सभी महत्त्वपूर्ण स्वीकार किए गये हैं पर यह ध्यान रह कि इनकी अष्टता का प्रथम अपरपूरव है । यो सब मिला कर धाम क रूप म वृन्दावन का ही स्वीकार किया गया है । स्वामी हरिदास न प्रपन्नी रचनाओं म एकाधिक स्थानों पर वृन्दावन का उल्लेख किया है । उनमें अनुमार वृन्दावन स बन को ही गुजमाल की तरह हाथ म पाहना चाहिए ।<sup>१</sup> अथवा ऋतु बभ्रव क साथ ही वृन्दावन की सुपमा भी वे वर्णित करत है —

ऐसी ऋत सदा सबदा जी रहै बोलति मोरनि ।  
नीक बादर नीकी धनष चहू दिशि नीकी  
श्री वृन्दावन आछी नीकी मघन की घोरनि  
आछी नीकी भूमि हरी हरी  
आछी नीकी बूदनि की रेंगनि काम की रोरनि  
श्री हरिदास क स्वामी स्यामा क मिल गावत ।  
जम्प्यो राग महार किशोर किशोरनि ।

अथ भी उहाँन विहार क प्रसंग म बन का उल्लेख किया है । यह कहना अनुचित न होगा कि यह बन वृन्दावन हा है । परवर्ती सम्प्रदायाचार्यों न वृन्दावन का और अधिक महत्त्व प्रदान कर दिया । बिहारिणिदास न ता अथ धामा का उल्लेख करत हुए वृन्दावन का सब अष्ट बना दिया —

तोरय सकल लोक बकण्ठ त मधपुरी अधिक सदेह नसानो ।  
तात अधिक् निकट ब्रज बभो ब्रह्मा वदनि प्रकट प्रयानो  
श्री बिहारिनिदास निक जनि सवत ताज राधा रवन रवानो ।  
विद्यमान हरि मंदिर राजत श्री वृन्दावन रस खानि खदानो ।<sup>२</sup>

१ स्वामी हरिदास अष्टांग सिद्धांत क पद १० ।

२ वही कतिमात ८८ ।

३ बिहारिणिदास सवया कवित्त ६ ।

धम अथ मोक्ष आदि पुरुषार्थ एव भक्ति के अनेक भेद बताये गये हैं पर जो मुख बृंदावन म, जा पवित्रता यमुना के कून क सौरभ म है वह अथत्र कही नहीं है —

श्री बंदावन को मुख कहूँ न लह्यो ।

धम, अथ, कामना मुक्ति पद भेद भक्ति बहु भाति कह्यो ।

परम पवित्र पुलिनि सौरभ कन पावन जमुना तीर बह्यो ।<sup>१</sup>

अथ मत मतान्तरा, पुराणा आदि म वर्णित वकुण्ठ महावकुण्ठ आदि भी उनक धाम हैं पर बृंदावन विपिन ता राजधानी है । बृंदावन का यदि रस की खानि कहा जाय ता अनुचित न होगा । क्योंकि साक्षात् रस विग्रह गौर श्याम यहाँ नित्य विहार करत रहत हैं । राधा कण्ठ यहा नित्य है विपिन का यह विनास भी नित्य है एव काटि-कोटि गालोक का आलाक यहा के एक एक पत्त म है —

वकुण्ठ महा वकुण्ठ लो सबधी धाम जानि

रजधानी बंदाविपुन अदभुत रस की खानि ।

अदभुत रस को खानि है श्री बंदावन नित्त

गौर श्याम विहार जहा एक प्राण द्व मित्त ।

नित्य हो राधा कृष्ण है नित्य हो विपुन विलास ।

कोटि कोटि गोलोक ल एक पत्र परकास ।<sup>१</sup>

### उपासना का स्वरूप और भाव

सखी-सम्प्रदाय नाम ही यह सूचित करता है कि उपासक को सखीभाव स उपासना करनी होती है । मविद्या ही दम्पति रम भाग का आनन्द ल पानी हैं । विहारिणिदास जी स्वीलण कहते है —

सहचरी है भजो पल पास बयो जती सग बसिहो मनि कीट नाते ।<sup>१</sup>

महत विगारणम का भी निर्देश है कि सहचरी भाव स नित्य निकुंज विहार का भजना ही उचित है । सखी भाव की श्रेष्ठता बताने हुए व कहत हैं —

१ विहारिणिदास सिद्धांत क एक पद १७ ।

२ कलित किनोरी बव सिद्धांत की सखी १६८ १७१ ।

३ विहारिणिदास परम उचित शृंगार रस के पद २३ ।

४ नित्य निकुंज विहार भक्ति, सजि सहचरि उरभाव

—किनोरदास सिद्धांत सरोवर ८३२ ।

श्रीर भाव ते अधिक् अति सखी भाव को अ ग ।  
 किशोरदास वपति निकटि सहचरि करत प्रसग ।  
 सब भावन को मुकुट मणि सहचरि भाव अनूप ।  
 किशोरदास और न निकटि सखीभाव तद रूप ।  
 सांति दास्य अरु सध्य ह् वात्सल्य सहा न जात ।  
 किशोरदास सहचरि निकट सतत मुख बरसात ।'

परन्तु सहचरी भाव की पहचान क्या है ? केवल अपन का सखी कह देने से ही तो काम नहीं बनता । वास्तव में सखी भाव की साधना महज नहीं है । जब तक पुरुषत्व का अभिमान शेष है तब तक सखी भाव का अनुसरण संभव ही नहीं है । निर्विकार शरीर में ही सखी भाव का आरोप हो सकता है मन से स्त्री सहवास की आकांक्षा निकाल देनी होती है

उलटि लगे मन स्याम सो प्रीया भाव हू जा ।  
 सखी भाव तब जानिय पुरुष भाव मिठि जाइ ।  
 पुरुष भाव छूट नहीं मन मे बसि रही जोइ ।  
 सखी भाव तब जानिय निर्विकार तन होइ ।

पुरुष भाव के मिटा देने और स्त्रीस्वरूप का आरोप कर लेने पर प्रेम का प्रतीकवाद का परिणाम यह भी हो सकता है कि स्याम को प्रियतम मान कर उनसे रति मुख की कामना की जाय । पाछे हम देख चुके हैं कि गोपियो ने कल्याण सग मुख की सृष्टि का भी । पर मलिन्या के लिए यह मांग नहीं है । रतिक देव जी ने इस संबंध में मावधान करने हुये मलिन्या के स्वभाव संबंधी एक प्रसंग का उल्लेख करते हुए उनका स्वरूप का और अधिक् स्पष्टीकरण किया है । सखी का मन सावर मान्त जरूर है पर उनके मन में भोग-छा का विकार नहीं है । प्रिया जी भी भोग जानती हैं कि जा कुछ उनका आच्छा लगता है बहा महचरियो का भी प्रिय है । मला लाडिली जी से पूछती है —

मो मन मोहे सांवरो भर नहीं विकार ।  
 हौं तोहि पूछी लाडिली ताकी कहा विचार ।'

१ किशोरदास सिद्धांत सरोवर ६३५ ६३७ ।

२ स्वा रतिकदेव साखी १३ १४ ।

३ रतिक देव साखी ५ ।

प्रिया जा का निर्घात उत्तर है

तब हूँ सि बोली राधिका सखि कित पूछति मोहि ।  
जो मेरे मन मे बस सो मोहलु है तोहि ।<sup>१</sup>

इस प्रकार सखियों का आनन्द प्रिया प्रियतम क आनन्द से भवचित है ।  
उनके प्रेम को तत्सुखी इसीलिए कहा जाता है । उही (युगल दम्पति) के सुख  
से सुखा होना उनका विनिष्पत्ता है —

निर्विकार सहचरि समभि ततमुख सुखित सुजान ।  
ततमुख ही निज मुख गिनत दास किसोर निदान ।

स्वामी रसिक देव जी ने भी इस स्पष्ट करत हुए बताया है कि अपने मुख  
के भवगाहन के स्थान पर प्रिया प्रियतम के सुख की कामना कर —

ततमुख सखी का एहा रीति, तन मे रह अपनयो जीति ।  
प्रिया प्रीतम को निज मुख चाहै अपनो मुख नहि मन औगाह ।  
—भक्ति सिद्धांत मणि ४० ।

इस भाव के लिए साधना का निर्देश भी स्वामी रसिक देव ने किया है  
कि सिद्ध सखिया के भाव का अनुसरण करना चाहिए । इस प्रकार रागानुगा  
भक्ति की ही प्रस्थापना उन्होंने की है —

जुगत ध्यान बोज चित लाइ सखी भाव करि महन समा ।  
साधक रूप सेया इत कर, सिद्ध सखीन क भाव अनुसर ।<sup>१</sup>

सखिया एवं प्रिया जी का अतना अभिनत्व आ जाता है कि उमके लिए  
अद्व तवादी आश्रयली का प्रयाग करके स्पष्ट किया गया है । मखियाँ जद हैं एव  
प्रिया तरंग हैं अथवा प्रिया जी जल हैं और सखियाँ तरंग —

१ रसिक देव सारंगी ६ ।

२ किशोर दास मिढात सरोवर ६ ६ ।

३ रसिक देव भक्ति सिद्धांत-मणि ८८ ।

हम जल प्रिया तरंग है प्रीया जल है हम हैं तरंग ।  
तन मन मिलि एकत सुख छिन छिन बाजत रग ।<sup>१</sup>

अथवा

प्रीया हमारे अन्तर है हम प्रीया के अन्तर ।  
अ ग सग निरखीं केलि सुख सदाई रहै निरन्तर ।<sup>१</sup>

इन सखिया के मन में प्रेम ही भरा रहता है। प्रेम ही उनका स्वस्व है। चूंकि प्रेम-वारि बरसने से प्रेम ही उत्पन्न होना है प्रेम ही फलता फूलता है प्रेमिया की इस पुकार का गुण कर सखिया जब प्रेम-यापार के लिए बढ़ती है तो रास्ते में प्रेम ही मिलता है प्रेम ही उनका पति है उनकी वास्तविक गति भी प्रेम ही है उनका नाम भी प्रेम ही है यहाँ तक कि उनका बिछोना घाटना और भोजन प्रेम ही है एवं इन प्रेम स्वरूपा सखिया का प्रतिधि भी साक्षात् प्रेम ही होता है —

प्रेम प्रेम ही ऊपज जो कर प्रेम की वारि ।  
तब ही प्रेम फूले फल्यो प्रेम मिलि कछो पुकारि ।  
प्रेम धनिजन ही खली आगे मिलिया प्रेम ।  
प्रेम पति गति पाइ सखी मोहि प्रेम की नम ।  
प्रेम डितोना ओढ़ना अचबत भोजन प्रेम ।  
प्रेम प्रेम की पाहुनो प्रेम प्रेम की नैम ।<sup>१</sup>

सखिया का यह नाता महल का नाता है एवं यह इतना सच्चा नाता है कि और सब नातें हमक आगे झूठ ही नहीं पट जाते बल्कि यह नाता सखिया के मन का एक दुजय आत्म विन्वाम में भर देना है —

हमारे महल को नातो सांचो ।  
साही के बल गरजत सबसो आवत नाहीं आंचो ।  
धोकु जबिहारिनि सलित साडिनी कन्हि हिचे मे सांचो ।  
धोहरिदासी रसिक निरोमणि मन मिलि पोषत पांचो ।

१ सतिन किंगोरी दव साखी २६७ ।

२ वही वही ३०० ।

३ बिहारिणि दाम साखी ८७ ८६ ।

४ सतिन किंगोरी दव सिद्धान्तक पत्र ४५ ।

प्रिया का नाम ही इनके मन्त्रान् मुख का आचार है । यह नाम अत्यधिक आनन्द देनेवाली ही नहीं है रूप और रस का भण्डार भी है । यहाँ तक कि समस्त सार-तत्त्वों का भा सार तत्त्व यहाँ है । जिसकी रसना से भूल स भी यह नाम निकल जाय वह प्रिया क उर की हार हो गाय —

महामुख प्रिया नाम आधार ।  
 भक्ति आनन्द रूप निधि रस निधि सकल सार की सार ।  
 जाकी रसना भूलिहू निकस होइ प्रिया उर हार ।  
 श्री ललित रसिकवर की निज जीवनि अबभुत नित्य विहार ।<sup>१</sup>

मात्र प्रेम के इस बल पर ही तो वे बिहारी की भी परवाह नहीं करती उनमें भी उनका व्यवहार ऐड का ही होता है —

किये रहै ऐड बिहारीय सौं है बेपरवाह बिहारनि ।<sup>२</sup>

इस सम्प्रदाय में मत्तियों के वैसे भेद प्रभेद हम प्राप्त नहीं होते जसे कि गोडीय वप्पुवा या निम्बार्कीयो में अथवा राम भक्ति के रसिक-सम्प्रदाय में प्राप्त होते हैं । सभी मत्तियों निकुंज बिहार की ही व्यवस्था करती है एव कुंज के रक्षा से उनी बिहार का वणन कर सुखी होती हैं ।

वन्त थोड़े में श्री भगवतरसिक ने इस सम्प्रदाय का रूप निम्नलिखित कुण्डलिया में अत्यधिक स्पष्टता के साथ उपस्थित किया है —

आचारज ललित सखी रसिक हमारी छाप ।  
 नित्यकिंनोर उपासना जुगुल मन्त्र की जाप ।  
 जुगुल मन्त्र की जाप वेद रसिकनि की यानी ।  
 श्री यदावन धाम, इष्ट श्यामा महारानी ।  
 प्रेम दयता मिले बिना सिधि होइ न कारज ।  
 भगवत सब मुख दानि, प्रकृत मे रसिकाचारज ।<sup>३</sup>

१ ललित किंनोरी देव सिद्धांत के पद ४८ ।

२ बिहारिणिदास सवया १११ ।

३ भगवत रसिक अनन्य निम्बार्क मन्त्र पृ० ४३ ४४ ।

## हरिदासीय एव राधावल्लभीय सम्प्रदाय का अन्तर

युगल रूप परिवार धाम उपास्य भाव एव नित्य विहार आदि सभी में हरिदासीय सम्प्रदाय एव राधावल्लभीय सम्प्रदाय में बहुत अधिक समानता है। डा विजयेन्द्र स्नातक का सुचिन्तित मत है कि श्रीस्वामी हरिदाम जी तो हितहरिविग जी के समसामयिक थे। स्वामी जान सत्ता भाव के साथ नित्यविहार और निकु जलोना की ठोक उसी रूप में गायन किया जिस रूप में श्री हितहरिविग जी ने प्रस्तुत किया था। उनका तथा उनकी गिण्य परम्परा का जो भक्ति-साहित्य मिनता है उसमें तथा राधावल्लभीय भक्ति साहित्य में विचारधारा और भावना का विशेष अन्तर नहीं है। प्रायः एक ही भावभूमि पर दोनों ने साहित्य सजन किया है।<sup>१</sup> दोनों के मध्य दो सामान्य भिन्नताओं की भी चर्चा उन्होंने की है। उनके अनुसार ये अन्तर हैं —

- (१) स्वामी हरिदाम की माधना में वरारम्य का प्राधान्य था तथा
- (२) हरिदामीय (निम्बार्कीय भी) सम्प्रदाय में स्वकीया भावना को महत्त्व प्राप्त है जब कि राधावल्लभी सम्प्रदाय में लौकिक दृष्टि से स्वकीया की स्वोक्ति होने पर भी राधा को स्वकीया परकीया भेद विवर्जित माना गया।<sup>२</sup>

हमारे लिए डा० स्नातक की विभिन्नता मवधी इन स्थापनाओं से महत्त्व माना कठिन है। प्रथम स्थापना के सबंध में ज्ञानाता हम स्वोकार करते हैं कि स्वामी जी के सम्प्रदाय में विरक्त गिण्या का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा परंतु इसके साथ ही मिक्के का दूसरा पहलू यह भी है कि उनके गिण्या की गोस्वामा-परम्परा शून्य हाती आई है। जहाँ तक वरारम्य भावना के मूल का प्रश्न है राधावल्लभी सम्प्रदाय में समार के प्रति विरक्त रहने को कम मान नहा दिया गया है। हितहरिविग जी का निम्न पद विगुद्ध वरारम्य भावना का द्योतक है —

मानुष की तन पाप भजो ब्रजनाथ का ।  
 दबों ल के मूढ़ जरावत हाथ कों ।  
 श्री हित हरिविग प्रपच विषय रस मोह के ।  
 हरि हां बिन कचन क्यों चल पघोसा लोक के ।<sup>३</sup>

१ डा विजयेन्द्र स्नातक राधावल्लभी सम्प्रदाय

—मिहान्त और साहित्य पृ० ५८६।

२ वहा वही पृ० ५८४।

३ हित हरिविग स्फुट वाणी स० ६।

वस्तुतः भक्ति का आन्तरिक प्रेम भावना और उपासना म वराग्यबाला यह अन्तर तन्त्र भी सिद्ध नही हाता ।

जहाँ तक स्नातक जी द्वारा स्थापित दूमरा भिन्नता का प्रश्न है वह भा समुचित प्रजात नही हाता । स्वयं स्नातक जी न मानता है कि लौकिक व्यवहार की दृष्टि म राधा बल्लभ सम्प्रदाय म स्वकीया भाव को स्वीकार किया गया है । ठीक यही बात मन्वी सम्प्रदाय क बारे म भी कही जा सकती है । सद्धान्तिक रूप से दाना ही सम्प्रदाय नित्य किंगोर अजन्मा युगल की कल्पना करते हैं

पर प्रकट लीला (व्यवहार का लोका) क क्षत्र म दूनह दुलहिन का रूपक कभी कभी कविषा ने बाधा है । चाचा हितव्रदायन्याम (राधावल्लभीय) न भी राधा कल्याण का विवाह कराया है तथा स्वा० रसिन दब (हरिदासाय) ने भी 'याम' यामा का विवाह वर्णित किया है । जा बात डा० विजय द्र स्नातक ने राधावल्लभ सम्प्रदाय के लिए कही है वही बात डा० गोपाल दत्त गर्मा न हरि दासीय सम्प्रदाय क प्रसंग म कही है । उहीन राधावल्लभ सम्प्रदाय की ओर इंगित करते हुए लिखा है —

कोई थी राधा का स्वकीया मानत हैं किमी किमी न थी राधा और कल्याण क विवाह का भी उगन किया है तथा स्वामी हरिदास जी के सम्प्रदाय क उपासना रस का नाम है—निरवधि नित्य निहार इनकी ठकुराइन कुज विहारिणी राधा स्वकीया तो हैं किन्तु वे वृषभानु गाप क घर जन्म नही लेती और न स्नक ठाकुर कुज विहारा हा न'बाबा के घर प्रकट हुए ।'

य परस्पर विरोधा वक्तव्य वस्तुतः हम एक ही निष्कर्ष तक पहुँचाते हैं कि स्वकीया भवधा काइ विवाह या अन्तर दाना म नही है परन्तु इसका अर्थ यह भा न लिया जाय कि दोना सम्प्रदाय ठीक एक दूसरे क प्रतिरूप है । उनम अतिरिक्त अर्थ अन्तर अवश्य है । मक्षण म हम नीच इन अन्तरो को उपस्थित कर रहे हैं —

(१) प्रारम्भ म ब्रजनाता एव वृष्णावन (निकुज) लीला म काइ स्पष्ट अन्तर का धारणा राधावल्लभ सम्प्रदाय म नही थी जबकि यह धारणा प्रारम्भ म हरिदासीय सम्प्रदाय म विद्यमान थी । पीछे हम दिवा चुके हैं कि सत्ता सम्प्रदाय म कल्याण नन्द मुवन ब्रजपति जस नाम नगभगनी आते हैं पर राधा बल्लभ सम्प्रदाय म प्रारम्भ म ही इनका प्रभूत उपयोग हुआ है । हिनहरिवग जी न अर्पनी रचनाषा म कल्याण नन्दनन्दन गावधनघर ब्रजनाथ एव वृषभानु

१ डॉ गोपालदत्त गर्मा स्वामी हरिदास का सम्प्रदाय और उपासना षाणी साहित्य पृ० २६५ (अप्र० प्रब०) ।



नदिनी जस गदा का उपयोग किया है । उगान राधा एव कपल के जन्म की बचान्या भी गायी है —

सली बधभानु गोप के द्वार ।

जन्म लियो मोहन हित श्यामा भ्रानद निधि मुकुमार ।

तथा

भ्रानद आज नद के द्वार ।

दास भ्रानय भजन रस कारण प्रगट नाल मनोहर खार ।

श्री हितहरिवंश न राम क भ्रानक मनोहर वरण किय है । उनम एव स्थान पर स्पष्ट रूप म भागवत की परम्परा म वे युवतिया को उचित रूप से परिभन चुम्बन और भ्रातृगन का सुग कृष्ण म प्रदान करवान है —

सकल उदार नपति चूडामणि मुख वारिद बरपायी ।

परिभन चुम्बन भ्रातृगन उचित जबति जन पायी ।

पर इस प्रकार के वरण सखी सम्प्रदाय म नितान्त विरल है ।

(२) सखिया क क्षत्र म स्वामी हरिदाम न कवन ललिता (हरिदामी) का नाम लिया है पर हितहरिवंश जी ने ललितान्क कहकर जस पौराणिक सनितादिक सखिया की धार सक्त किया हो । कम सक्त का हो माना प्रहण

१ हितहरिवंश स्फुटवाणी ४७ = ११ १५ १६ १८ १९

हित चौरासी १८ ३३ ४३ ४५ ४८ आदि ।

२ वही स्फुट वाणी १६ ।

३ वही वही ११ ।

४ वही हित चौरासी ३६ ।

५ खलन रास दुत्तहिनी दूलठ ।

मुनठ न सखी सहित ललितादिक निरलि निरगि नननि किन फूलठ ।

—हि० चौ० ६२ ।

नूननाय

एव परिव्वग बरानिमग स्निग्धक्षणोद्दाम विलास हास

रम रमगो ब्रजमुदरोमिययामक स्वप्रनिबिम्ब विभ्रम ।

—श्रीमद्भागवत १०।३३।१७ ।

तथा

स्निग्धनि कामपि चुम्बनि कामपि कामपि रमयनि रामाम ।

—गान गोविन्द पृ० ११ । (चौखम्भा सस्कृतन सोरोठ १९४८) ।

वर प्राण च न कर ध्रुवनाम जी न अष्ट प्रमुख मन्विद्या फिर उनकी आठ आठ सन्विद्या तथा अष्ट सन्विद्या का उल्लेख किया है। तलित्ता विगाया रगत्वा विद्या तुंगविद्या चपकनना ग्लुलखा एव मुन्वी अष्ट प्रमुख मन्विद्या है।<sup>१</sup>

यह अष्ट सन्विद्या माना मान्यात हित (प्रेम) का मूर्तिर्षी है तथा सवा म अष्टाधिक प्रवाण है इनक भी आठ आठ सन्विद्या है जा उहा क मुख म रगा रहनी है। उनक नाम बण मवा एव वन्ना का विवरण ध्रुवदाम जा न पुगणा क अनुसार लिया है —

अष्टसखी मनो मूरति हित की अति प्रवीण सेवा कर चित की।  
आठ आठ सहचरि तिन सगा रगी निरतर तहि मुख रगा।  
नाम वरन सेवा बसन जस मुने पुरान।  
ते सब व्यीरे सौ कहीं आपनि मति अनुमान।<sup>१</sup>

इन सबका उपरोक्त प्रम म ब्रह्मन करन क बाद लगक न पुन अपन मूचना-ज्ञान का नाम निभ्रात रूप स स्पष्ट कर दिया है। यह ज्ञान है गीतमाय तत्र —

कहे गीतमी तत्र म इन सत्त्वियन क नाम।  
प्रथम बर्द इनक चरन सेवहु स्यामा स्याम।<sup>१</sup>

अष्ट सन्विद्या आदि क नामा की यन्ने परम्परा गौडोय वष्णवी म भी स्वीकृत है। एसा लगना है कि ध्रुवनास क समय तत्र रूप एव जाव गास्वामी का प्रभाव यथष्ट रूप स अष्ट सम्प्रदाय क सिद्धान्त-ध्ववन्ना पर वत् चुवा था। पर जगता है कि अष्ट सन्विद्या क नामा क वाग् म ध्रुवनाम निश्चित नहीं थ। रसानन्द जीना म एक दूसरा ही परम्परा उहातन प्रतिष्ठापित की है। इसक अनुसार ललिता विगाया वन्ना स्यामा चन्ना मुन्विता, नन्विता एव भामा म आठ मतभार्द सन्विद्या है जा कि रान-दगन स बभा ना तप्त न्नी हाती है। एन आगा क भी सवावाय का विवरण कहीं पर उखक न लिया है।

परन्तु हरिदासी सम्प्रदाय म इस प्रकार सन्विद्या का कोई निष्पण अथवा विभाजन हम प्राप्त नहीं हाता। हरिदामा सम्प्रदाय म यन्नि मुख्य मन्वा काई है

१ ध्रुवदास सभामडल सीला (बयालीस सीला पृ० १ १ २)।

२ यही, रस भुक्तावली सीला (बयालीस सीला पृ० १४८)।

३ वहा, वही पृ० १५२।

४ यही रसानन्द सीला पृ० २५०।

भी ता स्वयं हरिदासी (या ललिता) श्रेय रूप सखिया मान सखा है। हरिदासी क स्वान पर हिनरूपा सखा की कल्पना राधावल्लभ सम्प्रदाय म भी है पर ब्रजलीला की पौराणिक कल्पना सखियो क नाम रूप सखा वस्त्र आदि क वर्णन म इस सम्प्रदाय के भातर प्रविष्ट अवश्य हो गयी है। जना अवश्य है कि सखिया म भी पाँच प्रकार की सखिया या सखी एव मजरी आदि क भेद उन सम्प्रदायो म उपलब्ध न होत हान।

इसक प्रतिरिक्त कुछ सामान्य अंतर—जिनका कि परिमाणवाचा कोई पुष्ट समथन नही किया जा सकता—और भी पता पत प्रनात हाते है। राधा वल्लभ सम्प्रदाय म राधा का रूप हम सखा सम्प्रदाय का अपक्षा अधिक उभरता प्रतीत हाता है। इसा प्रकार बृत्तावन क बार म भा राधावल्लभियो क कथन अधिक भास विह्वल एव विदग्ध लगत है। ध्रुवनाथ न अपन सम्प्रदाय क रस का नाम ही बृत्तावन रस अभिहित किया है।<sup>१</sup>

कालक्रम म पूर्ववर्ती हान क कारण हमन हरिदासा सम्प्रदाय क युगल उपास्य धाम परिकर उपासना भाव का विस्तार स उपस्थित किया है। समा नता की मात्रा क अधिनय क कारण राधावल्लभ सम्प्रदाय क प्रसंग म भी उही बातों को दाहराना उचित नही है। समाप्त नम यनी राधावल्लभ सम्प्रदाय क उपास्य धाम परिकर उपासनाभाव आदि का निरूपण अलग स नही कर रहे है।

### हरिदासी एव राधावल्लभीय सम्प्रदाय की मुख्य विशेषताए

- १ प्रेम ही परतत्त्व है।
- २ उमका प्रकाशन 'याम 'यामा क रूप म हाता है।  
'याम 'यामा नित्य विहार म निमग्न रहत है।
- ४ गतिन गतिनमान जस सबध अनगना क पारस्परिक सबध का व्याख्यायित नहा कर सकत।
- ५ प्रेम और भक्ति क क्षेत्र म राधा का स्थान प्रमुख है।
- ६ अय मार अवतार विहारा जी क हा भग है पर मृष्टि क पावन

१ (क) रविज अतन्वनि कृपा मनाऊ बृत्तावन रस कुष्टु इक गाऊ।  
—श्रवदास रसमुक्तावलीसाता (ब० सी पृ १६७)।  
(ख) वमना निधि अरु कृपानिधि श्री हरिवन उदार।  
बृत्तावन रस कहन की प्रकट धरयो अवतार।  
—बहा रहस्यमजरी सीला पृ० १८४।

मृगन या सहार स उनका प्रत्यक्ष सबध नही है । या ससार की सृष्टि भी उनकी माया हा है पर वास्तविक नित्य स्वरूप नित्य विहार म ही है ।

- ७ यह रूप नित्य किंगोर ब्रजमा है ।
- ८ ब्रज मथरा द्वारका आदि की काव्य पुराणादि वखित लीलाओ से इन सम्प्रदायो का काई प्रत्यक्ष सबध नही है । यहाँ तक कि ब्रज लाला का माधुय रस इस विहार रस क एक कण के छलक जान स उत्पन्न है ।
- ९ इसी कारण परिकर एक धाम की जा विस्तत विवेचना गौडीय वणवो म उपलब्ध है यहाँ पर उसा अभाव है । पर यह अभाव किसी प्रकार की हानता का सूचक नही है । यह आवश्यकता न होने क कारण है ।
- १० गुरु श्री राधा क समान हाता है । दोनो ही सम्प्रदायो ने अपन अपन सस्थापका का उपास्य क पद तब पहुचा दिया है ।
- ११ जीव का उपासना सहचरी भाव से करनी चाहिए ।
- १२ सहचरी भाव म पुरप भाव का अभाव हा जाता है तन मन निविकार हो जाते है एक नित्य-कुज विहार म सेवा करने की उत्कठा तथा विहार दशन की ही लालसा रहती है ।
- १३ सहचरी लाल-लाडिले क सुख म ही मुखी रहती है इसलिए उसक भाव को तस्मुखी भाव कहन है ।
- १४ सहचरी क स्वरूप म प्रेम दास्य एक सम्य का अद्भुत संयोग रहता है ।
- १५ नित्य विहार दशन ही जीवन का परम पुरपाय है ।

## गोपीभाव एव सखीभाव की तुलना

### गोपीभाव

### सखीभाव

- |   |   |
|---|---|
| <p>१ कृष्ण ही परात्पर तत्त्व हैं ।</p> <p>२ (क) श्री कृष्ण की ब्रजलीलाएँ उपास्य हैं ।<br/>(ख) ब्रजलीला का अप्रकट स्वरूप गोलोक लीला है ।</p> <p>३ राधाकृष्ण की क्रीडाभा म निस्सग सुखानुभव यहाँ नहीं है ।</p> <p>४ नायिकाभा म स्वकीया-परकीया का भेद परकीया क आघार पर विरह की प्रोज्ज्वलता और तीव्रता गोपीभाव की साधना म ही है ।</p> <p>५ ब्रजलीला का सारा प्रमग पौराणिक है । लाव म घटन वाली समस्त घटनाएँ यहाँ सङ्गठित हैं ।</p> <p>६ श्रीकृष्ण क अवतार काल की रास सहचरी गोपियाँ हैं ।</p> | <p>१ रस ही परात्पर तत्त्व है ।</p> <p>२ (क) नित्य वृंदावन धाम की निकुञ्जलाना हा उपास्य है ।<br/>(ख) निकुञ्जलीला उपासका क लिए नित्य प्रकट और सासारिक जीवा क लिय अप्रकट है ।<br/>निस्सग सुखानुभव विद्यमान रहता है ।</p> <p>४ इसम विरह का कोई स्थान नहीं है । स्वकीय परकीय भेद भी नहीं है ।</p> <p>५ पुराणो का आघार छोड दिया गया है ।</p> <p>६ गोपियाँ नित्य धाम की नित्य सहचरी है ।</p> |
|---|---|

## निम्बाक सम्प्रदाय मे उपास्य, परिकर धाम एव उपासना भाव की कल्पना

सम्प्रदाय मे नित्यविहारोपासना का इतिहास

रमापामना क ऐतिहासिक विकास क्रम म निम्बाक सम्प्रदाय की स्थिति प्राथमिक विकासस्थल है । बल्कि यह कल्पना अत्रिज उचित होगा कि निम्बाक मत म कम बातें एमा निवृत्त जा निविदा रूप स सबका स्वाभाव हा । एय निम्बाकाचार क उद्भव क सबध म परम्पर कतना भिन्न रायें और प्रमाण उद्भूत विद्य जात हैं कि सत्य उन प्रमाणो स ना प्रावृत्त हा जाना है । रमापामना क क्षत्र म विवाह और सत्य का क्षत्र और अत्रिज बन् जाना है । निम्बार्कीय मानत हैं कि रमापामना या युगतापामना क प्रकृत निम्बार्काचार या य प्रमाण स्वरूप रमापामना का प्राथमिक स्वरूप —

अ गतु वाम वयभानुजा मुदा बिराजमानामनुरूप सौभगाम ।  
सती सहस्र परिसेविता मुदा स्मरेण देवी सकलेष्टकामदाम ॥

उद्धृत किया जाता है। निम्वाक का समय भा सम्प्रदाय व उत्साही गोषक विभ्रम की ६ठी स ८वीं गता ती तक निश्चित करत हैं ।<sup>१</sup> इस प्रकार दग दनाकी का समय भी यही हा जाता है। परंतु दूसरी ओर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदान दगदलोकी को १८वीं गती की प्रक्षिप्त रचना माना है।<sup>१</sup> निम्वाक सम्प्रदाय व रस सबधी आकर ग्र था आदिवाणी और महावाणी व सबध म पर्याप्त गता प्रकट की गयी है। पर्याप्त विचार एव मनन व बाद हमारा मत है कि निम्वाक सम्प्रदाय म मधुर रागमयी उपासना वाद को प्रचलित हुई है।

इस स्थापना का प्रथम प्रमाण यह है कि निम्वाक सम्प्रदाय क सस्कृत ग्रंथा म हम माधुय उपासना के विवरण लगभग नहीं ही उपलब्ध हाते है। इस बात का स्वय निम्वाक के अय गोषक भी स्वीकार करते ह।<sup>१</sup> यदि दगदलोका का प्रमाण भी माना जाय तो उससे सखी भावोपासना या युगल अद्वय रूप की वसी स्पष्ट कल्पना प्राप्त नहीं होती। इसके अतिरिक्त इन सस्कृत ग्रंथा म युगनोपासना के सहस्ररी रूप का समुचित विवरण उपलब्ध नहीं हाता।

य आचार्य की बात कही जायगी कि जा छिपाने की वस्तु है वह जन भाषाभाषा म यक्त हा गयी थी जा भाषा उस छिपा सकती थी उसम वह अप्रकट ही रही। गीता की कणककाश्मीरीकृत तत्त्वाथ प्रकाशिका यास्याकी अनुक्रम एिका स भगवान के जम सने का प्रयाजन बताया गया है जो इस प्रकार है —

भाषावन घम न प्रचरत का अभाव देख कर ससारी जना व उद्धार के लिय अपने स्वरूप जान और भक्ति का प्रचार करन व त्रिए तथा अपन दगनाय चातकवत उरकटित मनयात्रित प्रमा भक्ती को सौदय माधुय तावष्य भासि स परिपूण अपनी छवि न दगन मधुर आलाप मनाहर लीला आदि उनकी मनोभिलाषा पूति करने व लिए अपन समग्र गुण और गक्ति समन भूमारहरण व बहाने स भगवान थी कृष्ण प्रकट हूण थ।

१ (क) श्री धजयल्लभारण वेदाताचार्य युगल गनक की भूमिका पृ० १६ २०।

(ख) डॉ० नारायण वल्ल गमा निम्वाक सम्प्रदाय और हिंदी कृष्ण भवन कवि पृ० १४ १५।

२ डा० ह० प्र० द्विवेदी हिंदी साहित्य पृ० ११६।

३ डा० ना० द० गमा नि० स० हि० कृ० म० क० पृ० १२७।

राम भग को उद्धत करत हुए डा० नारायण दत्त गर्मा ने निष्कप निराला है कि इसमें भगवान् क आधिभाव का प्रयाजन भक्ता की रममयी उपासना का ही बतलाया है।<sup>१</sup> हम इस निष्कप से सहमत नहीं हैं। भगवान् क अवतार का ऋतु भक्ता की लाला दगन कराना आन द दना है यह मत य भक्तिकाल क सम्पूर्ण सम्प्रदाय का रहा है। तुलसीदास न भा भगन ऋतु भगवान् राम का जन्म लना माना है एव गौडीय वष्णुवा म भी विन्वाम था कि भक्ता पर अनुग्रह करन एव स्वलीला कीर्ति विस्तार क लिए भगवान् प्रकट हात है।

मस्कृत एव हि दी का इन रममयी उपासना वाल ग्र था म निम्बाक का मिद्ध ऋतु को नकर भी दा परम्पराए प्रकट हुई हैं। पुरानी साम्प्रदायिक परम्परा क अनुगार वे भगवान् विष्णु क सुदगन चत्र क अवतार हैं एव बागीप्र था क अनुसार उह रग दवी सखी का अवतार माना गया है। स्पष्ट है कि एक भगवान् विष्णु और उनक विभुत्व तथा गतिगतिव स सबधित परम्परा है एव दूसरी कृष्ण क माधुय एव विनास स सबधित है। ऐसी स्थिति म यह निष्कप निकानना अनुचित न होगा कि रममयी उपासना की परम्परा सम्प्रदाय का नवीन अजिन सम्पत्ति है। यह बान तनिक भी अपमानजनक नहा हागी कि नयी परिस्थितिया म उपासना का नवानाकरण किया जाय। यह बान दूसरी है कि रम स्वीकार कर नन स समस्त माधुय भावना का स्रोत एव प्रस्तोता बनने का गौरव छिन जाता है। पर हिने का य म ता इम परम्परा क प्रथम प्रयोक्ता का गौरव शप रह ही सकता है। कुछ विद्वानो न रम गौरव को गाव की अधिकृत मुन्ड लगा कर प्रामाणिक बना रना चात् है।<sup>२</sup>

रम अध्याय क पूव लिखित पृष्ठा म हमन माधुर्योपासना के क्षत्र म दा स्पष्ट परम्पराए दला है। एक रम ब्रज नीना गायक की परम्परा बह सकत है। दूसरी परम्परा गुड बदावन माधुरी मा निकु ज लाला क गान की है जिसम कि

१ डा० नारायण दत्त गर्मा निम्बाक सम्प्रदाय और हि दी कृष्ण भक्ति-कवि (धप्र० प्रब०) पृ १२५।

२ लष भागवतामत पृ० २४।

३ (क) धो भट्ट जा एव हरियासत्र जी रसिक भावना क क्षत्र म सभी रसिकों क पूववर्ती थे। धत निर जापासना प्रवत का यय निम्बाक सम्प्रदाय क आचार्यों को ही जाता है। डा० ना० द० गर्मा धप्र प्रब पृ ६१।

(ल) धो भट्ट जा ब्रजवाणी क सबप्रथम अमर गायक है। युगत गनक की परम पवित्र परिष्कृत एव ललित भाषा ब्रजवाण्य का प्रथम रूप है। वही पृ ६ ६०४।

प्रवण सखाभाव स हा ना मकता है। निम्बाक सम्प्रदाय क वाणा-गाहित्य एव तत्सत्र गी लखन म य दाना परम्पराए विचित्र भाव म गु थी दृइ हैं। कभी कभा एमा लगता है नि अत्यन्त याजनाप्रद रूप म ममस्त परम्पराआ क उल्लस्य प्रसगा या विचारा का अवन सम्प्रदाय क अतगत भी लिखाया जाय एव इन वाता का सम्प्रदाय क मान्दित्य म काफी पहल का दिग्वा कर परम्परा क प्रस्थापन की महिमा भी बटार ला जाय।

श्रीभट्ट की आन्ध्रवाणी एव श्री हरि यास देव का महावाणी एस सम्प्रदाय का समापासना क मुख्य आन्तरग्रय ह। परंतु इन गाना क वातनिरणय क संवध म बडा भ्रम है। नाभाणाम क भक्तमान म इन दाना व्यक्तिया का उल्लख हुआ है एसम इतनाता निदिचन हा जाता है कि १७वी गती विप्रमी क पूवाद्ध मय अवश्य उपस्थित रह होंगे। या अभी हाल म ही नामा ना क भक्तमाल म १८वीं गती क प्रथम दान क कवियों (यथा भगवतमुदितए व राधावल्लभिय चतुमु जदास) का संवत प्राप्त किया गया है।<sup>१</sup> और एस स्वीकार कर लन पर एन महानुभावा का समय विप्रम का १७वी गता क अन्तिम भाग तक खीचा जा सकता है तथा नयम वान पुनि राम गणि मनी अ क गति वाम म सम क स्थान पर राग पन्न स स जा मवत् १६५० ममय प्राता है उमकी भा रक्षा हा सकती है। पर इधर यह मिद्ध हा गया है कि यह दाहा वाट का जाडा गया है पुराना प्रनिमा म यह उप लय नही है।<sup>२</sup> डा० गोपालदत्त गर्मा न उनका समय स० १५५० क आसपाम अनुमान किया है। बहरहान संवत क विवाट म पन्ना हमारा उद्देश्य नही है पर भरा अनुमान है कि श्रीभट्टजी १६वी गती वि० क उत्तरार्ध क पूव नही थ। डा० गोपालदत्त जा न एमा प्रमग म आग रियासदव जी का समय १६२५ क आसपास माना है जा अधिक मत्तुनित प्रतात हाता है।<sup>३</sup> यह मवत नमिह परिचया क लखन क आधार पर है। नमिह-परिचया उतना महत्त्वपूर्ण पुस्तन नही है अत बहुत संभव है कि हरिध्याम देव का उल्लस्य कायकान इमम बाद का मवन १६५० क आसपास का हा।

अस्तु डॉ गोपालदत्त गर्मा द्वारा मुभाय मय मवता का स्वाकार कर लन म वाट भी आन्ध्रवाणी एव महावाणा का और अधिक परवर्ती मानन क निगहम बाध्य है। कहा जाता है कि इन दाना अथा का मकतन आन्ध्रपरमिक

१ वासुदेवस्वामी नागरी प्रचारिणी पत्रिका वय ६४, संवत् २०१६ अ क ३४।

२ डॉ० गोपालदत्त गर्मा स्या० ह० स० वा० मा० (धप्र० प्रच०) पृ० ४२०।

३ वही, पृ० ४२४।



देव जी न किया था। निम्बाक सम्प्रदाय के योगान की प्राचीनता के अत्यन्त उत्साही समर्थक डा० नारायण दत्त गर्मा न लिखते हैं। युगन गतक का निज भजन भाव रुचि से श्रीरूपपरसिक जी न ही विभिन्न सुखों में विभाजित किया है। ऐसी स्थिति में यह कहना कठिन हो जाता है कि इस मकलन में रूपरमिक देव जी की स्वयं की कितनी भजन भाव रुचि मिल गयी है। इस समय युगल गतक की जो प्रकाशित प्रति प्राप्त है उसमें भी उसके सम्पादन प्रकाशन में भाषा छानादि के परिवर्तन कर लिये हैं।<sup>१</sup> फिर प्राचीन प्रतियाँ में भी छान मर्यादा का उल्लंघन लगभग दुगुण का अन्तर है। अर्वाचीन प्रतियाँ में १०० दोहा और १०० पंक्तियाँ मिलती हैं जब कि प्राचीन प्रति में ६२ पंक्तियाँ और १२ दोहे। इस प्रकार दोहा और पंक्ति गिनाकर संख्या १४ हो जाती है। ऐसा स्थिति में युगल गतक की प्राचीनता अथवा प्रामाणिकता पर भरपूर शक्यता उठती है। नाभाशास्त्र के अन्वय से इतना तात्पर्य है कि वे मधुर भाव से कलित भगवान की ललित लाला सुवर्णित छवि का देखन गये थे एवं उस प्रेम की वषा में सुन्दर कविताएँ लिखी थीं। पर इस प्रेम और लाला के स्वरूप में कितना अन्तर परवर्ती संपोषकान जाड़ा है इसका निराकरण नितांत दुष्कर हो गया है। बहुत संभव है कि यह लीला भागुरी सूरदासादि के समान रही हो। पर इतना अवश्य लगता है कि निम्बाक सम्प्रदाय की वधी परम्परा के स्थान पर रागमया भक्तिक क्षत्र में श्रीभट्ट जी का प्रवेश हुआ गया था।<sup>२</sup>

प्राणवाणी (युगल गतक) से भी अधिक विवाद श्री रामदेव जी का महावाणी का सन्दर्भ है। आचार्य हजारी प्रसाद त्रिबेदी ने तो उस १६वाँ गीता की रचना माना है। नाभाशास्त्र में अर्पण भक्तमान में उन्हें परम कृष्ण देव का भाव दोषादन वाला बनाया है पर इनकी रस राति की चचा नहीं का है। हरिराम व्यास ने भी महावाणी जन्म वाकसिद्ध रस प्रयत्नकार का उत्कर्ष नष्ट किया है। अतः यह शक्यता है कि महावाणी का मूलन उनका द्वारा नष्ट हुआ। निम्बाकीय इसका कारण यह बताया है कि अत्यन्त गान हीन के कारण ही इसका प्रचार नहीं हुआ। पर गायत्रीयता का बान तो रामोशमका ने प्रत्येक सम्प्रदाय में रखा है। इसमें भी अधिक शक्ति के अन्तर्गत वातावरण है कि महावाणी परित्याग देव जान करमिक देव जा के स्वप्न में प्रान्त का था और उसकी रम-भाषना का विस्तार देन का प्रान्त किया था। यहाँ तो परगुराम देव जी से विरक्त कृष्णवादाभाषण करने का भी उक्त प्रान्त प्रमा।

१ डा० नारायण दत्त गर्मा अग्र० प्रब० पृ० २३४।

२ भजनमाला पृ० ७६।

३ आचार्य हजारी प्रसाद त्रिबेदी साहित्य पृ० १८६।

४ डा० ना० द० गर्मा अग्र० प्रब० पृ० ३२०।

इस तथ्य का तनिक इस क्रम में रख कर विचार किया जाय तो बात अधिक स्पष्ट हो जाता है —

- १ हरिदास दस जी का अपना जीवन-काल में रमिक साधक व रूप में प्रतिष्ठि प्राप्त नहीं हुई थी। या गायल थी भट्ट जा व प्रभाव में व नीला रस ममुत्सुक रह हा पर उमक समय प्रस्थाना या प्रयात्ता व नहीं थ।
- २ उत्पान मन्नावाणी का तपन स्वयं नहीं किया था बल्कि स्वप्न में रूप रमित स्व जा का प्रगन किया था।
- ३ हरिदास दस जी व १० प्रमुख गिप्य थ और राम भा मरमादात् पीठ व परगुराम देव जी मवप्रमुख थ। हरि दास स्व जी न इनम म किमी का भी अपना रस गीति प्रदान न्ना की।
- ४ रूपरमित दस जी न परगुराम दवाचाय म नी वप्यगव दासा ग्रन्थ की अत उही व गिप्य हुए।
- ५ परगुराम देव जा उहे आचाय न्ना नहीं थ ममय कवि भी थ परगु राम मागर उनका प्रभुग काव्य ग्रन्थ है जिमक आचार पर डा० नारायण स्न गमा न लिए व दिया है कि परगुराम दस जी महान कवि है।<sup>१</sup>
- ६ इस ग्रन्थ का मुख्य प्रतिपाद्य गुरार या माधुय भाव नहा है। दसका मुख्य रस गान है अन्निगुणी परम्पराभा का रमम जमकर अमि व्यक्ति मित्री है।
- ७ ऐसी स्थिति में यदि यह निष्पक्ष निराना जाय कि रूप रमित स्व जा व मन में परगुराम जी की निगुण मगुण-रम-वय वाता भावना व प्रति विषय आकषण नहीं था, एवं उमक स्थान पर ममकालीन रमावात्तना उत्त आकर्षित कर र्ता थी आधुनिक मनावितान का स्वप्न दान रम आचार पर यहा बहगा कि उमक अवसनन में पही इन रना वाता न हे स्वप्न में आवाग घ हए किया। गुण व प्रतिजा अनाकषण था उमन गुण व भा गण का स्वप्न में बुना किया एवं पुणन की रममया उपामना गता तो प्रत्यक्ष ही प्रकट हुए। रम प्रकार निम्बार्कीय ज्ञान हुए भा व निम्बार्कीय परम्पराभा स अन्त हूय एवं अन्त ममकालीन कविधा अथवा मायनाभा न प्रभावित हा कर मन्नावाणी रचना रूपरमित जी न का। डा० नारायण स्न गमा न भी म्वाकार किया है कि रूपरमित जी व हाया नी कुछ

सस्कारसंभव है। इसकी प्रतीति हरि याम गंगामत म महावाणी के महिमागान म हानी है ।

- ८ निम्बार्चीय परम्पराद्वा म पृथक् हो जान की बात हमसे भी सिद्ध होती है कि स्परमिक देव क समकालीन या परवर्ती बंदावन त्वा चाय (विक्रम की १८ वा गीत क उत्तरा ५) का गीतामृत गगा ग्रन्थ भी बसा गुद्ध रगापासना का ग्रन्थ नहीं है जसा कि मन्वावाणी है।

स्परमिक देव जी के काल निगम्य का भगडा फिर खटा हाना है। उनक गन्ध भीना विगति क सम्बन्ध निर्धारण क निये दा पाठा वाला दाहा प्राप्त है। एक म सवत पराराम जु सत्यामिया आता है एव दूमरे पाठ म मतरास जु सत्या सिया बनाया गया है। प्रतिया क सक्तो क मिलान या निगम्य का काय हामरे क्षेत्र क बाहर है पर एक तथय की आर उचित करना उपयुक्त होगा। स्परमिक देव जी पराराम देव जी स दीक्षा लत हैं एव पराराम जी का समय स० १६८ के बाद तक माना जाता है। इधर स्परमिक देव के समय क बारे म हम कुछ अन्ध तथय भी प्राप्त हैं। बगीछनि जी के गिष्य विगारी अलि जी की वाणी का सग्रह हम उपलब्ध हुआ है। प्रति १६ वी गीत की प्रतात शोनी है तथा अन्ति भी है। इम प्रति म सवत १८३१ तक क पत्रादि भी सगृहीत है। इसने आचार पर जान हाना है कि स्परमिक जी १८ वी गीत क अन्त एव १८ वी गीत क प्रारम्भ म विद्यमान थे। अगरे अध्याय म स्परमिक जी का काल निगम्य करने म हम इम पुस्तक की सामग्री को पूरी तरह उपस्थित करेंगे। पर तु एत आचार पर पराराम त्व एव हरियाम देव का समय और अधिक परवर्ती प्रतीत हाना है।

पाठ कह गय एक और तथय का हम यहाँ दात्रा देना चाहत हैं कि हरियाम देव जान मिद्वान रत्नाञ्जलि आदि म जिस प्रकार पक्ष भक्तिरमा का विवचन किया गया है वह ठाक गौरीय बष्णव परम्परा म है। हम जगता है कि याना य अंग प्रतिज्ञ है या फिर हरियाम त्व गौडीय बष्णव क बाट टूट है। हमारा अनुमान है कि एम प्रथम बाट म सम्प्रदाय क अनुयायिया शरा किय गए हैं। एक आर उहान शास्त्र क स्तर पर भक्ति का विवचन गौरीय बष्णव क प्रभाव म किया और दूसरा आर अन्तिमाय एव राधावल्लभाय मता क रम उपा मना-सबधी दृष्टिकारण का भाषण किया। समकय एव अन्त का यत् काय १७ वी १८ वा गीतिया म पुण रूपण सम्पन्न त्वा है। आताउ पाप कान म माधुर्योपमना या प्रमा भक्ति का पर्याप्त प्रकार हम सम्प्रदाय म हा चुरा या

अत इन ग्रन्था न आधार पर हम उपास्य उपामना आदि का निरूपण कर सकते हैं ।

इस संबन्ध म पत्नी ध्यान ेन याग्य बात है कि निम्बार्कीय दृष्टिकोण म (जसा कि हम पीछे भी सकेत कर चुके हैं) गौडीय बण्णव एव सखी साधना दोना का हा समन्वय हुआ है । दार्शनिक दृष्टि से बसा पुष्ट निरूपण इनम हम प्राप्त नहीं होता जसा कि गौडीया म हम देख चुक है ।

### सर्वेश्वर

इस सम्प्रदाय क मुख्य उपास्य था सर्वेश्वर है । यह ग ८ उनकी विभुता एव एश्वय का सकेत करता है । यही परात्पर तत्त्व है यही आत्नि मध्य रहित कृष्ण भी है । सारे अवतार उही के अंग हैं । एक रस रहन वान वे समस्त ससार क बायों एव वस्तुआ क कारण है ।<sup>१</sup> वे अज मा तो ै हा अत्यन्त मुदर एव अानन्दमय भी है । वे परम मुदर बकुण्ठ क निवामी समम्न मुग्धा क सारतत्त्व अतुलनीय माधुय एव अमीम ऐश्वय के निधि है ।<sup>२</sup> वे जो एक अद्वय तत्त्व है अर्पनी इच्छा स ही दो हा जान है ।<sup>३</sup> वृन्दावन देव जी ने तो उनकी भूतिमान शृंगार एव सब रसा का आधार कहा है । रस पापण करन वाली समस्त गतिया का साथ लकर वे अज विहार कर रह है —

भूतिमान शृंगार हरि सब रस की आधार ।  
रस पोषक सब गवित से अज मे करत विहार ॥

राधा उनकी आह नादिनी गति हैं जिनक साथ वे नित्य विहार करत हैं ।<sup>४</sup> राधा का कृष्ण का स्वीया<sup>५</sup> के रूप म ही स्वीकार किया गया है । निम्बार्क सम्प्रदाय म इस प्रकार दोना परम्पराधा का समन्वय करन का प्रयत्न हुआ है । इच्छा स ही एव तत्त्व का रूप म विभाजित हा जाता है यन् बात सखी सम्प्रदाय क अनुकूल है एव राधा ह लान्तिना गति ै क गतिमान् है यह कथन गौडीय बण्णव मतवाण ना स्मरण कराता है । परन्तु राधा का स्वकीयात्व गौडीय

१ महावाणी पृ० १७७ १७८ पद सख्या १४ ।

२ यही सिद्धांत मुख ६ पृ० १७६ ।

३ यही सिद्धांत मुख १४ पृ० १७७ ।

४ ब्रह्मादन देय योता मतमणा प्रथम पाठ ५ ।

५ यही प्रथम पाठ ३ ।

६ महावाणी सिद्धांत मुख ५ तथा यमल गतक पद १६ २० ।

बध्नावा स निता त पृथक् है । या युगल रूप क चित्रण म एकत्र सखा सम्प्रदाया  
जसी भावना क दान होन लगत है —

प्यारी जी प्यारे की जीवन प्यारो प्यारी प्रान अधार ।  
प्यारी प्यारे का उरमाता प्यारो प्यारी के उरहार ।  
प्यारी प्यारे रग महल म रग भरे दोउ करत विहार ।<sup>१</sup>

गीभट्ट जी न अपन उपास्य का रूप एकत्र स्पष्ट ग न म उपस्थित  
करत हए कहा है कि वृत्तान्त म त्रिनास करने वाल प्रिय प्यारे हा न्मारे मय  
है । नन्द नन्दन एव वृषभानु नदिनी क चरणा क व अनय उपासक है —

सतो सेव्य हमारे श्री प्रिय प्यारे ब दाविपिन विलासी ।  
नन्द नन्दन वषभान नदिनी चरण अनय उपासी ।  
मत्त प्रणय वग सदा एकरस विविध निकु जनिवासी ।  
श्रीश्रीभट्ट यगल वशीवट सेवत मूरति सब सुखरासी ।<sup>१</sup>

धाम

महावाणी म धाम क रूप म वृन्दावन की बनी ही उदात्त कल्पना की  
गयी है । उमका चित्रण भी बडे विस्तार म हुआ है । उमकी विरागता का तनिक  
यह गणित दविए —

अखिल ब्रह्माण्ड वराट क ठाट सब  
महा वराट के रोम क कूप ।  
सावकाग उडत रहत नित सहज ही  
परम ऐश्वर्य आचय मय रूप ।  
सो प्रथम एक हा गूय मधि सम रह्यो  
जसे तसरेनु को रेन गत अग ।  
याते दग दगगुनी सहस्रगत गूय पुनि  
तिनते लख सहस्र महागूय अवतग ।  
निन महागूय क निन्वा परतज को  
कोटि गन ते गुनो अति अमित विस्तार ।  
तहाँ निजधाम ब दाविपिन जगमग  
दिव्य वभवत को दिव्य आगार ।<sup>१</sup>

१ महावाणी मिद्वान्तसुख पृ २६ प ६ ।

२ यमन गनक ५ ।

३ महावाणी मिद्वान्तसुख पृ० १०६ ।

एत वृत्तवन म जनों पर कि राधा और उनक प्रिय निरंतर नित्य  
विचार करते रहते हैं जय हो —

जय बंदावन नित्य जय नित्य निकुंज सुख सार ।  
जय श्रीराधा पिय जहा बिहरत नित्य विहार ॥<sup>१</sup>

श्रीमदृजी न उसे ज्ञान मूल क्या है तथा नाम सत ही युगल विचार  
की प्रणयरति देने वाला बताया है ।

### परिचर

परिचर में सखिया की ही कल्पना की गयी है । गौडाय एव राधावल्लभीय  
सम्प्रदाय की भाँति ही यहाँ पर सखिया के सूत्रा अष्ट प्रमुख सखियो एव फिर  
उनकी आठ आठ सखिया (कुल ५७६) की कल्पना की गयी है । इन सखियों का  
नाम रूप वेग एव सेवा आदि की यहाँ पर भी विस्तृत चर्चा है ।<sup>१</sup>

### लीला

लीला की दृष्टि से निम्बाकीया में फिर दोनों परपराए स्पष्ट हैं । यहाँ  
पर निकुंज लीला (कलिका लीला) तथा ब्रज-लीला (आवरण लाना) दाना ही  
का वर्णन किया गया है । इसलिए दोनों ही लीलाओं की सजाएँ एव पात्र भी  
हैं । इसी कारण गावियों का भी वर्णन मिल जाता है । पर गौडीय वर्णना के  
समान लीलाओं का विगिष्ट व्याख्या देकर एक दार्शनिक सिस्टम के भीतर  
समझ का कोई प्रयाम निम्बाक सम्प्रदाय में उपनयन नहीं होता ।

### उपासना भाव

युगल गतक एवं महावाणी दाना ही में जब के लिए साधना माग  
सहचरी रूप में ही स्वीकार किया गया है । यद्यपि इस अवस्था तब पहुँचने के पूर्व  
एक पटिया का कल्पना की गयी है और ये पटिया बहुत कुछ वधी भक्ति की हैं ।  
संभवतः एक पटिया की स्थिति को ध्यान में रख कर ही आषाढ हजारोप्रसाद  
श्रवण न निम्बाक सम्प्रदाय में वधी भक्ति की ही स्थिति को स्वीकार किया है ।<sup>१</sup>

१ महावाणी सिद्धान्त सुग १७० ।

२ यगल गतक पद ३ ।

३ महावाणी सिद्धान्त सख, पृ० १७८ १८५ ।

४ बंदावनदेव गोतामन-नागा, प्रथम घाट ।

५ डॉ० हजारी प्रसाद श्रिवाही हिन्दी साहित्य पृ० १६८ १६९ ।

पर वास्तव म मात्र वधी प्रारम्भ म ही स्वीकृत रही है अपन म परवर्ती विक्रम म सम्प्रदाय म रागानुगा का पूरी तरह स्वीकार कर लिया गया है । महावाणी आदि म सखिया की विविध सेवाया का विस्तार से उल्लेख है एव साधक को उहा सहचरियो के भाव का अनुगमन करके राधा माधव क विहार का तत्सुखी भाव से आनन्द-लाभ करना ही परम काम्य माना गया है । इस सबध म निम्बाक सम्प्रदाय और अन्य सती सम्प्रदाया म विभेत् दृष्टिगोचर नहीं हाता ।

उभक्ति सहचरि निरति सख हिय मे भरी हुलास ।

नव निरु ज रस पु ज छवि श्यामा श्याम बिलास ।<sup>१</sup>

डा० विजयन् स्नातक न स समानता का उक्ति करके ही कहा है —

श्रीभट्ट जी क युगल गतक नामक ग्रन्थ म राधा का स्वरूप नित्य विहार और सहचरी स्वरूप का बड़ी गरस गला म प्रतिपादित किया है । यह ग्रन्थ भावना म राधाबल्लभीय पद्धति म साम्य रखता है । भूतल निम्बाक मत म सखी का स्वरूप युगल गतक की सहचरी म कुछ भिन्न था किन्तु रस माग का प्रवर्तन हान पर रमापामना क अगभूत सखी का ही रूप वही भी स्वीकृत हुआ । महावाणी म तो रसोपामनानुकूल मत्रचरी वर्णित हुई है ।<sup>२</sup>

### वल्लभ सम्प्रदाय मे कृष्ण परिकर धाम इत्यादि की कल्पना

वल्लभ सम्प्रदाय म पूण पुरपात्तम ब्रह्म की कल्पना की गई है । अन्तर ब्रह्म तथा अन्तयामी ब्रह्म भा पूण पुरपात्तम ब्रह्म क ही स्वरूप हैं । वास्तव म म सम्प्रदाय म ब्रह्म क तान मुख्य रूप है पूण पुरपात्तम परब्रह्म कृष्ण अन्तर ब्रह्म एव अन्तयामी रूप । अन्तर ब्रह्म का स्वभाव कम कान भेत् म रसात्मिक दवनाथा क रूप म प्रकट हाना है । ब्रह्म का एव म अन्तक हान की कथा हुई और उमन अपन मन क लिए हा अपना स्वरूप प्रकट किया । म प्रकार मृष्टि आदि उमकी

१ श्रीभट्ट योगल गतक दोहा ७४ ।

२ डा० विजयन् स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य पृ० २० ।

३ दृष्टि-समष्टि-पुरणो जीवभक्त्यायो मता

अन्तर्याम्यन्तर कृष्णो ब्रह्मभदास्तथा पर । तन्दी०नि सव निएय प्रकरण न्नाक ११६ पृ० ३१५ ।

४ अन्तरस्य स्वभावकमकामानेन रसात्त्य । वही- श्लोक की वास्तवमूल व्याख्या ।

इच्छा शक्ति व परिणाम है। यह च्छा गति ही बलम सम्प्रदाय म मायाशक्ति है। पर माया यहाँ पर भूठी नहीं है। इस बात पर बलम सम्प्रदाय म बहुत बज निया गया ह। ब्रह्म म मृष्टि व समवायी आर निमित्त कारण है। ब्रह्म रमा व म शक्ति व अनुमात्र म रूप भी वह है। व म आनन्दकाय विग्रह से अपन म र धाम (गोवर्ण) म अपना च्छानुसार नीता गन रहता है। यह मच्चिदान च्छद्र नित्य है और उसकी नीता भी नित्य है। वह अनन्त रूपावता एव विन्दु धर्मों वा आशय है।

कृष्ण

इस सम्प्रदाय व अनुमात्र स्वय कृष्ण ही रमात्मा रमेश विन्दु धर्मा त्रयी पूण ब्रह्म ह। मूरत्तम आदि ने मा उर इमा रूप म रखा है। मागत व गतकाश वना पु म कृष्णास्तु भगवानस्वयम वा उपयाग रस मप्रदाय म मा किया गया है। हरिणामी सम्प्रदाय व म म ह म रक्षमीपति नारायण के ररचाने की बात कह चक है। मूरत्तम भी बुद्ध उमी टान म वन्त है —

नारायण धुनि मुनि ललचाने न्याम अघर धुनि बन।

कहत रमा सा मुनि मुनि प्यारी बिहरत है बन दयाम।

मन्द आनतु म म नाना वा न श्री कृष्ण म स्त्री व नेखक श्री बलमभावाय यि माय रमात्मक नीतामा म र कर धम-सम्थापन म भी विन्वाम करे तो

- १ अनन्तमूर्ति तदब्रह्म ह्यविमक्त विमक्तिमन् । बहुस्यां प्रजायेयेति वीक्षा तस्य ह्यभूत्सती । ३० तदिच्छामात्रन्तस्माद् ब्रह्मभूताग्नेतना । सख्यादो निगता — सर्वे निराकारास्तदिच्छया । ३१ त०दी०नि० शास्त्राय प्रकरण पृ० ८७ ।
- २ ३० एत०एन० दास गुप्त ए हिस्ट्री आफ इण्डियन फिलासफी खण्ड ४ पृ० ३२८ ३२९ ।
- ३ ३० दीन दयालु गुप्त अल्लख्य और बलम सम्प्रदाय मूरत्तम भाग पृ० ४०२ ।
- ४ तत्याय दीपनिरणय पृ० ११५ ।
- ५ बलमभावाय सिद्धातमुक्तावली, लोक ३ (परब्रह्म तु कृष्णो हि सच्चिदानन्दक बृहत्) तथा लोक १५ ।
- ६ सक्त तत्र ब्रह्माण्ड देय धुनि माया सब विधि काल । प्रकृति पुण्य श्रोपति नारायण सब हैं धम गोपाल । मूरत्तम-ना०प्र०स० १६०० ।
- ७ मूरत्तम, ना०प्र०स० १६८७ ।



आदवय न हाना चाहिए। बल्लभ सम्प्रदाय में उनके चतुष्टय हारमक (धम सम्पापक)<sup>१</sup> एवं रमात्मक<sup>२</sup> दोनों रूपों को स्वीकार किया गया है। देवकी नन्दन वासुदेव धम रश्मि रूप है तथा नन्दमुवन यशोनाथान रमरूप है। परंतु सम्प्रदाय में रमा रमर रमरूप की ही विधि महिमा है। रमी कारण बल्लभ सम्प्रदाय के कवियां न तो नावपु कृष्ण का ही अनन्त वचित्री का गुणांगान किया है। धमरश्मि रूप की धारयन-नत्र सकत मात्र है।

## राधा

प्रारम्भ में सम्प्रदाय में राधा का महत्त्व हम प्राप्त नहीं होता। परिवर्तनाष्टक में बल्लभाचार्य ने पशुपति गापकथा का चर्चा अवश्य की है जिसे कि विज्ञान राधा के रूप में स्वीकार करना चाहते हैं।<sup>३</sup> पर इस बात का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है। रमक अनिरिक्त वह राधा ही है ता फिर राधा नाम देने में आचार्य का चिन्तक क्या रत्ता ? पीछे हम कह चुके हैं कि विष्णुपुराण भागवत पुराण आदि में एक अधिक सौभाग्यशालिनी गायत्री का पता लगता है। पशुपति सम्भवत उन्नी परम्परा में है। रमक भी प्रकृत होता है कि सामाजिक उद्देश्य को दृष्टिपूर्वक में आभन न करने वाले बल्लभ प्रारम्भ में राधा तत्त्व का स्वीकार नहीं करना चाहते थे। रमी कारण उन्होंने राधा तत्त्व का स्वीकार नहीं किया एवं बल्लभाचार्य की उपमाणा पर न बन दिया। परंतु भागवत का प्रमाण मान कर चलने वाला व्यक्ति का ता भाव में बच नहीं सकता। स्वयं बल्लभ ने गायिका का अथवा गुण गाप्यन्तु अम्माक गुरु माना है। तथा एक अर्थ स्थान में उन्होंने यह आवाधा व्यक्त की है कि मर हृदय में गायिका के विरह का दुख रत्ता हा जाया। बल्लभाचार्य ने जानाथ जी की मवा में दा गोपय वपगवा का निधुक्त किया था रत्तान सम्प्रदाय में राधा या गायिकाभाव का ज्ञान में मन्वयना रत्ता हागी। रमके

१ गोकुल प्रकृत मय हरि शर्मा ।

अमर उधारन अमुर सहारन अतर्पामी त्रिभुवनरार्मा । सू०सा० ६३१ ।

२ नित्यधाम वृन्दावन स्थाम नित्यरूप राधा ब्रजवाम ।

नित्यराम जन नित्य विहार नित्य मान धडितामिमार ।

ब्रह्म रूप एर्त् करतार करण हरन त्रिभुवन समार — वही ३४६१ ।

३ डा० मु गाराम गर्मा भारताय साधना और मूरमाहित्य पृ० १२८ ।

तथा

डा० गावधन नाथ शुक्ल परमानन्द सागर भूमिका पृ २३ ।

४ गादिना प्राक्ता गुरव साधन चतत् । मन्वयन नित्य ८ ।

५ बल्लभाचार्य निरोधनभरण्णु — १ ।

अतिरिक्त १६वीं गती व ममाप्य हात-जात चतय समी एव राधावत्तभाय आत्ति सम्प्रदाया म राधा भाव का जा स्फूर्तन हाना है उसस बल्लभ सम्प्रदाय भी बचा नहीं रह सका एव गो० विद्वन्नाथ जी ने राधाभाव का पूणतया स्वीकार कर लिया। श्रीनाथ जो की बल्लभ शररा प्रवर्तित मन्ना पद्धति म राधा या कान्ता भाव का स्थान नहा है परंतु विद्वन्नाथ जा न सवा व अण्णन म राधा का ब्रह्मात्मवा म सम्मिलित कर लिया। श्री कृष्ण व जामाँसव की तरह राधा का जामाँसव भा मनाया जान लगा। विद्वन्नाथ जा न स्वामिनायक स्वामिनी स्तान एव शृंगार रस मन्त्र की रचना करव राधा एव नम्पत्य भाव का महत्वपूण प्रति पालित किया। परंतु हमस यह न समझना चाहिय कि बल्लभाचार्य न कान्ता भाव का नितांत निरस्कार किया है। उन्होंने जय भगवान का स्वभाव म भजनीय बताया तय उमक अन्तगत रतिभाव स्वत आ जाता है। भागवत व दशम —

कामबोध भयस्तहमक्षय सौहृदमेव च ।

नित्य हरी विदधतो याति तत्प्रयता हि ते ।<sup>१</sup>

की भाषणा करत हुए अपना सुवाधिनी टीका म उन्होंने कहा है कि काम स्त्री भाव म सौहाय सख्य भाव म हान है। इस प्रकार स्त्रीभाव की स्वीकृति उतम है। मूर निणय के तत्वका ने आचार्य बल्लभ द्वारा विवक्षित तीन प्रकार का गायियाँ—गायागना गाया ब्रजागता—उद्धत की है। गायानाए परकीया भाव म भजनी है वे साभान् पुष्टि-मुष्ट रूप है। गाया वास्तव म कुमारिकाएँ है जा वात्मायना आत्ति घना व माध्यम म कृष्ण का प्राप्त करना चाहती है य मर्यादा पुष्ट है एव ब्रजागनाए कृष्ण का वातभाव म भजता है य पुष्टिप्रवाह रूप है।<sup>१</sup> परिष्ठाएक म उन्होंने पशुपजा का शृंगारी रूप ही चित्रित किया है —

कलि-दोःमूतायास्तटमनुचरती पशुपजा॥

रहस्येकी दृष्टया नवमुमगवक्षोजपुगताम

दृढ़ नीवीप्रधिश्चयपति मृगाण्या दृढतरम् ।

रतिप्रादुर्भावो भयतु सतत था परिदृढे ॥

समी प्रकार मयुराएक है उन्होंने कृष्ण व भग चष्टा शिखाणि कामपुर ही कहा है। सुवाधिना भाष्य म उन्होंने अनक स्थाना पर रति भाव की शार सबन किया है।<sup>१</sup> या हम पढ़न भा कह चक है कि भागवत का प्रमाण मानकर

१ भागवत—१०।२६।१५ ।

२ द्वारकादास परिल एव प्रभू दयाल मोतल मूर निणय, पृ०२०५ ।

३ बल्लभाचार्य, सुवाधिनी भाष्य १०।३।७।१३ व १०।३।१२६ पारि ।

चलन वाला व्यक्ति मधुर भावना का अम्बीकार नष्ट कर सकता है। हमारा अनुमान है कि नाक दृष्टि का विकृति के भय से उठाने जान भाव पर जाय लिया है अथवा उनका भक्ति भावना का ताभाव का अम्बीकृत नहीं करता। पर राधा भाव उह अवश्य बहुत स्वाभाव नहीं लगता।

अस्तु वल्लभ सम्प्रदाय में चाह ज न भा ग राधा का चित्रण हाता है एव यह चित्रण अपनी शक्ति म विगा भा अय सम्प्रदाय से कम नष्ट है। राधा और कृष्ण का सम्बन्ध प्रकृति पुरुष का शाश्वत सम्बन्ध माना जान लगता है। मूरदाय न प्रीति की म निरंतरता का और बार बार सबत किया है। उहाने जाना का अभ्यन्ता का बराबर चित्रण किया है। व युगत स्वरूप है -

सदा एक रस एक अश्वडित आदि अनादि अनूप।

कोटि कल्प बीतत नहि जानत विरहत युगल स्वरूप।

चौकि सम्बन्ध का दृष्टि म राधा कृष्ण की स्वकाया हा है। मूर परमानन्दास आदि न राधा कृष्ण का विदा कराय है। इस युगत रूप म गानाय वल्लभ एव रमापामक जाना हा मता का अद्भुत सम्बन्ध म्रा है। कृष्ण क जान क बाट क विरह का मा तान् विग्रह लियाया पत्ता है। उद्धत मवात् क पत्ता म राधा एक मात्र प्रथमा क रूप म नष्ट कियाया पत्ता है उनम निरन्तरा गापिया का हृदय बन्ना हा प्रकट हुं ह। अष्टछ प क कविया न युगतस्वरूप का मखाभाव म तीता स्वान्न भा किया है। वास्तव म मयाग और वियाग का समस्त स्थितियां इन कविया म महज न प्राय है जिनका चर्चा प्रम क मन्म म का जाना है।

### गोपी

वल्लभ सम्प्रदाय म प्रम का वास्तविक आन्त गापिका है हा है। राधा मा लानिक दृष्टि म कृष्ण म अभिन हात ए भा (या ता जाय और जगत भा ब्रह्म म भिन नष्ट है) काय चित्रण क त्र म गाया हा है। गानाय वल्लभ म राधा क प्रमा मन्म म गापिया का कानि मन्त्रि पत् जाना है परन्तु कन्ध सम्प्रदाय म गापिया अपने महत्त्व का गाना नष्ट। मता कारण यह भा है कि ताता-वर्णन म रामद्भागवत का अनुसरण इन कविया न किया है। मद्वातिक स्वर पर गापिया क रूप है—एक रूप म ता क नि द गानाम हान वात स्वरूप कृष्ण क नि द गम का मगिनियां है जा कि मगवान का आनन् मारिणा शक्ति पटा है। म रूप म कृष्ण और उनका सम्बन्ध म और धर्मो

१ मूरसागर—ना० प्र० म० १२६१ १३०१ १ ३२ १३२३ १३५०।

२ मूर सागरवला व० प्र० पृ ३८।

मूर सागर ना० प्र० म० २८६ । परमान द सागर ६८६ ६६४ ८१६।

का है। कृष्ण की ब्रजलीलाएँ उनकी नित्य लीलाभा की ही अवतार ह। कृष्ण ने अपने ममस्तं परिवार, राधा गोप गापा गा गावत्सम आदि समस्त अवतार लिया था।<sup>१</sup> भक्त (जा सन् चित् स युक्त पर आनन्द म रहित हाता है) अपने आनन्द अश की राज म गापी स्वल्प प्राप्त करना चाहता ह। उनका राग का अनुकरण करके रागाभुगा भक्ति की साधना करता है। साधना की दृष्टि म यह दूमरा रूप ही विगप महत्त्वपूर्ण है। बहुत स विद्वान कृष्ण-लीला क आध्यात्मिक प्रतीक को स्पष्ट करने क लिए गापिया का आत्मा और कृष्ण का परमात्मा भी मिद्व करत ह। एव इस प्रकार भक्तात्मा क लिए इस भाव भाग का उपस्थापन करत है।

पीछे हम बल्लभ द्वारा बतायी गयी तीन प्रकार की गापिनामा की चर्चा कर चुक है गापागता गापी एव ब्रजागता। इही का अयपूर्वा अनयपूर्वा एव सामाया कहा गया है। इनम स रास म सम्मिश्रित होने का अधिकार प्रथम दो प्रकार की गापिया तथा एव अय प्रकार निगुणा का है। उ होने मुवाधिनी म रास म प्रवेश पान वाली इ ही तीन वर्गों की १६ प्रकार की गापिया का विवरण दिया है।<sup>२</sup> इनम भी अयपूर्वा (जा परकीया हात हुए भी कृष्ण का वात मानती थी) भाव का भक्ति का श्रेष्ठतम रूप माना ह। इस पुष्टि पुष्ट भाव की भक्ति कहत है। राधा का भले ही स्वकीया माना गया ह। पर गापीभाव की भक्ति म ता परकीया भाव का ही बल्लभ सम्प्रदाय म महत्त्व दिया गया है। मूरदास, परमानन्द दास नन्ददास आदि न अनेक बार बुलवानि भेटकर मिलने वाली गापिया का चर्चा है।

बल्लभ न एक स्थान पर यह भी कहा है कि निस्साधन भक्त कवन स्त्रीभाव का भगवान का रसास्वादन कर सवन म समय हात है।<sup>३</sup> यही पर काडिनल यूमन की भी प्रसिद्ध उक्ति याद आ जाती है। उसन कहा था कि यदि तुम्हारी आत्मा का उच्चतर आध्यात्मिक आनन्द म माना है ता तुम्ह निश्चय ही स्त्री बन जाना चाहिए। (इष दाई सात इज दु गा इदु हाइनी स्त्रिचुभल नगन्तस दाऊ मन्त्र विरम ए यूमन।)

अपना मव बुद्ध समर्पित कर देने वाली इन स्त्रिया क प्रति भागवत् म

१ डा० दीनदयालु गुप्त अष्टधाप और बल्लभ सम्प्रदाय पृ० ५०५ ५०६।

२ बल्लभाचार्य मुबोधिनी रास पचाध्यायी क्त प्रकरण अध्याय ३।२५।

३ अतो हि भगवान कृष्ण स्त्रीषु रेमे हनिगम्। मुबोधिनी, तामसस्त प्रकरण। ४।

कृष्ण कह उठे थे कि मैं तुम्हारी कृतज्ञता के पाश में कभी मुक्त नहीं हो सकता ।<sup>१</sup> परमानन्द दाम नभा नन गापिया का भूरि भूरि प्रणामा की है । उहान उह प्रम की ध्वजा कहा है । गापी क निरान अनय प्रम जिसम कि समस्त मयाग का मिटा कर व कृष्ण का प्राण प्यारी बनी था क अनुमरण का व स्पष्ट उपदेश तन है

ये हरि रस ओपी सब गोप तियन ते यारी  
कमल नयन गोविन्द छंद की प्रानहु त प्यारी ॥  
निरमत्सर जे सतत ग्रहहि चूषामणि गोपी ।  
निरमल प्रेम प्रवाह सकल मरजादा लोपी ॥  
जो ऐसे मरजाद भेटि मोहन गुन गावे ।  
क्या नहि परकानंद प्रम भगति मुख पावे ।<sup>२</sup>

उनके अनुसार गापिया क प्रम की बराबरी कौन कर सकता है । उनक चरणारविन्द का रस उद्धव अपने शोश पर धारण करत है । स्वयं माभान् ब्रह्मा उनक भाव का वरण वरना चाहत है । उहान ता यहाँ तक कह दिया है कि यदि गापिया का प्रम श्रीर भागवत पुराण न हाती ता सभी नाग श्रीघट पथा के अनुयायी बन कर गमया ज्ञान का कथन करत —

जो गोपिन क प्रम न होती धरु भागवत पुरान  
तो सब श्रीघट पर्यहि होती कथन गमया ज्ञान ।

वस्तुतः अष्टांग का सम्पूर्ण काव्य गापी मन्त्रिमा सम्राज्य है । भ्रमरगीत एवं रामचन्द्राय्या क प्रमग गापिया क प्रम का अप्रतिम रूप म उक्त भूमिका म स्थापित करत है । अष्टांग क कविया न गापिया क माता का रूपा—अनय पूवा अयपूवा एवं मामाया म किमा एक क रागात्मक संबन्ध का अनुगमन करना चाहता था । वनम मन्त्राय का भक्त त्रिदु जन्मना का कुज रक्षा म दानक हा नहा है व स्वयं स्वर का कान रूप म प्राप्त कर उनक साथ रमण करना चाहता है । एवं हम रूप म वह गोपय कृष्णवा का अपना आनवारा निगणिया एवं मूर्च्छिया क अधिक निकट है । परन्तु १८वां शला तक पहुँचन पहुँचन सभी भावना का पयाज प्रवाग वन्दन मन म मा हा जाता है ।

१ न पार येह निरवद्यममुजाम् स्वसाधुहृत्य त्रिदुधापुयापि व  
या मानजन दुज रयेह थ खला मकृयतद थ प्रतिपातु साधुना ।

— भागवत १०। २। ३।

२ परमानन्द परमाद सागर ८२५ ।

३ वृषा पृ० ८२६ ।

४ वृषा पृ ८२३ ।

५ वृषा पृ ८२४ ।

## धाम

धाम का दृष्टि म बल्लभ एव गौडीया म काइ स्पष्ट अंतर हूम प्राप्त नहा होता । म सम्प्रदाय म परब्रह्म म समार म अकता हा अवतरित नही हाता साथ हा उसकी आन प्रचारिणी शक्तियाँ एव अन्तर धाम भी जन्म तत है । यह लीला धाम उसका स्वरूपभूत अणु होने क कारण मायिक शक्ति स रचिन समार क गुणात्मक रूप म भिन हाता है । ब्रजभूमि मरूप भगवान क लीला धाम मालाक या गाकुल ही का अवतार है । ' यह मा मायिक जगत स पर है ।' मूरसास न ब्रजावन का निजधाम' एव आनि अजिर कहा है । परतु यह ध्यान रह कि सखी सम्प्रदाय की भाति इम माग म ब्रजावन और ब्रज अलग अलग न हाकर तात्पर्यवाची है —

ब्रजावन ब्रज को महतु काय बरयो जाई ।

चतुरानन पग परसि के लाक गयो मुख पाई ।'

बल्लभाचार्य ने मालाक या गाकुल का महत्व बकुण्ठ स भी अधिक माना है ।' मूर क कृष्ण की मुरली की ध्वनि जब बकुण्ठ पहुँचती है ता नारायण उसक लिए उत्कण्ठित हा उठत है । ब्रज गाकुल ब्रजावन एव यहाँ क निवासिया की स्तुति म परमानन्दाम न लगभग २१ दजन पं लिख ह । मूरसास परमानन्दाम न्त्यानि न यमुना का महिमा का भी गुणगान किया है ।

## पुष्टि माग की विनोपताएँ

(१) अनुग्रह तत्व की अत्यधिक प्रतिष्ठा— भक्ति क क्षेत्र म या ता प्रत्यक सम्प्रदाय ने प्रभु अनुग्रह पर बल दिया है पर उस विशिष्ट रूप म मद्दातिक स्तर पर स्वीकार करन का अर्थ बल्लभ सम्प्रदाय का हा है । पुष्टि माग का नाम कारण ही अनुग्रह म सर्वाधन है । मागवन् क पापण तानग्रह के आधार पर

१ डा० दीनदयालु गुप्त अष्टाध्याय और बल्लभ सम्प्रदाय पृ० ४०५ ।

२ अष्टाध्याय अध्याय ४ पं २ सूत्र १५ ।

३ मूर सारावन्धी वे० प्रेस पृ० ३४ ।

४ वही पृ० २

५ मूरसागर वाम स्तंभ व० प्रे०, पृ० १५८ ।

६ अष्टाध्याय ४।२।१५ ।

७ मूरसागर ना० प्रचारिणी समा, १६८२ ।

८ परमानन्द सागर—पद स० ८३५ से ८६० विनोप रूप से ।

शास्त्रानुसार विद्वानुभावानिका यह नति विरुद्ध क नव का भा  
 अथ मन्त्रणा का अन्त उ चात् पर प्रतिष्ठित करना है । यह मवमात्र वात है  
 कि अन्त का कविता न अन्तन विद्या-काय का मन्त्रन किया है । यह विरुद्ध  
 भावना का अन्त का मन्त्रन मन्त्रिणा का विरुद्ध भावना का अन्त वा मन्त्रना  
 है । अन्त अनुमान है कि पुष्टि मात् क विरुद्ध नव पर मन्त्रिणा का भा प्रत्यक्ष  
 अन्त अनुमान-अन्त अनुमान विद्वानन है । मन्त्रना न ता अन्त विद्या है  
 अन्त विरुद्ध प्रन कर ।<sup>१</sup>

(४) पुष्टिमात् न पुष्टि प्रवात् और मन्त्रा मागों का कल्पना कर  
 अन्त मायना मागों का भा स्वाहृति न गन्त है तथा पुष्टि मात् म भा गुड पुष्ट  
 पुष्टि पुष्ट मन्त्रा पुष्ट एव प्रवात् पुष्ट अन्त चार प्रकार क जावा का कल्पना  
 करक नति क अन्त मन्त्रणा का स्वाहृति अन्त वाता है । एसा अन्त है कि  
 अन्त मन्त्र का प्रवात् करत अन्त भा कल्पना अन्त मायना-मागों एव मन्त्रणा का  
 प्रति पूरा अन्त अन्त य ।

(६) पुष्टि मात् क शान्तिक सिद्धान्त पर आधारित अन्त मा कल्पना  
 मन्त्रणा म प्रमानति का अन्त पुष्ट व्यावहारिक आधार पर प्रतिष्ठित किया  
 गया । शान्तिक मिति अन्त क कारण अन्त अनुमति का प्रामाणिकता भा अन्त  
 अन्त परन्तु भावना क वन्त म अन्त मन्त्रन मन्त्रना का अन्त अन्त अन्त का  
 अन्त ।

(७) कृष्ण अन्त मन्त्रणा क अन्त अन्त है । अन्त का प्रधानता अन्त  
 वात अन्त कल्पना म अन्तिका म अन्तिका । मन्त्रना अन्त म भा कृष्ण  
 अन्त का अन्त नति अन्त है ।

(८) अन्त मन्त्रणा एव अन्त अन्त मन्त्रणा क कविता क अन्त नति  
 अन्त अन्त है । अन्त प्रकार अन्त क अन्तिका मन्त्रन क अन्त अन्त का अन्त मन्त्र  
 अन्त अन्तिका एव अन्तिका अन्तिका ।

१ अन्त अन्त अन्त अन्त १७५ ।

२ अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त १६७३ ।

अन्तिका अन्त अन्तिका अन्तिका अन्तिका अन्तिका ।

कृष्ण अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्त अन्तिका ।

## तलित सम्प्रदाय मे उपास्य, लीला, नाम परिकर एव उपासना भाव की धारणा

त्रित सम्प्रदाय वाक्यन का एक छाटा-मा सम्प्रदाय है जिमकी स्थापना १८वीं शती के अन्तिम चरण म महात्मा वशी अलि जी ने की थी । यह सम्प्रदाय इस दृष्टि स अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है कि राधावाक्य अपनी पराकाष्ठा पर इसी सम्प्रदाय म पहुँचता है । शक्ति की धारणा इस सम्प्रदाय म अत्यधिक व्यापक रूप म हुई है । पीछे हम मला एव राधावत्नमा सम्प्रदाया क विवचन क प्रसंग म कह चक है कि प्रम क क्षेत्र म राधा की प्रमुखता उन सम्प्रदाया म स्वीकृत हो गयी थी पर तागनिक स्तर पर कृष्ण ही परात्पर तत्त्व बन रह । शक्ति और शक्तिमान् की कल्पना उनम शक्तिमान् क महत्त्व की दर्शिका है । परंतु तलित सम्प्रदाय म शक्तिमान् का नहीं शक्ति को ही प्राधाय प्राप्त हुआ । राधा ही इस सम्प्रदाय म परात्पर तत्त्व मान ली गया ।

यनी पर यह भी याद निना नेना उचित होगा कि राधा को परात्पर तत्व स्वाकार करने का अर्थ यह नहीं कि इस सम्प्रदाय म कवन शक्ति रूप (शक्ति भावना के अनुरूप) राधा की ही उपासना जानी है । यह सम्प्रदाय भी मखी या राधावत्नमा सम्प्रदाया की भांति ही युगतापासक है । स्वामी हरिनाम एव गो० हिन हरिविण का उक्त उक्ताने बडे सम्मान म किया है ।<sup>१</sup> एमा प्रतीत हाता है कि इन दाना सम्प्रदाया का उन पर गन्ना प्रभाव था । पीछे मारी सम्प्रदाय का चर्चा करत हुए हम कह चुक हैं कि स्वामी हरिनाम का त्रिना का अवतार स्वीकार किया गया है एव उनका अत्यधिक महत्त्व बताया गया है । तलित सम्प्रदाय म भी गुरु को त्रिना रूप नी माना गया है ।<sup>२</sup> अथवा त्रिना का हा गुरु कहा है ।<sup>३</sup> राधा को प्रमुखता नेन का मवन सम्भव

१ (क) श्री हरि वग स्वरूप हैं श्री हरिदास उदार ।

जे जे बातें महल की बरएत नित विहार ॥

—बगीअलि हृदय सवस्व

दृढ सख्या १८ ।

(ख) श्री त्रिलता हरिवग वधु प्रघटी रस निधि प्राय ।

धरन माधुरी कु बर की दीनी सबन जनाय ॥ —बही बही १६ ।

२ श्री गुह सलित्ता रूपमम तिनको नाम रटत ॥

पाँट सम्पत राधिका था बृदाविपुन वसत ॥ —बही, बही २५ ।

३ गुद श्री सलित्ता जेया सातु तस्या परा सखी ।

—बगीअलि धीरापा सिद्धातम् श्लोक ३ ॥



उह राधावल्लभीय सम्प्रदाय में प्राप्त हुआ हागा । वशी अत्रि जी क पञ्चान् मा  
नित्त सम्प्रदाय एव राधावतनम् सम्प्रदाय के आचार्यों के मय घनिष्ठ सम्पक  
रहा है । हमार देखने प वशी अत्रि जी ने शिष्य किशोरा अत्रि जी का वाणा का  
हस्तलिखित मन्त्रन आया ह । उमम किशोरी अत्रि एव गा चन्तान (राधा  
वल्लभीय) क मध्य हाने वान पत्र व्यवहार का भा सग्रह है । उमम जात  
होना है कि गो० चन्तान के मन म किशोरा अत्रि एव उनकी राधापामना क लिए  
अत्यधिक सम्मान का भाव था ।<sup>१</sup>

### राधा एव उनकी लीला

मन्त्रमा वशीअत्रि जी ने अपन राधा सिद्धान्तम् ग्रन्थ म प्रारम्भ म  
ही बना लिया है कि सौम्य राशि नित्य प्रमामक्त किशोरी राधा ही अनय भाव  
म हमार उपास्य है । वे चान्ते है कि ममस्त इत्या का विषय राधा ही हा —

राधा जीम रटो सदा सुनों सुकान ।

श्री राधा नयनन देखिहो राधा बिननहि भ्रान ।

राधिका का रूप स्पष्ट करते हए उचाने वना है कि ब्रह्म तथा भगवान् को रचने  
वाना एव अधिष्ठात्री शक्ति वनी ह ।<sup>२</sup> सब कुछ का अनुस्रत रखने वानी एव ब्रह्म  
की अपर पमाय वे ही है । व सबतत्र स्वतत्र है ।<sup>३</sup> परतु व स्वतत्र शक्ति हान हुए  
भी भक्त क आधान हैं । स्वय श्रीकृष्ण उनक भक्त हैं एव उनकी भक्ति क आधीन  
हाकर ममान भाव म कृष्ण क माथ विहार करने क लिए उचाने अवतार धारण  
किया है । उपमानु क धर म भी जम उचाने माधका पर अनुग्रहाय ही लिया

१ डा० नरण विहारी गोस्वामी क सग्रह स प्राप्त ।

२ किशोरी अत्रि की वाणी पत्र सहवा १८० श्रीर आगे ।

३ स्व सौंदर्य महाराणी नित्य सत्किशोरिका ।

राधाऽस्माकमु पास्यास्ति तदनयन चेतसा ॥

—वशी अत्रि राधा सिद्धान्तम् १ ।

४ वही हृदय सबस्व २८ ।

५ शक्नेर्वा ब्रह्मणोवापि तथा भगवनापि हि ।

कश्चो धी राधिका जया अधिष्ठात्री तथव च ॥

—वही रा० सि० २ ।

६ वही वही ७ एव ६ ।

७ नित्य भक्तपराधाना तन राधा विहारिणी ।

साम्य भजति भजनन रम कृष्णेन सोनया ॥

—वही वही पृ० २ ।

परन्तु अवतार रूप में कल्पित हो जाने के बहुत दिन बाद तक उनका प्रति प्रगाट भक्ति भावना का आविर्भाव नहीं होता। श्री धार जी० भंडारकर का अनुमान है कि यद्यपि ईश्वरी सत्ता के प्रारम्भ में राम विष्णु के अवतार माने गये थे किन्तु उनकी त्रिगोप रूप से प्रतिष्ठा ग्यारहवीं शताब्दी के लगभग ही प्रारम्भ हुई है।<sup>१</sup> का मिल बुल्के<sup>२</sup> डा० भगवती प्रसाद सिंह<sup>३</sup> आदि का अनुमान है कि रामभक्ति का आविर्भाव दक्षिण भारत के आन्ध्र प्रदेश में सबसे प्रथम हुआ है। आन्ध्र प्रदेश में आसपास में राम भक्ति का सांप्रदायिक रूप प्रमुखता प्राप्त करने लगा है।

जहाँ तक रामभक्ति में माधुर्योपासना के प्रवेश का प्रश्न है उसका निणय करना विवादास्पद है। हिन्दी साहित्य में माधुर्यभाव भक्ति राम भक्ति की रचनाएँ तुलसीदास के बाद ही प्राप्त हुई हैं। डा० भगवती प्रसाद सिंह ने अपने महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'रामभक्ति में रामिक संप्रदाय' में उस भावना की प्राचीनता को वाल्मीकीय रामायण तक पहुँचाया है। परन्तु ऊपर के निणय में यह ध्वनिता है कि वाल्मीकि रामायण रामभक्ति का ग्रन्थ नहीं है। विद्वानों ने उस भक्ति वाले अर्थ प्रशिष्ट माने हैं। अतः राम सत्ता की शृंगारी भावना का अर्थ उसमें काय के आग्रह से ही मानना उचित होगा। अर्थ जिन नाट्य एवं काव्य ग्रन्थों का उल्लेख डा० सिंह एवं पं० भुवनेश्वरनाथ मिश्र माधव (रामभक्ति में मधुर उपासना) ने किया है वे भी भक्तिकाय नहीं हैं। सरस साहित्य के अन्तर्गत ही परिगणनीय है। स्वयं डा० सिंह ने स्वीकार किया है कि वास्तव में यह (लखनऊ) साधक नहीं कवि थे किन्तु ये इस भावना के समर्थक हैं। अतएव उनकी रचनाएँ स्वयं साधनात्मक नहीं होते हुए भी भक्ति भावना के लिए उपयुक्त पृष्ठभूमि बन गयी।<sup>४</sup> पं० भुवनेश्वरनाथ मिश्र माधव ने जिन साहित्यिक ग्रन्थों स्वरराज एवं गीतिया तथा रामायण आदि का चर्चा की है वे सभी परवर्ती प्रतीत होती हैं। स्वयं लखनऊ ने उनका कान निणय का कोई प्रयास नहीं किया है। का० भगवती

१ डा० भंडारकर दण्डविश्वनाथ पृ० ६६।

२ डा० का मिल बुल्के रामकथा पृ० १५०।

३ डा० भ० प्र० सिंह रा० भ० र० स० पृ० ५४।

४ आचार्य ह० प्र० शिवेदी मधुराचार्य और उनका भक्ति-संदर्भ कल्पना अग्रसूत्र १९५५ पृ० ५।

५ डा० भ० प्र० सिंह रा० भ० र० स० पृ० ७६।

६ भुवनेश्वरनाथ मिश्र माधव रामभक्ति में मधुर उपासना पृ० १४१-१८६।

प्रसाद सिंह न माना है कि ऐतिहासिक दृष्टि से आनवार सत्ता का माधुयभाव का प्रथम मक्त मानना चाहिये।<sup>१</sup> परन्तु जमा कि पीठ हम कह चक ह आनवारा की माधुय मानना प्रम प्रताकता क अनयत परिगणनाय है वह भाव एव एगन इन का वस्तु नो है। उम माधुय भावतथा परवर्ती राम एव कृष्ण-मप्रदाया क माधुय भाव (रमिक-साधना) म गुणात्मक अनतर है। वाल्मव म डम बात का अम्बीकार करना कठिन है कि राम भक्ति का रमापामना पर कृष्णभक्ति क सप्रदाया का गहरा प्रभाव है। एम बात क प्रमाण मितत है कि १६वा गती तव रामभक्त रमापामना का मम समभन क निण कान्यवन जात रह हैं। यों जिन तात्रिक साधनामा एव शक्तिराट का प्रभाव कृष्णभक्ति का माधुय भावना तथा राधावा मखीवाट आति पर पडा है व मून प्रभाव-आन रामभक्ति का भी बराबर प्रभावित करत रह है एम बात का भी अम्बीकार ननी किया जा मरता।

रामभक्ति-साहित्य म तुनसाताम एक एम विज्ञान बट अण थे ममान है जिमना मुगल छायावा छाडतर माधारण जन अयत्र नही जाना चाहता। यद्यपि तुनमीनासक युग तक (मृत्यु म० १६८०) कृष्ण भक्ति मप्रदाया म रमिकोपामना एव सखामात्र का वापर प्रचार ना चुका था पर अपन अप्रतिम लौह व्यक्तित्व क बन पर लाव मधनी तुनमीनाम ने राम सीता कौशलमा भरत अनुमान आति चरित्रा क माधुयम म जिम बधी भक्ति एव मयाग माग का प्रतिष्ठित कर ममाज क निण मेरणा का वाय किया वह मर एम अविचन भाव म हए रहा कि उम पर परवर्ती रमिक साधनामा का तनिक भी प्रभाव ननी पए सका एव उत्तरी भारत क अधिकाश नामाचजन उमम प्ररणा नत रह। एण निक दृष्टि मे एगन पर तनमा क राम श्रीर सीता कृष्ण एव राधा म भिन स्थिति वान नना शिवाई णेग। राम ही परब्रह्म हैं जा भक्तिरा कौशलया का गाट म जम नत है —

व्यापक ब्रह्म निरजन निगु न विगत विनोद ।

सो अन प्रेम भगतिवण कौशल्य की गाद।<sup>१</sup>

उनक वाम माग म एविनिधि आति शक्ति श्री सीता जी साभायमान हैं। उनक अकुटि विनाम म नी ममार उत्पन हाता है।<sup>१</sup> व ममार का उत्पन ही नही करनी उनक तानन-पानन एव हरण का वाय भी परब्रह्म के मक्त पर जानका हा करता है —

१ डा० न०प्र० सिंह रा०म० १०स० पृ० ७६।

२ रामचरित मानस, बालकांड १६८, ३४१ अरण्यकाण्ड २२ ६३

कि० काड २६ उत्तरकांड १३ ३४, ८१ १३० धादि।

३ वही बा० का १४८।

अति सेतु पालक राम तुम्ह जगतीश माया जानकी ।  
जो सजति जगु पालति हरति सब पाइ कृपानिधान की ॥<sup>१</sup>

उह तनसीपास ने ब्रह्म की परमशक्ति कहा है —

नारद वचन सत्य सब करिहो  
परम सक्ति समेत अवतरिहो ॥<sup>२</sup>

पाछे गौडीय वप्पुवा आदि क प्रसंग म हम क चुक है कि राधा भक्ति देने वाली भी हैं । मूरटास ने भा राधा म कृष्णचरण रति मांगी थी । तुनसाणाम भी अपनी अर्जी सीता क हाथ ही राम तक भिजवात है ।<sup>३</sup> इन युगन म प्रम वम नहीं है पर किमी का लिखाने के तिण न हाकर यह सहज रूप म मर्यान्ति प्रम है । इसका मम राम और साता ही जानत है । वलि या कना चान्दिय कि मम प्रम का मम राम का मन जानता है और वह मन सता सीता के पाम रहता है इस प्रीति रम का वतनी ही बात सं समझा जा सकता है —

तत्य प्रम कर मम अरु तोरा जानत प्रिया एक मन मोरा ।  
सो मन रहत सदा तोहि पाहीं जानु प्रीति रस एतनाह माहीं ।

परंतु इन प्रिया प्रियतम के सम्बन्ध की अन्वयक्ति मर्यान्ति रही है । परवर्ती रामरसिकोपासका को यह दार्शनिक रूप ज्या का त्या उपनन्ध हा गया उसम नीला की कल्पना एक प्रम सम्बन्ध का मुक्त प्रसार और जुड गया । आदि शक्ति को आह्लादिनी म परिवर्तित करके फिर उम रसगानी बनाते देर गही गयी । सम्भवत तनसाणाम क जीवनकाल म हा यह प्रक्रिया प्रारम्भ हा गई थी ।

रसिक मप्रत्याया म अग्रतास वम माधना के प्रवतक माने जात है उनका आदिर्भाव-काल सम्बन्ध १६४२ है एव तनसी का मृगु सम्बन्ध १६८ है म प्रवार अग्रतास क जीवन का प्रारम्भक अथ तुनमी क उत्तराध की समकालीन रहा है । एसा जगता है कि कृष्ण भक्ति की रसिकता रामभक्ता का भी आवृत्त कर रना थी । अग्रतास ने म प्रकृति का पन्चान कर उम एक यवस्थिन साधना पद्धति का रूप द निया । धारे धार राम मप्रत्याया म यही साधना वन पनडती गई एव १६वा गता का रामभक्ति-मादित्य सवताभावन मी मावुय भाव म दूवा दृष्टा निवा दता है ।

१ वही अ० काड १२६ ।

२ वही वा का १८७ ।

३ विनय पत्रिका पद ४१ ४२ ।

४ राम चरित मानस गु का १५ ।

कृष्ण भक्ति का प्रभाव स्वीकार करके राम सीता का युगत्रिविहारी कह ता लिया गया परन्तु वास्तव म यह बाय उतना सरन नही था । राम क चरित्र एव लीलाया की जा धारणा आन्विकाल स लकर मध्यकाल तक चली आ रही थी उसम शृगारिकता का यूनतम प्रवेश हुआ था । राम-सीता का राधा-कृष्ण एव कृष्ण गापिया जसा प्रेम गाथाए चित्रित करने वाला न ता कोई पुष्ट प्रकीर्णक पया की ही परम्परा अब तत्र उपलब्ध हा सकी है और न भागवत जसा कोई पुष्ट ग्रन्थ एव गान गावित्र जसा त्रलित काय ही हम प्राप्त हाता है जिसम कि राम सीता क इस उज्वल रसपरक रूप का स्पष्ट किया गया हा । इसक स्थान पर राम का प्रजावत्सल दुष्ट सहारक एव मयाग पुरपातम रूप अधिव स्थापित रहा है । तुलसा न उनर इन गुणा का और सुहृ भूमि पर स्थापित कर लिया था । रामकथा क सारे पात्र वास्तव म परिवार एव समाज के विविध सम्बन्ध सूत्रा के अत्यधिक उन्नत स्तर पर प्रातष्ठित किय गए थ । रसिकोपासका ने इन सजरा स्वीकार करत हुए भी माधुयपरक याग्या करनी चाही । राम कथा की वही आवश्यकताया क कारण ही हम निदान प र म यत्र-तत्र कृष्ण भक्ति क सप्रयाया का अपेक्षा अन्तर प्राप्त हाता है अपथा यापक रूप स गौण्य बण्णवन्तव दान (वात् का हरिनासी आन्ति सप्रयाया की भी विचारधारा) का ही रामभक्ता ने स्वीकार किया है । नीच इन समानताया एव बपम्या का सतिप्त विवरण हम उपस्थित कर रहे हैं । रामनीता का माधुयभावपरक माड रने का सबसे अधिव शास्त्रीय एव पाण्डित्यसाध्य प्रयत्न मधुराचाय जी न किया था । उन्ने वाल्मीकीय रामायण का बन्धि का भा अपणा अधिन प्रमाण एव सारे बाह्यम का कारण बनान हुए उसकी शृगाररमपरक व्याख्या करने का अनुभूत प्रयत्न किया था । सस्वृत पाकरण की कामधेनुता क सहार शता का खीच-याचकर जा अथ निकाल गए है उनम आज का पाठक ता गीक सक्ता है पर उस साधना क समझने म एम अथ महत्वपूर्ण हैं । ऐम प्रयत्न का मनाजक उन्हाहरण है कि राम-कथा क इन गमन बाल प्रमा का इन लाग ने वास्तविक न मान कर माया जम माना । इन त्रिवचका क अनुमार राम सीता सम्मण विभक्त से धामे गय हा नही व खीन्ट वप वहा विहार करन रहे । रावण क महार क त्रिण वास्तव म राम की घाना स नमी नारायण एवं गप गए थ—माता राम एव नमण क वन म ।

उपास्य

राम का उसा प्रकार परब्रह्म रूप म यही पर भा बल्पना है जिस प्रकार कि अय रगापासक मप्रयाया म हम कृष्ण का रूप दग चुक है ।' व सचिन्तन

१ मधुराचाय मुन्दरमणि-तावभ, पृ० २३ ।

२ रसिक अस्ति अनन्य तरगिणी पृ० ४ ।

है।<sup>१</sup> वह त्रिभुज परात्पर है।<sup>२</sup> नृत्य राघव मिलन म उह नाता क क्षत्र म र्त्ति एण नामक कहा गया है —

कहु दक्षिण नामक रस लीला कर्हिहि राम सुन्दर महुशीला ।

दक्षिण नायक हान क नात उह अनक प्रियाग्रा का कल्पना हाना पन्ता ह। महन्ना मुनि कयाग्रा राज कयाग्रा नाग-कयाग्रा तथा गधव-कयाग्रा का उनका पाणिग्रहीता भाया माना गया ह। वास्तव म जय कृष्ण क इतना भार्याए या कल्पनाए थी ता फिर राम की क्या न हाना ? फिर रास क तिए मा तमाम प्रियाग्रा का आवश्यकता थी। इसा कारण मधुराचाय राम मख इत्यादि न उनकी अनक भायाग्रा का कल्पना का है। पर दूसरा धार राम का एक पत्नीव्रत परम्परा म अत्यधिक आनर चना आ रहा था। इन दाना परस्पर विराधी खिलन वाली बातों क मध्य सगति स्यापिन करने क तिए बहुमायात्व का एक दार्शनिक व्याख्या उहोने दनी चाही।

इस व्याख्या क अनुसार राम का पराशक्ति साता स ही उत्प न उही का अ शभूता अद्य समस्त स्त्रिया या भखिया हैं अन क वास्तव म सातारूप ही है। इस तरत राम का एक पत्नीव्रत खडित नहा हाना। मधुराचाय न जनक की एसा हा श का का समाधान स्वय जानकी म सुन्दरा-तत्र क द्वितीय पटल क एक उद्धरण द्वारा कराया है। जानका कहती है —

ह पिता आप पुण्यात्म श्रा राम जा का रस रूप शक्ति मुभे जान। श्रा राम मशान्व ह व सत और अमत् म पर ह व भाक्ता है। मग ईक्षणकता क आभय म श्रा रामचन्द्र शरार धारण करन ह धार उनकी कृष्ण म मरा शरार ह एसा समझिय। श्रा रामचन्द्र और मर शरार क एक्य भाव म यह रसरूप परब्रह्म ह जा आत्यन्तिक सुखरूप है। एमाम विश्व मुक्ता हाना है। इसा रस स बहुत स रम-वार करण तास्य भयानक आदि—उद्मिन हूण है सभा शक्तिया मुभम निकती है जा गुड सत्वरूपा है और विकार रहिता है। य मव श्रा रामचन्द्र का भायरूपा हैं मगानता और रम मात विहारिका ह। य मर हा समान है। इन मवक भाक्ता रघुनन्दन हा है।

१ बालभली ध्यान मजरी (रा म म०उ पृ० २११)।

२ रसिक ली सिद्धांत मुक्तावली (वही पृ २३७) तथा नृत्य राघव मिलन पृ० ६।

३ न रा मि पृ ४१।

४ बालभली सिद्धांततत्त्व दीपिका ३१।

५ मधुराचाय मु०म०स पृ ४३२ ४३४।

मधुराचाय न यह चान्या ता न ही है परयह भा कह्निया है कि जा ताग उनक निरवधि नित्य विहार का नहीं जानत तथा वो बन् क बिकर है वही ताग उह एक पत्नीव्रत धारी समभन है अथवा व ता सुखदवय रमन कामिनी-काम वद्धक है । मधुराचाय क अनुसार —

जा लाग नारम चित्त क है अर्थात् जो ताग श्री रामचन्द्र के निरकुण निरवधिक नित्य विहार रम क जाता नहीं है ववन एक पत्नीव्रत वचना क छायानुमारी ह । जिते द्रयत्वानि बल वाल श्री रामचन्द्र जा की अघटित घटना पटीयसी भक्ति क जानकार नहीं है व अपरिमित जानाना श्रमभूत परग्रह श्री रामदेव क शृगाररम का परम उत्कप तथा उनक सुखदवय की परानाटि म सकाच करत है कि परब्रह्म-स्वरूप एक पत्नीव्रता रामचन्द्र जी म यह विहारनीला समव गहा न सक्ती । य लाग तान और वद क बिकर है इम कारण म धम विषयक भक्ति म अघ हैं । व इस रस का समझ नहीं सक्त, अपना सीमा म आप हा बंधे हुए है । म उह नमस्कार करता हूँ । य दूषणीय नहीं है भूषणाय हा है । दूषणाय इसनिए नहा ह कि उनकी दृष्टि था रामजी के नित्य ऐश्वय नित्य माधुय और नित्य सोकुमाय रूपा तक जा नहीं पायी है नहा तो वाल्मीकि जी ने अत्यंत स्पष्ट शब्द म कह रखा है कि रामचन्द्रसुखदवयरसन सन् कामिनी काम वद्ध न है ।<sup>१</sup>

उनक अनुमार शृगार रम क विश्राम स्थान केवल राम हा सक्त है । कृष्ण म भी यह क्षमता है पर व अशावतार मात्र है । रामावतार की श्रष्टना का शृगारिक दृष्टि स प्रमाण दन हुए उहाने वाल्मीकि रामायण म उद्धरण दन हुए बहा है कि जहाँ कृष्ण क प्रति मात्र स्त्रियाँ ही आवृष्ट हानी था वहा राम क अद्भुत भुवन माहन रूप का स्वकर पुरप भी रमणच्छु हा उठत है । वन म अपि मुनि भा उनक माय स्त्रा रूप म रमण करन के लिए प्राकुल हा उठे थ ।<sup>१</sup>

### सीता

राम प्रिया सीता दार्शनिक विचार म राम का आह्वानिया शक्ति ।  
—जयति मिमा प्राण इतान्नि शक्ति शक्तिगन भूप ।<sup>१</sup> हनुमत्सहिता म भी उहें आह्वानिया शक्ति रूपा बताया गया है । भगवान एकाका रमण नना करत

१ मधुराचाय । सु० म० स० पृष्ठ ३२७ ३२८ ।

२ वही वही, पृ० १०६ ।

३ बाल घसो नेह प्रजाग १ ।

४ ह० स० पृ० २१ ।

उह दूसरे की आवश्यकता हानी है इसीलिए एक ही ब्रह्म पति पत्नी का रूप धारण कर लेता है ।

एकाकी नहि रमन हव चहत सहायहि सोइ ।

रमत एक ही ब्रह्म यह पति पत्नी तनु होइ ।<sup>१</sup>

वे राम के मन की गति का जानकर अपने गरार में ही सद्स्त्रिया नारिया का उत्पन्न करके उन्हें सन्तुष्ट करता है —

रामस्य हृद्गति ज्ञात्वा जानकी स्थागत सजन् ।

नाय प्टादगसहस्त्रोत्तरगतयु तमप्योत्तरम् ॥<sup>२</sup>

राम को करोडा ब्रह्माण्ड में भी बसा मुख नहा मिनता जसा कि प्रिया जी के मुख कमल के मकरन्द का पान करने में उपनयन होता है । प्रियवस प्रिया है एव प्रिया वस प्रिय है । वे एक दूसरे के प्राण हैं एव दिन रात उनके चित्त एक दूसरे में उलझे रहते हैं —

पिय वस प्रिया प्रिया वस पीय उरभ रहत रन दिन हीय ।

हिय के जीवन हैं पीय पीय के प्राण जीवन धन सीय ।<sup>३</sup>

वास्तव में एक के बिना दूसरे की कल्पना भी नहा की जा सकती —

सीता राम बिना नव राम सीता बिना नहि ।

श्री सीतारामयोरेव सम्बध गाइवती मता ॥

इस प्रकार उनका नित्य सम्बध है । उनकी लीला और विहार अनाहत अवाधित भाव में नित्य होता रहती है । राम माता का वियोग वास्तव में प्रकाश नाना के अन्तर्गत है — वास्तव में सयाग ही नित्य है । सीता अविद्या का नाश एव विद्या का प्रकाश करता है ।<sup>४</sup>

इस प्रकार हम देखते हैं कि अपने रूप शक्ति व लीला साहाय्य एव नियतत्व धामि का दृष्टिम स्वरूपत साता एव पूव विवचिन राधा में कोई तात्त्विक अन्तर नहा है । श्री कृष्णना अवश्य है कि साता सवथा स्वकीया नायिना हैं । मयुराचाय ने परकीया भावना का अत्यधिक वर्णन किया । उनके अनुसार प्रकृतन कामुकत्व का जिम बात का उठाकर परकीया भाव का ममथन किया जाता है वह नीतिक दृष्टि में हा ठाक हा सकता है । भगवत्प्रेम में ता वस्तुतः

१ बाल ६, नी नह प्रकाश २ ।

२ हनुमत्सहिता पृ० १ ।

३ बाल अली नह प्रकाश (राधावल्लभ म० उ पृ २०१ पर उद्धत) ।

४ रा त० प्र० में जानकी विलास में उद्धत ।

५ प्रेमलता पृ० उ० पृ (राधावल्लभ म० उ० पृ० ३५१) ।



स्वकीया प्रम हा उत्तम प्रीति मुख का हतु है ।

**परिकर**

परिकर की एक विराट कल्पना गौडीय वप्सुवा म हम देख चुके है । उनका कारण बताते हुए हमने कहा था कि ब्रज मयुरा एव द्वारका की त्रिविध लीलाभा का उह समटना पडा था एव इसी कारण परिकर की नाना रूप म कल्पना का गई थी । परंतु साथ ही यह भी हमन ध्यान लिलाया था कि इनम मुख्यत ब्रज-लीला (वृन्दावन लीला) का ही प्राप्त रही । राम की लाला म धाम सम्बन्धी एम वविध्यता नही है परंतु अयाध्या म वे राजपद पर ता प्रतिष्ठित ह ही । इसलिए लीला धाम परिकर एव भाव सम्बन्धी आन्ति की दृष्टि स इस राजसत्ता के ऐश्वय का ध्यान म रखना पडता है । रामभक्ति म इसा कारण ऐश्वय का त्याग कही नही हुमा । माधुय और ऐश्वय दाना का समन्वय इसम रहा है ।

अस्तु राम के ऐश्वय एव माधुय समन्वित रूप के अनुरूप ही परिकर म विविध भाव सम्बन्धी कल्पना की गयी है । गौडीय वप्सुवा क समान ही इस परिकर की निरुप रूप म कल्पना की जाती है—लीला की जितनी भा विभूतियाँ है व सभी परिकर रूप ही है ।<sup>१</sup> दि य धाम म समस्त पन्था अप्राकृत अल्प एव चतय रूप म ही रहत है ।<sup>२</sup>

इस परिकर म सबथ पठ स्थान सखीगणा का ही है । इनकी कल्पना ठीक अय रस सम्प्राप्ता के अनुन्प ही रामभक्ति सम्प्राप्ता म भी की गई है । व सीताजी का अश है—श्री मिय अश सुसखी मरुपा ।<sup>३</sup> जिस प्रकार स सीता और राम प्रसन्न रहत है वही सगियाँ करती है —

जेहिबिधि रहहि मुदित सियरामा सोइ सब अलिगन करहि सुकामा ।  
सदिया क अनेक बगौ म विमाजन भी रसिका न बिय हैं । सखी एव बिकरी क  
मा भन स्पष्ट त्रिय हैं । राम एव सीता की अनग अनग सगिया की भी कल्पना की गया है । परंतु यन् विस्तार हमार लिए अनावश्यक है ।

**धाम**

धाम सख्य त्रिपाद विभूति के अन्तगत ही है ।<sup>४</sup>

१ प्रमसता वृत्त उपासना रहस्य (रा० म० म० उ०, पृ० ३४४) ।

२ रामरस रग वितास, पृ० २४ ।

३ उ० र०, पृ० १११ (रा० म० र० स०, से उद्धत) ।

४ वही (रा० म० म० उ०, पृ० ३४४) ।

५ वही वही पृ० ३४१ ।

यह उपासना रहस्य क धाम—प्रसंग म गानाक क मध्य म अति विस्तारित एव ननाम इस धाम की कल्पना का गयी है। अपन स्वरूप म धाम की यह कल्पना भी पीछे विवेचित कृष्णापासका स भिन्न नहीं है। जिस प्रकार वहाँ पर कल्पना की महिमा है वसे ही यहा साकत की महिमा है। विविध नाका स परे गानाक एव उमके मा मध्य साकेत है।<sup>१</sup> साकेत के अनगत ही मय भाग म कनक भवन है (यह भी राजा रामचन्द्र की गरिमा क अनुकूल ही है।) यही उनका विहार प्रमात है।<sup>२</sup> यही पर अनन्त सखिया क साथ विद्यमाना साता जी क साथ राम रास नीना आदि श्रीडामा म मग्न रहत है।<sup>३</sup> साकत गम की अप्राकृत नीना का धाम जा गया। प्राकृत प्रकट नीलाआ क धाम क रूप म अयोध्या का बडा मन्त्व है। गम प्रिया शरण प्रमङ्गली न अपने सीतायत प्रथम राम एव सीता क समान ही अयोध्या का भाअनाति कहा है —

राम अनादि सीता अनादि अबध अनादी।

तुम्हरी पुरी अनादि सकल कह वेद के बादी।

तुलना की दृष्टि स अयोध्या का ब्रज का प्रतिरूप एव साकत का कृष्णवन का प्रतिरूप कहा जा सकता है। या बन विहार क लिए चित्रकूट का सर्वाधिक भायना सम्प्रदाय म प्राप्त है। साता की प्रकट नीला की जन्म भूमि हान स मिथिना भी सम्प्रदाय म आत्परपूर्ण दृष्टि स धामवन दखी जाती है।

लीला

राम मर्यादा पुरुषात्तम ता थ ही रम-भाषना की आवयकतावश क लीला पुरुषात्तम भा बन। निगुण मगुण प्रकट एव अप्रकट तथा तात्त्विका एव अतात्त्विका नीना क अनेक भन् भा किय गय है। या विविध भावा क अनुरूप माधुय सख्य आति नीनाए भी भगवान राम की हाती रहनी है। वय एव काल क अनुमार मा नीना भेन्ही जात है। य सभी नित्य हैं।

राम क परम्परा सिद्ध उद्धारक रूप क अनुकूल ही नीना का एक उद्भय जीव का उद्धार एव लाता पुरुषात्तम की नीला का प्रयाजन (स्वरूपानन् की प्राप्ति एव ककयमुख प्रदान है। लीला म प्रवेश भगवन्नुपहृ एव आचाय तथा मत्र की मध्यस्थता स हाता है।<sup>४</sup>

१ रामनवरत्नसारसप्तह पृ० ३१ (१५)।

२ वही पृ ४ एव उपासनात्रय सिद्धात पृ ८६।

३ वही पृ ४०।

४ अनय तरगिनी पृ २ एव राघव मिलन पृ ४५।

५ (क) हनुमत्सहिता पृ ७ तथा

(ख) वृहद् ब्रह्मसहिता पृ ६६-७०।

उपासना भाव

राम भक्ता म रसिक साधना क आगत पाँचा भक्तिभावा का स्वीकार किया जाता है । जबकि कृष्णापासका म रस-साधना भाषुय भाव की ही धारक है । रसिक सम्प्रदाय म इन पाँचा भक्ति भावा की सम्बन्ध नीशा नी जानी है । यहा नहा — इन भवधा का कवन राम क पथ म हा नहा दखा जाता सीता पथ म भा भवध कलना द्रम सम्प्रदाय का एव विधिण् दन है । राम सम्प्रदाय क महात्मा मूर विहार जा सीता का पुत्री एव राम का जामाना मानत थ एव प्रयाग गस जा साना का बहन एव राम का बहना क भाव म दखत थ । अथ सामाजिक पारिवारिक स्वधा का भा राम क्षत्र म अभिव्यक्ति मिता है तथा मयागानता न हान म उन भवधा का निवाह भा किया गया ह । कृष्णापासका म एमी भवध कल्पनाभा का अभाव है । इसका मुख्य कारण ग्रह है कि कृष्ण का वसा पारि वारिक रूप पुराना गाथाभा म स्पष्ट नही हा सका था जसा कि राम का प्रतिष्ठित दृभा था । इसा प्रकार राम का मधुर गानाभा का प्रधानता दत हुए भा राम क एवय प्रधान एव पारिवारिक चरित्र क प्रति श्रद्धा कम नहा है ।

मिथान का दृष्टि म भक्ति क पाँचा रसा का रस भाग म पूण महत्व प्राप्त है । राम म किमी का भी आत्मधन उबर साधना करने वान अनन समय तब सावन म नीना-भुय प्राप्त कर सकत हैं परतु राम धाम म रस साधका का प्रवेश भवधा अवस्थिति म बुद्ध भू है । अन्तरंग विहार-रूप तब प्रवेश मगिया का ही अधिकांशत स्वीकार किया गया है । या क मह्यमावापामक नम सखाभा का भा

१ वासल्य शृंगार वा सान्ति सल्य अरुदास ।

पाचहु रसिक सुभाय सह सेवहि प्रभु पिदव खास । तथा

ई०न प्र सिंह रा०म० १० स० पृ० १४३ ।

२ सलित लीला लाल सिय की त्रिगुन भाया पार ।

पुरुष सह पहुचे नहीं बचस अली अधिकार ।

— रसिक अली अदोल रहस्य बोधिका

(रा न०म०उ०, पृ २४०)

पुष्य भावना जो श्रिय धारे दास सखाहि तदपि प्रभु ध्यारे ।

गुप्त विहार न देखन धारवाहि हृद वग परेउ दूरि पछिनावहि ।

हनुमदादि गिय धरि अति रया निरखहि गुप्त रहस्य अनूप ।

तब ते दास सरवादि क भावा रागहि उर तिय भाव गुदावा ।

प्रभुहि मिलन हित भाव मुनारी धरि उर सइय जनक दुलारी ।

प्रभुहि मिलन हित भाव मुनारी धरि उर मेइय जनक-दुलारी ।

— प्रम सता शृ०उ०१०, (रा०म०म०उ०, ५ ३४६) ।

पहुँच बिहार म म्वीकार करत हैं ।<sup>१</sup> सब भिना राम भक्ति का ढम साधना म शृंगार एव मख्य दो का विनाप मन्त्व प्राप्त है । या वात्सल्य एव दास्य का भा अगो रमा क रूप म कल्पित किया गया है -

वात्सल्य भाता पिता सब रस को है हेतु -  
तिहि बिन जग लीला जुगल बनत नहीं रस कतु ।  
बिना दासता भक्ति नाहि भक्ति बिना रस नाहि ।  
रसिक जीव रस रग मणि राम दास सब आहि ॥<sup>१</sup>

शात रस का बहुत अधिक महत्व नती भिन सका है । सामान्य प्रजा जना को हा शातरमावलम्बा परिवरा के रूप म कल्पित किया गया है । ढम प्रकार घाम के बाहरी आवरण म ही उनकी अवस्थिति स्वाकार की ग् है । सब मिलाकर शान दास्य एव वात्सल्य भावापामाक साधका का म्पया इम घारा म कम हा रही है । मुख्यत तो हा सशक्त परम्पराए प्राप्त हानी है एक अग्रन्तस म प्रारभ हानि वाली माधुय भाव की साधना एव दूसरी राममखे तथा कामन्त्र मणि का मख्य भावावशा साधना । प्रथम म साधक क त्रिए सखी भाव धारण करना पढता है एव दूसर म सखा की ती पुन्याकार कल्पना की गर् है । अन तात्त्विक दृष्टि म नाना म वना अतर नहा प्रतीत हाना । समा सखिया नित्य विहार म प्रवश नही प्राप्त करती एव ढमी प्रकार समा सखा बिहार त्र म निष्कामित नहा ह । हम ऊपर बना चक ह कि नम सखाया का उपस्थिति स्वाकार का ग् है । एक बात म अतर अवश्य हा जाता है कि सखिया रामभाग्या भी है परत सखाया क प्रसग म एसा कार् भाव नती उठना ।

जहाँ तक सखा भावना का सबध ह राम-सप्रणय म स्वमुखा एव तत्मुखा दाना प्रकार का मखिया की मा मना है । एसा उगना है कि कृष्णागामका म जिस गापा भाव एव सखा भाव क्ता गया था त् स्वमुखी एव तत्मुखा सखा साधनाया क रूप म राम म्प्रणय म प्रविष् हा जाता है । कभा कभी एक विराघामाम भी ढम स्थिति क कारण प्रनान हाना है । कृष्णागामका म गापा भाव व्रजगताना स सम्बन्धित हा गया था एव सखा भाव कृष्णवन लाता म । एसा कार् आत्यन्तिक विभाजन न हानि म रामागामका म पारम्परिक शत्रा का अनिक्रमण हाना अनुभव हाना है । एसा उगना है कि पतनामुख सामाना आशों का छाया म ग्रहण का जान वाता कृष्ण-लालाया क पौराणिक रूप क अनुकरण पर उह बहुपत्नी पनि

१ कामदेव मणि राघवद्र रहस्य रत्नाकर प २७ ।

२ राम रस रग गाता राम रस रग दोहा प० १ ११ ।

३ कामदेव मणि माधुय कलि कादबिनी प० ५२ ।

भी बनाया गया एवं सम सामयिक सखीभाव के उपासका की छाया में राम मीता की ही कैनिस के सुख की प्राप्ति ही जीवन का चरम काम्य भी स्वीकार करनी गई।<sup>१</sup> जिस प्रकार कृष्णोपासका में निकुंज रस या भगति माहिनी की चर्चा है वस ही यथा पर भी निकुंज रस या महान् माधुरी की चर्चा आती है।<sup>२</sup>

साधना की विविध स्थितियों प्रेम की विविध दशाग्रा आदि की दृष्टि से रामोपासका की इस रागानुगा भक्ति एवं कृष्णोपासका की रागानुगा में कर्त्तव्य अति उल्लेखनीय अंतर नहीं है। जो थोड़े बहुत अंतर प्राप्त होते हैं वे या तो दोनों बालाग्रा की पुराण गाथा मवधा भिन्नता के कारण है या फिर यावहारिक उपासना में विस्तार के अंतर है। विस्तार भय में इनकी चर्चा हम यहाँ नहीं करेंगे। या यथा चर्चा प्रसंग की दृष्टि में अमहत्वपूर्ण भी होगी।

रामोपासक रसिक साधना की मुख्य विशेषताएँ —

(१) इस साधना में

(क) एवम एव माधुर्य गाना स्वरूपा का समन्वय है।

(ख) यधी एवं रागानुगा गाना या समन्वित रूप ही स्वीकार किया गया है।

(२) यह साधना मर्यादा का उल्लंघन नहीं करती। प्रत्येक माधक अपनी

१ सतगुरु दया सखा तनकीर निज रग महल रस रहास निहारे ।

तन हृत करि गुरु प्रेम भाव का आयसु पाय महल पगु धारे ।

मधुर मधुर गति मधुरभाव सो मधुर मनोहर सेज सबारे ।

— कृपानिवास पदावली प० ४ ।

२ युगल निकुंज रहस्य नवल रस सो सदगुरु उपदेश कर तस

बामदेद्र मणि माधुर्य केलि वादम्बिनी

प० ५१ ।

तथा

श्री प्रसाद प्रसाद करि अष्ट सखी गुन गाय ।

अलि निवास जिनकी मया महल माधुर्य पाय ।

— कृपा निवास भाषना पचीमी (रा०म०म०उ० प० २२५) ।

तथा

रसिक अली जीवन यही ध्याव रट दिन रत ।

बिनु युगल रस सीला सते दिन पन हिये किमि अत ।

— रसिक अली अदोल रहस्य-दोपिका

(रा०म० म० उ०, प० २४०) ।

भाव साधना व अनुसार सामाजिक मयात्मा का दृष्टतापूर्वक पानन करता है ।

- (३) सखी भावना एव मधुर रस का पर्याप्त महत्त्व होत हुए भी अ प भाव सम्बन्धा या भक्ति रसा का यून नहा माना गया है ।
- (४) सखी भावना म राम एव साना की सखिया अनग अनग है । माता की सखियां राम भाग्याए भी हा जाती है । विनार-योजना इही व जिम्म हाती है ।
- (५) सखी भावना के अतगत तरमुखी व माय ही स्वमुखी गाखा भा रसिक अली की परम्परा म स्वीकार की गई । एक मात्र राम को पुरुष एव जीवात्मा का स्त्रीरूप म कल्पित करके राम व साथ स्त्री पुरुष संबध की भावना करके न योगा ने प्रकारांतर म कृष्ण भक्ति के मोपीभाव को स्वीकार किया था ।
- (६) रामोपासना म बहुभार्यात्व ता है नरिन परकीया भावना का निपध है । यहाँ स्वकीया की ही एक मात्र सत्ता है ।
- (७) रामोपासना का सख्य भाव भा कुछ विशिष्ट है । वह सखी भावना का ही पुरुष सस्करण है । नित्य विहार म सख्योपासना ने नम सखा की उपस्थिति स्वीकार की है ।
- (८) नव मिलाकर धाम नोना परिकर एव काम्यतत्त्व की दृष्टि से राम एव कृष्ण रमापासना म समानता की मात्रा बहुत अधिक है ।

## शुक्र सम्प्रदाय मे उपास्य, लीला, धाम परिकर एव उपासना भाव की धारणा

### इतिहास

विजय की १८वा शती व उत्तरार्द्ध म शुक्र-सम्प्रदाय की स्थापना महात्मा न्याम चरणनाम न की थी । इस समय व धाने घात समन्वय की एक प्रवृत्ति सारे देश म जाग्रत न चुकी थी । भक्ति-सम्प्रदाया म पुराना आवग ता नही र गया था पर मिद्वानगत दूरी पारम्परिक सम्पन्न व कारण कम होती जा रही थी । त्रिगुण और मगुण व मध्य व अंतर तीखे नहा रह गय थ । वास्तव म भक्ति कान म हा त्रिगुण म श्री गुणा की स्थापना प्रम भावना के कारण स्वत हो गयी थी एव मगुण मनवानिया न यह कभी अस्वीकार नही किया कि ब्रह्म निराकार

मी जाता है। धीरे धीरे समय की जाति की वह गुण सम्प्रदाय जम समय वाली मार्गों का जम देती है।

इस सम्प्रदाय के सस्थापक श्यामचरणदास पहले एक लम्बे अरस तक योग साधना म लग रहे है बाद को व प्रमार्गी सगुण भक्ता के नीला गायन का पूरी तरह अपना लेते है। एक अर उहाने अष्टांग योग अष्ट प्रकार के कुम्भक छोड़ा कम हठ योग आति का वगन किया है जा गुद्ध रूप स या तो योग भाग की परम्परा म है या फिर निगुणा भक्ता की शान्तना एव वक्तव्य का अनुगूज है।<sup>१</sup> दूसरी अर उतान भक्ति पन्थ का ही वगन नहा किया है 'धीरहरण-लीला' 'दान-लीला' भाषनचारा-लीला 'काली-नयन लीला' 'मटकी-लीला' कुम्भेश्वर लाला आति का भी जमकर वगन किया है। अनहन नाम 'नूय नगर' म की जान वाली साधना हमारे विवेचन क्षेत्र मे बाहर है उनकी प्रामाण्य व सम्बन्ध म क्षेप म विचार विमग अवश्य करना है।

संक्षेप

चरणदास का सव्य हरि-नाम स भी पुकारा गया है निगुणिया की परम्परा म उम राम भी कहा है परतु सगुण भक्ति व क्षेत्र म वे कृष्ण श्याम नटनागर कुवरकिशोर नदराय कुवर कहेया आति नामा का सम्बाधन करत है। यह परमतत्व लीला सिंधु है उमकी अगाध गति है। ससाय की उत्पत्ति पानन एव विनष्टि का वही हतु है। पलक भारत ही कराडा ब्रह्माण्या की मृष्टि कर त है और जब चान्त हैं तब बुद्ध नगी गप रन्ता। उम न निगुण कहा जा सकता है और न सगुण। वास्तव म उम रूप व समान दूसरा है ही नहीं व अपनी उपमा आप है —

निरगुण सगुण कहा न जाय, चरणदास शुक्र देव सुनावें।

चरणदास का रूप की पटतर दई न जाहि।

राम तरीसे राम हैं और बतावों काहि ॥

१ चरणदास भक्ति सागर पृ ५३ १६२।

२ वही पृ० २२ २३१।

३ वही ४८६ ४८६।

४ वही ' ४६० ४६१।

५ वही, " ४६२ ४६५।

६ वही, " ४६६ ५०२।

७ वही " ५११ ५५५।

८ वही भक्तिपदाय-वगन पृ० १७५।

यह भी अविगत अविनामी आन्ति पुष्प है नाना प्रकार क वीतुक किया करते हैं अनेक प्रकार के रूप धारण करते रहते हैं। स्वयं ही माहनान ग्वान बनकर मुरली बजाते हैं और आप हा ब्रजस्त्री बनकर जगन का लीडी आती है। आप ही गायी भी है और आप हा काह बाकर रास रचान वान भी है। यही ननी अन्तर्धान हाकर आप ही अपन का दू डने भा हे और याकुन नान है। स्वयं अपनी ही नीना देने के लिए प्र म उत्पन्न करत है। कभी एक हैं और कभी अनेक हा जान है।

आन्ति पुष्ट्य अविगत अविनासी नाना कोतुक लाव रे ।  
 आपर्हि आप और नाह फोर् बभ्रुत रूप बनाव रे ।  
 आपर्हि मोहन लाल ग्वाल हो मुरली आनि बजाव रे ।  
 आपर्हि ब्रज की बनिता होकर बन को दौरी आव रे ।  
 आपर्हि गोपी काह विराजे आपर्हि रास रचाव रे ।  
 अन्तर्धान होये फिर आपर्हि आपर्हि दू डन धोवे रे ।  
 आपर्हि ध्याकुल अप देखन कू लीला प्र म बनाव रे ।  
 परगट होय सबन मुख देव आपर्हि रग बड़ाव रे ।  
 मोर भये जब खेल मचाव आप आप रह जाव रे ।  
 कबहुँ एक अनेक कभी हैं विधि निवेध गति मोवे रे ।<sup>१</sup>

नारायण लक्ष्मी ब्रह्मा गजर विष्णु वेद और समस्त ससार उहोने क्षणमात्र म उत्पन्न कर टिया है। न उमका आदि मय अवसान है न उसका कोई रग है वह पुष्प की गंध और ना स भी भीना है। तीनों गुणों और पाँचों तत्वों के आग है न प्रकट है और न गुप्त फिर भी उमम अग्रणित गुण भर पड़े हैं।<sup>१</sup> ऐस आन्ति पुष्प का कहना है कि जो कोई सब बुद्ध तज कर मुझमें प्राति करता है मैं उसी क हाथ बिका रहता हूँ। प्र म के व अरणी है तथा प्र मिया क लिए ही व अवतार ग्रहण करत है। मत्त और उमम कोई अन्तर ननी होता।<sup>१</sup> वास्तव म मत्तिहनु ही उहान नन्गृत् म अवतार लिया है —

माय चरणदास शुक्र वेव के प्रताप सेती

आदि पुष्ट्य मस्ति हेतु न गेह भायो है।<sup>१</sup>

---

१	चरणदास गजर का वरण पृ० ४६१ ४६२ ।
२	पृ २५४ ।
३	१७६ ।
४	१७१ ।
५	१७१ ।
६	४७४ ।



ताना ताका एव साता भुवना के बाहर जो अमर ताक हैं उगा के मध्य वह पुष्प ब्रह्म रहता है जो कि सबके मन म भा बिद्यमान ह । यह अमर साक गा लाक भी कहताता है ।<sup>१</sup> अमर ताक क मध्य हा निज धाम है जिसका कि अज ब्रह्मवन है —

अमर साक विच है निज धामा जाक। अज वृदावन नामा ।

या पुरुषोत्तम अपन धाम म रहते है पर प्रेम क कारण जत म आकर रहत है । व ताला धारी पुरुषोत्तम ब्रह्मवन म मन्व बिहार करत रहत हैं ।

पुरुषोत्तम निज धामा मां ही कारण प्रम रहें ब्रज आई ।

पुरुषोत्तम प्रभु सीता धारी वृदावन मे सखा बिहारी ॥<sup>१</sup>

गाल चबूतर एव चौमठ खम्भा वान ब्रह्मवन म राधा प्यारा के साथ व बिहार करते है । व नित्य किशोर हैं और व नित्य किशोरा —ताना का बारह बप की बय है । रमित कति क तिए वहा अतक कु ज है —

रसिक केलि एह कु ज है।<sup>१</sup>

इस अजर पुष्प, पुरुषोत्तम स्यामा अविनाश परब्रह्म क बाय अग रूप का राशि (राधा) विद्यमान हैं ।<sup>१</sup> राधा प्यारा नाता प्रकार क अतकारा स मज्जित हैं उनकी मुस्कान विद्युत्त्वन् ह । वासनव म कराण चद्रमा उन पर याछाकर हैं ।

### परिचर

पाच तत्त्व एव ताना गुणा म याग मवियाँ महनिमाँ खम्भे-वम्भ क निक्क मडी युगल पर चवर तुजानी सता है । सबका मत्र नित्य किशोरी गारा व वम्भाभूषण मज्जित हैं । मविया मत्र मुनिगिनें हैं चूडा पन्न रहता है —

सदा मुहागिनि पहिन नूरी सुबक पछेमी बगरी हूरो।<sup>१</sup>

१ अरणदास अमर लोक अलण्ड धाम बरान पृ० १७ ।

२ , ब्रज चरित्र बरान पृ ७ ।

३ वही वही पृ० ७ ।

४ , पृ० ६ ।

५ , अमर लोक अलण्ड धाम बरान पृ० १८ ।

६ , वही पृ० २१ ।

७ " , पृ० २२ ।

८ , २२ २३ ।

९ ,, ब्रज चरित्र बरान पृ० ६ ।

सखियाँ हरि क साथ विचरण करता रत्ना ह ।<sup>१</sup> अभी परिकर क साथ  
 उदावन म अप्रुव रास बलि हानी रहनी है । चरणगमन क मन का राम  
 अत्यधिक उमथित कर सका था । उगाने वार वार उमका चित्रण किया  
 है ।

स धाम म सखामात्र स पहँचत है एव गली भाव म भानर प्रवेश  
 गीता है -

सखामात्र पहँचत यहि ठाँई, सखी भाव भीतर का जाई  
 घेरे स्वरूप अनुपम भारी सदा मुहागिनी हरि पिय प्यारी ।  
 परम पुरुष पुरुषोत्तम पावें निकट रहें नित केलि धदावें ।<sup>२</sup>

### उपासना भाव

परन्तु जिम प्रकार चरणगमन न निगण एव समुग्न गाना के प्रभाव ग्रहण  
 किए ह । उसी प्रकार बंदन सखामात्र को ही उगान नही स्वीकारा । उगान  
 गापो चानाआ का भा गद्गल कण म गान किया है । चार हरण गीता दान  
 गीता मन्की गीता आदि म इन गीताआ का रचित चित्रण किया गया है ।  
 गापो विरह निवेदन म बल्लभ सम्प्रदाय के कविया का भाति ही प्रियतम कृष्ण  
 क अभाव म विप्रयुक्ता गापिनाआ ने बिनाप किया है । गापिया कुजा के प्रति  
 ईष्या प्रकट करता है अनन पुरान मधोग प्रसंग स्मरण करती है ।<sup>३</sup> और आसा  
 का दाप दती है कि कृष्ण की रूप माधुरी म अटक कर क्या इगान कुछ अछा  
 काम किया है ? नाक और कुन का नाज नष्ट हा गयी है स्वय भी अत्यन्त  
 याकुन नाकर आंगुआ स भरी रत्नी है । खाना पीना और साना छूट गया है  
 विरह की अग्नि हृदय म जलता रहता ह -

अखियन कहा नीकी करो ।

स्याम सुन्दर छवि निरख क जहा जाय भरी ।

अनिहि याकुन धीर नाहीं रहत अमुवन भरी ।

तजो खान अर पान सोवन प्रम की लागी सरी ।

विरह पीवा उठत निर्गदिन हिये पावक जरी ।

नेह पाक म् श्रीरी दू डी गरी-गरी ।

चरणदास मुकदेव क अन्न कौन पने परी ॥

१ चरणदास अर लोक अण्ड धाम वखन पृ० १६ ।

२ वही पृ १६ ।

३ गोपी विरह निवेदन ४६७ ५० ।

४ पृ ५०१ ।

एन आता म तया आचर भी एम पया वा कमा नया ३ जिनम युगत विगार-प्यान  
का अभिरापा न नाकर मात्र कृष्ण का प्रीति का वाता प्ररुत की गया न। यह  
वान सया सम्प्रयाया का आत्मा क नितात विरुद्ध ३ । यत् स्वनुवा प्रेम कया जा  
गवता ३ तस्मुया नया । एव उताहरण ३ —

तुम्हारे रूप लोभानी हा ।

जाति बरन कुल खोय क भई प्रम दिवागी हा ।

तान-पान सब मुधि गयी और अकबब बानी हों ।

तुम्हरे चरण कमल मन मेरो रहो लिपटानी हा ।

मुदर मूरति सोहनी मेरे मन समानी हा ।

तुम बिन चन नहीं दिन राती सुनि पिय धारी हा ।<sup>१</sup>

१ म पत् म गाथा प्रम ती नया ३ परवाया भावना भा स्पष्ट ३ । मूरताम की भाति

२ न गापी प्रमिताआ म उरगताम न मुग्ता का पानम्भ भा स्त्रिवाय है ।

बस रा बरन बामुरी तू ही अज क माहि ।

लगी रहत पिय मुख जू से पल छिन छाडत नाहि ।

जब तू बाजत तान मू एवगी बड भाग ।

बसक उठत जियरा ३र तन मन लागत आग ।<sup>१</sup>

राम का पति मानकर अय पतिप्रता भाव म प्रम करन का निर्देश २म सम्प्रयाय

म किया गया ३ । हम् कत् खुब ३ रि पतिप्रता क रूपक का निगगा भक्ता न

बहुत अरनाया ३ । मूषा प्रम ३ प्रमाय म गता विरगिणा कवार का भा यात्

निरा ३ । —

मद्गद् धारणा पष्ठ म आसू टपर नने ।

यह तो विरहिनि राम की तत्तफ है दिन रन ।<sup>१</sup>

१ म्पु माषनागत अनेज भाव एव प्रगात्रियी २म अरगताम म उपनय ३ जाता

३ । परन्तु म्पु म एक प्रात उता यात् ३ ३ ३ रि मुग्त् वम्पु प्रम ३ —

प्रम बराबर माग ३ प्रम बराबर जान ।

प्रम भरिन बिन साधुवा सवही घोषा ध्यान ।

प्रम छुहाये जगत पू प्रेम मिताने राम ।

प्रम कर गति और ही स पहुच हरि धाम ।<sup>१</sup>

१ अरगताम नाम वरान पृ० २५६ ३६० ।

२ यही पृ० ३५८ ।

३ भक्ति पदाय वगन पृ० १८८ ।

४ , , पृ० १८२ ।

५ , , पृ० १२ ।

यह प्रमयति विविध रूपा म प्रकट हा सकता है ता चरणनाम एन रूपा का अपनी मीज म आकर अपना नगे । उह उनक मद्दानिक मन वमिन्म म का म नव नहा प्रतीत हाता । नवधा भक्ति ना भा वे बहुमान देन । और सखी भाव म निजघाम म प्रवेश भा चाहत है । विरहिणा बनकर गद्गद् कण्ठ म प्रिय का डेरत भी है और रगमहन म निगण सेज पर सान की व्यवस्था भा करत हैं ।

### सूफी प्रेम दर्शन

सूफी तत्त्ववाक्य व धार म कुछ भी कहने क पूर्व ज्ञाना या ज्ञानिना ज्ञेना आवश्यक है कि सूफा मत का विकास किसा आधाय द्वारा प्रतिपादित गानिक पद्धति पर नहा हुआ है । वह श्रियाशील साधका का एन गतिशील सम्प्रदाय रहा है जा अपने विवाम म नाना प्रकार क तत्त्व और प्रभाव ग्रहण करता गया है । इसी कारण सूफी ज्ञान का एक सवमाय स्वरूप खला करना सम्भव नही प्रतीत हाता । परंतु जसा कि प्रारम्भ म ही हम कह चक हैं सूफी तत्त्ववाक्य के निग बीज रूपी नामगी करान म ही उपनय वी तथा यह भी ज्ञान म रखन का बात है कि सूफिया न कभी मा अपन का इम्नाम म पृथक् घोषित नहा किया व सत्व इम्नामी घम क वेन म अपने को सम्बिधन किय रहने का प्रयाम करते रह है । इसी कारण अपन लिए प्रामाणिकता उहाने करान एव पगम्बर के जावन म खाजी है । इस प्रवृत्ति का परिणाम यह हुआ है कि कुरान की ज्ञात्या उहाने अपने जग स करनी चाहा है । तथा अपन अनुकूल स्थितो पर ही अधिक बल दिया है ।

सनातनपथी मुसलमानो धारणा क अनुसार ईश्वर को मत्ता जगत बाह्य स्वीकार का गयी है । वह स्वयं म रत्कर सवता नियंत्रण करता है । परंतु उमक गुणा का जसा वणन किया गया है वह सगुण मनवाक्य के निकट का वस्तु है । पीछे हम एतत्सम्बन्धी कनिपय उद्धरण करान म ल चके हैं । वह श्रुति का कर्ता है 'एकमात्र वही परमात्मा है अय काइ नहा । वह नित्य और सवशक्तिमान है ।' वह दृष्टा जाता माती और स्वत पूण है । सव कुछ उमी म उत्पन एव सय कुछ उमा म विनयमान है ।' वह अपरिमाण रूप है ।' एम सगुण परमात्मा के स्वरूप क सम्बन्ध म सूफिया म जग स्पष्ट रूप म दखे जा सकत हैं । वह ज्ञान

१ स्तोत्रियस करान सू० १३।१६ ।

२ वही ३।२ ।

३ २।२६३ ।

४ २।२२४ ।

५ ३।१ ६ ।

६ ६२।४ ।

७ , रामपूजन तिथारो सूफीमत साधना और साहित्य पृ० २७० ।

बुजूर एन वहनुन गुडू क सिद्धांत एन दाना क विभाजक तत्त्व है ।

पहन मन क अनुमार हन और खल्व यानी नि मृजनकता और मृष्टि म एकात्म भाव है । अनु अरवी क अनुमार ममस्य वस्तुआ धार दया की पाद स्वर का एका है । स्वर क सिवा कुछ ह ही नहा अस्तित्व म कवन वहा है । वहनुन बुजूर का सिद्धान्त वास्तव म ताहा के स्नामी सिद्धांत का ही विकास है । तोही क अनुसार परमात्मा कवन एक है । बुजूर क सिद्धान्त म कवल य क दिया गया है कि परमात्मा क अनिरिक्त और कुछ भा अस्तिव म नहा है । एम प्रकार इस मन क अनुसार विध्य जान मनातिशायी (मिनट) है । इस सिद्धान्त का प्रभाव हिन्दी क भक्तिकान क मूकिया पर वस्तु अधिक रहा है । वह अनु गुडू क अनुसार मृष्टा धार मृष्टि क मध्य एकात्म नहा हाता है । मवाशयिता क सिद्धान्त का भी एम स्वीकार नहा किया जाता । मनुष्य और स्वर क बीच म कवल स्नाया और दाम का सम्बन्ध हा मवना है न कि प्रमा और प्रिय का । एम सिद्धान्त का प्रभाव भारतवर्ष म मवहवा मटारहवा शताब्दी म अधिक पडा ।

### सृष्टि

अधिकारान्त मूक मृष्टि का हा स्वर की अभिव्यक्ति मानत है । एम अय म क वस्तुव परिणामशक्तिया क निवृत्त है । स्वर न सृष्टि का रचना का है य ता कुरान भा स्वर करना है । सृष्टि रचना का कारण बनान हुए हलाज न कहा है कि सृष्टि रचना क पूर्व निर्गम एतत्त्व म स्वर स्वय का प्यार करना था और प्रेम क द्वारा हा उमन अपन आप का अपन सम्मुख उद्घाटित किया ।<sup>१</sup> एमो न बनाया है कि समार निम न एपण क समान ह और जय आँखा क वास्तु मट हा जान है तथा क शिया नता है ।<sup>२</sup> मना अतार न इस का धार स्पष्ट करत हए का है क (प्रभु) छिपी हू निधि है तथा एयमान जगत् वह साधन है जस म माध्यम ग हम एम यात्र मरत है ।<sup>३</sup> एम प्रकार लीनाशा एव प्रति विम्ववा का भा स्वीकृति किहा न किहा शता म मूकामन म प्राप्त है ।

### मूकियों का प्राप्य

परमात्मा क भाष एतव का प्राप्ति करना हा उनका परम कय प्रदान हाता है । पर एक प्रश्न उरता है कि इस एतव का सात्विक क्या

१ एमाइशनीपाडिया साक रिलिजन एम एमिकम राड १२ पृ० १४ १५ ।

२ एम एच इयित विषयिपन मिस्त्रिवा जन्वात उद्दीन एमो पृ० ६३ ।

३ डॉ० विमलकुमार जन 'मूक मीत और हिन्दी साहित्य, पृ० ४६ पर उद्धृत ।

है ? परमात्मा में पूर्ण तब ही जाता एकत्व ? अथवा स्वतंत्र यत्निक तब ही परमात्मा में वाम करना इसका तापय माना जाय ? प्रारम्भ में बौद्ध धर्म के निराण-तत्व के प्रभाव में फना तत्व के अतन्त्र प्रथम विचार का स्वीकार किया गया । पर धार धार फना के वात्त बका का स्थिति स्वीकार कागत् । फना की अवस्था में साधन अपने अस्तित्व का तब तब फना है पर उवा का अवस्था में स्वर के साथ शाब्दत जीवन यतीत किया जाता है । वागव तत्त्व वात्त में इन दाना की समानांतर स्थितियां स्पष्ट रूप में लखा जा सकता है । फना तां स्पष्ट रूप से आवागमन निरपेक्ष मोक्ष है जिसे कि भक्तिवाद का वप्लाव कवि स्वीकार नहीं करता पर उवा का स्थिति नियम परिवर्तन में प्रवेश पाने जसी है और यह वप्लाव कवि का परम आकाशा हानी है ।

### साधन माग

गूफी परमात्मा का चकि जगत् राह्य रूप में नही लखत इसनिए व उग दमा जगत् के भीतर और सबसे अधिक अपने मन के भीतर टूटत है । प्रेम का राह सचनकर ही उमका भावन किया और कराया जा सकता है । इनुन अरवा ने एक स्वर पर कहा है कि जाना अपनी अनुभूति दूसरा का भावित नही करा सनत । समान अनुभव वाता का प्रतीक के माध्यम में व इ गित मान कर सनत है ।<sup>१</sup> अरवा ने स्पष्ट धारित किया कि स्वर के प्रति प्रेम और चाह वात मन से अधिक उत्तम धम दमग नही है ।<sup>२</sup> शांति के समान प्रेम भा प्रभु अनुग्रह से ही इन सूक्तियां न माना है । ततना ही नही स्वर भा अपने प्रेमिया से प्रेम करता है<sup>३</sup> अपना स्वरूप एव तब प्राप्त करा के लिए । वास्तव में प्रेम आत्मा की दिव्य प्रख वृत्तिरूप हाना है । एमी न आत्मा और परमात्मा के पारस्परिक प्रेम के एकर का उचित किया था ।

प्रभु अनुग्रह के अनिरिक्त गुर निष्ठा एव जिज्ञा (नाम-स्मरण) का धम साधन माग में अत्यधिक महत्त्व है । जिज्ञा का तापय है कि परमात्मा का स्मरण करत करत एक एमी स्थिति का उपनय करना जिसे मन समस्त विषय विकारा से दूर हटकर मात्र स्वर में ही तब जाता है ।

गूक्तियां न अपने साधन क्रम के वत्त रिगत् एव प्रतीकात्मक विवरण लिए है । उम विम्वृत चचा में पत्ता हमार लिए अप्रामाणिक हाना ।

१ धार० ए० निरुत्तम मिस्टिफस आफ इस्ताम पृ १०३ पर उदघत ।

२ वही पृ० १०५ पर उदघत ।

३ पृ ११२ ।

पचम  
अध्याय

विभिन्न भक्ति सम्प्रदायो का  
अठारहवीं शती का ब्रजभाषा  
प्रेमाभक्ति काव्य





## द्वितीय शती में चैतन्य सम्प्रदाय का ब्रजभाषा साहित्य उभूमि और सक्षित रूपरेखा

पिछले अध्यायों में विवेचन के आधार पर यह धारणा महज हा बनती है कि भक्ति के क्षेत्र में मिथ्यात एव प्रभाव नाना ही दृष्टियों में चैतन्य सम्प्रदाय का मन्त्र अभूतपूर्व रहा है। इस सम्प्रदाय के अनुयायी भक्तों ने प्रभूत शक्तियों का रचना का है—परन्तु उस रचना-शक्तता का सर्वोत्तम प्रवाधान मन्वृत ब्रजभाषा के माध्यम में ही हुआ है। ब्रजभाषा रचना में एक माध्यम के सम्प्रदाय में ही बन सका। स्वयं ब्रज प्रयोग में ही चैतन्यचरितामृत जन्म लेता एक श्रवण-प्रथम की रचना हुई तथा यहाँ पर रूप-मनो-ज्ञान का तात्त्विक व्यात्मिक उपनिषदीय भा प्रस्तुत हुआ है। प्रवाधान के श्रवण-प्रथम रायण मन्त्र का भक्ति-रम-तरंगिणी ब्रज-त्रिद्विधाभूषण का गावित् भाष्य में विद्वानाय चन्द्र-वर्णों के मन्त्र-श्रवण भाष्य एव टाकाण ब्रजभूमि में ही आचारण कर मना था। परन्तु एसा जगता कि इन कृतियों के सम्प्रदाय के सम्प्रदाय रचनाकारों का ब्रजभाषा कृतियाँ बनाई है। एक कारणों की यहाँ हम स्वाजना करेंगे परन्तु एतना ही प्रत्यक्ष है कि हमारे आचार्य काव्य में ही स्वतन्त्र भक्ति रचनाएँ इस युग में कम ही मिली हैं। भगवत मुक्ति मुक्त याम श्रवण-प्रथम भाष्य का कृतियाँ विद्वद्-भूतवा है। गार्ग्य-प्रथम ब्रजभाषा में मनो-तरंग राय जग राति-काव्य का परम्परा में अधिक प्रभावित हो रहा है। भक्ति का भावना उनमें कम जना प्रदान जाना है।

एतन्त्र ब्रजभाषा काव्य रचना की कलागत रूप में यह सम्प्रदाय के रूप में अत्यधिक प्रभावगता बना रहा है। ईसा शताब्दी में ही राधावल्लभनीय रगि-प्रथम ने श्रवण-प्रथम भाष्यमिषा के अनेक प्रथमों का ब्रजभाषा श्रवण-प्रथम बनाया। गा० रूपनाथ के रम रनाथार तथा स्वामी रति-प्रथम (हरिनाथ

१ रत्नाकर गो० शपताल (सतिताचरण गाथाओं के पाम की १० प्रति के आधार पर)।

संप्रदाय) के रस माग<sup>१</sup> के सिद्धांत विवेचन पर स्पष्ट रूप से गौडीय ब्रह्मव  
छाया है। इन दोनों ही ग्रंथों में धाम ताता परितः नित्य सिद्धा साधन सिद्धा  
सखिया आदि का विवेचन विगुह रूप में गौडीय ब्रह्मव आचार पर है। स्वामी  
हरियासनेव द्वारा रचित वह ज्ञान वाच ग्रंथ सिद्धांत रत्नावलि का मक्ति  
विवेचन हरिमक्ति रसाभूत मि तु एक उच्च नवीनमणि पर पूरा तरह आच्छृत है

इस युग के चतुर्थ संप्रदाय का एक दूसरा निष्पत्ता यह है कि सखा  
भाव में युगनामानना इस संप्रदाय में भी पूर्ण तरह व्याप्त होगी प्रतीत होती  
है। ब्रह्मगोपान की हरितीला में अपवाद के लिए हा एक पद ऐसा प्रतीत नहीं  
होता जिसमें यमन सम्पत्ति का वर्णन न हो। अक्षय वृष्ण या अक्षय राधा को  
चिन्तित वे करने हा नहीं। इसी प्रकार प्रियादास न भी यमन तत्व का हा अपनी  
रचनाओं में गान किया है। गृहवा (ब्रज गी) का भी महत्व युगनामानना के  
साथ ही वर्तता है। हम प्रकार यह संप्रदाय प्रभावित ही नहीं कर रहा था स्वयं  
भा राधावतनभ एक हरिदासा संप्रदाया से प्रभावित भी हा रहा था।

### चतुर्थ मतानुयायी कवि

#### मनाहर राय

यह गापान भट्ट गास्वामी का शिष्य परम्परा में रामशरण चट्टराज के  
शिष्य थे। उनके रच हुए ग्रंथ श्री राधारमण रस मागर का समाप्ति १४५७ वि  
म गवत म था। इस प्रमाणित सा किया जा चका है। इसमें अनिर्दिष्ट  
रमिक जावना संप्रदाय वादिनी नामक ही अर्थ रचनाएं भी उनकी कही  
जाती है। पर प्रसंगान मानन का अनुमान है कि संप्रदाय वादिना कि ही और  
मनाहर राय का रचना है।<sup>२</sup> बाबा वृष्णदास न जाक तारा सम्पात्ति भरण  
गानि चित्तमणि नामक ब्रजभाषा ग्रंथ का भाष्य की है। यह एक सशक्त कवि  
थे। मत्त मान के प्रसिद्ध टातासार प्रियादास जा मनाहररायजा के शिष्य थे।  
मनाहरराय जा पर रतिकान्त टटिराण का भाष्यात्त प्रभाव है। भाषा  
अनकार याजना वर्णन बक्षिण एव चमत्सार-याचना का दृष्टि में वे रतिकान्त के  
कवि मन्त्र ही अनुमित किया जा सकत है। गुननामिसारिका नायिका का एक  
चित्र नात्रिय —

१ रस तार सिद्धांत रत्नाकर (निष्पत्त शोध मंडल वादावन) ।

२ हिन्दी अनुगीतन (पीटेट्ट वर्मा अक्ष) पृ ४१३।

वृष्णदास राधारमण रस मागर की भूमिका पृ ३।

सरद की रनि उजियारी अनिसार प्रिया,  
 प्रीनम प सेत सारी खीर अग कीन हँ।  
 मालती मुक्ता मल्ली माना, अग अग सोहँ  
 आनूपन हरिनि जटित रग भीने हँ ॥  
 घावनी म अलि चनीं दखा न पाव अनी,  
 अग का मुर्गा घ अनुसार क हँ कीन हँ।  
 राधिका सग मिले मनोहर भाति भाति,  
 बिले नन भिन मानो गोमा जन भीने हँ ॥

चित्रक व निर जिन रात्रमी उपकरण एव माधना का जुटाया गया है व मा  
 रात्रिकान व पद्याकर आदि का यान्त्रिकान है।

गुद्ध भवगात्मक चित्रणा म मा मनाररायजा पयाप्त कुशत थ।  
 अनुराग द्वार आनुरता का व्यजित करन वाता यह रविन रात्रिकान व एम ही  
 टवमाना वविता म म्यान पान याग्य है

तसी रटा जोड़ सोड़ चनी है तमनि तसी  
 बाहू की न मान बोऊ आनुरता घनी हँ।  
 अस्त घ्यस्त भूपन वसन मन मन काम,  
 मनमय राज चटसार मानों पनी हँ।  
 सनमुग नाद मुधी म गति न मई बाधा  
 आगे पूजा साधा प्रम गतराज घनी हँ।  
 रमण सौं मिनी राधा गोमा सिधु त अगाधा  
 मानो हर भूरति सनेह साचे गड़ी हँ।

अ रात्रिकान व कारण उनका भक्ति का स्वर यथा यथा-ना प्रनीत जाता है।

### प्रियाणम

य पूर्वोक्त मनारराय (राय) व शिष्य थ। तामाणम व भक्तमान का  
 अनका भक्त रग वासिना टाका प्रगिद्ध है। इसमें अनिरक्ति वाजा टाकणाम न  
 अनका, रतिग मासिना अत्र न माहिना यान्त्रिकान रात्र शुभरिणा नामन  
 छाया अत्रा रचनाएँ एव न चित्र म प्रदासिन का है। प्रियाणम मूरननगर  
 रात्रपुरा व रान वात वासुदेव एव गगावा व पुत्र थ। जम पवन का यदति  
 निश्चित पना मया है पर पव १७ ५ व आमपान रगका अनुमान हम आधार  
 पर। क्या तामकना है। भक्तमान का भक्तिरग वासिना टाका जाने मवन्  
 १७६६ मगमाल का था। अत्र अग मगन व ० २५ वय पूर्व टाका आविना  
 अनुचित गतायना गही है। अत्र एव अत्र अत्र रमिन मासिना म टाकाने

रचनाकाल सन् १७६४ दिया है। उस प्रकार १८वीं शताब्दी का उत्तरार्ध उनका रचनाकाल कहा जा सकता है। प्रियानामस जा का मर्म प्रिय छाना है। यद्यपि अथ समसामयिक छन्दों का भी प्रयोग उन्होंने किया है। शान्त में उनकी भाषा अत्यधिक विन्ध्य रूप में प्रकट हुई है। अपना बना याजना में दाह कर्मा कर्मी विहारी में टक्कर उत प्रतीत होता है —

घिरति रहे ब्रज भूमि में भूमि नन अकुलाय  
धूम धूम तन लोट कं उठे रूप गुन गाय।  
बिना पलक दृग दृग जुरे देख्या अचरज सार  
गुरु ननहू जक धक सज इक टक रहे निहार।

परन्तु सब मिलाकर उनका यह शृंगार बणन 'शांतावाट' के निबन्ध की वस्तु बना रहता है।

### भगवत मुद्रित

भगवत मुद्रित जा के सम्बन्ध में नामाशान्त ने अपने मक्तमान में एक छापय लिखा है जिसका प्रियानामस जा ने ५ कवियाँ मराठी का है। उस बणन के अनुसार यह माइकास (माधव मुद्रित) के पुत्र के तथा सूजा (गुजाउत्तमुल्ल) के आगरा के निवासी थे। गांधीय सम्प्रदाय के मक्त हरिदास के यत् शिष्य थे। अपने गुरु ब्राह्मणा ब्रजवासिया इत्यादि में शान्त अत्यन्त उद्धा था। नामाशान्त के अनुसार यह माधवी भाव के उपामय थे तथा नित्य धर्म में ही उनकी चित्तवृत्ति रमा रहता था।

उनके रमिक अनपमान में राधावल्लभीय मत्ता के चरित्रों का संप्रत्य किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि गुफ शान्त में गौरीय वपगव मत्तानुयायी शान्त हुए भा के राधावल्लभाय भक्तिभाव में विगप प्रभावित थे। उनका दूसरा अथ वन्दनान्तक प्रसिद्ध महामा प्रनाशान्त के वन्दन मत्तमाशुत का ही यत्किंचित रूपान्तर है। प्रनाशान्त जा के द्वार में भा यही प्रनाशान्त के संप्रदाय में चतुर्थ मत्तानुयायी शान्त पर भा के हित हरिदश द्वार उनका नजनरान्त में अत्यन्त प्रभावित रहे।

भगवत मुद्रित मुकवि प्रनाशान्त शान्त के। उनकी मौनिक रचनाएँ यद्यपि कम हैं। परन्तु वन्दनान्तक के अनुवाद में भा उनका कवित्व प्रमाणित हुआ है। भाचर्यम एक उदाहरण दे रहे हैं —

नव सिंगोर चित्त घोर तरण तन भोर है।  
कोटि कोटि छवि काम स्वाम दुति गौर है।

दोड़ मूरति तन एक जीव जीवन रस भागा ।  
 बौतुक बेलि बिलास सहा आनद उपयोगी ।  
 चलत फिरत नव कु ज मे बब हँ है मम पुलक मन ।  
 देखि नवल नागरी वेपथु गति है परति तन ।

मित्र बाधुआने उनक चारय थ — रसिक अनयभात कृष्णवन जनक हित चरित्र तथा मयक चरित्र बनाय है । परवास्तव म हित चरित्र राधावल्लभीय उभयनाम की रचना है एव मेवन चरित्र रसिक अनयभात का ही एक अंश है । एम प्रकार मुख्यत उनर प्रथमटा हा प्रथम मिद्ध होत है । कुट्ट स्फुट पत् उनर यत्र तत्र और भी उपनत्र हा जात है । उनक रसिक अनय भात का एतिहासिक दृष्टि म बहुत महत्व है । उमका रचनाकाल मवन् १७०७ है ।

### किशोरीदास

किशोरीदास जी का समय भा प्रभुदयाल मीतल न विप्रम की १८वीं शती का पूर्वार्द्ध माना है ।<sup>१</sup> किशोरीदास जी बंगाली ब्राह्मण थ एव गाम्वामी यशीलम जी उनक गुरु थ । सनातन गाम्वामी की पंचवी पीठा म व मन्दमाहन मन्दिर कृष्णवन क आचाय थ । एम दृष्टि म उनका समय १८वा शता उत्तरार्ध तक जाता है यद्यपि पीठी का दृष्टि म कान निणय करना बन्त धनानिक उहा प्रतात हाता ।

कुसुम सरायर के बाया कृष्णनाम क पाम हमने उनकी बानी का मग्रह किशोरीनाम की बाना देया है । प्रथम म स्फुट पत् है एव प्रथम पत् म राग रागिनी क नाम तथा तान थिय इण ह । एमा लगता है कि व मगीत क बहुत मन्द्रजनित थ । उक्त बाणा प्रथमे ताल पत् हस नीच ल र्त है—प्रथम टा पत् गिनु ज चीना म सप्रथित है एय तृतीय पत् ब्रजनातागान की परम्परा म है । प्रथम छत्त राग मान जन्त निताना म है दूमरा राग वात्कार म गाया जा ताता है तथा तृतीय नितान म सान्ग राग क अनगत थिया दृष्टा है ।

भूगत कदम्ब दान्यां

धीरे धीरे जमुना तीर पिप प्यारी, पत्नी पर बटे दोऊभर यहियां ।

उर के वार हार मुरभायत थ सभरस वित घहियां ।

किशोरीदास ब्रजचंद प्यारी छवि देवे रूपदत्तर नहियां ।

१ प्रभुदयाल मीतल हिंदी धनुगीतन (धीरेड वर्मा किशोरीदास)  
 पृ ४१२ ।

खेलत चौपर पीतम प्यारी ।

अपनी अपनी जोत विचान्त, द्वारन पास चौपन भारी ।

×

^

×

आग्नो सिमित सत्र ब्रजवामी ल ल गया अपनी सग ।

रहो गिरि की छया सब सब सुख नाचो गावो करटु बहुरग ।

पवत को परभाव लखोने तत्र द मन माहि उमग ।

श्री ब्रजचन्द किशोर अहे नग मधुदा को मान करिहूँ भग ।

### गौरगणदास

गौरगणदास की एक रचना गौराग भूपग मभावता वा० कृष्णदास द्वारा प्रकाशित हो चुका है। इसकी भूमिका मठ सनातन गोस्वामी चरणा के द्वारा प्रिय शिष्य बनाया गया है। इस रचना परबनों प्रताप हाता है। मानता की ने अनरा समय १८वां गता का पूर्वाद्धि माना है।<sup>१</sup> म पुष्पिका म माभा के अतिरिक्त अथ ब्रजभाषा रचनाएँ भी है। उक्त अनरा मायना का स्वयं ब्रजभाषाभाषा प्रताप है।

चितामनि अथ भूमि विलोचन नित नूतन नव भाव भरी ।

धरि धरि अग ब्रज रज म प्रम मत्र जनु घाव करी ।

गुरु अनुसरव भाव को वारिधि उमगि उमगि बह्या गौर हरी ।

श्री रूप सदातव आमा उर म अजगोपिन अनुभाव सरौ ।

गौराग भूपग मभावता का भाषा कायमा पजावा एव ब्रज मिश्रित लड़ी जाना है। रचना गता सांस्कृतिक रूप तथा अर्थपूर्ण है। रचनात्मकता का दृष्टि से भाषा कृति बहुत उत्कृष्ट है। पर भाषा विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए समझने में आसानी मिलेगी।

### मुबल प्याम

अनरा चतुर्थ चरितामन के प्रथम भाग में अमो गाम म ब्रजभाषा म अनुवाद किया है। वादा कृष्णदास ने प्रकाशित किया है। य नारायण भट्ट के यान्त मनुपति मित्र के शिष्य थे। अनरा गतिज्ञ कुटुंब जानता है पर नारायण भट्ट म वा परम्परा म जान म अनुमानित यह अन्वय गता के अन्त एव १६वां गता के आरम्भ म विद्यमान रूप है। अनरा अनुवाद का एक मर्म उक्त रूप

१ अनुप्यात मीतल हिंदी अनुपालन (डा धीरेण वर्मा विनोद) वर्ष १३ अंक १२) पृ ८१२।

उपस्थित कर रह है -

लीला राधाकृष्ण की अनि निगूढ़ तर सोय ।  
 बात्सल्यादिक भावकहि बहि गोचर है जोय ।  
 एक सखीमण यिन जु नाला पुष्ट न होय,  
 बिस्तार लीला सखी, आस्वाद उन सोय ।  
 तिहि लीला मधि सखी यिन नहीं अय गति जोय  
 तिनहीं को अनुगति कर, सखीभाव जा हाय  
 दम्पति सदा यु ज की साध्य पाय है सोय,  
 पवे की तिहि साध्य की नहि उपाय अर कोय ।

— म० लीला । परि ८, पृ० ६७

यत् अन्न क्षतय चरितामृत व मध्वनादा रात् व अन्नम परिच्छेत् व  
 प्रमिद्ध सिद्धान्त कथा का अनुशात है जिसमें कि मखी का महत्त्व बताया गया है ।  
 अनुशात पयाय स्पष्ट एवं सन्न हुआ है पर उम नात्रिय का अमम अभाव है जा  
 मृत अथ म उपनय जाता है ।

### साधुचरणदाम

साधुचरणदाम व वार म भा मुछ प्रामाणिक सामग्री प्राप्त नता है परनु  
 उनका रचित रमित विनाम नामक अथ इन्द्रनिवित रूप म हमन भावा कृष्ण  
 दाम व पाम दगा है । इस अथ की रचना का कान तथा अथ का उद्देश्य एवं कथ्य  
 उक्ताने प्रारम्भ म नी स्पष्ट कर दिया है । इस कथन म नाते जाता है कि अथ  
 गभवन् १७५८ (अथवा १७६८) म पूरा हुआ था ।

सम्बन् सग्रह स अनावा पायो इन  
 माह मुदि शुक्लपत्र पचमो मुहूर्त्त है ।  
 सनिचर-वार शुकुराज दू की आगम हो  
 सारी दिन अथ यह पूरण मुहूर्त्त है ।  
 रतिव विनास नाम अथ अनिराम अहै  
 गुन पित स्याम भाद मुलदार्त्त है ।  
 आता मन भाई साधु चरण वराद पोयो  
 अति मुलगाइ अमहाइ अत्रि छाई है ।  
 रतिव विनास नाम अथ अनिराम रिधो  
 की है धामना की उपमा विधारयो है ।

## हरिदासी सम्प्रदाय में १८वीं शती का ब्रजभाषा काव्य

### पृष्ठभूमि और सक्षिप्त रूपरेखा

नित्य विहारोपासना का प्रथम प्रयाक्ता हरिदासी या सखी-सम्प्रदाय में भी प्रभाव ग्रहण की प्रक्रिया प्राप्त होती है। बल्लभ सम्प्रदाय गौणीय वज्रव या निम्बार्कीय जहाँ निजु ज लीना एव सखी भावोपासना की ओर झुक्त है वही १८वीं शती में हरिदासी सम्प्रदाय में नित्य विहार का परिगुद्ध रूप ब्रजनीला एव गोपीभाव से मिश्रित हो जाता है। स्वामी नरहरि देव रसिक देव पीताम्बर देव आदि कवियों ने स्थूल विरह स्थूल मान परकीया भाव कृष्ण के प्रति गोपिया का काता भाव इन सभी की अभिव्यक्ति की है। रसिक देव ने ता बाल-लीलाआ का भी चित्रण किया है। सम्प्रदाय में कुछ विष्ट खनता भी इस कान में आती है। रसिक विहारी गार लान आदि स्थानों का उदय इसी कान में होता है। स्वामी नलित किशोरी देव ने टटटी सस्थान की परम्परा इसी युग में स्थापित की। ललित किशोरी जी ने पूर्वोत्तिखित मिश्रणा को दूर कर पुन नित्य विहार का गुद्ध रूप अपनी परम्परा के अतगत प्रस्थापित किया। नलित किशोरी जी कवि रूप में भी महत्वपूर्ण है पर उनमें भी अधिक महत्वपूर्ण साधनानुभूति की दृष्टि से है। उनके काव्य में साधनागत निष्ठा का अद्भुत आवेग प्राप्त होता है। अपने सीमित क्षेत्र के भीतर उन्होंने अत्यन्त सशक्त शतावली में अपनी अनुभूति का अभिव्यक्ति किया है। परन्तु इस अभिव्यक्ति में सचष्टता या पच्चीकारी की आर ध्यान नहीं दिया गया है।

समग्र रूप से देखने पर यह अवश्य ज्ञात होता है कि प्रस्तुत सम्प्रदायानु यादिया ने काव्य रचना की आर सचष्ट ध्यान नहीं किया है। सम्भवतः सगीत की आर अधिक ध्यान अवश्य रहा है। एक और विचित्र तथ्य है कि गृहस्थ एव विरक्त इन दोनों परम्पराओं का प्रस्तुत युग तक काव्य रचना कवन विरक्तों का अतगत ही प्राप्त होता है। उनमें भी आचार्यों का छाड़ कर अथ अनुयादिया की रचना में अत्यधिक विरल है। यह भी सम्भव है कि अथ रसिका की रचनाओं के रक्षण पर ध्यान न दिया गया हो।

### हरिदासी सम्प्रदाय के कवि

#### नरहरिदास

स्वामी हरिदास की पाचवा शिष्य पाण्डेय नरहरिदास जी हुए हैं। उनके



गुरु का नाम स्वामी सरम देव था । नरहरि स्व जी सम्प्रदाय की गद्दी पर सम्बन् १६८२ म स्वामी सरमलाम की श्रुत्यु के पञ्चान् प्रतिष्ठित हुए थे । इनक प्रधान शिष्य स्वा० रमिक देव जी ने अपन 'गुरु मगत म उह बुद्धनखण्ड के गुण (या गुण्यो) नामक ग्राम का निवासा तथा विष्णुलाम का पुत्र बताया है । उनक अनु मार नरहरिलाम जी की जन्मतिथि ज्यष्ठ कृष्ण त्रितीया है । स्वा० पीताम्बर देव श्रुत्यादि परवर्ती जन भी अपनी बघाइया म उह ज्यष्ठ कृष्ण द्वितीया का ही उत्पन्न मानत हैं ।<sup>१</sup> अपन क्षेत्र बुद्धनखण्ड म ही भक्ति का य प्रचार करत रहत थे । निजमत सिद्धांत म विशारलाम ने बताया है कि स्वा० सरमलाम न बुद्धन खण्ड जाकर ही उह अपना शिष्य बनाया था ।<sup>२</sup> निजमत सिद्धांत म उनके जन्म का सम्बन् १६४० बनाया है जो अनुचित नहा प्रतीत हाना । पीप गुवता मल्लमो सम्बन् १७४१ म नरहरि देव जी का जन्मवत म स्वगवाम हा गया था । स्वा० नरहरि स्व जा म बुद्ध विचित्र परम्पराए भा सम्प्रदाय म प्रविष्ट हा गया था । कहना या चाहिये कि विश्रुतता का प्रारम्भ इहा क समय म हुआ था । इनके पूर्वगुरुचार्यों न जन्मवत क बाहर बहुत कम प्रख्यात किया था पर नरहरि देव जी बहूधा वात्तर रह कर प्रचार काय म लगे रहत थ । एसा जगता है कि भक्ति का प्रारम्भक छावण नि गण भा चला था और साम्प्रदायिक प्रतिष्ठा वतान क धारणा अधिक बलवती हा उठा था । नरहरि देव जा निधिवन छाड बतमान रमिक विहारी जी क मन्दिर के स्थान पर रहने लगे थ । उनक उपाम्य आजकल गारंगान जी क मन्दिर म स्थापित हैं ।

गुरुचार्यों का वागी की जा प्रतिनिधि हम उपनथ भा सकी है उसम नरहरि देव क मग्रह का परिमाण बहुत कम है । पाँच साधियों एर सिद्धांत का पत्र तथा १० रम के पत्र ही उनक इस मग्रह म सङ्कलित है । अलग म उनका कोई ग्रथ अब तक उपनथ नहा हा सबा है ।

साधियों म जाति-भक्ति क सङ्कन क साथ ही वाह्यकमका के प्रति बवार जती अव्यक्तता का स्वर हम प्राप्त होता है

नरहरि धागा भूत को गव करो मति कोड

जद्यपि अब कसक है जगत उजेरो होड ।<sup>१</sup>

यद्यपि विरह की स्वादुति हरिलामी सम्प्रदाय में नहीं है पर नरहरिलाम जा का एक मुत्र विरह का पत्र मिलता है

१ सिद्धांत रत्नाकर पृ० ६६ एव १०६ ।

२ निजमत सिद्धांत अवगतान खण्ड ।

३ सातो ३ ।

अरे कारे बदरा ताही मे स्याम हिरान ।  
 ताही त तू अतरग स्यो विरहिन पीर नजान ।  
 परसि दुकूल यामिनी अति चमकति सत मुख सापर तान ।  
 मद मद मुरली धुनि गावत बाजत मदन निसान ।  
 रग रग मिलि सुख उपजत आन रग बयो बान ।  
 श्री नरहरिदास जे अतर कारे कारे सो रति मान ।<sup>१</sup>

या कृती अल्प रचना के आधार पर उनकी कवित्वशक्ति का मूल्यांकन क्या किया जाय ? पर जितना भी कुछ है उससे व समय कवि प्रनीत नहीं होते । भाव की सम्पत्ता तो सम्प्रदायानुक्त मन में अवश्य थी पर उसके फलस्वरूप के लिए जिस कल्पना शक्ति जिस अस्तुतु विधान योग्यता एवं भाषा सामग्री की आवश्यकता है उसका उनमें अभाव मिनता है । वह युग अन्तकरण का था पर नरहरिदास में इस अन्तकरण का भी बाहुल्य नहीं है । उत्प्रेक्षा का अवश्य उठाने का प्रयोग किया है पर सब मिला कर उनकी रचना वाच्य कला की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है । उनका अच्युत म सं एक निम्ननिम्नित है

प्रिया प्रीय सूरत सेज उठि जागे ।  
 धूमत नन अरुन अलसान मनहु समर सर नागे ।  
 सिषिल अ ग छूटी सिर अलक बदन स्वेद बन लागे ।  
 मानहु विध कुसम तिकरि पूयो अ ग अ ग अनुरागे ।  
 चित परस्पर ही उत दोऊ काम केलि रस पागे ।  
 श्री नरहरिदास अ गद्यवि निरखति गड पीक सो पागे ।<sup>१</sup>

युगल केलि का यह चित्र रसिक साधना के अनुरूप है ।

स्वामी रसिक दास (रसिक देव)

स्वामी नरहरि देव जो के पञ्चान् सम्प्रदाय का गद्दी उनका च्याठ शिष्य स्वामी रसिक देव का सबन् १७६१ में मिनता । या अमानक राम शास्त्री ने लिखा है कि मवन १६६१ में बसत पंचमी के दिन कहाँ दासा थी ।<sup>१</sup> जन्म-मवन् के बारे में कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिनता यहाँ तक कि निजमन सिद्धान्तकार जन्म पदु इतिहास (?) ने भी उनका जन्म-मवन् का उल्लेख नहीं किया । सहचरिणरण

१ रस के पद ४ ।

२ रस के पद २ ।

ने जन्म त्रिपि वसन्तपंचमी मानी है तथा इनके शिष्य पीताम्बर देव जी की बधाई स भी इसका समथन हुआ है

प्रगटे श्री रसिक देव मुल सार ।

मगल बसत पंचमी नू पर छापो नित्य विहार ।<sup>१</sup>

मभव है कि गुरु ने इनका जन्म ही गुरु श्रीना के निग चना हा । यन् सवन् १६६१ इनका श्रीना मवन् है तो जन्म-सवन् १६७० स पूव हा मानना योगा । सहचरि शरण की गुरु प्रणानिका क अनुमार य बुद्धेयखण्ड निवासी मनान्य श्रावण थ ।

इनके बारे म यन् प्रसिद्ध है कि प्रारम्भ म गुरु न इनस अप्रसन्न राकर निकान लिया था । य बाहर जाकर भी किसी न किसी बचाने अपने गुरु की सेवा करते रहे । अन्त म इनकी गुरु निष्ठा पर प्रमन होकर स्वा० नरहरिदास ने इन्ह पुन बुला लिया और गद्दी का अधिकारी घोषित किया ।

गद्दी पर बठने के बाद डूंगरपुर म श्री रसिक विहारी का विग्रह मंगा कर उहान उमकी प्रतिष्ठा कराई यहा वनमान रसिक विहारी का मन्दिर है । रसिक दास जी क ५२ प्रमुख शिष्य थे । इनम तीन मवश्री माविण नेत्र पीताम्बर देव एवं ललित विशोरी देव प्रधान थे । इन्ही तीना म प्रमण गान्धान रसिक विहारी एवं टट्टी स्थान की परम्पराए प्रारम्भ हुई हैं ।

अष्टाचार्यों का वागी म सगुनीन उनकी रचनाआ का परिमाण भी अल्प ही है । उक्त सग्रह म रसिक दास जी की १६ माण्डिया ५ सिद्धान्त क पत्र एवं २० रम के पत्र प्राप्त हात हैं । उनके अनिरिक्त इनके त्रिवे ह्य ८ छोटे छोटे ग्रंथ और भी प्राप्त हुए हैं जिनम म ५ का भ्रमवश विशारा शरण अत्रि जी न अपनी गान्धिय रत्नावली म राधा बल्लभिय रसिक दाम की रचनाआ म सम्मिलित कर दिया है ।<sup>१</sup> य आठ रचनाएँ निम्नलिखित हैं

- (१) भक्ति सिद्धान्त भाग (२) रम मार, (३) रमाणुब पत्र  
(४) गुरु मगत (५) बान श्रीना (६) पूजा विनाय (७) बुज कौतुक तथा  
(८) वाराण मन्त्रि ।

इनके अनिरिक्त ध्यान श्रीना भी इनका एक ग्रंथ कहा जाता है जिस निम्बान् माथुरी म बह्मचारी विहारी शरण शारामकविद किया गया है । गान्धिय

१ सिद्धांत रत्नाकर स्वामी पीताम्बर देव हृत स्वामी रसिक देव जी की बधाई पु० ११० ।

२ विशोरी शरण अत्रि साहित्य रत्नावली पु० २५ स० २६०, २६१, २६४ २६५ एवं २६७ ।

रत्नावली म भी रमिक नाम के नाम पर उसका उल्लेख ६ नम्बर पर हुआ है । डा गोपालानन्द शर्मा न उनकी एक सम्वृत्त रचना गुरु परम्परा का भी उल्लेख किया है जो हमारे लिए अप्रासंगिक है । इन छाठ ग्रंथों म रस मार तथा राधा उल्लेखीय गो० रूपलाल के रस रत्नाकर म इतना अधिक साम्य है कि यह गका जाना है कि इनमें से कम से कम एक अप्रामाणिक होगा । या यह भा संभव है कि किसी अथ संस्कृत की सिद्धांत पुस्तिका को भाषा म रत्ना ही महानुभावा ने उपस्थित किया है । भक्ति सिद्धांत मणि एव रस मार का प्रकाशन भी सिद्धांत रत्नाकर व अंतर्गत निम्नार्कीया न किया है ।

स्वामी रमिक दास ने सखी सम्प्रदाय की वास्तविक आत्मा को मन म स्वाकार नहा किया । ऐसा लगता है कि सम सामयिक ब्रजलीला व गायक अथ सम्प्रदायों का प्रभाव म उ लाने उस अनन्यता का खानिया जा हरिदामी सम्प्रदाय की निधि था । फुटकर छत्र व स्थान पर सम्प्रदाय म पहली बार व्यवस्थित अथ रचना हा उ लाने तथा की सद्धान्तिक दृष्टि से भी वे 'यूह आवरण ब्रज नीला गाथाभाव सखीनामावला आदि के स्वीकरण एव बलान म निरत हा गए थ । अप्पाचार्यों का वागम म सृष्टांत इनके पन् गुद्ध सखी भाव के प्रतिष्ठापक हैं । उनका उपयोग हम सम्प्रदाय व सिद्धांत विवेचन म कर आय है ।

काव्य का दृष्टि से रमिक दास जी तम सम्प्रदाय के महत्त्वपूर्ण कवि ठहरत ह । ऐसा लगता है कि काव्य के अभिव्यक्ति-म त के प्रति इनका सचष्ट ध्यान था । इमा कारण छत्र और अनकारा का ही व्यवस्थित प्रयोग हुआ है भाषा भी अप्पाचार्य परितोषित एव समथ है । दोहा चौपाई उनके सबसे प्रिय छत्र है तथा पन् राधा छत्र का भा उ लान प्रयोग किया है । उनका यह रूपक भी अपने चमत्कार व निगद दृष्टव्य है

मन सीखी राधा अंतर नलसिल मरी बनाइ ।

ताहि दलत मोह्यों सावरी म वर वामु लपटाय ॥<sup>१</sup>

साम्प्रतिक नय काव्य म क्रियाशील विम्बा का बहुत अधिक महत्त्व प्राप्त हुआ है । स्वा रमिक नाम द्वारा चित्रित यह विम्ब भा गतिशीलता की व्यञ्जना म अत्यन्त मार्मिक बन पन् है

जब पोन्न को समयी मयो ।

इत आर्त दुम की परछाँ उत दरि घट गयो ।

उमरि तरे दोउ मुरति सेज पर बाढयो रग मयो ।

नी रसिक बिहारो बिहारिनि पौड़े प्रति मुख टगनि दयो ।<sup>२</sup>

१ माली ६ ।

२ डा नारायण दत्त शर्मा द्वारा स्वामी हरिदास जी का सम्प्रदाय और उसका वागम साहित्य (अप्र० प्रब०) प० ४०२ पर उद्धृत ।

इस पद में उभयों द्वारा जहा क्रिया और गति का प्रकट करता है वहाँ दूसरी पक्ति प्रकृति के व्यापार का भी पूरी गतिशीलता में विस्मित करने में समर्थ हुई है।

एसा लगता है कि स्वामी रसिकता में जा वास्तव में भीतर में बसि थ। सम्प्रदाय की अत्यन्त सीमित परिधि के भीतर उनकी मृगत शक्ति पूरी तरह में अभिव्यजित नहीं हो पा रहा थी उस परिधि का ताड़ कर उन्होंने नीला का विस्तार रना चाना पर वह सम्प्रदाय में साय नहीं हुई—परिणाम स्वरूप वह विस्मृति उनके साथ ही समाप्त होगी। उनके शिष्य स्वा० ललित विहारा नेव न पुन सम्प्रदाय की वास्तविक प्रणाली का स्थापना की। आगे हम रसिकता में जीव प्रथा का सखिण परिचय दे रहे हैं —

### रसिक दश जो के प्रथों का परिचय

(१) भक्ति सिद्धांत में - सम्प्रदायानुमानित भक्ति सिद्धांत का निष्पन्न प्रथम है। भक्ति के मुख्य उपाय साधन गुरु की मुख्य विधापनाएँ शिष्य के उपाय धर्म विद्वक पुण्य के कम पाप कर्मों के उपाय और उनका मत्ता भक्ता की कार्यवाही साधु उपाय नदधा भक्ति और उगत विहार आदि विषया की विवचना मरल एक मन्त्र रूप में प्रथम उपनय होती है। प्रथम अंत में नित्यविहारवाचना का मार्मिक निरूपण हुआ है। इस प्रकार का साधना के विषय बसि का बचना है कि शिष्य का गुरु में अत्यन्त निष्ठा रखन हुए गुरु स्व का श्री राधास्वरूप मानना चाहिए और स्वयं का भाव मग्नी कलित करके श्राद्धणा चर जा का उपाय एक परमात्मनस्व स्वाकार करना चाहिए। यह ब्रजभाषा में चौपाई छंद में लिखा गया है। बाल-बीच में ग्राह है। कुन छन्द मन्था १०० है। सिद्धांत विवचन का दृष्टि में प्रथम मौनिकता एक गहराई का अभाव है। उगतता है कि स्वका उच्छेद पात्रक माता धवन का भक्त है।

(२) पूजा विज्ञान—यह २० २५ पृष्ठा का छोटा-सा प्रथ है। पूजा के विविध विधि विधानों का सखिण पर भागापाय चर्चा इसमें की गयी है। यह भी ग्राह चौपाई में लिखा गया है जिनकी मन्था १ ८ है। पूजा विधि के अनिर्दिष्ट भक्ति के अर्थ प्रथा का भा चर्चा इसमें छाई है।

(३) सिद्धांत के पद—इनमें ध्यानवन ब्रजरज राधा कृष्ण-मोक्ष निय विहार मान-वचन ममार की समारता आदि पर पुत्रकर पद निम्ने मानूम पढ़ते हैं। पर अधधिक भरम एक मधुर बन प है। शृंगार के वचन भा धमयौनिक नहीं हैं। उपायना एक स्वरूप का इनमें मुख्यतः अन्त किया गया है।

(४) रसक पद — निकुंज रम और दाम्पत्य प्रम-लीला का मातृ वणन रम है ।

(५) भक्ति सिद्धांत की साखी — इस ग्रंथ का वर्णित विषय प्रथम ग्रंथ जसा ही है । यह अष्टाचार्यों की वाणी म मगृहीत है ।

(६) कुंज कौतुक — रम निकुंज लीला का गान है । विविध कुंज का माध्यम म क्रतुचर्या का भी नियाजन किया गया है । इसका छन्द रोना है और मर्यादा १११ है । रम म मनाकर ६० कुंज की मर्यादा बनायी गया है जहाँ विहार होता रहता है ।

(७) रस सार — रसापासना का अंतरंग ग्रंथ रम रथ म व्यक्त हुआ है । राधाकृष्ण की सापथिक स्थिति माग की कठिनाइया काम और प्रम का अंतर राधाकृष्ण का तात्त्विक स्वरूप सखी उपासना और उसका भेद निकुंज-लक्षण और शोभा रम ग्रंथ म अत्यंत महज स्वाभाविक रूप म वर्णित हुए है । रम ग्रंथ म सब मना कर केवल ४५ गह एव चौपाइया है ।

(८) गुरु मंगल धन — अपन गुरु श्री नरहरि देव का प्रति यह उनकी श्रद्धाजति है जिसम उह अगणित गुणा का आकर माना गया है । यह चार चार चरण की २१ चौपाइया का मग्रह है ।

(९) बाल लीला — वास्तव म बाल लीला म भी श्यामा श्याम का बीच का माधुमपरक भावा का ही चित्रण किया गया है । मधुर रस की प्रकृति एव पुष्ट करन वाली अनेक प्रकृतिया मुताबिका श्रीलाला एव वानचदासा का हा अवन किया गया है । चौपाई एव दाता म यत् भी लिखी गयी है । कुंज छन्द मर्यादा ४६ है ।

(१०) ध्यान लीला — यत् गुरु नरहरिनाम व्रतावन घाम राधा एव मन्त्ररोमग तथा नित्यविहार का ध्यान मन्त्रघी दाटी मी पुस्तिका है ।

(११) वाराह सहिता — उनकी महत्वपूर्ण कृति है । इसम व्रतावन रम नित्यविहार लीला वृत्त व्रतावन (जनपद) धाम का वणन किया गया है । व्रतावन का पौराणिक एव ममसामयिक वणन अत्यधिक महत्वपूर्ण है । मून वाराह मन्त्रिका का भाषा म मरिचक रूप म उपस्थित करना ही रम ग्रंथ का नय जान जाना है । यत् भा २१८ गह चौपाइया का ध्यानी-मा पुस्तक है ।

(१२) रसाणु पत्र — मरिचिका म धिर हुए वर्णित रूप स्थित युगत की नित्यविहार लीला का चित्रित करन वान रम ग्रंथ का ८४ राता छन्द म समाप्त किया गया है ।

पीताम्बरदास (पीताम्बर नरेश देव)

स्वामी रसिक दत्त के तीन प्रमुख गिण्या में एक पीताम्बरदास जी गुरु की श्रुति के पञ्चानु सवन् १७५८ में रसिक बिहारों गद्दी के अधिकारी हुए। कहते हैं कि स्वामी त्रिनि विशारी दत्त एवं गाविन्द देव ने गुरु की साधना प्रणाली में अन्तर्गुह्य होने के कारण यह गद्दी लनी अस्वीकृत कर ली थी। इही पीताम्बरदास जी के शिष्य महत्त विशारदास जी हुए जिन्होंने कि निजमत सिद्धांत नामक ग्रंथ लिखा है। वास्तव में निम्बाक एवं हरिदासों सम्प्रदाय के सम्बन्ध का उल्लेख जा बाबू निम्बाक है उसमें जन्मना यही गुरु शिष्य है। अपने पक्ष का प्रबल करने के लिए उन्होंने अपनी परम्परा निम्बाक से जोड़ लाया।

अन्तु निजमत सिद्धांत के अनुसार नारनौन (शाहजहापुर) के रहने वाले चौबेनाथ नामक गौड़ ब्राह्मण के पुत्र थे। इनका घर का नाम प्रयागदास था तथा भास्कर कृष्ण के का के जन्म थे। किसी व्यापारी मनाहरदास के माध्यम से ये स्वामी रसिकदास के सम्पर्क में आ गए थे।

हमारे देवनागरी में श्री पीताम्बरदेव जी की वाणा नामक एक ग्रंथ आया है जिसमें निम्नलिखित रचनाएँ संगृहीत हैं — (१) बेलिमान की टीका (२) समय प्रबन्ध (३) गुरु परम्परा नामावली (४) गुरु मंगल (५) सिद्धान्त और रस की माय्नी (६) सिद्धान्त और रस के पद (७) माक (८) वधाई। इनमें से काव्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण चौथे और पाचवें हैं। परन्तु सब मिलाकर पीताम्बरदेव के काव्य का नतीजा अभिव्यजनागत चमत्कार है और न गहरी भावनात्मकता। परम्परा में प्राप्त त्रीनामा या दृष्टा का उल्लेख उपस्थित किया है। इनमें से काव्य के अन्तर्गत की दृष्टि में कुछ ही अंग महत्त्वपूर्ण हैं। एक उदाहरण दें

रस रस की रसकेलि रसिकदा रस की बानी बसत ।

रसिक बनी रस की रस देखयो रसिक पीय रसवत ।

रस के रस अंग रसकीली रसिक भावि सब अन्त ।

रस की रसिक रसिकनी रस के रस कारण पीताम्बर अन्त ।<sup>१</sup>

उक्त कवित्त में काव्य का चौपाई छन्द पद मोरणा एवं माकभाति विभिन्न भागों का प्रयोग किया है। रचनाभा का मुख्य कथ्य गुरु-निष्ठा नित्य विहार वर्णन गुरु गिण्या का स्वरूप प्रति का स्वरूप रूप-वर्णन प्रिया प्रियतम के अनुसंग एवं केति का चित्रण है।

पीताम्बरदास द्वारा लिखित बनिमान की टीका अत्यन्त विज्ञान तथा

१ पीताम्बर देव की बानी बसन्त के पद ५।

नित्य विहार को समझने में अत्यधिक उपयोगी है। पीताम्बर देव जी का चरित्र पर चाहे कोई आराधन लगते भी हों पर उनकी रचनाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि साधना की दृष्टि से वे सखी सम्प्रदाय को मूल आत्मा के निकट रहे। अपने गुरु रसिकदास के समान उन्होंने सम्प्रदाय के प्रकृत पथ का छाड़ा नहीं है। ललित किशोरी देव जसी साधनानुभूति की तीव्रता उनमें अवश्य नहीं है परन्तु निकुंज गीताओं के गान में किसी प्रकार पीछे नहीं हैं। बल्कि कहना तो यह चाहिये कि गीता का विषय उनमें ललित किशोरी देव की अपेक्षा अधिक है। नीचे हम जुगन के शब्द विहार सम्बन्धी कुछ दोहा को उद्धृत कर रहे हैं इनमें पीताम्बरदेवजी द्वारा चित्रित उर्वर वन की छटा दशनीय है

स्वेत महल अति स्वच्छता स्वेत सेज पट स्वेत ।  
 पहिरे भूपन स्वेत छवि निरखत दृष्टि अचेत ॥  
 स्वेत चाम्पा चादनी ताकी भलकति स्वेत ।  
 सीतलता व्यापी तनहि स्वेत विपन रसखेत ॥  
 स्वेत मई फूली तहा रजनी नवल भवेति ।  
 हरषि निरखि तमय रगे अद्भुत उज्वल केलि ॥  
 चन्द्रमनिन की कुंज मधि उबल बसन बधारि ।  
 उज्वल मुक्ताफलनि की माला पहिरि सम्मारि ॥  
 उबल भूपन सब किये तन मन उबल रूप ।  
 उज्वल मण्डल सरद निगि अद्भुत सरस अनुप ॥<sup>१</sup>

### श्री ललित किशोरी देव

ललित किशोरीजी का स्थान सम्प्रदाय के इतिहास में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। वे अष्ट रचनाकारों में नहीं थे सम्प्रदाय की मद्दानिक धारा के विषयों में ही जान पर उम पुन ममचिन्त पीठिका पर प्रतिष्ठित करन वान साधक थे। उस दृष्टि में सम्प्रदाय में उनका स्थान विहारिणिनाम के समकक्ष है। विहारिणिनास सम्प्रदाय का रीति एवं मिद्धाना के प्रथम व्याख्याता थे तथा ललित किशोरी जी दूसरे। वास्तव में स्वामी रसिकदास के युग में (और उनकी रचनाओं में भी) मखी-सम्प्रदाय का निराने रानि विनुपुन हाकर बज रस के अर्थ सम्प्रदाय का प्रभाव में आ गई थी। जमा कि हम पाठ कह चुके हैं कि रसिकदासजी ने वान जाना विवाह एवं विरह आदि का बल्लभ आदि सम्प्रदाय का भाँति ही वणन किया है जो कि सम्प्रदाय का आत्मा में मन नगा खाना। ललित किशोरी जी न



निपुवन हा नहा छाया इम विकृत होनी हुई साम्प्रदायिक रीति का पुन परि  
गुद्ध किया । सम्भवत निपुवन का छोडकर टट्टी म्यान म आन क पीछे उतका  
यह सद्धानिक मत वसिन्ध भी रहा हागा । उनके म कतित्व की आर वधाई  
निलन वाता न ध्यान त्रिाया है । सिद्धान रत्नाकर म मगृहीत एक ऐसी ही  
प्रधाई म कहा गया है कि व न प्रकृत होत ता नित्य बिहार न प्रकृत होना

साक वद नवधा प्रसिद्ध सुख कौन तर लीला श्रवतार ।

कम धम की आस आस नित प्रति भ भीत बहुत ससार ।

लोमी लोग भोग क लालच पचि भरते विद्या आचार ।

जा न प्रकटतो ललित किंगोरी तो न प्रगटतो नित्य बिहार ।

—सिद्धांत रत्नाकर पृ० ११६

उनका शिष्य शीत मन्वीजा न अपन आचाय मगत म त्रित किशारीजी को  
स्वामी हरिदास का दूसरा रूप कहा है

श्री ललित किंगोरी कृपा सरूप श्री स्वामी को दूजो रूप ।

सब रसिकन को है यह भूप निर उपमा ये सहज श्रुप ।

त्रित किंगारीजी का जन्म-सम्बन्ध निश्चित नहा हैं पर सहचरी गरण  
की 'आचार्योत्सव सूचनिका' क आधार पर मागगीप कृष्ण अष्टमा मवत १७३३  
इका जन्म-समय स्वीकार किया जाता है ।

अपने गुरु रमिकदामजा क समय म ही व अपना अधिकांश समय यमुना  
के किनार जिताया करते थ । उनका श्रुत्यु के पश्चात व स्वामी हरिदास का  
कम्पा और गुन्री लकर चन आय और एक पेड के नीचे रहने लगे । कुछ लोगों  
ने उम म्यान के चारा और टट्टियाँ लगा दी थी एव कानातर म उसी स्थान को  
टट्टी म्यान कहा जाने लगा । इनक शिष्य स्वामी त्रित मोहिनी त्व के कान मे  
इम स्थान की श्रुत्याधिक उन्नति हुई । सवन् १७५८ म व म स्थान पर आय थ  
एव सवन् १८२३ म उनकी यही पर श्रुत्यु हुई ।

आपका पत्ना नाम गगाराम था तथा मलावर प्रण क ह्यवार्ति गाव  
म भापुर ब्राह्मणा के यही उत्पन्न हुए थ । जगन्नाथ पुरी म स्वामी हरिदास की  
महिमा सुनकर श्रुतावन आ गये और यहाँ पर स्वामी रमिक दवजी क शिष्य हुए ।  
उनका शीशा-नाम त्रितकिंगोरी र्णा गया । ब्रज रज म ही व मन्नुष्ट नही हुए  
और हरिदासो साधना का मम जानकर ही इन्हें सुग मिला । इस मम का उत्पन्न  
प्राचीन पाणिपा क अध्ययन म उपनय किया था । व बने हा त्यागा एव भक्त  
थ । इमा त्यागवृत्ति के वशीभूत हाकर व निपुवन क पीठ का धाडकर यमुना क  
किनार प्रागय थ । आपक वागी और वचनिका म प्रथ हैं । तथा साम्प्रदाय  
के अनुष्ठान नित्य विहार का भावना का ही आपन अपनी रचनामा म मुख्य रूप से

अपनाया है। उसी के अतः तब आने वाले विविध विषय जो ब्रह्मचर्य मन्त्रिणा सम्बन्धित जुगल स्वयं की महत्ता सिद्धात बलान साम्प्रदायिक आचार विधि निषेध एवं मर्यादा का उद्धाने अपनी कृतियाँ ने स्पष्ट किया है। प्रारम्भ में स्वामी हरिदास की वचना है। फिर अथ आचार्यों का स्मरण किया गया है। तदनन्तर अथ विषया का प्रतिपादन हुआ है।

अष्टाचार्यों की हम उपर्युक्त वाणी में इनकी रचना का परिणाम विपुल है। उसमें २२८ साखियाँ ४ कवित्त मवय १ ७ सिद्धात के पद १०८ रमक पद एवं बघाइया सङ्कलित है। साखियाँ में केवल गद्य ही नहीं है अतिशय मवया एवं चौदावा भी मगृहीत है। उनके अनिर्दिष्ट भी उनका माहित्य उपर्युक्त है। लक्ष्मी गोपालानन्दजी के अनुसार सब मिलाकर लगभग १२ साखियाँ ५० रमकी चौपाइयाँ १३ सिद्धात के पद १४७ रमके पद तथा २५ बघार्त के पद प्राप्त होत हैं।<sup>१</sup> ब्रह्मचर्य में एक स्थान पर हम फारसी लिपि में उनकी साखियाँ का एक सग्रह देखने का मिला था परन्तु उस लिपि में अनभिज्ञ होने के कारण हम उस सग्रह का अधिक उपयोग नहीं कर सकें तथा उसकी प्रामाणिकता का मां ठीक निश्चय नहीं हो सका। उनका बचनिका अथ वास्तव में मौखिक उपदेशों का सग्रह है जिसे गिष्या ने मगृहीत किया था। उसे किन्हीं बग गायान न दोहा चौपाइयाँ में परिवर्तित कर लिया। टट्टा स्थान में ब्रजभाषा गद्य में बचनिका सिद्धात का प्रकाशन हो चुका है। उस अथ में उनकी १३३ सूक्तियाँ का सग्रह है उसी में अपने गिष्य चरित मन्त्रिणा का लिख जाने वाले ८ निरुक्त भी अन्त में लिख गए हैं जो उस प्रकार हैं

- (१) प्रसाद की प्रतीति (प्रसाद का महत्त्व)
- (२) रज मां भवि (ब्रह्मचर्य रज का महत्त्व)
- ( ) कर्णा निरुक्त की भाव (साम्प्रदायिक चिह्न की महत्ता)
- (४) मा ब्रह्मचर्य मा ब्रह्मचर्य निरुक्त का मनोरथ न करें (ब्रह्मचर्य अनयना)
- (५) काउ चाउ पयन ल्वाव नः (अहिंसा)
- (६) स्वामी हरिदासजी की वाणी में प्रतीति (स्वामी हरिदास में निष्ठा)
- (७) काउ मा मागे नः (अयाचन)
- (८) लः मा रति (उपस्थित के प्रति अन्त में प्रेम भावना)

मा चरित किशोराजी का काव्य उत्कृष्ट कौशल का है। व मन्त्री-सम्प्रदाय के अन्तर्गत बचनिका में परिमाण एवं गुण ज्ञान का दर्शना में परिपूर्णनीय है।

१ डा० गोपाल दत्त शर्मा स्वामी हरिदास का सम्प्रदाय और उसका वाणी साहित्य पृ० ४६।

सिद्धान्त कथन की अनुरागता एवं वास्तविकता ही उनमें नहीं है साधनमय अनुभूति का तीव्रता एवं निष्ठा उनमें अत्यंत सबगात्मन स्तर पर प्रकट हुई है। राधा का रूप बखुन सदा बखिया न बिया है पर ललित किंगोरी देव का स्वर प्रपना ही है। यह रूपक दृष्टव्य है

राध रूप रसाल, क्षण रण उठत तरंग प्रति ।

अद्भुत नन विंगाल, ललित किंगोरी प्राण हैं ।

गुलाब की यह रंगारंग कली जिस भ्रमर के सकेत से विकसित होगी है वह भ्रमर किसी विराम कवि की ही भ्रष्ट हो सजता है। महत्त्व की चान रूपक अनार मात्र वह बना रही है अन्वि अन सार अनुपमा का ध्यान म रखना है जो इस चित्र म मन म उठने है। भ्रमर के सकेत की गत्यात्मकता म टिपा गहन रनिभाव क्षण रण खुलने और बंद होने म सौम्य की जिस धपनता एवं अनुराग की विद्वन्ता तथा विविध रंग म रंग जो चित्रात्मकता उपस्थित होती है वह अयथ विरत है

विकसित कली गुलाब को श्याम भ्रमर सकेत ।

खिन विकसित खिन बध करि अदरु असित पित लेन ।

निम्नांकित पत्र म वृत्तता की भावना दृष्टव्य है

लडती तेरी कृपा कही माँह जाई ।

छिन छिन प्रति प्रति तोपति भ्रान्त उर न समाई ।

अपनी कहि कहि रग बनायत हसि हसि कठ नसाई ।

श्री हरिदासी रसिक सिरोमनि छके रहे महा भाई ।

—सिद्धान्त के पत्र, ८०

बनीठनी जी

विगतगढ़ के प्रसिद्ध भक्त नरेश मन्तराज सावन मिन (नागरीनाम) की उपपत्नी बनीठनी जी थी। अपने प्रिय के साथ ही वे भी वृत्तान्त का गंध धा तथा हरिनामो सम्प्रदाय म स्था० रसिकनाम जा म उल्लिखित कृष्णवादी शैली म ली। यहाँ भी यहाँ पर दृष्टव्य है कि स्वयं नागरीनाम जी वरुण कुंज के सिद्ध धनमा निम्नांकित मन म अत्यधिक प्रभावित थे परन्तु बनीठनी जी न रसिकनाम जी म दाया सा— यह उन समय की उदार मनाशक्ति का भावनात्मकता है तथा रसिकनाम की समन्वित प्रजग्म-अद्वितीय का वाग्म्य भावभाव है। उनके जीवन के सम्प्रदाय म अय काल प्रामाणिक विराग प्राप्त नहीं है परन्तु उनकी समाधि पर जो छन्दरी बना हुई है उसमें यह सम्प्रदाय ज्ञान ज्ञान है कि अथाङ्ग गुण १५ मन्त्र १८ म उन्नाम्यगनाम कृपा पा। धरत प्रति एवं गुण

के प्रभाव में लिखी गई उनकी जा रचनाएँ उपन्यास हानी हैं उनमें हरिदासी सम्प्रदाय का विशुद्ध नित्य विहार चित्रित नहीं हुआ वरिष्ठ ब्रज शैली का एव भाषाभाषा का ही चित्रण हुआ है। उनके पद्य की सत्या भी अधिक नहीं है। रसिकविहारों छाप में उठाने जायाड़ी रचना की है काव्य गुण का दृष्टि में वह बहुत समृद्ध न होने पर भी इमनिष्ठ महत्त्वपूर्ण है कि मन्थवान के वानावरण में एक निष्ठावान भक्त नारी के व उत्तार है। उनकी रचना के दा उत्तारण हम दे रहे हैं। रचना में ब्रजभाषा के साथ ही राजस्थानी शब्दों का भी प्रचुर उपयोग हुआ है

रगि रह्या युगल रूप रग मोही ।  
 कुज महल में दपन साम्हे दिया रहे गलवाहीं  
 कदेक सभ्रम स्यामा र नीड स्याम छनाहीं ।  
 कदेक रीझि रहै रसिक विहारी देखि देखि परछाहीं ।<sup>१</sup>  
 ये बसुरिया वारे ऐसे जिन बतराय रे ।  
 यों न बोलिये और घर बसे लाजनि बनि गई हाय रे ।  
 हों धाई या गलहिं सो रे नक चल्यो धो जाय रे ।  
 रसिक विहारी नाव पाय के कयो इतनो इतराय रे ।

### रूप सखी जी

रूप सखी जी का शैक्षिक परिचय कुछ भी ज्ञान नहीं है। परन्तु उनके द्वारा रचित साहित्य का परिमाण विशाल है। सिद्धान्त के पद्य में एसा प्रतीत होता है कि वे स्वामी रसिकानाम जी के शिष्य थे। तथा वनित किशोरी देव जी का समकालीन माना जा सकता है। वनित किशोरी जी का समय सम्बन्ध १७५८ से १८२३ तक है अतः विज्ञान की १८वीं शताब्दी के उत्तरार्ध ही रूप सखी जी का समय भी माना जा सकता है। स्वामी रसिकानाम के प्रति उनका मन में अत्यधिक श्रद्धा थी। उनकी अनेक बार उठाने स्तुति मूत्रक चचा की है। एक स्थान पर उन्हें श्री हरिदास स्वामी की गान्धी प्रकट करने वाला बताया है। दूसरे

१ निम्बाक माधरी पृ० ६०५

२ वही—पृ० ६०५।

३ गुह जी रसिकदास महाराज सिद्धान्त रत्नाकर कवित्त १२७ पृ० २६।

४ सेवा हरि गुह सत की रसिक सिरोमनि पास।

गान्धी श्री हरिदास की श्री रसिकदास प्रकाश।—सिद्धान्त की वाली ७७

(सिद्धान्त रत्नाकर में संगृहीत)।

स्थान पर उह रसिको म शिरोमणि एव भूप की सजा ती है ।<sup>१</sup> आगे उहोन पुन सम्प्रदाय क अय आचार्यों की चर्चा करत हुए मुख की राशि कहा है ।<sup>२</sup> य अश भी रसिकताम का शिष्य होना ही सूचित करत है । पर सम्भवत इसके बाद शीघ्र ही रसिकतास जी का गोलोकवास हा गया होगा तथा सम्प्रदाय के आचार्य पीठ पर ललित किशोरी जी विराजमान हुए होंगे । सम्प्रदाय इम समय अनेक भागो म बंट जाता है । ललित किशोरी देव टट्टी स्थान की स्थापना करत है । बन्त सभव है कि रूप सखी जी टट्टी स्थान पर ललित किशारी जी के साथ ही आ गय हो । एक दाह म उहान ललित किशोरी जी की हा कृपा से नित्य विहार प्राप्त करने की बात कही है ।

रूपसखी जा की सिद्धात-मन्वधी वाली निम्बाक शोध मडल के संग्रह ग्रय सिद्धात रत्नाकर म प्रकाशित हो गई है । इसम १५७ पन् कवित्त सवय तथा ६२ भावियां संगृहीत हैं । इसके अतिरिक्त उनके लगभग ६०० रम क पन् एव कवित्त-सवय निम्बाक शोध मडल क संग्रहानय म प्राप्य है ।

रूप सखी जा मध्यम काटि क अछे कविया म नात हान है । साधी सांग एव सरन भाषा म उनक भक्तिपूण हृदय की अभिव्यजना हुन है । कलागत परिपक्वता वाग्वत्सध्य ग्रयवा चित्रात्मकता या अत्रकृत अभिव्यक्ति की ओर उनका अधिक ध्यान प्रतीत नहीं जाता । परंतु हृदय की सहज भावना उनम बहुधा तीव्र रूप स फूट पडो है । श्री हरिदासी की संविका रूपमला कु ज क द्वार पर खडी है । याम उनस बार बार बात पूछत है उस समय वे जब अपना परिचय दत है यह उनकी निष्ठापूण भावना का श्रेष्ठ निरूपण है

रूप गुन भरी प्रिया पाइनि पलोटीति ह'  
 उनही के नाते ए जू तुम तन हेरी ही ।  
 परम प्रवीन सबलीन होतो धीर धरो  
 भरज करोगी स्याम स्यामा तन नरो ही ।  
 मति अकुसाउ हाउ भाव निजुचाव चहो,  
 नाना गति मति घार ककरोतो करी ही ।

- 
- १ श्री विपुल विहारनि सरसवर, नागरि भरहरि रूप ।  
 श्री स्वामी फिर भवतरे रसिक सिरोमनि भूप ।—सिद्धात की वाली ७८  
 २ राजत घोटास विपुल प्रजासि । श्री गुरदेव विहारनि दासि ।  
 सरसदास ज भरहरि दासि । श्री रसिक सिरोमनि मुख की रासि ।  
 —वही, ८८

के प्रभाव में लिखी गई उनकी जो रचनाएँ उपलब्ध होनी हैं उनमें हरिदासी सम्प्रदाय का विगुद्ध नित्य विहार चित्रित नहीं हुआ बल्कि ब्रज तीनाग्रा एवं गोपीभाव का ही चित्रण हुआ है। उनके पदा की संख्या भी अधिक नहीं है। रसिकविहारी छाप से उतारने जा थाड़ी रचना की है काव्य गुण का दृष्टि से वह बहुत समृद्ध न हान पर भी इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि मध्यकाल के बानावरण में एक निष्ठावान भक्त नारायण का उदगार है। उनकी रचना के दा उदाहरण हम दे रहे हैं। रचना में ब्रजभाषा के साथ ही राजस्थानी शब्दों का भी प्रचुर उपयोग हुआ है

रगि रह्या युगल रूप रग मोही ।  
 कुज महल में दपन साम्हे दिया रहै गनबाहीं  
 कदेक सभ्रम स्यामा र नीड स्याम छताहीं ।  
 कदेक रोकि रहै रसिक विहारी देखि देखि परछाहीं ।<sup>१</sup>  
 ये बसुरिया वारे ऐसे जिन बतराय रे ।  
 यों न बोलिये और घर बसे लाजनि बधि गई हाय रे ।  
 हों धाई या गलहि सो रे नक चलयो धौ जाय रे ।  
 रसिक विहारी नाव पाय के क्यों इतनो इतराय रे ।<sup>१</sup>

रूप सखी जी

रूप सखी जी का शैक्षिक परिचय कुछ भी ज्ञात नहीं है। परन्तु उनके द्वारा रचित साहित्य का परिमाण विशाल है। सिद्धान्त के पदा में ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी रसिकनाम जी के शिष्य थे।<sup>१</sup> तथा जिन किशारी देव जी का सम्बन्धीन माना जा सकता है। जिन किशारी जी का समय सम्बन्ध १७५८ से १८०३ तक है अतः विश्राम का १८वीं शताब्दी के उत्तरार्ध ही रूप सखा जी का समय भी माना जा सकता है। स्वामी रसिकनाम के प्रति उनके मन में अत्यधिक श्रद्धा थी। उनकी अनेक बार उतारन स्तुति भूतक चचा की है। एक स्थान पर उक्त श्री हरिदास स्वामी की गान्धी प्रकट करन का ना बनाया है। दूसरे

१ निम्बाक माधरी पृ ६०५

२ वही—पृ० ६०५।

३ गुरु श्री रसिकदास महाराज सिद्धान्त रत्नाकर कवित्त १२७ पृ० २६।

४ सेवा हरि गुरु सत की रसिक सिरोमनि पास।

गादी श्री हरिदास की श्री रसिकदास प्रकाश ।—सिद्धान्त की वाणी ७७

(सिद्धान्त रत्नाकर में मगृहीत)।

स्थान पर उभे रमिका म गिरामणि एव भूप की मना ग है ।<sup>१</sup> आगे उहाने पुन सम्प्रदाय क अय आचार्यों का चचा करत हुए मुन की राशि कहा है ।<sup>२</sup> य अग भी रमिकान्त का गिष्य हाना ही सूचित करत है । पर मन्मथन म्भक वा श्राध्र ही रमिकान्त जा का गानाकित्तम हा मया हागा तथा सम्प्रदाय क आचार्य-पीठ पर तनित विगागी जा विराजमान हुए हागे । सम्प्रदाय म समय अनर नागा म बट जाना है तनित विगागी न टट्टा स्थान का स्थापना करत है । बहुत मभव है कि न्य सखा जो टट्टा स्थान पर तनित विगागी जा क माय हा आ गय ग । एक गह म उहान तनित विगागी जा का गकृपा म नित्य विहार प्राप्त करन की बात कहा है ।

रूपमखा जा का मिद्वान-मन्व-गी वाणा निम्बाक गाय-मडन क संग्रह प्रथ मिद्वान रत्नाकर म प्रकाशित हा गर् है । मम १५७ पं कवित्त मवय तथा ६ माधिया संपुन है । म्भक अनिरिक्त उनक उगभग २०० रम क पं एव कवित्त-मवय निम्बाक गाय-मडन क संग्रहानय म प्राप्य है ।

रूप मखा जा मध्यम काति क अछ्द कविया म जान हात हैं । गीषी गान्धी एव मरन भाषा म उनक भक्तिपूण हृष का अभिन्नजना इ है । कलागत परिपक्वता वाग्मन्मध्य अथवा चित्रात्मकता या अतकृत अभिव्यक्ति का अर उनका अधिक ध्यान प्रदान नग गना । परंतु हृष का महज भावना उनम बट्टाया ताद्र रूप म पूर पहा है । श्री हरिनामा की मविका रूपमखा कृ ज क द्वार पर मडा है मयम उनम बार-बार जान पूछन हैं उम समय व जब अपना परिचय दत हैं व उनकी निष्ठापूण भावना का श्रेष्ठ निष्पान है

रूप गुन भरी प्रिया पादनि पलोटेति ह  
 उनही क माते ए जू गुम तन हेरी ही ।  
 परम प्रवान सबलीन होनो धीर धरो  
 अरज बरोगी स्याम स्यामा तन नरी ही ।  
 मति धकृताउ हाउ भाव निजुचाव घर्ही  
 नाना गति मति चाद चकरोसो धरी ही ।

- 
- १ श्री विपुल विहारिनि सरसधर नागरि नरहरि रूप ।  
 श्री स्वामी फिर धवतरे रसिक सिरोमनि भूप ।—मिद्वान का वाणी ७८
- २ राजत बीरुल विपुल प्रकासि । श्री गुरबेध विहारनि दामि ।  
 सरसदास ज नरहरि दामि । श्री रसिक सिरोमनि मुन की राशि ।

बार बार कहा कुज द्वार बान पूछति हो

स्वामी हरिदास की खवासिन की चेरो हो ।

— रूपसखी की वाणी कवित्त ११७ पृ० २४

(सिद्धान्त रत्नाकर)

या यत्र-तत्र उपमा रूपक उत्प्रेक्षा यमक एव अनुप्रासादि की योजना भी मिल जाती है पर उस प्रकार कवि सवष्ट नहीं है। अपनी रम प्रवृत्ति के कारण वे प्रवृत्त्या भक्तिबाल के अधिक निकट है न कि रीति बान की प्रवृत्ति के। नील सखी

शाल सखा जी का परिचय उपलब्ध नहीं है। सिद्धान्त रत्नाकर की भूमिका में श्री गणेश शर्मा ने उन्हें मायुर चौबे कहा है। पर इस बात का कोई प्रमाण नहीं है। आचार्य मगन क अत म जो दा चार सिप्यन क जम लिया हुआ है उसका अतिम दाया स्वामदास क वार म है एव उससे यह प्रतीत होता है कि स्वामदास जा मायुर चौबे थे न कि शीन सखा। दाहा यो है

मायुर कुल को मुकुट भणि जगमगात चहु ओर

मानु ज्योति जिमि द्रगन मे उतुक अध मये चोर ।<sup>१</sup>

सम्भवत इसी आधार पर उन्हें चौबे कहा गया है। पर इस सम्बन्ध में यह दृष्टव्य है कि कोई भी शक अपने को अपने कुल का मुकुटभणि नहीं कहना दूसरे को दोहा स्वामदास जी के प्रसंग में ही आया है।

आचार्य मगन ग्रथ स इतना सिद्ध हाता है कि वह जित विशारी जी के सिप्य थे। ग्रथ में सम्प्रदाय के आचार्यों का (स्वामी हरिदास में जित विशारी देव तक) तथा जित विशारी जी के दा चार प्रमुख सिप्या के गुण शीन साधनादि की स्तुत प्रशंसा की गई है। सम्पूर्ण ग्रथ में गुरुभक्ति की अपूर्व निष्ठा प्राप्त हाती है। शालसखी जी का ध्यान काव्यबन्ध का ओर भी तनिक भी नपा था। छन्द उनके लिए गुरुनिष्ठा व्यक्त करने का माध्यम मात्र है। शीन सखा में भी भक्तिभाव का अनाविन सात विद्यमान था

साइलो की विनोत किधो प्रीतम को प्र म नित्य

सरस गुन गव रस चाहन समेत हैं ।

सेज को मुबाम किधो रग को बिनास

छाली मुख को निवाम मन आनद निरत हैं ।

१ सिद्धान्त रत्नाकर ग्रथ परिचय (भूमिका भाग) पृ ५०।

२ नील सखी आचार्य मगल दोहा १७ (सिद्धान्त रत्नाकर में सङ्गीत)।



रूप को निरञ्ज सोना फूली हाव भावन सों,  
 छात्र चित्त छातुरी की आतुर अचेत हैं  
 ललित किमोरी रूप प्रगटी कृपा अनुप,  
 रसिक अनयनि के आनन्द के हत हैं ।<sup>१</sup>

चरणदासजी

स्वामी रसिक शब्द के अति शिष्य चरणदास ५ । स्वामी रसिक शब्द की मृत्यु मन्वन् १७५८ में हुई थी अतः अमर शब्द सूचक है उन्निर्दिष्टता से ही होगा। इस प्रकार चरणदासजी का जन्म-काल विद्वान् का अटारहवा शताब्दी का पूर्वार्ध स्वीकार किया जा सकता है। अमर रचने में चार ग्रन्थ प्राप्त हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं

(१) गीता प्रकाश (२) भक्तिमार्गा (३) रहस्य शिष्या (४) रसिक चरित्रिका । नागरी प्रचारिणी मण्डल का हस्तनिर्मित प्रयाग का मन् १९२४ का छात्र रिपाट म म० ७५०/१ पर इनका उल्लेख शिष्या है। रिपाट के अनुसार इनका रचनाकाल मन् १७५८ से १७६१ के बीच रहा है। अतः अनुचित नहीं प्रतीत होता। उस रिपाट के अनुसार यह ग्रन्थ बार्दे शिष्य कुंवाला एवं बाबा श्यामादासों के शिष्य शिष्य शिष्या हैं।

चरणदास जी के प्रयाग में मन्वा नावानुसार नित्य कवि का महज श्रौर प्रवाहपूर्ण बणन हुआ है। अतः कथ्य का अर्थ सक्त करत अतः उन्नि स्वयं शिष्या है

आ ललिता हरिदास नित सहचरि कु जन कति ।  
 तिनकी कृपा मनाय कहु कहु बपति रम कति ॥  
 यहु दम्पति रस कति कहत ही घर विहार की ।  
 बिहरत कुमुमित कु ज मेघ्य तित कोटि मार की ।  
 तहां अगदित बहत प्रेम पूरि मुख सरिता ।  
 नह-नाय मवक प्रथीन हरिदासी ललिता ।

(रहस्य शिष्या)

किंवा कथा पर ग्रन्थ शिष्य का शिष्याणी शिष्याण का प्रभाव माना जा सकता है।

## १८वीं शती में राधावल्लभ सम्प्रदाय का ब्रजभाषा-काव्य पृष्ठभूमि और संक्षिप्त रूप रेखा

काव्य के परिमाण की दृष्टि से राधावल्लभ सम्प्रदाय का महत्त्व अत्यधिक है। वल्लभ सम्प्रदाय को छोड़कर अन्य किसी सगुणापासक सम्प्रदाय में इतनी प्रभूत मात्रा में साहित्य नहीं लिखा गया। राधावल्लभ सम्प्रदाय या तो निकुंज लीला का रसोपासक सम्प्रदाय है परन्तु प्रारम्भ में ब्रजलीला का भी किंचित समावेश उसमें रहा है। सबक जी एवं ध्रुवदास जी ने उस पूरी तरह निकुंजोपासक विचारधारा में गत किया। ध्रुवदास जी इस सम्प्रदाय के अत्यधिक समर्थ कवि हुए हैं। उनका समय सत्रहवां शती का अन्तिम चरण है। सम्वत् १७ के आस पास उनकी मृत्यु हो गयी थी।<sup>१</sup> इस प्रकार हमारे आनन्दकान्त के प्रारम्भ में ध्रुवदास जी द्वारा स्थापित निकुंजलीला एवं प्रेम के उत्कृष्ट स्वरूप का सशक्त परम्परा प्राप्त होनी है। परिणामतः १८वीं शती के राधावल्लभीय सम्प्रदाय के भक्तों का साहित्यिक सखी भाव एवं विलासितात्मक रस की शुद्ध भूमि पर बना रहता है। परन्तु रसिकदास जी गौड़ीय वल्लभवादाग्रहण करते प्रतीत होते हैं। उन्होंने गौड़ीय वल्लभवादात्मक प्रथा के भाषानुवाद भी किये थे। उसके पश्चात् १८वीं शती के अन्तिम हिस्से में प्रभाव-ग्रहण की यह प्रक्रिया और अधिक तीव्र हो जाती है। गो० रूपानन्द जी में यह गौड़ीय प्रभाव और अधिक स्पष्ट हो जाता है तथा १९वीं शती के प्रारम्भ में चाचा हित श्यामदास ब्रजलीलायात्रा का भाग लेकर गान करते हैं। साथ ही यह भी उतना ही सत्य है कि हित हरिवंश हरिराम यास एवं ध्रुवदास ने अपने समसामयिक जनता का प्रभावित भाग किया है। गौड़ीय वल्लभ प्रियदास (भक्तमाल के टीकाकार) ने अपने अन्तर्गत मान्तिनी ग्रन्थ में हरिराम व्यास के ११ पत्र प्रमाण रूप में उद्धृत किये हैं।<sup>१</sup>

### रसिकदास कवि-परिचय

राधावल्लभ सम्प्रदाय में पाँच व्यक्तियों का रसिकदास नाम में उल्लेख प्राप्त होता है। हमारे उक्त रूप रसिकदास का अठारहवां शताब्दी के प्रारम्भ में जन्म हुआ था। उनका रचनाश्रम परिलक्षित हुए मवता में पाते हैं कि सवन्

१ डा० विजयेन्द्र स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य  
पृ० ४२७।

२ प्रियदास प्रयागवासी पृ० १७ २१

१७४३ म १७५३ तत्र स्नना रचनाकान रत्ना है ।<sup>१</sup> स्नकी तिया बीम नता  
था त्नाप्टक रम कम्ब्य शूडामणि तथा कुट्ट पुटकर पत् है । गाम्बामी धाराधर  
क व शिष्य थ तथा प्रमात्नता म उनका मश्रद्ध भात्र म स्ननत्त किया गया है ।  
रमिकत्ताम जा सस्वृत क भी विद्वान् थ तथा उहनि मस्वृत वणवत्ता का मस्वृत  
पत्तावनी क साम उपयोग किया है ।

रम कम्ब्य शूडामणि म पौराणिक और नात्रिक त्ग पर वत्तावन का  
चित्रण किया गया है । तना नाम म अभिन्नि प्रथा म रूप चित्रण युगत विचार  
प्रमाभिनाप घ्राति का वणन है । तनाया क नाम अपन प्रतिपाद्य का मवन दन है  
जम मोत्य तना म राधाकृष्ण की छविका आवनन है । (रीतिकान की छाया यहा  
भा स्वी जा सकता है) यद्यपि उनमें वागीगत नवानना का अभाव है पर अपन  
विषय और भावना का सरम चित्रण अवश्य किया गया है

बहा घनगी धनुष सम भू भगी नव बाल ।  
जाकी भगी में नचत नवल त्रिभगीलाल ।  
घ्राहि मन सरसान ये कु डल कहों न बन ।  
तीछन अनियारे भये जिन सो लगि लगि नन ।

—सौदय तना

को सरखसर की रही छवि-सर लागत नज ।  
वेपत मोहन मन मृगहि समर खेत मुकि छज ।

—माधुय तना

प्रेम क विलास भांभ नूलि जाहि मोर साभ  
सोह गये वे समर वमनन परिहर ।  
बहू धीर धीरा बहू अ ग-अ ग राजे दहू  
मुक्ता हार रह हियन पर करहर ।  
गजरा खुलि किचनी भुरी घुरी नीलमनी  
दरी परी भमक तेज कमु तरहर ।  
सलिता जू स बुलाय करि कर में देवमाह  
सोमा मेरी देखे गोमा को न सरवर ।

—गो० रूपलास के हस्तलिखित मपट स

नाय रूप मिगार कर नाना छवि उल्लास ।  
नाना गुन रम प्रेम कस पूरण घान राम ।

— राम कदम्ब्य शूडामणि

१ डा० विनेप स्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और ग्राहिय  
पृ० ५०० ।

रसिकदास के ग्रंथों की सूची —

(१) प्रसाद लता (२) मनारथ लता (३) मनारथ गीता (४) अभिजाप लता  
(५) सौम्य लता (६) माधुर्य लता (७) सौभाग्य लता (८) विनायक लता (९)  
तरंग लता (१०) विनायक लता (११) सुखसार लता (१२) अद्भुत लता  
(१३) कौतुक लता (१४) रहस्य लता (१५) रत्न लता (१६) अतन लता  
(१७) रति रम लता (१८) हुलास लता (१९) आनन्द लता (२०) चारुलता  
(२१) सुख सारी लता (२२) रम कण्ठ धूडामणि (२३) रस कदम्ब धूडामणि  
मणि द्वितीय भाग ।

यह कवि सदा प्रायः प्रचलित छन्दों के अनिश्चित सस्कृत वणवृत्तों का भी आपने उपयोग किया है। मनोरथ लता में तो वणवृत्त ही नहीं भाषांगला पर भी सस्कृत का गहरा रंग है। रसिकदास में भक्त एवं रीतिसिद्ध कवि का सम्बन्ध मिनता है।

गो० गुलाबलाल जी

अठारहवाँ शती के मध्य भाग में विद्यमान गाँ गुलाब लाल जी द्वारा रचित ग्रंथों की मूल्या ७ बताई जाती है।<sup>१</sup> उनकी सम्पूर्ण वाणी की प्रति गो० रूपलाल जी के यहाँ विद्यमान है। गुलाब लाल जी १८वीं शती के राधावल्लभियों में प्रमुख हैं। यद्यपि उनकी वाणी में रीतिकान्त के प्रभावगत चमत्कार एवं कौशल का अतिरिक्त नहीं हुआ है पर वराह्य उपामना एवं नित्य विचार का साफ सुधरा ब्रजभाषा में चित्रण खूब उपलब्ध होता है। कव्य का दृष्टि से उनकी वाणी में मिथ्या एवं रसदाना ही प्राप्त होने हैं। उनकी वराह्य भावना का सूत्र निम्न कवि इस कथन का प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त है

कमल को कहूँ ते तो भम भव परिवे को  
एक एकान्ती सो प्रसाद सौ सदा भर ।  
तीरथ में वासना उपासना न नित्य बहू  
अहो अह जीव या प्रवाह मे सो क्यों तरे ।  
यह और ग्रहिनी मुन बध मित्र दुष्ट जान  
—यों—यों मेरी के त्यों नरन में जा पर ।  
एहो हरिवन एक कदला विचारिये जू  
हित सौ गुलाब मन त धवि ना टर ।

१ किशोरीनरयण अलि साहित्य रत्नावली पृ० २०-२२ ।

२ हस्तलिखित मण्डल अंक १ ।

उनके ग्रंथों की सूची इस प्रकार है

(१) प्रायणाष्टक (२) अन्न य सभा मडल (३) मगन आरती (४) लाडिनी वणन (५) श्याम वणन (६) जुगन वणन (७) यारी भावना (८) वर्षोत्सव क पत्र (९) पत्री (१०) पचाध्यायी (११) अन्नयाष्टक (१२) हिडोना (१३) पत्री सक्क वृ (१४) अन्नय रीति (१५) गुरु प्रताप (१६) मात पिता सुख (१७) प्रसाद निष्ठा (१८) आचार्य अथ (१९) अन्नय सभा मिलन (२०) दृष्ट निश्चय (२१) सनह सिद्धांत (२२) साधु लक्षण (२३) सिद्धांत सुख (२४) आनन्द सेवक चैतावनी (२५) ब्रज चैतावनी (२६) रेखता (२७) स्फुट पद (२८) भक्त दुख मोचन (२९) हृदय सिद्धांत (३०) श्री हित प्रताप (३१) श्री शृंगार प्रताप (३२) यमुना प्रताप (३३) नाम प्रताप (३४) श्री गुरु प्रणामी (३५) इतिहास नाट्य को (३६) इतिहास वेदन को (३७) सम्प्रदाय ।

इनमें से प्रथम १३ रस ग्रंथ हैं । गण सिद्धांत ग्रंथ या सम्प्रदाय क इतिहास से सम्बन्धित है । अधिकांश ग्रंथ कतिपय पन्नों के सकलन मात्र हैं ।

### अन्नय अली

उन्होंने अपने स्वप्न विनाम' नामक ग्रंथ में अपने बारे में जो कहा है उसमें जन्म सबकुछ का तो पता नहीं चलता पर यह पता होता है कि किसी राधा चलनभीय कुन में उनका जन्म हुआ था । ८ वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने सम्प्रदाय की शीमा ली थी तथा सबकुछ १७५६ में अपने गुरु गाविन्द लाल जी के साथ ब्रजवाहन चले आये थे । इनका घर का नाम भगवान्नाथ था तथा जाति में ब्रज प्रताप होने है । बीस वर्ष की आयु में ब्रजवाहन आये थे और १७३८ उनका जन्म-सबकुछ ठहरता है । आपके निरखे ७६ ग्रंथ बड़े जान हैं ।<sup>१</sup> यह ग्रंथ अन्नय अली की वागी क नाम से सन्निहित हैं । इनका रचनाकाल सबकुछ १७५६ में १७६० तक है । १७६० वि० क आगपास उनकी मृत्यु हुई । ग्रंथों की एक हस्तनिर्मित प्रति गो० मन्नारनाथ जी अहमदाबाद क पास सुरभित है । डा० विजयद्र म्नातक क अनुसार इनका पत्रा का मर्यादा ६००० के लगभग होगी ।<sup>२</sup> सिद्धांत प्रतिपादन और रम्यमक्ति का शृंगारपरक ढंग में आपके वागी में विवेचन किया गया है । छन्द रचना में अत्यधिक प्रवीण हैं । प्रमाण और माधुर्य गुण उनकी रचनाका

१ डा० विजयेन्द्र म्नातक राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य, पृ० ४६१ ।

२ यही, वही पृ० ४६२ ।

म प्रचुर मात्रा म है । व्यापाम सम्ब धी रूपक उपमाए उत्प्र धाए रचनाश्रा म खूब मिनती है ।

चित्त डाडी पत्रा नयन प्र म डोरि सों चानि  
दियो तराजू लेहु कर तोल रूप मन सानि ।

—आगा अष्टक

उनक ऋतु वषण नखगिख वषण (सहस्राधिक दाह) पर रीतिकालीन शृ गार परम्पराका का गहरा प्रभाव है ।

परसन को कर तरसहीं दरसन हृग चपलाइ ।

होइ परी भुज मन सों लपट भति तरलाइ ।<sup>१</sup>

युगन प्र म विहार क अनिरिक्त आपकी रचनाश्रा म ब्रजावन महिमा गुरु महिमा नाम प्रनाप सखी स्वरूप आनि पर भी नामग्री प्राप्ता हाती है ।

उनके ग्रथा को सूचा इम प्रकार है —

(१) स्वप्न विनाम (२) जाव प्रकार (३) मन विनता नीना (४) आगाअष्टक (५) था हरिविगाष्टक (६) श्री ब्रजावननास की प्रथम अवस्था द्वितीय अवस्था तृतीय अवस्था चतुर्थ अवस्थाकन अवस्था (७) चरणप्रनाप लीला (८) था क्रीडा मर नीना (९) प्रतिविम्ब नाता (१०) श्री नाडिना जू की नामावली (११) ना ताल जू का नामावली (१२) था हित हरिविगा जू की नामावली (१३) वृदावन रजधानी नीना (१४) वगी विनाम नीना (१५) परिचर्या विनाम नीना (१६) पट ऋतु नाता (१७) स्वप्न नाता (१८) रहसि वचन विनाम नीला (१९) सुर तान्त्र विनामनीना (२०) मयन विनो लीला (२१) कज विनाम नाता (२२) स्नान विनाम नाता (२३) सिंगार विनाम नाता (२४) जुगन सभा विनाम नाता (२५) राजभाग नाता (२६) उत्पादन समय विनाम (२७) सध्या समय विलास (२८) गयन समय विलास (२९) सजा समय विलास ( ०) वसन्त ऋतु नाता (३१) श्राप्प ऋतु नाता (३२) पावस ऋतु नीना ( ३ ) गरु ऋतु नाता ( ४ ) गिगिरि ऋतु नीना (३५) हिम ऋतु नीना ( ६ ) पून रचना विनाम ( ७ ) मीने धार गाभा विलास (३८) च चित्र ( ९ ) मन्गलानन विनाम विनाम (४०) धग खन विनाम (४१) जन नौका विनाम नाता ( ४२ ) जन विनार नीना ( ४३ ) चरन अष्टक (४४) नवन जुगन विनाम नाता ( ४५ ) व्याम विनाम नीना ( ४६ ) चौगर खन नीना (४७) गारज खन विनाम (४८) खन नौका खन नाता ( ४९ ) ग्ग खन नाता (५०) म्ग खन विनाम नाता (५१) धान्न मिचीना खन अपूण (५२) वचन विनाम

(५३) हाम विनाम (५४) विरह विलास (५५) मगन विनास लीला (५६) छवि चन्द्रावनि लीला (५७) सजोग विलास (५८) लज्जा विलास (५९) मान विलास (६०) दान विनोद लीला (६१) रूप विलास (६२) सेवा विलास (६३) छवि लता (६४) ललिता लता विनास लीला (६५) माधुरी लता विनास लीला (६६) रवमा लता विलास लीला (६७) लावण्य प्रभा विलास लीला (६८) कचनलता विनास लीला (६९) चन्द्रलता लीला (७०) मृदुता विनास लीला (७१) मुकुमारिता की सीमा (७२) माहनता की सीमा (७३) नवन विनास लीला (७४) विमल विनास लीला (७५) सौरभ विनास लीला (७६) चातुय विलास लीला (७७) भक्ति विलास लीला (७८) नेत्र विनास लीला (७९) दरस विलास लीला (८०) फुलकर दोहे ।

### हित अनूपजा एव यगाधरजा

अनूपजा गीते के आरम्भ में अनूपजी का जन्म सहस्रवान जिला बदायूँ में हुआ था । वह विगारावस्था में ही बुढ़ुम्ब के साथ बटावन चले गए थे । माधुय विलास नामक एक अनूपण ग्रंथ इनका प्राप्त होता है जिसमें इनकी मृत्यु के उपरान्त उनका मित्र यगाधर जी ने १७७३ में पूरा किया । गा० कमल नयन जी के शिष्य यह भी था । इसके पूवाध २६१ दोहा चौपाइयो में भगवान् के माधुय विनास का विवचन किया गया है । इस विलास के वपु सौम्य सजाति और मन सम्बन्ध के आधार पर चार भेद हात हैं जिनसे क्रमशः आतमता रस रूप रम सम्बन्ध रम एव शृ गार रम निष्पन्न होते हैं । शृ गार रम के प्रसंग में अनूप जी ने स्वकीया परकीया नायिकाया के विविध भेदों का बखान किया है । (इस बखान में काव्य शास्त्र एवं रूप गान्धारी का प्रभाव द्रष्टव्य है) । पूर्वार्द्ध में ही ब्रज बटावन का मनारम चित्रण भी हुआ है तथा रसिक उपासका की तीन अवस्थाओं का मध्य और प्रसंग का मनोवैधानिक दृष्टि से विवचन भी किया गया है । सिद्धांत निरूपण का दृष्टि में यह ग्रंथ गहन और मौनिक है तथा ब्रजभाषा में हुआ सिद्धांत विवचना में अष्ट निरूपणा में से एक माना जा सकता है ।

उत्तरार्द्ध में यगाधर जी ने इन स्थापनाओं के (हित अनूप जी के विचारा नुसार) उदाहरण दिये हैं जो अनूप जी की प्रपेक्षा कम गतिपूण हैं । यहाँ पर लक्षण एवं उदाहरण वाचा काव्यशास्त्राय परिपाटी हम उपलब्ध नहीं है ।

६ अर्थानिदा के बाद एक दोहा वाचा प्रथम भी स्वीकार हुआ है । इस दिशा में मूर्धिया एवं तुलना के स्पष्ट प्रभाव हैं । याम प्रभाव का दिग्गम एक दोहा देगे

धाम नाम मुख उच्चरत हित अक्षुप्त मुनि जात ।  
नख गिख त सब गात के अग अग धरि जात ।

माधुय विलास की यह परिभाषा भी श्लेष

इन्दरता ब्रह्मत्व जहा नहीं सदले कोऊ प्राप्त ।  
कवल लीलका लोकवत सो माधुय विलास ।

इस कथन पर ब्रह्मसूत्रा के लीना लोकवतुकवत्यम का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है ।

चन्द्रसखी

विश्वम की अठारहवीं शती के आरम्भ में विद्यमान थे।<sup>१</sup> राधावल्लभ सम्प्रदाय के ध्यानकृष्ण कवे गिष्य थे। उनके पत्नी मन्दावत कृष्ण की छाप भी मिनती है। उनकी फुटकर रचनाएँ ही प्राप्त होती हैं उनका कुछ लोकगीत है और कुछ भक्त कवियों जैसे पद्य है। पत्नी मन्दावत महिमा बसत हानी राम आदि लीलाएँ युगल उर्वि और प्रमासक्ति का ही सरस वर्णन हुआ है। नाकगीतकार और मजन कार के रूप में उनके नाम में प्रचलित रचनाओं की संख्या बहुत अधिक है। उनकी ये रचनाएँ बहुत बड़े भूभाग में मानवा में उकर अज तक प्रचलित हैं। प्राणिक वातावरण के अनुसार इनमें स्याग वियोग अनुराग उपासना अमर्षा अति प्रेम और गृहस्थ जीवन के विविध प्रसंगों का उत्तम हृद्भा है नारी भावा की महज अभिव्यक्ति भी उनमें हुई है। पुरुष हाकर भी मीरा जमा तनीनता उनमें मिनती है यह भक्ति की गम्भीर भावना के कारण हुआ है।

स १७० के कुछ पूर्व अनुमानत उनका जन्म आच्छा में हुआ था। व पत्नी माठक धानदार रत्न चुक हैं बाप म बराग्य वृत्ति के बन्धुमूल होकर बन्धुवन चत आय और वातकृष्ण स्वामी के गिष्य हो गये। राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रचाराय साधुओं का जमात महिन उहाने दगाटन भी किया था। उम यात्रा में प्रचाराय उहाने अनाम मजना और नाकगीता की मा रचना का जा उक्त राधा में प्रचलित हो गय। सवत १७५८ के लगभग उनकी मृत्यु आच्छे में ही हा गया था। बन्धुवन में समाधान पर उनकी बनवायी दुःख चन्द्रसखी की कुछ प्रभा मा विद्यमान है।

श्री राधा रानी ! द शरो न बामुरी मोरी ।

जा बगी में मेरे प्राण बसत हैं सो बसी गई खोरी ।

सोने की नाहीं काहा ! रूपे की नाहीं हरे बांस की पोरी ।

१ चन्द्रसखी के मजन और लोकगीत प्रमुदयाल भोतल भूमिका



काहे से गाऊ राधे ! काहे से बजाऊ, काहे से लाऊ गया छोरी ।  
 मुल से गाओ काह ! ताल सों बजाओ  
 लकुटी से लाओ गया धेरी ।  
 'चंद्र सखी' मल बाजकृष्ण कवि हरि चरनन की चेरी ।'

वे हमारे आनाथ युग के एक प्रतिष्ठ एव महत्त्वपूर्ण कवि हैं। उनके सम्पूर्ण रचन के सग्रह एव सम्पादन का प्रयास श्री प्रभुत्यान मातंग एव श्रीमती पद्मावती गरनम कर रहा हैं। भक्तकवि का रूप लोककवि का उम युग म भी समाप्त नहा नृया था इसका प्रमाण चंद्रसखी का वाक्य है।

चंद्रसखी जी यद्यपि राधावल्लभा सम्प्रदाय के त्रितय विचार के अनुयायी थे परन्तु उनकी उपलब्ध रचनाएँ ब्रजलीलागात की परम्परा म हैं। वास्तव म इस वक्तव्य सम्प्रदाय की भावना का अनुयायी मानना चाहिए।

### श्रीकृष्णदास भावुक

यह अठारवीं शताब्दी के अन्तिम भाग म विद्यमान थे। म० १७६१ म हित गुरामी की प्रस्ताम त्रिर्षिटा टाका म इनका मातृ उल्लेख प्राप्त जाता है - कृष्णदास जू है मम प्राणजन। इनके द्वारा लिखित बार्ह गद्य ना नया प्राप्त जाना पर ग्यार्ई उत्सवा के पत्र तथा शिल्पवनाच्छव एव शिवगायक प्राप्त होते हैं। एक उत्तराण बीजा

शले भूलत राधिका नागरी।

भुजनि हिलोरिन मे उर लगत दयाव बह मगरी।

मधुर-मधुर मृदु बनिन चढ़त मन रत पागरी।

विद्यत विलोकि भुजनि मरि प्रीतम हरपि दरत अनुरागरी।

धग धनग उमग सुरगनि भेलत खेलत पागरी।

कृष्णदास हित निपट निबट ह के गावत गीत सुरागरी।

उपर के पत्र म भून की भवारा की गति का चित्रण बड़ा सजीव बन पडा है। एक इन भवारा के माथ ही जा विवाग हारर एक दूगर का दगना एव भुजाभा म भर बना है वह भी गति चित्रण है। भावुक जी गवमुच ही भावुक कवि थे।

सत्चरि मुल (मुल सखी)

गाग्रामा कमनन जा के लिप्य थे। कमनन जा का समय १६६० म

१७५४ तक है। अतः १८ वीं गती के पूर्वाद्ध म ही सहचरि सुख का भी जन्म मानना उचित होगा। रचनाकाल इनका १८वां गती का उत्तराद्ध रहा होगा। उनकी साधना का नाम सुख सखी भी था। इनका अब तक कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हो सका है। नागरी प्र० सभा की १९११ की खोज रिपोर्ट म बनारस के किन्हीं साजनों के पास रगमाला नामक ग्रन्थ की सूचना अवश्य उपलब्ध होती है पर उससे अधिक कुछ ज्ञात नहीं है। वर्षों-सब म इनके द्वारा रचित कुछ पत्र-अवश्य उपलब्ध होते हैं जो काव्य-दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। ध्रुवनाम जी की साधना प्रणाली का वन पर यथेष्ट प्रभाव है। इनके पत्रों म भाषणा का सुन्दर उपयोग हुआ है।

भुज सिंगार विपट माधविका छाँह छल हिय छाव ।  
उकसनि देत न मान धूप सनमानहि अधिक बढ़ाव ।

×                      ×                      ×

कुसुम बसती दबि गये जब प्रगटौ सहज सुबास ।  
रोमि छके उपमान सौं याते पिय फिरत उदास ।

शृ गारी प्रेम व मधुर अनुभावो का बना स्वभाविक वगन इत्यादि किया है।

इकटक निहारत बदन पल सहि सकत पलक न पीर ।  
तिय परसि पुलकत पीत पट पिय रसि सुन्दर चीर ।  
हसति लपटति सिलत सकुचति घरकि होत अधीर ।  
लडकानि ललना की सम्हारत साल गहि गहि धीर ।

रूप का प्रभाव

धक चौपति लखि कु वर कौ हो गणि जीतति जे वाम ।  
भारत दिग कीरति सता तब ही हरि दीसत श्याम ।<sup>१</sup>

सहचरि सुख का कथ्य सम्प्रदाय का मरणा के अनुसार नित्य विचार जाना वगन ही था। मम मामिन धर्म का अधिक म अधिक उपयोग कवि करत आरम्भ थे अतः कथा का मौलिकता उनमें बहुत कम प्राप्त जाना। परन्तु अपने उक्ति-मौल्य तथा नाभिलिख प्रयोगों के कारण एक अनिश्चित चमक उनके काव्य म अवश्य आ गया है। कथन है कि उन्होंने पञ्जाब के भाँभ एक कवित्त-मवया दृष्टा का मा

१ उपपुस्तक उद्धरण सतिता धरण गोस्वामी के सप्रहस लिय गये हैं। इनमें स कुछ अंग उठने अपने अर्थ धी हितहरि वग गोस्वामी सम्प्रदाय और साहित्य के पृ० ४६८ ४७३ म सङ्कलित किये हैं।

प्रयोग पत्रा एव दोहा के साथ किया है। अपनी शब्द साधना रचिर और नम्र उक्तियों एवं चावदाम्र व कारण रीतिवाल के ब्रह्मियो के समकक्ष उक्त रखा जा सकता है।

### रानी ब्रजत कवचि 'प्रिया सखी'

मध्यकालीन हिंदी कवयित्रियों नामक ग्रंथ में लिखा है 'इह दतिया राय की राना माना गया है।' किसी राधावल्लभिय गुण की य शिष्या थी। प्रिया सखा इनका साधनागत उपनाम था। इनकी लिखी एक रचना प्रिया सखी की बानी उपलब्ध होती है। उसमें रचनाकाल स० १७३४ वि० दिया हुआ है।

राधावल्लभिय परम्पराश्रा व अनुसार वे सखी भाव की उपासिका थी। एवं श्याम और राधा व विहार का इहान नलित बणन किया है

सखी मे दोई होरो खेल ।  
रग महल मे राधावल्लभ रूप परस्पर भेल ।  
रूप परस्पर खेलत होरी, खेलत खेल नखेल ।  
प्रम पिचक पिय नन भरे तिय रूप गुलाल समेल ।  
कु बन तन पर केसरि फीकी श्याम गौर भये खेल ।  
समर समर के सुर लरत दोई दूटत हार हमेल ।  
सम्मुख सख मुसक्याति भ्रमकि भुकि लाडिली लालहि खेल ।  
प्रिया सखी हित मह छवि निरखत सख की रासि सकेल ।'

रूपक, यमक का चमत्कार तो है ही साथ ही सौन्दर्य के प्रतियोगी पारस्परिक वभव एवं उगका प्रभाव पत्र में भी प्रवार अभिव्यक्त हो सका है।

परन्तु यही पर एक बात याद कर लेनी होगी कि स्त्री होने व नात सखी भाव की मन साधना स्त्रिया व त्रिण अपनी प्रयत्नमाध्य नत्रा हाता परिणामत साधनागत धनुभूति का आवश हम मन्वी भाव की म्था भक्ता में प्राप्त नहीं होता। परन्तु जिस समय अपनी जविक स्थिति व कारण व शक्त का प्रियतम रूप में भावित करता है उस समय उनका भावात्मक आवश दृष्टव्य हा जाता है। ऊपर के पत्र में चमत्कार प्रवच्य अधिक है पर धनुभूति की जमी मन्त्री व्यञ्जना निम्न पत्र में हुई है धमो प्रथम पत्र में प्राप्त नहा होगी

१ वहाँ सावित्री तिहा मध्यकालीन हिंदी कवयित्रियों पृ० १७१।

२ वहाँ पृ० १७२।

प्रोत्तम हरि हिय बसत हमारे ।  
जोई बरु सोइ करत रन दिन, छिन पल होत न जिय तें यारे ।  
जित तित तन मन रोम रोम मे वही रहे मेरे मननि तारे ।  
अति सुंदर वर अतर्पामी प्रियासखी हित प्रानहि प्यारे ।'

### श्री हित रूपलाल

गो हितरूपलाल के धर्मव्यास की निकुंज-लीला का ब्यापक पुनः ब्रज-लीला को भी रस भक्ति के अंतर्गत न लिया। उनका जन्म बसाल कृष्ण सप्तमी सं० १७३८ का हुआ था। किशोरावस्था में ही कविताएँ लिखनी उंहाने प्रारंभ कर ली थी। उंहाने ब्रजलीला ही नहीं मामना जस लोक प्रचलित अथ उत्सवों को भी राधाकृष्ण की लीलाओं से गुंठ करके क्षत्र का ही विस्तार नहीं किया उमे लोक जीवन के निकट भी पहुँचाया। राजा जयसिंह ने राधावल्लभ सम्प्रदाय का प्रवर्तिक घोषित करके उसकी जड़ें हिनो दो थी परन्तु रूपलाल अत्यंत शान भाव से स्वयं एवं अपने शिष्या द्वारा राधावल्लभीय प्रेम पद्धति का व्याख्यान करते हुए उमे व्रजलीला का वेत्सुसम्मत सिद्ध करने का निरंतर प्रयास करते रहे। उनके लिए उंहाने अनेक छोटे छोटे पद्यबद्ध ग्रंथों का निमाग किया। प्रेम की प्रकथ कथा रूप का मार्मिक प्रभाव मौल्य और विलास के मनोहारी रूप उंहाने अत्यंत सहज सरल और मीधेय से उपस्थित कर लिए हैं। उनके ८४ ८४ पद्यों के दो मग्न प्रथम विजय चौरासी द्वितीय विजय चौरासी हैं तथा वर्षात्मक मग्नहा म अथ अनेक पद्य मिन जात हैं। दास्य म लिखे अथ अनेक ग्रंथ भी प्राप्त हाने हैं। चाचा मिन व्रजवन्दनास के अनुसार म १८ १ म उनकी मृत्यु हो गई थी। मवन् विगत अठारठ म एक साम कुंज मग चना २ उनके लालक हम नीचे दे रहे हैं उनम प्रथम रम का पद्य है और दूसरा सिद्धांत निम्नक है

सोये मरो कभीरी जोरी सावहीं  
कुम कुम मैलि फुलेलि मुल सपटावहीं ।  
सियो कपूर पराग भोरि मरि मरि तब  
उद्धत अवीर गुलाल कहत हो हों सब ।  
भूमक द ब भाषत वपति साडिले  
नेह मरे सिलवार पक चित्त बाडिले ।

१ डा० सावित्री सिंहा मयकालीन हिन्दी कवयित्रीयां पृ १७२ ।

२ हित रूप अंतर्धानवेनी ।

नील पीत पट गांठ जोरि ललिता दई

निरलि हसत मुख मोरि रूप हित बलि गई

—गो० ललिता चरण के सग्रह स

सनों चित्त लाइ रसिक रस शीति

दुलम मानुष देर न है हरि साधु सग मे प्रीति ।

जनम रहस्रनि जा करि हार तप अरु ध्यान समाधि ।

छोन पाय अति शुद्ध हृदय भधि उपज भक्ति अर्वाधि ।

साधन भक्ति करत बहु जमननि होम जु अज अनुराग ।

ताहू को फल विपिन उपासन प्रेम प्रीति बड भाग ।

याहू त निज तत्व जुगल रस नित्य निकु ज विहार ।

हित अलि रूप अनूप हृदय हृद कु यरि कृपा कौ सार ।

—गो० रूपलाल (वतमान) क सग्रह ।

दूगरे पद म नित्य निकु ज विहार का महना स्थापित करन का मन्त्र प्रयत्न है ।  
गा हित रूपान जा क प्रथा का परिमाण विज्ञान है । श्री विष्णु शरण  
अनि न उनक निम्ननिमित्त ७४ प्रथा का उल्लेख किया है । पर यन् मूचा  
नितान प्रामाणिक नहीं मानी जा सकती । बहुत कुछ उपा करन क वात् भी तनम  
म अधिकांश प्रथ हमारे दखन म नहा आ सक । तथा जा प्रथ त्वन का मित भी  
उन पर प रामचन्द्र गुवन की नागरीवास सबधा लिपिणी पूरा तरन नामू हासी  
है । कुछ प्रथ ता घाडे म पना क सग्रह भाग है । बहुधा पुनर्क्तियों भा प्राप्त होता  
है । उनक रम रत्नावर नामक प्रथ का जा स्मृतिवित प्रति मास्वामा विना  
उरण जो क पास हमारे दखन म आई उमम तथा हरिनामा सप्रथाय क स्था०  
रमिकनाम क रम मार (निम्बाक गाय मन्त्र) द्वारा प्ररागिन गिदाल रना  
कर म मन्त्रान) म आद्यन इतना माम्य है कि यन् कना कटिन है कि यन् रचना  
किमकी है । कुछ भाग क हर पर क अतिरिक्त पूरे प्रथ का अम एव वग मव  
एव हा है । रूपान जा का वास्तविक महत्त्व कवि क रूप म उनना नना है जितना  
कि आसक्ति क समय सप्रथाय का मुद्व बनाय रगन वात आचाय क रूप म है ।  
राधावल्लभ सप्रथाय क प्रसिद्ध कवि आचा तिन कथावन्तान उहा क लिप्य थ ।  
अस्तु रूपान क प्रथा का मूचा (अनि नार प्रकाशित) निम्न है

(१) नामु मभाग (२) सबस्य गिदाल भाषा मार ( ) आचाय गु  
गिदाल (४) रूप मनातन कथाभाषाय मन्त्रि स्वकीया परकाया चर्चा (५) निवन्  
प्यारा (६) लिप्य रत्नमाना (७) गिदाल क पन् (८) समय प्रथाय (९) गु

शिक्षा (१०) गूढ ध्यान (११) मन शिक्षा वृत्तीमी (१२) सिद्धांत का सार (१३) सवतत्त्व सिद्धांत (१४) भक्तिभाव विवक रत्नावली (१५) माधक नीता विलाम (१६) नित्य वशी स्वरूप प्रागटय (१७) श्री राधावल्लभीय सप्रणय निणय (१८) हिन रत्न माना (१९) सिद्धांत पत्र (२०) चर्चा निवारण (२१) श्री हिन प्रागटय (२२) वशावति (२३) मेवाधिकार (२४) वशी अवतार कवि प्रगट विलास (२५) रगीतान प्रागटय वणन (२६) रघुपति वर प्रसाद (२७) रश्मिणी वर प्रसाद (२८) कृष्णानुसारी मनाहारा प्रसाद (२९) राधिका वर मात्र प्राप्ति (३०) श्री राधा वल्लभ तथा चतुराभी प्रागटय (३१) गान्धी सवा प्राकटय (३२) श्री राधावल्लभ अभिपेक (३३) श्री नरवाहन परिचय (३४) हरिवामरे महाप्रसाद श्री कृष्णानुसार (३५) रूप मनातन भट्ट नय प्रति युगन दान प्राप्ति (३६) याम परिचय (३६) कोप प्राप्ति (३७) हिन प्रताप परिचय (३८) हिन प्रागटय प्रमाण (रुद्रयामन) (३९) हरिवग नामावलि (४) राधा स्तात्र (४१) गौतमीय तत्र मत्र पचाशत पटल (४२) विजय चतुरासा (४३) खिचरी शृङ्खला (४४) वर्षोत्सव (४५) वृंदावन रस रहस्याद्गार (४६) मान सिक सवा समय प्रस्थोल्लास (४७) रस रत्नाकर (४८) वगीयुक्त (४९) वगीयुक्त युगन ध्यान (५) साक्षी (५१) ब्रजभक्ति भाव प्रकाश (५२) प्रम वधक पत्रिका (५३) बाणा विलास (५४) माझ हिलारा (५५) भावना योरा (५६) शृंगार समयोल्लास (५७) जनश्रीडा प्रब घाल्लास (५८) राजमंग श्रीडा (५९) मध्या समय काण (६) शयन श्रीडा (६१) प्रिया ध्यान (६२) नित्य विहार जुगन ध्यान (६३) पद्यावति वसंत घमार (६४) बसोत्सव कप (६५) मानमाचने स्तात्र (६६) मुख्या मखी वणन (६७) रस वाणी (६८) दान वनी (६९) राम नयमी (७०) नृमिह चतुदशी (७१) प्रम वचित्र्या लीना (७२) मुरला गान नाता (७) वन नीता (७४) निकुंज कवि लीना (७५) पचाध्यायी ।

नक अनिर्दिष्ट कुछ ग्रंथ ग्रंथ भा ग्रा विशारी शरण अनि ने साहित्य रत्नावलि म गिनाए हैं पर उनका या तो प्रामाण्य नितान मन्धि है अथवा व पूर्व-कथित ग्या क ही हर पर हैं । नम युग क कतिपय ग्रंथ प्रमुख रचनाकारा क नाम और उनके गरा रचित कही जान वाता रचनाए भी हम नाव प्रस्तुत कर रहे हैं । नम नमका की कृतियां चान पर भा नम उपन नती हा मवा हैं । नमा कारण उनका विम्बून परिचय दन म हम भ्रममय हैं । या था विशारी शरण अनि ने १८ वा गीता म ६ कविया एव ५१ ग्रंथा क नाम गिनाए हैं ।

परन्तु यह सूची बहुत प्रामाणिक नहीं है। इसमें से बहुत से कवि या रचनाएँ अन्य संप्रदायों में भी मन्वित हैं—जैसे कि हरिदास संप्रदाय के साहित्य का चर्चा करते हुए हमने स्वामी रसिकान्त के सत्त्व में बताया है कि हरिदास रसिकान्त के कई ग्रंथों राधावल्लभों रसिकान्त के स्वात में इस सूची में डाल दिये गए हैं। वास्तव में यह पूरा साहित्य स्वतंत्र अनुसंधान की अपेक्षा रखता है।

### गो० अतिवल्लभ जी

अति वल्लभ जी के समय का निर्णय करना कठिन है। परन्तु संप्रदाय की मायनाओं के अनुसार उनके समय वि० का १६वाँ शती का उत्तरार्द्ध प्रतीत होता है। संप्रदाय के लीलाओं के अतिरिक्त उन्होंने मद्वातिक एवं एति हासिक साहित्य की भी रचना की है। संप्रदाय के मद्वादन का अतीव महिमा का गान किया है। उनके वार्ता साहित्य में भी एक ग्रंथ अप्राप्य है। समय प्रसंग में उन्होंने युगन माधुरा एवं कवि का वन्दित वर्णन किया है। हिन पद्धति एवं मन्त्र ध्यान-पद्धति साम्प्रदायिक सिद्धांतों एवं मायनाओं का स्पष्ट करन वार्ता रचनाएँ हैं तथा शिव वशावती एवं गुण प्रणाली नामक कृतियों में राधावल्लभों वशावती एवं गुण परम्परा वर्णन का दृष्ट है। कवित्व की दृष्टि में अतिवल्लभ जी वल्लभ महत्त्वपूर्ण कवि नहीं हैं। वे राधावल्लभों की नाम परिवार का परम्परा के कवि थे।

### गो० रमिकलात्

गो० रमिकलात् जी का रचनाकाल म० १७०४ म १७४४ तक उनके ग्रंथों के निर्माण के आधार पर अनुमानित है। युगन वार्ता के गान करन वार्ता उनके पुत्र के पद्य हैं। उनके अतिरिक्त उन्होंने हिन चतुरामो वर्णन एवं गीत साहित्य की टीकाएँ भी लिखी हैं।

### गो० ब्रजलात्

गो० ब्रजलात् जी मुख्यतः मन्वित के रचनाकार थे पर उनके अष्टाष्ट एवं श्लोकों में मन्वित कविपद्य पुत्र के कविनाएँ भी मन्वित में उल्लेख हैं। लीलात्

राधा गुणानिधि तथा शिव श्रीगंगा कीलात् जी के अतिरिक्त वल्लभ स्वल्प एवं निज मन्वित उनके रंग मन्वित कृतियाँ हैं। अन्वय वर्णन में रमिक के वर्णन का मद्वातिक निर्णय किया गया है।

गो० कमल नयन जी

गी० कमल नयन का समय मयू १९६० म १-१६ वि० तक सम्प्रदाय में भाग्य है। कमल नयन जो बट्ट या त्यागा एव स्नान भगवान् य। उनके स्वतन्त्र का परिमाण बना नहीं है। अष्टयाम पदावली तथा वयोमवा मवना कतिपय मुक्तका क मय्य भा प्राप्त जान है। उनमें भा अष्टयाम का प्रतिष्ठाकार स्वतन्त्र म नया गान। जान लया है कि श्री रूपवान् जो क मय्य म मका प्रतिनिधि मया गत है। अस्तु वावा वगानाम क पास उनके पदा का अष्टया मय्य है।

## निम्ब्राक सम्प्रदाय का १८वाँ गीताज्ञी का व्रजभाषा काव्य पृष्ठेभूमि और मशियन रूप रखा

पाठ्य रूप का चुक है कि निम्ब्राक सम्प्रदाय प्रारम्भ में वरा भक्ति का अनुपादा था। १ वा गीता में भक्ति क प्रभाव का प्रभाव म सम्प्रदाय पर भाग्य नया। श्री भट्ट न युगनायक म गद्या कृष्ण का गीता गान की परम्परा का मव मय्य म सम्प्रदाय म प्रतिष्ठित किया। परन्तु युगन गतक क प्रामाणिक पाठ क अभाव म मय्य गीता का वास्तविक रूप निष्पत्ति करना कठिन प्रदान जाता है। मय्य गीता म परगुराम त्वाचाय का स्वनाम मगुण निगुण गीता परम्परा का अमिताम् करने का प्रयास करना प्रदान जाता है। १८ वा गीता म निम्ब्राक सम्प्रदाय क प्रमुख आचार्य ब्रजवन त्वाचाय का स्वनाम निष्पत्ति विचार क अन्तर्गत किमा प्रकार भा परिगणनाय नया है। उनके गीतामृत रूप का परम्परा गीता भाव एव ब्रजनाता का है। प्रदान कति धनान् भा निम्ब्राक सम्प्रदाय क अस्तुपाय म पर उनके काव्य भा मात्र गीतागानना का ग नया है। नकिन् १८ वीं गीता विक्रमा क अतिम भा तक पदचन-पदचन रूप रमिक त्व जान म सम्प्रदाय म विगुण रूप म निकु ब्रजनाता गान का परम्परा स्थापित कर ग।

स्नान आचार्य युग म का अन्तर्गत का दृष्टि म निम्ब्राक-सम्प्रदाय मय्य मय्य प्रदान गया है। एक मात्र धनान् ग किमा म सम्प्रदाय क निष्पत्ति गौरव क विष्णु ग मय्य है। या ता ब्रजवन त्व जान एव मय्य रमिक गी का का भा कदम्बक दृष्टि म प्रदानाय है।



निम्ब्राक सम्प्रदाय के कवि

श्री कृदावन देवाचाम जी

कृदावन देव जी निम्ब्राक-सम्प्रदाय की सत्तैमावात् गद्दी पर (परगुराम जी का द्वार) सवत् १७५४ वित्रमी म आरुढ हुए थे । उनक गुरु का नाम नारायण देव था । कृदावन देव जी अपने समय के प्रभावशाली महापुरुषा म म थ । सांप्रदायिक नरना क अनुसार व गौड ब्राह्मण थे तथा स० १७०० क लगभग निम्ब्राक सम्प्रदाय म शिक्षित हुए थ । उनका स्वगवाम स० १७६७ म हुआ था ।<sup>१</sup>

आमेर के राजा जयसिंह द्वितीय बीकानेर नरेश राजसिंह तथा कृष्णगढ़ का राजकुन उनके प्रभाव म था । कृष्णगढ़ राजकुन क अनक व्यक्ति उनके शिष्य एवम भक्त हुए हैं । ब्रजभाषा क कवि घनानन् भी उनक शिष्य थ । घनानन् ने उनकी प्रशंसा म भी निम्बा है जो इस प्रकार है

सदा कृष्ण गुन-कथन रत मत मण्डन-जय रूप ।  
विमुक्तन अण्णनि अचन धर रचना तुड अनुप ।  
दीन सरन वायक करन हरर अलित दुख दीप ।  
अथ तिन पाट प्रसिद्ध जग करन जीव परितोप ।  
बीस बिसे महिमा तिहें ताहि बीस है बीस  
सदा बसो नीके तसौ कृपा ईस भो सीस ॥<sup>२</sup>

रीनिकान क प्रसिद्ध कवि मन्न न इनका अत्यंत श्रद्धापूर्वक उल्लेख किया है । कृष्णगढ़ राज्य क चियागार म उनका एक चित्र प्राप्त हुआ है जिस पर अंकित निम्न पंक्तियाँ उनक महिमाशाली व्यक्तित्व का अमिष्यकन करती हैं

दिनहर लौ जगमग प्रताप जगजक्त अलङ्कित ।  
रस भाषा कविराज महा दिग्विजयी पदित ।  
अति निभयो ऐश्वर्य भूप मये आज्ञाकारी ।  
अत समय लौ परमधम मर्यादा फली ।  
श्री निम्बादित्य पदति बहे हरिच्यार देव गादो स्थिति  
श्री कृदावन देव महात्त स दिग्गज मये न होंहि क्षिति ।

कृदावन देव जी म गगन की भी भरपूर मामध्य थी । कहते हैं कि जब माधुषा

- १ ब्रह्मचारी बिहारी गरण निम्बाक मापुरी पृ० १४३ ।
- २ श्री सर्वेश्वर कृदावन धामाक पृ० २२३
- ३ घनानंद धयावली पृ० ६१० ।
- ४ निम्बाक गोपमहस कृदावन म सगृहीत चित्र ।

संरक्षण की रक्षा करने के लिए रामानन्द सम्प्रदायानुगामी स्वामी बाला नाथ द्वारा जो सम्मेलन जयपुर में बुलाया गया था उसके सयाजका में स. एक आप भी थे एवं सम्भवतः १७६१ के गानवाथम में बुलाये गए दूमरे सम्मेलन के वे अध्यक्ष भी थे ।

### रचनाएँ

बृत्तबन जी की उपलब्ध रचना इस समय केवल गीतामृत गंगा नाम का एक ग्रन्थ है । प्रसिद्ध है कि उन्होंने अन्य रचनाएँ भी लिखी थीं परन्तु इस समय वे उपलब्ध नहीं हैं । गीतामृत गंगा का मुख्य प्रतिपाद्य कृष्ण राधा एवं गोपियों की ब्रजलीला का वर्णन है । ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही कवि ने बताया है कि सच्चिदानन्द भगवान् रसरूप है तथा राधा उसी ब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति हैं । वे एकाकी नहीं रहते रमण करना ही उनका नित्य धर्म है । अपनी रम पोषक शक्ति के साथ भगवान् शृंगार रम के साक्षात् विग्रह है । इस रस में चर प्रचर समस्त ब्रह्मांड का मोहित करने की शक्ति है । भागवत गीत गावित एवं अन्य रस गान्ना को मथ करके इस गीतामृत रसगंगा का सृजन हुआ है । सम्पूर्ण ग्रन्थ चोत्सव अध्यायो में विभाजित है जिसे नखक ने घाट कहा है । राधाकृष्ण जन्मोत्सव पौण्ड्र नीला गोरसदान नीला कंगार ताना रास विलास मान लीला दम्पति रति ताला खण्डिता वचन वसत होली वर्णन कृष्ण के नाम चरित गुण बीतन कसवध तीर्थवर्णन प्रमोद प्रथम द्वादश घाटा में वर्णित हुए हैं । प्रयाग घाट में भक्ति सम्बन्धी प्रकीर्णक पद हैं एवं चतुर्दश घाट में संगीत की राग रागिनियों के नाम गिनाये गए हैं । कृष्ण से सम्बन्धित इन लीलाओं का चित्रण हान पर भी ग्रन्थ में कथा-काव्य की प्रबन्धात्मकता नहीं है । प्रथम पूण्ड्र मुक्तक काय है । रचना प्रधानतः पदों में हुई है परन्तु अन्य छन्दों का भी उपयोग हुआ है । दाहे और सवय प्रचुर मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं । वात्मल्य सत्य एवं शृंगार तान मुख्य रसों का चित्रण हुआ है । ब्रजभाषा में रचित हुए भी राजस्थानी पंजाबी मराठी एवं मध्यानी गण भी मिल जाते हैं ।

भाषा में जनप्रचलित मुत्तवरा का प्रयाग अस्वच्छा तरण हुआ है । कुल्हरि में गुण पावना माया ता देव न भात का सब आश्रित गुद छयाजू एत हा सुन्दर मुत्तवर हैं । मणुग रचना में समतामूलक अन्वय का प्राचाल्य है । संगीत का दृष्टि में समस्त पद ८ राग रागिनियों में विभक्त है । उनका रचना के कतिपय उदाहरण निम्न हैं । प्रथम माथ के बार में गावियां कह रहा है —

नह निगोडे को पडो ही यारो  
 जो कोइ होय के प्राधी बले  
 मु लहै प्रियवस्तु चहूँधा उजारो ।  
 सो तो इत उत भूल्यो किरं न लहै कछु गो कोउ होय अयारो ।  
 बदावन सोइ याको पयिक है  
 जा प हृपा करे काहर प्यारो ।<sup>१</sup>

उपमुक्त छत्र का पद कर घनानन्द का प्रसिद्ध छन्द यात्रा प्रा जाता है जिमम उहानि कहा है अति मूषा सनेह की मारग है जह ननु सयानप वाक नही वृष्ण का रूप सो दय एसा है । गोपियो को अपसोस होता है कि प्रांक्षा को पम कयो नही मिन अथथा व वृष्ण व कमनमुप व मकरन्द का भमर व समान पान करती

प्राग्निन पालि दई न दई दिन  
 प्रीतम नलिन बदन मकरन्दहि मधुप ज्या पीली छावति प्रतिदिन  
 कयों हू घन पर दिन रन मु मन दहै तन कों दिन हो दिन ।  
 व दावन प्रभु विरह कसाई माहि करी जकरो बकरी इन ।  
 (गीतामृत गगा चतुर्थ घाट ७४)

गीतामृतगगा म रीतिकालान रचना पद्धति का भी अच्छा तरह ग्रन्थ हूपा है ।

### अजदासो

वृजदासो का वास्तविक नाम बाबावता था । कौमार्यावस्था का पनका एर नाम व्रज कुचरि भा कहा जाता है । य त्रिवाण नरेण बाबावत आनन्दमिह का पुत्रा थी । वृष्णगण्ड नरेण महाराजा राजगिह स मवत १७७६ म इनका विवाह हूपा था । श्रीमत्भागवत का मग्न एक मधुर नापा म इहानि पद्यबद्ध अनुवाद किया है । यह अनुवाक अजदासा भागवत व नाम स प्रसिद्ध है । इग ग्रन्थ की एर प्रति गीताप्र न गारणरर म भा मुरगिन है । उमम भागवत व अ्यारहवें रक्षक का अनुवाद नहा है । शप स्वधा का अनुवाद उगम उपन प हागा है । यह प्रति सम्बत १८८४ विभमा की है । म्पूण ग्रन्थ दाग एक चौपाइ छत्रा म किया गया है कनी-नही अय छत्रा—कवित्त सबया तपा छण्य—ना प्रयुक्त हूपा है । अनुवाक एरुम गार्तिक न एतर नाकपरव भी है । भूतम म का उलभान धावा गनियया की भा धनन उग म वृजदासा गा न गुनभ्या का प्रमान किया है । मून

ग्रन्थ के एकाधिक गान सवत को पकड़ कर उठाने जिस प्रकार कनात्मक दंग से चित्रित किया है वह उनकी रचना क्षमता तथा कल्पना शक्ति का सातक है। उदाहरणार्थ भागवत में रासपचाध्यायी व अन्तर्गत कहा गया है

निगम्य गीत तदनगवद्धन  
 ब्रजस्त्रिय कृष्णगहीतमानसा  
 आजगुरयो य मलक्षितोद्यमा  
 स यत्र कातो जवलोत्कडला ॥

पर यहाँ एक समस्या रह जाती है कि ब्रज स्त्रियाँ ही क्या कृष्ण के पास दीवकर गई थीं। प्रजपुत्र्य क्यों नहीं? ब्रजदासी जी ने अपने अनुवाद में इस गद्या को खालना चाहा था। इस अंग का अनुवाद करते हुए उन्होंने लिखा है

सो मुरली को सबद सुनार सुनति भई गोपीं ता बार।  
 सबद सुन्या नहिं ग्वालिन बाहों सुनै न रहते व गह माही ॥  
 चले आवते प्रभु के पास तो भिट जाती रग विलास ॥

इस प्रकार ब्रजदासी जी का उत्तर है कि गोपी न रम ध्वनि का सुना ही नहीं था। सुना इसलिए न था कि वे भा दीव आन और फिर रासरम में विघ्न पड़ जाता।

इसके बाद इन गृहीत मानस गोपिया व कृष्ण व पास जान का हृदय प्राणी चित्रण हमारे सामुख एक विम्ब उपस्थित कर देता है

मुनि मोहित ह व जब ब्रजवाला छिप छिप इक इक चली मुचाला।  
 दौरत उदरत अचर हारा किंकिन नूपुर बजत सुनारा ॥  
 अबनत (अवनत) कृ डल हलत मुहाई अलक कपोलन प घटि द्यार ॥  
 जिन मन कृष्ण क मर हरि ती हों गोपिा हृद ध्यान निज दीनों ॥

नया

“यों सरिता सावन उ मझाहा किठु मों रोकी रहति जनाहा।  
 कठु व कटू आमरन पहरें तिह की सुधि न कछु चित धरें ॥  
 पोंटो प्रभु व निकटहि जाँ गोपा महामोद मन पाँ।  
 तब जोग-भाया सब भूषन जग जोग किय टीक सु तन तन।

दूसरा अंग भूत भागवत व व्यंग्यम्बरान्तरण का कवी अधिन विग

एक मनाहर व्याख्या है। इस प्रकार अबसर पात ही ब्रजदासी जी की रचना गिन जायत हा उठती है। व अनुवाद की प्रपक्षा मूरदास एव नन्ददास की परम्परा म मौनिक मृजन करन वाली प्रतीत हाती है। इस प्रकार का मुक्त अनुवाद (Free Translation) अपने आप में रचना है और आज के बहुत से अनुवादका व लिए मिद्धा त भा है और चुनीती भी।

### घनानन्द

नवीन खाजा व आधार पर घनानन्द का जन्म सम्वत् १७४० एव मत्स्य सम्वत् १८१७ व आसपाम स्वीकार किया गया है।<sup>१</sup> व जाति व भटनागर कायस्थ थ तथा माहम्मद गान्ध व दरबार में मीर मुगी व पर आसान थ। संगीत पर इनका अच्छा अधिकार था। कहत हैं कि एक बार स्वयं बादशाह व कहन पर इन्हान गाना अस्वीकार कर लिया था परन्तु अपनी प्रेमिका मुजान नामक दरवार की बन्धा व अनुराध पर तत्काल अपना कला का प्रदर्शन कर दिया था। बादशाह न इस अपना अपमान समझकर उन्हें तिलास निष्कासन का दण्ड दे दिया। प्रमा घनानन्द न चाहा कि मुजान भी साथ चल परन्तु उनने अस्वीकार कर दिया। निराग प्रमी घनानन्द विरक्त हाजर वदावन चल आय और निम्बाक सम्प्रदाय व अनुयायी हो गय। लीनिक प्रेम का उनकी रचना गिनत न उदात्त बनाकर अपनी निष्ठा की और माह दिया। मुजान बन्धा व स्थान पर व मुजान प्रिया प्रियतम व मुरीद हा गय।

नविनमाग में निम्बाक सम्प्रदाय व अन्तगत सनमावाद पीठ व आचार्य बनावन दय व व गिप्य थ।

### रचनाएँ

घनानन्द का ४० रचनामा का सग्रह घनानन्द ग्रन्थावली व नाम म सम्वत् २० ६ म प० विन्वनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित होकर प्रकाशित हुआ है। इस मन्थन में रचना स्तर व दा स्पष्ट अतर दमे जा सकत हैं। रचनामा का प्रथम मन्थ वह है जिनमें कि इन्हान या तो वयक्तिन स्वच्छन्तावादी (रौमण्टिक) प्रेम की नाभगिक व्यजनाएँ की हैं अथवा राधाकृष्ण की मधुर लीलाका रगनिभर गान किया है। रचना का दूसरा मन्थ अप्रदाहत उन निबध रचनाका है जिनमें उन्होंने भक्ति सिद्धान्तों एव सम्प्रदाय व नियमों का पद्य यद्द वगन किया है। घनानन्द ग्रन्थावली में निम्नलिखित ४० पद्यों का सग्रह

१ डॉ० मनाहर सात गौड घनानन्द और स्वच्छन्द वाच्यधारा  
पृष्ठ २१ २७।

किया गया है

(१) मुजान हित (२) कृपाकद (३) वियोगिबेनि (४) इश्वर लता (५) यमुनायग (६) प्रीति पावस (७) प्रेम प्रत्रिका (८) प्रेम सरोवर (९) ब्रज विलास (१०) सरस बमन (११) अनुभव चंद्रिका (१२) रग बघाई (१३) प्रेम पट्टति (१४) ब्रजभानु पुर सुपमा बगन (१५) गोकुल गीत (१६) नाम माधुरी (१७) गिरि पूजन (१८) विचार सार (१९) दान घटा (२०) भावना प्रकाश (२१) कृष्ण कौमुदी (२२) घाम चमत्कार (२३) प्रिया प्रसाद (२४) बन्धन मुद्रा (२५) ब्रज स्वरूप (२६) गोकुल चरित्र (२७) प्रेम पहली (२८) रसनायग (२९) गोकुल विनोद (३०) ब्रज प्रसाद (३१) मुरलिका माला (३२) मनोरथ मजरी (३३) ब्रज योहार (३४) गिरिगाथा (३५) पदावली (३६) परिशिष्ट (३७) त्रिभंगी छन्द (३८) छन्दाष्टक (३९) प्रकीर्णक (४०) परम हृम बगावली।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि घनानन्द ब्रजभाषा के प्रथम कवि थे। अपनी साक्षात्कार एवं स्वराज्य की ब्रजभाषा छन्दों की चमक अलंकारों के विविधपूर्ण एवं उपयुक्त प्रयोग प्रेम भाव की स्वच्छन्द योजना आदि के कारण वे हिन्दी के प्रमुख कवि गिने जाते हैं। साहित्यिक मूल्यांकन वाले अध्याय में हम उनकी रचनावादिना का उपयोग करेंगे। दो एक उदाहरण केवल बानगी के तौर पर ल

रूप के भारति होति है सोहीं लजों हिय दीठि मुजान यो भूलो ।  
लागिय जाति न लागी कहूँ निसि पागी तहीं पलकोंमति भूलो ।  
बठिय जूँ हिय पठति आज कहा उपमा कहिय समतूलो ।  
प्राय ही भोर भय घन आनद आलित माऊँ तो साभ सो फूलो ।

—मुजान हित २

विरहिणी का यह मामिक कथन भी दृष्ट्य है

इत बाट परो सुधि राषर भूलनि कसैं उराहनों दीजिय जू ।  
ध्रुव तो सब सोम चणाय लूँ ज कडू मन भाई सु कीजिय जू ।  
घन घनद जावन प्राण मुजान तिहारिय बातनि जीजिय जू ।  
नित नोक रहो तुम्है चाड कहां प असोस हमारियो सीजिय जू ।

रूप रसिक दव

निम्बाक मन्त्राय के अनुपायिका के अनमार रूप रसिक दव का समय १६ वां शताब्दी का उत्तरार्ध है। परन्तु अन्य जन उन्हें १८ वां शताब्दी के उत्तरार्ध में मानते हैं। लाला विपति का रचना-ज्ञान बनाने वाला सबूत पन्द्रह म मता

सिया एव भवत् सत्तरा से सत्तासिया<sup>१</sup> का द्वन्द्व ही उम मत अभिनय के मूल म है। इधर हम जो प्राचीन पौधियो व पूवप्रहरहित प्रमाण मिले हैं व यह सूचित करते हैं कि रूप रसिक देव १८ वी गती व अंतिम भाग एव १६ वी गती व पूर्वार्द्ध म विद्यमान थे। यही नही उह महावाणी प्रकट करने वाला भी कहा गया है।

ललित संप्रदाय व महात्मा वगी अलि के गिष्य किगोरी अलि की बानी की एक प्रति हम बृदावन म अनायास ही उपलब्ध हा गई है। प्रति खंडित है उसक अन क हा नही बीच बीच के पृष्ठ भी खो गये है पर कागज लिखावट एव प्रति की जजर स्थिति उस १६ वी गती (विन्नमीय) से बाद का नही सिद्ध करती। इस सम्बन्ध म यह भी ध्यान म रखना है कि प्रस्तुत वाली किसी सांप्रदायिक विवाह से सम्बन्धित नही है। किगोरी अलि जो वि० की १६ वी गती व पूर्वार्द्ध के प्रसिद्ध महात्मा थ। वे बृदावन के तत्कालीन सती म समाहन थे। प्रस्तुत प्रति म उनकी रचनाए (बानी) ता संकलित हैं ही उनक बारे म लिखे गए समकालीनो व प्रगामाभूतक छन्द भी संकलित हैं तथा प्रसिद्ध राधावल्लभीय गास्वामी चन्दलाल (भवत् १८२५ के लगभग) के साथ उनक पत्र व्यवहार का भी मप्रह किया गया है। इस प्रकार ग्रन्थ साम्प्रदायिक विवाद से सम्बन्धित न होकर एक प्रसिद्ध महात्मा व महत्त्व स्थापन का प्रयास है जो मध्यकाल म विरल नही है। इस प्रति म २०८ अंतिम पृष्ठ है पर बीच बीच म कुछ ग्रन्थ पृष्ठ खो गये हैं। इनम एक स्थान पर हरिदास हरिराम व्यास नित्त किगोरी आदि की प्रशंसा करते हुए रूप रसिक जो व बारे म कहा गया है

रूप रसिक से रूप रसिकवर

दिव्य महाबानी रस सानी प्रकट करन प्रकटे अवनी पर।

अति रहस्य रस की परिपाटी ललिबे इनकी कोउ न सरवर।

उमडि घुमडि हिय भाव घटा सों बरसत नित प्रति ध्यानद को भट।

गौर ह्याम व रग भेकोरे कोरे जो धाये नारी नर।

मननि की मननि सों अति की दरसायो नवकलि कु ज घर।

इस पद की अंतिम पंक्ति से ऐसा लगता है कि किगोरी अलि को रसरहस्य का कुछ मकेन भी रूप रसिक जो ने लिया था।

इसी प्रकार पृ० १६१ पर गा० चन्दलाल जी व पत्र म भी उन्हें माद किया गया है

१ पदरा स सत्यासिया मासोत्तम आसोज।

यह प्रबध पूरन भयो शुभसा शुभ दिन द्योग ॥

—सोता किगति बन्दावन मापुरी, ८२।

रूप रसिक जन कृपा सौं होत सकल मन काज ।  
प्रीति सहित बचित रहौं तिनकी मरी लाज ।

इस पत्र के उत्तर में श्री जगन्नाथ भट्ट (किंगारी अलि) ने जो उत्तर लिखा (पृ० १८३) उसमें भी रूप रसिक जी तक मदन पहचान एवं उत्तर में उनकी प्रगति लिखी है

रूप रसिक जी सा कही श्री राधावल्लभलात ।  
उन्हू मुनि हिय हुलसि क प्रणति करी तिहि काल ।

ऐसा लगना है कि गा० चन्दलाल जी एवं रूप रसिक जी में प्रत्यक्ष पत्र व्यवहार का घनिष्टता नष्ट था पर पारस्परिक सम्बन्ध का भाव विद्यमान था एवं किंगारी अलि के माध्यम से ही एक दूसरे को प्रीति पहुँचाते थे । पृ० १८४ पर इसका स्पष्ट संकेत है । गा० चन्दलाल जी के पत्र में कहा गया है

रूप रसिक जू सौं वहा कहियौ अमित प्रणाम ।  
उन्को पत्रो आप ही करिहौ सब विधि काम ।

इस प्रकार पृ० १८६ पर की गद्य की पत्रों में कहा है— श्री रूप रसिक जी की वही पत्रा आप ही ।

इन सभी पत्रों पर तिथियाँ नष्ट पड़ीं पर पृ० १६० पर चन्दलाल जी के शिष्य रतन लाल ने जगन्नाथ भट्ट का जो पत्र लिखा है उसमें तिये एवं सम्बन्ध का इस प्रकार उल्लेख हुआ है— मिनी अनाम गुवन पक्ष ७ सप्तमी सम्बन्ध १८२१ में लिखा । इस प्रकार अचिकान पत्र में १८५ के आसपास के ज्ञान जा संकेत हैं । इन पत्रों आदि के आधार पर इस समय तक रूप रसिक जी का विद्यमान हाना सिद्ध होता है । इस काल तक उन्हें महावाणोकार एवं राम रहस्य के पाना के रूप में पर्याप्त प्रसिद्धि भी मिल चुकी थी । अतः सम्बन्ध १७८७ के लगभग रचना नितान संभव है ।

इस हस्तलिखित प्रति से रूप रसिक जी के पुत्र एवं कृपापात्रों का भी परिचय मिलता है । किंगारी अलि जी का प्रणाम में जिनके स्तुतिमूर्त प्रणामों पर के छन्दों के विषय में उनमें रूप रसिक जी के पुत्र हरिजन दास जी द्वारा लिखे गए ब्याह के पत्र पृ० १४ एवं १६४ पर मृगतों में एवं रूप रसिक जी के कृपापात्र मायादास के पत्र पृ० १६५ १६६ में संकेतित हैं । इसमें भी उनके समय वि० की १८ वाँ गता का उल्लेख ही सूचित होता है ।

अस्तु इस प्रति के आधार पर भी हमारा पूर्व अनुमान मत्त है कि



होता है कि रूप रसिक जी का रचना काल १८ वां गता है एवं इस बात का स्वीकार कर लन क बाद हरिव्यास दव का समय १७ वीं गता नी के मध्य भाग स पल नही खीचा जा सकता ।

### रचनाए

निम्नांक सप्रदाय म रूप रसिक दव जी का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है । इस सप्रदाय म रमापासना की व्यवस्थित परिपाटी रही स प्रारम्भ हाती है । वत हैं कि हरि व्यास दव जी न उह स्वप्न म महावानी प्रदान की थी तथा श्री भट्ट जी क युगल गतक का सपान भी उहनि किया या । इन दो ग्रथा क प्रति रिक्त उनक लिम चार ग्र य और बताय जात हैं ।

- (१) हरि यास यगामृत सागर
- (२) नित्यविहार पदावनी
- (३) लीला विगति
- (४) बृहत्सव मणिमाल

### (१) हरिव्यास यगामृत सागर

य रूप रसिक दव जी की प्रारम्भिक कृति माना जाता है ।<sup>१</sup> हमारा मत है कि महावाणी उनकी प्रथम रचना है । यगामृत सागर म महावाणी की अलौकिक अवतारणा का प्रसंग २१ बार आया है ।<sup>२</sup> यह बात ही हमार मत का पुष्ट करने क लिए पर्याप्त है । प्रस्तु हरिव्यास यगामृत सागर म हरिव्यासदव जी की कीर्ति का विगद मान हुआ है । सम्पूर्ण ग्रंथ चौबीस लहरिया म पूरा हुआ है । हरि व्यासदव जी क चरित्र क अतिरिक्त रसिक माधना के मद्धातिक पक्ष की भी पर्याप्त चर्चा हुई है । जीवन क नतिक-व्यावहारिक पक्ष का भी निरण किया गया है । ग्रंथ का प्रकाशन वदावन स हा चुका है ।

### (२) लीला विगति

नका दूसरा मुख्य ग्रंथ है । इस रूप रसिक दव जी की बानी भी कहा जाता है । सम्पूर्ण ग्रंथ मजरा वितास माधुरी एवं मुग्य रन चार विभाग म विभक्त है एवं प्रत्येक विभाग म पाँच-पाँच उपविभाग हैं । प्रस्तुत ग्रंथ रचना एवं गिद्धात दाना हा दृष्टिया स अत्यधिक प्रीत ग्रंथ है । प्रीढ़ता परिपक्वता का दृष्टि स इम कवि का अतिम ग्रंथ मानन म मकाच न हाना चाहिए । बीगा लीलाया क नाम विभागानुसार इम प्रकार है

- १ डॉ० नारायणदत्त गर्मा नि० स० कृ० भ० हि० क० पृ० ३ ५ ।
- २ वही पृ० ३२६ ।

१ शिक्षामञ्जरी २ रसमञ्जरी ३ रसिकमञ्जरी ४ तरंगमञ्जरी ५ प्रम  
रम ६ नव विलास ७ भावना विलास ८ नित्य विलास ९ रास प्रति  
विलास १० फूल विलास ११ नामावलि माधुरी १२ माधुर्य माधुरी १३  
वृन्दावन माधुरी १४ सिद्धांत माधुरी १५ हरिभक्ति माधुरी १६ सार सुख  
१७ सगेह सुग १८ सरूप सुख १९ मुहाग सुख २० होरी सुख

लीला विंगति म निकुञ्ज लीला और उसकी विधायक साधना-पद्धति का  
साधोपाग विंगद एव मनोहर बरान उपस्थित किया गया है। निम्बाक-सम्प्रदाय  
की नित्य विहार उपामना का यह श्रष्ट ग्रन्थ है। ग्रन्थ का प्रकाशन बाबा माधुरी  
दास नवदावन स स० २०१५ म कर दिया है।

### (३) बहदोत्सव मणिमाल

सम्प्रदाय क विविध उत्सवा म गाय जाने वाल पदा का संग्रह है। वसंत  
होलो फूल डोल राम नवमी अक्षय तताया जानकी नवमी नरसिंह जन्मोत्सव  
जनयात्रा हिंडालोत्सव वामन द्वादशी रास महोत्सव दीप मालिका गोवर्द्धन  
पूजा राधाकृष्ण विवाहोत्सव आदि क अवसरा पर गाने के लिए इसम पद  
मरलित हैं। यह ग्रन्थ अभी अप्रकाशित ही है।

### (४) नित्य विहारपदावली

निकुञ्ज रस क फुटकर पदा का सक्लन है। निम्बाक गोध मडल वंदा  
वन की प्रति म ७२ पद हैं। "यामा यामा" की एकांत रसात्मक लीलाधो  
का भावपूर्ण चित्रण इन पदो म किया गया है। लीला विंगति क साथ ही इन  
पदा का भी प्रकाशन हो गया है।

रूप रसिक देव अर्द्ध कविया म है। भाषा उनकी सरल सहज एव प्रसा  
गुण पूरा बजभाषा है जिसम यत्र-तत्र राजस्थानी एव पंजाबी गाने का भी  
मिश्रण प्राप्त हा जाता है। परंतु कथन क रंग म वक्रता कभी-कभी रीतिकानीन  
अभि यजना का सादृशिताता है। दादा उनका सबसे प्रिय छंद है साथ ही  
अरिजल सबया एव अनुरूप छंदा क साथ भक्तिकान की पद गनी एव पंजाबी  
माझ भा उहाने अपनाए हैं। पदा अति पर राग रागिनिधा का सक्त भी मिनता  
है। यह कहना कठिन है कि य मकत स्वयं उनक द्वारा रचिय गए हैं या परवर्ती हैं।  
नायिका क मायिक भाव की यह भवक दमिय

अनोख बेनी गूयनहार।

साग नीर चुवान पुलक ता नीठि मुयाये वार।'

बिहारी का ठीक इसी भाव को व्यक्त करने वाला दोहा इस पंक्ति सहज ही याद हो आता है । प्रिया की यह लीला भी दृष्टव्य है

रमकि रमकि रस में सनी भ्रमकि भ्रमकि भ्रमकाति ।  
धमकि धमकि चपलानि सी, दमकि दमकि दमकाति ।<sup>१</sup>

यह रूपक भी उनकी काव्यकला का नमूना है

सहज दाउ सुख के सिंधु सरीर ।  
स्यामा स्याम स्वरूप उजागर नागर गुन गभीर ।  
अ ग अ ग उठत तरंग छिच उमग नेह नव तीर ।  
रूप रसिक् जन अ चवत है नित सुरस सुधा की सीर ।<sup>२</sup>

नेत्रों का यह झलसाया सौंदर्य भी देखिये

उनींदे नन मन रग भीनें सलज हसोहीं सन ।  
रतनारे कारे सु डरारे प्रति अनियारे ऐंन ।  
भ्रमकीने दीनेंरस क से सहज सलीने मन हरि सन ।  
रूप रसिक् राग रगे सहागे अनुराग नन ॥

—नि० वि० पदावली १७

### श्री गोविन्द वच

श्राप श्री शृदाचन दवाचाय के गिष्य थे श्रीर जयराम शप के साथ हान वान भगबे क अनंतर सवत् १८०० म सतमावाद पीठ पर आचाय पद पर प्रति प्ठित हुए थ । श्रापका गालाकवास सवत १८१४ म हो गया था ।

ऐसा लगता है कि गोविन्द स्व जी म राजनतिक कुशलता अधिक थी इसी कारण जयराम शप जस विद्वान को य आचाय पद से हटा सकन म गमय हो सक थे । उनकी रचनाकुशलता का प्रमाण हम विशेष रूप स उपनयन नहीं हाता । उनकी रचना जयति शतुंग म विभिन्न पूंय एव सेव्य जना का गुण गान किया गया है । पर रचना साम्प्रदायिक गप स भरपूर है । गुरु परम्परा जयति न शतय महाप्रभु एव निरयानद स्वामा का काव्य काशीरा भट्ट का गिष्य गिना दिया गया है । ब्रह्मचारी बिहारी गरण ने इनका रचनागान १०० वष पल सीच कर सवत् १६७० क भागपास बताया है<sup>३</sup> जबकि सवत् १७७०

१ सीता विगति माधुप मापुरी स० २०, पृ० २५ ।

२ नित्य बिहार पदावली १२ ।

३ ब्रह्मचारी बिहारीगरण निम्बाक मापुरी, पृ० १६६ ।

इनके अतिरिक्त १०४ में ऊपर संस्कृत के छोटे-बड़े ग्रंथों या टीकाओं वृत्तियाँ आदि का उल्लेख कठमणिशास्त्री ने बल्लभीय मुद्रा (वप ६ अक्षर २ पृ० १८ १९) में किया है। उनके कुछ पद कीतन संग्रह में बिखर पड़े हैं। कीतन संग्रहों में ही हम उनके दो पद नीचे उद्धृत कर रहे हैं। ये पद अधिकांश सिद्धांत सब धी हैं। गा० हरिराय जी का स्थान संप्रदाय के इतिहास में सिद्धांत निरूपण की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। उन्होंने बल्लभाचार्य आदि पूर्ववर्ती आचार्यों के ग्रंथों की पुनर्प्राप्ति की है। इस प्रशंसा में उन्होंने बल्लभ संप्रदाय का युगलोपासना की ओर माडन का भी महत्वपूर्ण कार्य किया है। यों तो गुण उपासना के पद हम अष्टछाप में कवियाँ में ही मिल जाते हैं पर सखी भाव को पूरी प्रतिष्ठा गो० हरिराय जी ने ही दी है। पर हमका तात्पर्य यह नहीं है कि गोपी भाव का उपासना तिरस्कार किया है। निम्न पद में उ० होने गदगद कठ से गोपियाँ के सौभाग्य का ही गुणगान किया है

परम रस पायो ब्रज की नारि ।

जो रस ब्रह्मादिक को दुलभ सो रस दियो मरारि ।

दरगन सुख ननन को दीनों रसना को गुन गान ।

बचन सुगन श्रवणन को दीनों बदन अधर रसपान ।

आलिंगन दीनों सब आगन भुवन दियो भुजबध ।

दीने चरम विविध गति रस की नासा को सुख गध ।

दियो काम सुख भोग परम फल स्वचा रोम आनद ।

जिग बठिबो नित बन ले उछय नद नद ।

मन को दियो सदा रस भावन सख समूह की पान ।

रतिक चरन ब्रज जुवतिन ही अति दुलभ जिय जान ।

—कीतन संग्रह भाग २ पृ० १५० १५१ ।

हमारे साहित्य का हरिराय जी की सर्वोत्तम दन वार्ता साहित्य है। चौरासी वृष्णवन का धर्ता एव दासी वासन वृष्णवन की वार्ता का मकलन सम्पादन उपासना का किया हुआ है तथा उन पर भाव प्रकाश विष्णुगी भी गो० हरिराय जी की ही है।

हम जानें प्रथा है कि अधर गा० हरिराय जी के पद बने मर्यादा में उपलब्ध हुए हैं पर दुभाग्यवश वे हम दखन का नहीं मिल सके। उनके अष्टछाप संग्रह पदों का आधार पर हम यथा विश्वास है कि उनके पदों का समुचित विश्लेषण एवं मूल्यांकन भविष्य में कवियों की दृष्टि में भा० उ० महत्वपूर्ण सिद्ध करेगा।

### श्री जगन्नाथ कविराय

श्री गास्वामी विठ्ठल नाथ के दोहित्र थे। इनकी मा यमुना जी विठ्ठलनाथ जी की चौथी पुत्री थी। इस प्रकार इनका उपस्थिति काल १७ वीं शती का अंतिम एवं १८ वीं शती का प्रथम चरण माना जा सकता है। संस्कृत में इनका गगलहरी में प्रसिद्ध है। ब्रजभाषा में कुछ पद कीतन संग्रहों में उपलब्ध हो जाते हैं। उदाहरणार्थ एक पद यह है

काहरस मीनी ग्वालिनी श्रीर गौरस तजि कुल बान ।  
ना घर मे मा अगना वाकी मन जो लाज के पान ।  
जोवन रूप रिभोते नननि म वाकी परी चितवन की बान ।  
डफ मुरली सुनि गई कोरतजि पानी के उत्तर ठान ।  
खलत मोहन गहि काजर व हसी पीत पट तान ।  
जगन्नाथ कविराय क प्रभु सों काग खलत तिलरान ।

—कीतन संग्रह भाग २ पृ० १२४ १३५ ।

कवित्व की दृष्टि से यह पद अष्टछाप की परम्परा में हान के साथ ही रसा मक भी है।

### श्री गिरधर जी (तृतीय घर)

सम्बत १६६२ जन्म गवत् है। इनके ६ ग्रंथ बह जाते हैं जिनमें से तीन गद्य ग्रंथ हैं।

(१) सर्वोत्तम बघाई (२) सर्वोत्तम के पद (३) स्फुट कीतन (पद्य)  
(४) तृताय गृह का उत्तमव मालिका (५) गरगमत्र व्याख्या (६) सन्तानपट का व्याख्यान (गद्य) ।

जीवन के विषय में विज्ञाप कुछ ज्ञात नहीं है। तीना काव्य ग्रंथ भी यस्तुतः स्फुट पद ही हैं। यत्र-तत्र कीतन संग्रहों में इन पदों का दया जा सकता है। अलग से कोई ग्रंथ हमारे देखने में नहीं आया है। एक उदाहरण लें

एक अती भुज गृह एक पटका भ्रमभोरे ।  
एक घरे हरी दस एक मुल सों मुल जोरे ।  
एक बहुरी छींड़िये कटिये गरम दुभाय ।  
एकन बातन लाप लात की मुरली लई दिनाय ।  
पूज्य पाप्री तबे देखी पगुम्रा मनमायो ।  
रगरग बसन मनाय बियो जाहि जसो ही बायो ।

बालकेलि देखा आई रोम रोम सचु पाई ।  
बल्लभ हरख निरख लेत हैं बलाई ॥<sup>१</sup>

उपयुक्त पद में अनुप्रास की आंतरिक स्थापना छन्द को प्रतिरिक्त सांगीतिक गुण से मडित कर देती है ।

### कृष्ण जीवन लक्ष्मी राम

य गाकुलनाथ जी क गिप्य थ । १८ वीं शती के पूर्व भाग में इनकी उपस्थिति अनमानित है—क्याकि सवत १५६८ तक गोकुलनाथ जी ही जीवित रहे थे । इनका लिखा करण भरण नाटक प्रसिद्ध है । कीतन सग्रहों में प्राप्त कुछ पुटकर पद भी प्राप्त होते हैं । एक उदाहरण यह है

बली सखी बाग तमासे प्यारो मोहन खलत होरी ।  
सगरी सखी मिलि देखन निकसी पातरी कुवारी गोरी भोरी ।  
काहू प गुलाब काहू प बेसर अक्षर लिखे भरि भरि भोरी ।  
कृष्ण जीवन लक्ष्मीराम के प्रभ बने किशोर किशोरी ।  
(कीतन सग्रह भाग २ पृ० १५२)

अरे डोटा भर देई यमुनजल मरी सौं तु मो तन चित बोरे ।  
मरे सग की दूर निकसि गई मोहि ठाडी कौनी ।  
भरिये नागर जिन हित बोरे ।  
बाट घाट में रोकत भगरत रही रन वितबो रे ।  
कृष्ण जीवन लक्ष्मीराम के प्रभु माई अकेली जन जिन निरबोरे ।  
(कीतन सग्रह भाग ३ पृ० १७६ ।)

आली रो मद मद मुरली धुनि बाजत नत्यत क धर कहैया ।  
तसोये गरद की चांदनी निरमल तसो बनी बलहैया  
चदन की खार कीये और बनमाल हिये क चनकी बेलीमाना बनी बलहैया  
कृष्ण जीवन लक्ष्मीराम के प्रभु प्यारे दोहर लेत बलया ।  
(कीतन सग्रह भाग ३ पृ० १७६)

### नागरीदास

नागरदास का वास्तविक नाम मावतमिह था । नागरीदास उनका भक्ति

१ कीतन सग्रह भाग ३ पृ० १७ ।

क्षत्र का नाम है। य विगनग के राजा महाराजसिंह के पुत्र थे। सवत १७५६ म उनके जन्म हुआ था। मध्यकाल म हिन्दी म अनक नागरीनाम हो गये हैं परन्तु उनम सबसे अधिक प्रमुख मन्त्रपूर्ण एव उत्कृष्ट प्रस्तुत नागरीनाम ही हैं।

बाल्यावस्था स ही सादरसिंह बड़े वीर एव साहसा थे। पिता की मृत्यु के पश्चात् इन्हें राज्य का उत्तराधिकार प्राप्त होता था। परन्तु छोट भाई बहादुरसिंह ने जिन समय कि य दिल्ली म ही थे गद्दी पर अधिकार कर लिया। कुछ दिना तक मिहामन प्राप्त करने के लिए राजनतिक कुचक्रा म बंधे रह। परन्तु उस प्राप्त करने म कृतकार्य नहीं हो सक। एक बार मराठा स सहायता लेने के लिए दक्षिण जा रहे थे रास्ते म बन्धुवन म किसी वधुगव ने इनके कहा कि राज्याधिकार प्राप्त करने का योग आपका नहीं आपका पुत्र को है। आपको तो भगवत्भजन करना चाहिए। उसके परामर्श का स्वीकार कर उन्होंने अपने पुत्र सरदार सिंह का बन्धुवर सिंह के विरुद्ध लड़ने के लिए भजा और स्वयं वृद्धावन म रहकर भगवत्भजन करने लगे। इनके भाई ने उनके पुत्र म अधिकार ले और राज्य का एक भाग सरदार सिंह को दे दिया। सवत १८१४ म मानन्त सिंह ने वृद्धावन से आकर सरदार सिंह का राजतिलक किया और पुन वृद्धावन चले गये। इनका भगवत्भक्ति निष्ठा का सूचक मवया हम नीचे उद्धृत कर रहे हैं जा कि उन्होंने जयपुर के राजा मवाई माधवसिंह के अनक प्रश्न के उत्तर म कहा था

जाति के हम हैं तो श्रजवासी जूना रही औरहु जात की बाधा।  
देश है धोपन चाहत मोल की तीरप धीजमुना सख साधा।  
सतन की सतसग आजीविका कुज विहार अहार भगाधा।  
नागर के कुलदेव गोवधन मोहन मत्र अह इष्ट है साधा।

नागरीनाम जो बल्लभ मप्रदाय के गान्धामी रणछाड जी के लिख्ये थे।<sup>१</sup> डॉ० फ्याजफना गाने उन्हें परम पुष्टिमार्गीय माना है।<sup>२</sup> इसके अतिरिक्त मिश्रवधु प० रामचन्द्र शुक्ल एव विगागी हरि ने भी उन्हें बल्लभ मतानुयायी माना है। पर डा नारायण दत्त गर्माने निम्बाक मप्रदाय के कृष्णमत्त हिन्दी कवियों पर लिखे अपने गोध प्रबंध म उन्हें निम्बाक मप्रदाय का अनुयायी बताया

१ नागर समुच्चय पृ० ११ (भूमिका)।

२ डॉ० फ्याजफना अलीदास भवन और नागरीदास—इनके काव्य विश्लेषण म सम्बन्धित प्रभावों और प्रतिक्रियाओं का एक अध्ययन पृ० ११६ (अन्तर्गत प्रबंध)।

है ।<sup>१</sup> हम ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भ में उद्धान वष्णवीय दीक्षा किसी पुष्टि मार्गीय गुण से ली है किन्तु बाद को वे अपने परिवार की परम्पराओं के अनुरूप ही निम्बाक सम्प्रदाय की ओर आकृष्ट हो गये थे । इसी कारण उनके काव्य में पुष्टिमाग की ब्रजनीला गोपीभाव की साधना तथा निम्बाकीया का निकुञ्जलीला गान तीनों ही उपलब्ध हो जाते हैं । पीछे जिस समय का हम उद्धृत कर चुके हैं उसमें राधा को श्रेष्ठ मानना इन्हें सखी सम्प्रदाय के निकट ल आता है । या उनके कान तक पुष्टिमाग में सखी भावना का प्रवेश पर्याप्त मात्रा में हो चुका था ।

नागरीदास का स्वगवास सवत १८२१ में बदायुन के कृष्णगढ़ राज्य की कुत में हुआ था । वर्तमान समय में इसे नागरकुंज कहते हैं । वहाँ पर इनकी छतरी चरणचिह्न आदि विद्यमान हैं । समाधि पर उनकी प्रशस्ति में एक लेख भी खूब हुआ है तथा भादा सुदी ५ सवत १८२१ मृत्युतिथि भी दी हुई है ।

नागरीदास बालकला प्रेमी और कवि थे । काव्यकला चित्रकला एवं संगीत के प्रेमी ही नहीं गहरे पारंगत भी थे । कवियों के वामाश्रयता थे । कहते हैं कुछ कवि उनके साथ बराबर निवास करते रहे । ब्रजभाषा के विद्वान कवि धनानन्द इनके परम मित्रा में थे । नागरीदास का साहित्य मात्रा में विंगाल है । इनके ६९ ग्रंथों का संग्रह नागर समुच्चय के नाम से बहुत पहले बम्बई में प्रकाशित हुआ था । यह बराम्प सागर सिंगार सागर और पद सागर नामक तीन खंडों में विभाजित है । उसमें सङ्गीत ग्रंथों की सूची इस प्रकार है

### १ बराम्प सागर

(१) भक्तिमग दीपिका (२) देहसा (३) बराम्प बटी (४) रसिक रत्नावली (५) कवि बराम्प बली (६) अरिस्त पञ्चीमी (७) छूटकपद (८) छूटक दोहा (९) तीर्थानन्द (१०) रामचरित्रमाला (११) मनोरथ मञ्जरी (१२) पद प्रबोधमाला (१३) जगन् भक्त विनायक (१४) भक्ति सार और (१५) श्रीमद् भागवत पारायण विधि प्रकाश ।

### २ शृंगार सागर

(१) ब्रजनीला (२) गोपी प्रेम प्रकाश ( ) पद प्रसंगमाला (४) ब्रज बकुल तुला (५) ब्रजमार (६) बिहार चन्द्रिका (७) भारताना (८) प्रातरस मञ्जरी (९) भाजनानन्द अष्टक ( ) जगन् रम माधुरा (११) पूनविनायक (१२) गोपन प्रागम ( ) दानानन्द अष्टक (१४) नगानाष्टक (१५) पागविलास (१६) गान्धर्वार ( ) पावम पञ्चीमा (१८) गाथा बन विनायक (१९) रास



रमलता (२०) रनरूप रम (२१) मीतसार (२२) इक्व चिमन (२३) छूटक दाहा मजनस मदन (२४) रास अनुक्रम क दाहे (२५) अरिल्लाष्टक (२६) सदा की माझ (२७) वर्षा श्रुतु की माझ (२८) होरी की माझ (२९) गरद की माझ ( ०) था ठाकुर जी क जनम उच्छ्रव के कवित्त (३१) श्री ठकुरानीजी के जनम उच्छ्रव क कवित्त (३२) साभी क कवित्त (३३) साभी फूल बीननि समय सवाद अनुक्रम (२४) रास क कवित्त (३५) चादना क कवित्त ( ६) दिवारी क कवित्त (२७) गावद्ध न धारन क कवित्त (३८) होरो क कवित्त (३९) पाग मंन मयें अनुक्रम (४०) वसत वखन क कवित्त (४१) पाग विहार (४२) पाग गाबुलाष्टक (४३) हिडारा क कवित्त (४४) वर्षा क कवित्त (४५) छूटक कवित्त (४६) बन विनो (४७) बालविनो (४८) मुजनानद (४९) रास अनुक्रम क कवित्त (५०) निकु ज विलाग श्रीर (५१) गोविंद परचई ।

### ३ पद सागर

(१) बन जन प्रगसा (२) पद मुक्तावली श्रीर (३) उत्सवमाला ।

उपयुक्त ६८ ग्रन्था क अनिश्चित नागरीदास क बनाय नी ग्रन्थ श्रीर कह जान हैं । उनक नाम यह है —

(१) छूटक विधि (२) गिलनय (३) नवगिन (४) चरचरिया (५) रसता (६) बन विनास (७) गुप्त रस प्रकाश (८) धय धय श्रीर (९) ब्रज सबधी नाममाला ।

इस प्रकार नागरीदास क ग्रन्थो की कुन सख्या ७८ होती है । परन्तु जसा कि पद्धित रामचन्द्र चुवन न कहा है इन सभी को ग्रन्थ मना देना उचित न होगा । क्याकि इनम कुछ ता एस हैं जिनम पाँच-पाँच दस-दस पद्या स अधिन नहीं हैं । वास्तव म य ग्र य न हाकर वष्य विषय क गोपक मात्र हैं ।<sup>१</sup>

वष्य विषय का दृष्टि म नागरीदास राधाकृष्ण की प्रमलालामा क गायन थ । बल्लभ मप्रणय म विरह को पर्याप्त मान मिला था पर जसा कि हम पीछे कह चुक हैं रसायामना म मिलन ही मा य है विरह एव मान बहा पर लक्ष्य हैं । १८वीं शता तक घात घात रसायामक द्वारा निर्मित वातावरण ही अधिव मुख्य हा उठा था । श्री प्रभाव क अन्तगत नागरीदास का सप्रयाग परक रचनाए अधिव भास्वरण्य प्रभविष्णु प्रतीन हाना हैं । परन्तु मव मिनाकर उनका वाक्य ब्रजलीलागान की परम्परा क नीनर घाता है और इसी कारण पूव राग मान विरह घाति क भी भासिन चित्र नम उपलब्ध हान हैं ।

भक्ति चित्र क कविया की अभिष्यजना क मुख्य काव्यरूप मयपत्त थ । पर

नागरीदास एवं उनके अग्र सहयोगी कवित्त सवया उष्य दोहा आदि अग्र्य छंदों का सुष्ठु प्रयोग करत प्राप्त होत है। काव्यगत भावभूमिक सनुचन की क्षतिपूर्ति इन लोगों ने छन्दों के नवकाशीदार प्रयोगों अलंकार वचित्रय चित्रात्मकता एवं वाग्दण्ड्य से करनी चाही है। नागरीदास प्रारंभ से ही चित्रकला के शौकीन थे उनके सरक्षण में किशनगढ़ शाली के कित्ता ही मनोहर चित्र लिखे गये थे। चित्रकला की इस रंग एवं रेखा योजना का प्रभाव नागरीदास की कविता पर भी पडा था। इस चित्रता का एक उदाहरण देखिये —

भादों की कारी अघ्यारी निता, भकि बादर नद फुही बरसाय ।  
 स्पामा जू आपनी ऊंची अटा मे छकी रसरीति मलारहि गाव ।  
 ता सम मोहन की हम दूरि ते आतुर रूप की भील यों पाव ।  
 पौन मया करि घू घट टारे दया करि दामिनी दीव दिलाव ।

—नागर समुच्चय स

वल्लभ सम्प्रदाय के कुछ अग्र कविता के नाम और उनकी रचनाओं के शीर्षक हम दे रहे हैं। सम्प्रदाय में इन नामों के साथ इन ग्रंथों का स्वीकृति है परन्तु हम प्रयास करन पर भी इन लोगों की रचना के उदाहरण नहीं मिल सक रही कारण कवन नाम उद्धृत कर रहे हैं। इनके रचनाकाल का निश्चय हमने वल्लभाय मुधा (वय ६ अ व २) में प्रकाशित पुष्टिभारतीय विद्वान द्वाराकादास परीत के आघाट पर किया है।

### श्री ब्रजभूषण जी

जन्म १७१५ वि० है। हमसे अधिक कुछ बात नहीं है (१) ८४ व० का घाल (२) नवरत्न का घोन (३) सर्वोत्तम का घान (४) स्फुट घोन (५) श्री हरिराय जी का घाल।

### श्री सुन्दरवतां बहु जी

य श्री हरिराय जी का बन्धु था। जन्म मृत्यु सवत का पता नहीं है पर हमना निश्चय है कि रचना काल १८वीं शती का। ब्रजभाषा में रचना कुछ स्फुट रचनाएँ मात्र हैं तथा गुजरानी में चिन्तन घाल नामक एक ग्रंथ है। लगता है कि इनकी मातृभाषा गुजरानी थी।

### श्री ब्रजराय जी (मूरत)

जन्म-मृत्यु १६८२ माना जाता है। रचनाकाल १८वां शती का प्रथम भाग। इनके द्वारा रचित तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं

(१) नित्य सेवा विधि (२) स्फुट कीर्तन (३) सर्वोत्तम जी का धोल

सलिल संप्रदाय का अठारहवीं शती का साहित्य सक्षिप्त रूपरेखा

सलिल संप्रदाय का उद्भव १८ वीं शती के अन्तिम चरण में होता है। राधा प्राधान्य इस सम्प्रदाय में अपनी चरम सीमा को प्राप्त करता है। काव्य की दृष्टि से यह संप्रदाय १९ वीं शती में अधिकांश महत्त्वपूर्ण स्थान का अधिकारी बनता है जब कि गौरी अलि एवं अलबेली अलि जैसे कवि इस संप्रदाय में उत्पन्न होते हैं। हमारे आलोच्य युग में केवल इस संप्रदाय का प्रतिष्ठापक महात्मा वगी अलि जी ही आते हैं।

सलिल संप्रदाय के कवि

वगी अलि जी

सलिल संप्रदाय का प्रतिष्ठापक था। उनका पूज्य नवला वंश का प्रसिद्ध नारायण मिश्र था। नारायण मिश्र भी भक्त रूप में प्रख्यात था। नाभादास ने अपने भक्तमाल में उनका ऊपर भा एक छाप्य लिखा है।<sup>१</sup> श्री नारायण मिश्र जी सारस्वत ब्राह्मण थे एवं नाहौर से आकर मथुरा रहने लगे थे। उन्हीं का वंश में नबी पीपी में वगी अलि का जन्म आश्विन शुक्ल १ मवत् १७६४ में हुआ। उनका घर का नाम वगीघर था। उनका पिता प्रद्युम्न मिश्र का जिल्ला का बादागाह बहादुरगाह का दरबार में अञ्छा सम्मान था। वे भागवत का पाठ पढ़ित थे। भक्ति धीरे भागवत की परम्परा वाला उस वंश में बालक वगीघर को प्रारम्भ से ही भक्ति साधना का वातावरण मिला और गीत ही उनका हृदय में उपस्थित भक्ति का अक्षर सहज ही उठा।

उनका बचपन ही प्रसिद्ध है कि वे राधिका जी को वगी का अवतार थे तथा श्री राधा का नाम भी उन्हीं का ही रक्षित था। बिना राधा नाम सुनने का दुष्पान भी नहीं करते थे। १५ वर्ष की आयु में उनका विवाह हो गया था एवं बीस वर्ष की आयु में वे एक पुत्र का पिता भी हो गये। मवत् १७९४ में वे बदावन आ गये एवं १७९८ में तो उन्हीं बराग्य ही लीया। उनका गोलोकवासी सबत् १८२२ में आश्विन शुक्ल एक का बदावन का गाविन्द घाट का सलिल कुंज में हुआ।

भागवत कथा का भी ममत्त व्याख्याता थे। तथा राधा नाम का दास निरूपणता तक उन्हीं पहूँचा लिया। राधा परतत्त्व मित्रकर दा गयीं। मित्रातो

की चचा हम अग्रज कर चुक हैं अतः यहाँ हम उस विवचित नहीं करेंगे। वगैरे अलि उनका मखी भाव का साधनागत नाम है।

उन्होंने राधा-तत्त्वप्रकाश तथा राधा मिद्धात नामक ग्रन्थों की सस्त्रुतम रचना की। इसके अतिरिक्त मोक्षवाद गति स्वातंत्र्य परामर्श एवं राधोपनिषत् की टीकाएँ भी उन्होंने लिखा है। परन्तु व्रजभाषा के मर्म के भी पने जानकार थे। उन्होंने रासपचाध्यायी एवं हृदय सवस्व के अतिरिक्त गीता के तमाम पत्रों का भी रचना की है। उनमें बाणी म सिद्धात के ४१ पत्र वात्मन्य के ४६ पत्र माधुय गत के १२४ पत्र तथा अग्र्य उत्सव सम्बन्धी पत्र भी प्राप्य हैं। विभिन्न बधाइयों वगावली हृदय सवस्व एवं महाराज भा वम बाणी म मण्डीत है। इसमें अतिरिक्त भी उनके पद यत्र नत्र मित जाते हैं। प्रस्तुत नखन का इस सम्प्रदाय का एक महत्त्वपूर्ण बाणी प्रति मित है उसमें यद्यपि मुख्य रूप से किंगारी अग्नि जी की रचनाएँ सम्ग्रहीत हैं पर कुछ पद एवं उनके राधाप्टक भा उसमें सम्मिलित हैं।

वगैरे अग्नि जी अत्यन्त मधुर एवं सरस कवि हैं। सहज अद्वितीय व्रजभाषा में अत्यन्त स्वाभाविक शैली में उन्होंने अपनी राधानिष्ठा एवं कुजनिहार को प्रकट किया है। अलकारों की चमक दमक उनमें नहीं है लक्षणा यजना के मार्मिक प्रयोग भी वगैरे अलि जी का रचनाओं में प्राप्त नहीं होते परन्तु उनके मिद्धात वचन एवं लाना गान अपनी मादगा एवं अद्विधिता म तथा भाव मवन्ना म मन को सहज ही आविषित कर लेते हैं। उनके हृदय सवस्व के कुछ दोहे हैं

सेय सदा श्री राधिका सेवक नन्द कुमार ।  
 पूज सेवक सटचरी तथा विपुन विहार ॥  
 नयन से अगार सब होत है अगन माभ ।  
 विहिरन म गूड रहे नहीं जानत तिन साभ ॥  
 नयन नासिका राधिका राधा मन विच अग ।  
 विद्युरत नाहीं राधिका मो को परासभाय । ३०  
 राधा अग मिंगार हो जावक देहु पाव ।  
 राधा हो सो भगर हों मोंहि नहीं कहि ठाव । ३८

वगैरे अग्नि जी के किंगारी अग्नि एवं अग्रजला अग्नि नामक दो मर्मय निष्कथ त्रिहनि प्रमत्त माण्ड्य का रचना का। यह माण्ड्य मात्रा का गीत हृष्टि म ननों काव्य परिमा का हृष्टि म भी मन्वपूण है। परन्तु इन दोनों मन्वनुभावा का रचनाकार १६ वा गीत का प्रारम्भिक अंग है तथा कारण हम उनके विम्वन चचा नया कर रहे हैं।

## १८वीं शती का राम भक्तो का ब्रजभाषा साहित्य पृष्ठभूमि और सक्षिप्त रूपरेखा

रामभक्ति कायम एव गोस्वामी तुनसीदाम वं नाम बहुत दिना तक हिंदा म पर्यायवाची से बने रह। कुछ अय परवर्ती लोका व नाम सामन आय भी पर आचाय शुक्ल जी ने उनकी एसी तीखी आलाचना<sup>१</sup> की कि बहुत दिना तक उन व रिया व बारे म गभीरतापूर्वक साचा ही नही गया। पर इधर पिछल कुछ वर्षों म आचाय हजारी प्रसाद द्विवेदी डा० भगवती प्रसाद सिंह श्री भुवनचरनाथ मिश्र माधव एव डा० कागिल बुल्क आदि व सदप्रयत्ना म गा० तुनसीदास परवर्ती रामभक्ति का प्रभूत साहित्य सामन आया है। इम साहित्य व विनपण स गान गता है कि शृगारी उपासना इसम प्रमुग है। यद्यपि गान दास्य सम्य वात्मत्य भावा की भी स्वीकृति इम साहित्य म है परंतु इन सभा भावा को सीता राम व विहार म ही अतत नियोजित किया गया है। कृष्ण की शृगारी उपासना का इम सप्रणाय व साहित्य पर गहरा प्रभाव है। लाना गान की दृष्टि से राम व राजा रूप का ऐवय एव उपामना का माधुय दाना ही इसम स्वीकृत रहे। १७ वीं गती म अद्यदास के माय यह परम्परा प्रारम्भ होता है। १८ वा गती म बाल अली राम मख मधुराचाय आदि इस प्रनट करत है। परंतु अपन चरम बभव पर यह सायना और साहित्य १९ वीं गताग म पहुचती है। रीतिवाचीन शृगार की छाया भी इम साहित्य पर बहुत स्पष्ट है।

इम सम्प्रदाय का अधिकाग साहित्य भवधी म त्रिवा गया है यद्यपि ब्रजभाषा म भी यद्यत् साहित्य की रचना हुई है।

### रामोपासक कवि

#### बाबानंद

डा० भगवती प्रसाद सिंह ने इनका जम साप्रदायिक अया व अनुमार म० १७१० निर्धारित किया है।<sup>१</sup> म राजस्थान व किमी गाव म पना हुए थ एव बाल्यावस्था व प्रथम चरल म ही विरक्त हा गय थ।

बाबानंद जी का स्थान वपणय सप्रणाय म अत्यधिक महत्वपूर्ण है। १७ १८ वा गतागियों म जब माव माधुषा व अत्याचार बहून ब्र गय थ तव जयपुर म वपणवो ने अपनी रक्षा व उपाय मोचन व लिए मवत १७४० व आम पाग एव मम्मना बुलाया था। इम मम्मलन म वपणवो को भी पीजी दग पर

१ प० रामधर गबत हिंदा साहित्य का इतिहास पृ० १४० १४२।

२ डॉ० भगवती प्रसाद सिंह रामभक्ति म रचित सम्प्रदाय पृ० ८९।

शिक्षित करने का निश्चय हुआ था। इस वपुगव अनी एव अखाडो के समठन का भार बालान जी को ही दिया गया था। अपनी समठन शक्ति प्रतिभा एव शीघ्र से उतारने शीघ्र ही वपुगवा की एक पत्रलिपि सना खी कर दी म यवस्था न गवो क आतक को समाप्त कर दिया।

बालानद जी राम क बलरूप के उपासक थे गो कि ऐश्वर्य एव माधुर्य रूपो के प्रति भी उनके मन म आदर का भाव कम न था। काय रचना की ओर उन ही अधिक प्रवृत्ति नही प्रतीत होती केवल कुत्र पद प्रकीर्ण रूप से यत्र-तत्र मिल जात हैं। उनकी रचना का एक उदाहरण देखिए

कमल मखी कमला मख ह रें प्रम प्रीति रस भीज ।  
मन भ्रम बचन तुम्हें प्रभु सेव चपला अचल करीज ।  
मद मद मुसकात छबीले बोलत बचन रसीले ।  
बालानद को देह किक्करी श्रीपति ऐसे सुसीले ।

बालकृष्ण नायक बाल अली

बालअली का रचनाकाल विश्रम की अठाडरवा गती का पूर्वार्द्ध है। उनका प्रथम ध्यान मजरी स० १७२६<sup>१</sup> म लिखा गया था तथा नेह प्रकाग का मृजनकाल स० १७४६ है। प्रारम्भ म व रामानुजाचार्य की बधी भक्ति बाल सप्रणय म दीनित हुए थे। पर उस युग क वापक प्रभाव क अतगत उतारने आचार प्रधान इस साधना का छोडकर रवासा जाकर अग्रदाम की परम्परा क पांचवें आचार्य चरणदास स रसिक साधना की दीक्षा ले ना। चरणदास जी के वाक व रवासा गरी पर आचार्य रूप म अधिष्ठित हुए थे।

उनक पत्र म बाल अली की छाप मिलती है। उनक बनाए हुए आठ ग्रन्थ का पता लगता है। (१) ध्यान मजरी (२) नेह प्रकाग ( ) सिद्धान्त तत्व दापिका (४) दगान मजरी (५) ग्वाल पहेली (६) प्रम

१ सत्रह से षडविंश बरस मास पुनि कालगनि ।

गबल पत्र पद्यमा अमल सुमवार सग्न दिन ॥

तहि अवसर यह ध्यान मजरी प्रगट भई है ।

परम सुमगल करनि बरनि बर मोदम है ॥

—ध्यान मजरी पृ० ५४ ।

२ प्रगटानत्र अति सिन्धु गति गनित समय सभसोय ।

—नत्र प्रकाग की पुष्पिका (मभा खोज रिपाट १६१७ भाग २

स० स० १६ ब) ।

पहेली (७) प्रेम पराक्षा (८) परतीत परीक्षा। इन आठों ग्रन्थों में काव्य एवं सिद्धांत की दृष्टि से प्रथम तीन ध्यान मजरी नह प्रकाश एवं सिद्धांत तत्त्व दीपिका अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। नह प्रकाश क १४८ दाहा म सम्प्रदाय की माय ताप्रा क अनुभार आह लादिनी गक्ति का विचार सखिया का नामावली एवं उनकी मवाप्रा का विवरण प्रारम्भ म ही उपस्थित किया गया है। राम का साता स प्रणय निवेदन भी है एवं राम प्रेम तथा रूप क विलास हैं। गविया क राम और जानकी क प्रति प्रीतिवचन तथा साता की छवि का भव्य वणन भा इस ग्रन्थ म उपलब्ध हाता है। सीता की छवि का एक प्रभावगाना वगन दलित

धरण वरण तब वरण नख है कि तरुण गिर मीर ।  
 अनुरागी दग सास क बसे आप इहि ठौर ।  
 सब दिगि कचन मय करत तन तन जोति अनूप ।  
 मनु भर भरि अगन पर अग रमाव रूप ।  
 सिय तब रूप अपार पिय पियतन नन अघाय ।  
 भये घटत सुर राज से निघरे प्रति अकुलाय ।

य दाह प्रपने वगाव एवं अभिव्यक्ति मुद्रा म रातिराजान कविया क दोहा क समान ही हैं। यह ध्यान रह कि बिहारी हमार प्रस्तुत कवि क ममकाजान थ। यह बात सूचित करती है कि दाहा क द्वारा शृंगारी अभिव्यक्ति की एक व्यापक परम्परा थी जिसम मूधन्य बिहारी सिद्ध हूण पर उनक आसपास क स्तर पर ही अन्य कवि भा अभिव्यक्तियाँ प्रकाशित करते रह। बात अना जा ऐसे ही श्रेष्ठ कविया म थ।

उन पर सूफा प्रवचनद्वि का भी गहरा प्रभाव मिनठा है। सिद्धान्त तत्त्व दीपिका म सूफी-मदति क प्रभाव म ममानाकित एवं अशोचिन क आचार पर परम तत्त्व की रसिकजनममत्त व्याख्या उपस्थित की गयी है। सूफा प्रभाव का दृष्टि से यह ग्रन्थ बड़ा महत्त्वपूर्ण है। इसका भाषा अवधी है। ६ अष्टादशिया क बाण दाह का प्रेम इमम भी स्वीकार किया गया है। इसमें प्रभावती माघन है मअमा माया है कृपावती गुण है भगवत्प्राप्ति इच्छ मिलन है और रसिक-माघना क अनुभार मधुरा भक्ति का मन्त्र दिया गया है। इस ग्रन्थ म ६ प्रकाश है। ब्रजभाषा का न हान क कारण हम यहाँ उगकी विसृष्ट विवेचना नहीं करेंगे। ध्यान मजरी म भी रमापामना का ही निरूपण किया गया है। भाषा अत्यन्त मुलावरेणार, भावना तीव्र एवं रम माघना का सूक्ष्म विवेचन इसम उपलब्ध है।

सुनि सिय चरित सुमुखि मन हरष्यो उर ध्यान द जलद क्यों बरष्यो ।  
सिय पद प्रम बड नित वाकें श्रीर न सुधि छाव उर ताक ।  
उलही किधों सिगार बेसि चह मदन सुहाई ।  
नाभि कूप के सलिल सो सींचि बढ़ाई ।

### राम प्रिया शरण प्रेम कली

जनकपुर की गद्दा पर यह महत्तम तथा सवत १७६६ क लगभग विद्यमान था । रामायण के अनुकरण पर लगभग ६३८ पृष्ठाक सीतायन नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ की उन्होंने रचना की थी । इस ग्रन्थ में सीता चरित्र का अत्यन्त उन्नत एवं महिमामण्डित चित्रण हुआ है । बानकाण्ड मधुरमाल कांड जयमाल कांड राममान काण्ड सुख मान काण्ड रसान काण्ड और चंद्रिका काण्ड इन सात काण्डों में पूरा ग्रन्थ विभाजित है । पर जसा कि एक शीपका से ही अनुमानित है इस ग्रन्थ में सीता चरित्र का परिपाटी विहित परम्परा से प्राप्त चित्रण नहीं है । इसमें रमिक भावना का अनुरूप कवल बाल एवं यौवन की अवस्थाओं की विहार-लानाओं का भी वर्णन किया गया है । इनमें से बानकाण्ड और मधुरमाल काण्ड प्रकाशित हो चुके हैं । रस्य प्रमोदवन जानकी घाट अयोध्या एवं छतरपुर राज्य पुस्तकालय में ग्रन्थ का हस्तलिखित प्रतियाँ सुरक्षित हैं । रसिक-साधना की दृष्टि से वास्तव में यह बड़ा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है । मधुरमाल काण्ड में कवि ने अपनी परिचय भी इस प्रकार दिया है

प्रिया शरण गह भावना अह निज भाव समत ।  
युगल नायिका करि कही प्राप्ति भाव के हत ।  
नेह कली आचाय मम प्रेम सली मम रूप ।  
युगल सनयना की सता अदभन युगल स्वरूप ।  
वय सचिनी मधुराननी परम मनोहर अंग ।  
गौर बरए सिय क ज म, रहन सता सिय संग ।  
मधुर भावना युगल की अह शृ गार रस रोनि ।  
सो सब वर्णन करत हों अति प्रसन्न अति प्रीति ।

इस प्रकार उन्होंने अपनी गद्दा का नाम अपनी साधनागत स्वरूप मवा और स्थान तथा उपासना भाव एवं ग्रन्थ अनिर्व्यजित भावना को स्पष्ट कर दिया है ।

मानाओं की भाषा टक्याली अवधी है पर बीच-बीच में ब्रजभाषा का भाषा उलाने दिया है ।



### जानकी रसिक गरण 'रसमाला

जिस प्रकार मीतायन की रचना सम्प्रत १७६० म ही हुई थी वसे ही रसमाला जी का अवधी सागर भा मवत १७६० में ही सम्पूर्ण हुआ था। रसमाला उनका साधनागत नाम है एव मायुष्यभावपरव सीताराम की विहार प्राडाग्रा का वगन अवधी सागर म हुआ है। अवधी सागर की रचना भी अवधी म ही हुई है वमी कारण हम विस्तार स उसका चर्चा नहीं कर रहे हैं। पर उहीने कुछ फुटकर पद एव भजन आदि भी निम्न हैं और इनम अवधी क साथ ही ब्रजभाषा का भी प्रयाग हुआ है। इनक छन्दा म रस माला क अति रिक्त रम मालिनि रस मानिका आदि अ य छापें भी मिलती हैं। उनकी रचना का एक उदाहरण हम नीच द रहे हैं

भूल सिय पिय सग हिडोरे ।

प्रातन क सग रमक बड़ावत सांवरी सखिया चहु ओर ।

घन गरजत बिजुली अति चमकत धरसत रिमभिम पवन झकार ।

रस मालिनि प्रीतम मनमोहन बोलत खगरव मोर चकोर ।

### रूपलात 'रूप सखी'

वाल अनी क गिष्य थ । होरो नामक रचना प्राप्त है इनका समय १८वीं शती का मध्यभाग है ।

फागुन भागन भरि चढ़ यो अनिन बड मो अनुराग ।

धव हिलमिल हम खलिबो लती लान सग फाग ।

सासन सासन की जरी भरो रग पिचकारि ।

आंस छोड़ छवि सी दिसि सिय उर ओर निहारि ।

दरि विमला तय बीरि के उठी हिलिमिलि नबस किगोर ।

### प्रेम सखी

विषय की १८ वीं शती क अंतिम भाग म प्रेम गयी जा विद्यमान थ । य महारत्ना रामप्रसाद बिठुकाचाय क मयकालात थ । कथन है कि प्रयाग क निकट शृंगवरपुर म एक ब्राह्मण क घर नवा जन्म हुआ था । बाल्यावस्था म ही वराग्य ग्रहण कर य मन्दाता रामनाम गूत्र क गिष्य हा गय थ । मिदिला प्रयाग्या आदि म प्रभुमत धामत एव रसिक साधना की दाशा मत हुए क चित्रकृत धा गय थ । एक वहा पर रहकर राम मीता का गिष्य प्राणापों का चित्रण एक चिन्तन क करत रह । वहा है कि रामप्रसाद बिठुकाचाय म धयय क नवाय

सम्राट्त्त माली खान पछा कि अपनी टक्कर के दूसरे भवन का नाम लीजिए और उहाने प्रेम सखी का सादर उल्लेख किया। सीताराम नखगिख उनकी कीर्ति का आधार मुख्य ग्रन्थ है। इसका प्रतिरिक्त होली एवं कवित्तादि प्रबन्ध में उनकी फुटकर रचनाओं का संग्रह है। इन छन्दों में भी नित्य बिहार का ही गान हुआ है।

सीता राम के नए शिल्प का प्रत्यक्ष मोहक एवं बिम्ब उपस्थित कर देने वाला चित्रण उभने किया है। इस चित्रण का रीतिकालीन कविया के नख गिख चित्रणों की तुलना में सुविधापूर्वक रखा जा सकता है। भाषा एवं गद्य चयन की सराद अनुप्रास एवं अलंकारों की सजावट तथा छन्द की सुघरता सभी दृष्टियों में प्रस्तुत ग्रन्थ साहित्यिक एवं रसात्मक है। सीता के शरीर की रोम राजि का वर्णन किसी भी रीतिसिद्ध कविक के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकता है परम्परामिद्ध उपमानों का सघन चित्रण इसमें हुआ है

नीलम नीली कसी ससी है मध्य कचन के तन  
जाति कधों सिगार पांति साजी है।  
झाई स्यामनाई की निकाई सब सिमिट के  
जाहि देखि देखि रोम रोम पिय राजी ह।  
भीनी दरसात हैं विसात छवि सरसात रूप  
सघासर मे सवार सी विराजी हैं।  
प्रेम सखी मरी जान सुलमा समूह राजी गनगन  
राजी धौं सिया की रोम राजी है।

यह ग्रन्थ सम्बत १७८१ में लिखा गया था।

विलास शायरों के अंतर्गत निम्न छन्दों में राम का नव वधु बनाकर सीता के हजूर में पेश किया जा रहा है

जावक लगायो जल जात ऐस पायन मे  
बिद्यया कलित ह वै अधिक छवि छाई है।  
पमि रह्यो घरवारो लह्यो सबजारग  
नील जरतारी सारी कचकी सह्राई है।  
प्रेम सखी अंग अंग भूषण विविध साजि  
बहु-बहु कहत बधूटी गहिमाई है।  
सभगा मला मिवाजू के शुरत हजूरि  
किमो नवल बधूटी एक सामरे त झ्राई है।

इस स्त्र एता को यदि रसिक साधना के मन्त्र म दखा जाए तो अनु-  
चत ठहरान की आन्वयवता नहा पड़ेगी ।

राम सख

राम मधु का स्थान रामभक्ति क रसिक संप्रदाय म अत्यधिक आदर  
प्राप्त है । व सख्य भाव के मुख्य प्रतिष्ठापक एवं प्रवक्तव्य । विप्रम का १८ वीं  
शती का अन्तिम चरण एवं १९ वीं शती का प्रारम्भिक चरण उनका मुख्य काय  
रान रहा है । व जयपुर राज्य के किसी ब्राह्मण के पुत्र थ । बृद्ध बड़ हान पर  
रामभक्ति म मग्न हाकर तीर्थयात्रा करत हुए दक्षिण के प्रसिद्ध माध्व कट्ट  
उठुपी जा पहुँच । वहीं उहाँन तत्कालीन माध्व आचार्य वशिष्ठ ताय म दाक्षा  
ला । फिर अयाध्या विप्रकू उचहरा आनि स्वाना पर काफी निना तत्र निवास  
कर बाधक्य म मन्त्र चल गय और वहा उनका मत्यु हुई ।

उनक साधनागत भाव क विषय म अष्टछाप क कविता क ममान ही  
प्रसिद्ध है कि निन म व मन्त्रा भाव म उपामना करत थ एवं रात को मन्त्रा मंत्र स  
दम्पति की रामनाता म सदा करत थ । उनकी १० कृतिया का उत्तम ३०  
भगवताप्रसाद सिंहन किया है जो इस प्रकार है — (१) दूत भूषण (२) दान  
लीला (३) पदावली (४) बाना (५) रूप रमामृत मिथु (६) मंगल गतक (७)  
राम भाला (८) नृत्य राधव मिलन दोहावली (९) नृत्य राधव मिलन कविता  
वर्ती (१०) रास्य पद्धति ।<sup>१</sup> इसक अतिरिक्त जानकी नी रत्न माणिक्य नामक  
ग्रन्थ म वन १८६६ म बानपुर क बापमठ जुबला प्रेम स प्रकाशित भा हा पुत्रा  
है । धाम्निव म ३० सिंह द्वारा गिनायी गई दान लीला जानकी नीरत्न माणिक्य  
की हा धन प्रतीत होता है । इस ग्रन्थ म कृष्ण-लाला क अनुकरण पर दानलीला  
विवृत हुई है । इसक अतिरिक्त राम द्वारा सीता का शृंगार कु ज विहार राम  
विलास धामलीला एवं नाम की उपासना का भाकपक एवं भावित वर्णन हुआ  
है । दान लीला का एक छन्द इस प्रकार है —

विविन प्रमोद तो जोरि महा है आश्रो यही स बड़ी अतपली ।  
मानत न डर बाहु की मेन कटू पाई अचानक आनु अकेली ।  
बीजी हमें करि नग सुम्हे भावती विसत की घोर हो रूप नबली ।  
आत हमारी मनो सब जान दे हो तुम तो दय जोग सखली ।

नृत्य राधव मिलन उनका दूसरा प्रसिद्ध ग्रन्थ है जिसका रचना म वन  
१८०४ म हुई थी । दाह बीगाई एवं कविल छन्द म रचना रचना हुई है । दाह

१ राम म १० स०, पृ० ४०६ ।

एक चौपाइया की भाषा अबधी है पर कवित्तो में ब्रजभाषा का प्रचुरता से उपयोग हुआ है। इस ग्रंथ में सद्धान्तिक निरूपण की ओर प्रवृत्ति अधिक है लीला चित्रण की ओर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया गया है। इसकी भाषा अपेक्षाकृत सीधा सादा है।

राम को रूप अनूप समुद्र में  
 आगरि नाव निवाह नहीं है।  
 आसिंह देखि जु जाति वही सब  
 डूबि अथाहन थाह मही है।  
 घरि फिरे न धिरावन हार को  
 केरे रह सो उठाऊ वही ह।  
 राम सब मति चाप करौ  
 चित्त चुबक लोइ की लीक सही है।

बजटवर प्रसंग संभवतः १७७६ में मुद्रित उनकी पदावली में एक पत्र हम उद्धृत कर रहे हैं जिसमें कि राम मीता के हानी खेलन का ठगारी चित्रण हुआ है

अहो पिय राम पकरि सिय लोहो कटि पर सरिवयन छीनो।  
 होरी सम रास मडल में मन भायो सो कीनो।  
 मुख सों मसल मयिली अलिघन अ जन दोनो।  
 राम सब तलि अबध लाल प्रभ प्यारी के रग मीनो।

राम प्रपन्न मधुराचाय

रसिक साधना के क्षेत्र में मधुराचाय का नाम मधुर प्रिया कहा जाता है। बचनता गंगा के आचायक और कील्ट स्वामी की पौषवा पीठी में थे। कहते हैं कि पद्यत्रयपूर्वक उनकी गंगा छीनना नहीं था पर वह निरुद्ध भाव से चित्रकूट चतुर्थ और मारा जीवन रसिक मिद्धाता के निवचन प्रिय एव प्रचार में गगाया। वस्तुतः अब तक प्राप्त साहित्य में मधुराचाय से बड़ा विद्वान् एव न्याय चिन्तक रामभक्ति का रसिक गान्ध्या में दूसरा व्यक्ति प्राप्त नहीं जाता। दार्शनिक धार्मिक (निनामाभित्तन यियाताभित्तन) दृष्टि से गोनाय वध्णव में जा म्यान जाव गाम्बामा का है वना म्यान रामगान्ध्या में मधुराचाय जी का है। परन्तु उनकी अधिकांश मृतन ममृतन में है निना म बुद्ध पर माय मिनन है। ममृतन में उनके निम चार ग्रंथ कहे जाते हैं

### (१) भगवद गुण दर्पण

जाव गाम्वाभा व भागवन सत्भ का भाति यह भी उह मत्भों म विभाजित या । पर अब केवल मुत्तर मणि सत्भ एव अधूरा बदिक् मणि सत्भ प्राप्त हात है । मुत्तर मणि सत्भ व प्रारम्भ म हा जान गाम्वाभा का यन्व ब्रह्मेति मता वान 'नोक' का भाति हा मयुराचाय न मगनाचरण म हा प्रपना मन स्पष्ट कर लिया है

प्रोद्यद भानुसपनरत्ननिकरदददीप्यमान महा  
मोद दिव्यतराति मजु वनिताव दे सदा सविताम ।  
रामोत्लासमुखे च याकृततम दिव्ये महामण्डप  
ज्योष्यामध्यप्रमोद गुभ्रविपिन राम सतीत भज ।

(अथाध्या व मध्य म स्थित मूय व समान प्रभा विम्भार करन वाल रत्न ममूना म धानावित गुभ्र प्रमाद-वन म मजु वनिता वृत् स नविन रामा ल्नास व धारन म लिय मन्मण्डप में धामान सीता महित राम की बत्ना करता हू ।

### (२) माधुष बलि बादविनी

इसम राम माता का बनि का अत्यन नविन वगन है ।

### (३) बाल्मीकि रामायण की टाका (शृ गार परव)

यह अत्यन नो है ।

### (४) राम तत्व प्रकाश

इस ग्रंथ म भा सप्रणय व निदानों व अनुसार श्री राम का तीनाधा का दार्शनिक तीनापरक विवचन किया गया है । रमिक भक्ता म इमका प्रमाण ग्रंथ व समान ही धारण किया जाता है ।

उनका हिन्दी रचना उतना भास्वर नहीं है । नाच हम एक उदाहरण देते हैं

राशि में आज गर् मिय कु ज ।  
बलि नपति किशोर दीर धेरि पिचका पु ज ।  
तब बहो में मुनहु लालन लाल कीगलजय ।  
फाग मित्त का कर बोर घलहु इमर मग ।  
मधर प्रातम घाजु तुमका जीतिही रनिरग ।

प० इतारा प्रमाण 'विधान बत्ना' प्रश्न १८५५ व प्रक म उनका समय वि० का धारणवा 'नाचा' का मध्य माना गया है ।

## सिया सखी

विश्वम् की १८ वीं शती के उत्तरार्ध में विद्यमान मियामन्दा का वास्तविक नाम गोपाल दास था। यह भाँ जयपुर राज्य के अतगत एक ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुआ था। कुछ दिनों तक यह जयपुर के सीताराम मन्दिर में मन्त्र भी रहकर उनका साधक चित्त का बड़ा गार्तिमन्त मिला और यह चित्रकूट चले आया। बहुत दिनों तक चित्रकूट के कामद गिरि पर राम साधना के उपरान्त पुनः जयपुर लौट गया था। प्राचीन सग्रहा में इनके कतिपय पद उपलब्ध होते हैं जिनमें सि ब्रजभाषा के साथ राजस्थानी का भी मिश्रण है

सिया बाई जू सुनियो अरज हमारी ।  
 औरन के तो और भरोसो म्हारे आस तिहारी ।  
 करनी की तुम और न देखो अपनी बिरद सगहारी ।  
 ऐसो होन नहीं या जग में लोग हस द तारी ।  
 रग महल में जावन दीजी सुनो पिया अबध बिहारी ।  
 सिया सखी के सरबस तुम हो और लग नहि सारी ।

## महाराज छत्रसाल

श्रीरगज के एक मुगल मनास जीवन पर्यन्त युद्ध करने वाले एक शिवाजी के साथ ही हिंदू राष्ट्रायता का ध्वज ऊँचा करने वाले छत्रमान पना के बुढ़ेना राजा चम्पतराय के पुत्र थे। इनका जन्म उदयपुर में ३ म १७६ म हुआ था। सारे जीवन में ही मुगल और पठानों से युद्ध किया तथा मृत्यु १७८६ में उनकी मृत्यु पना में हुई। प्रसिद्ध वार राम के कवि भूपण के कहान अने यहाँ आश्रय लिया था। अपने वारत्व के कारण और भूपण के आश्रयता के रूप में उनकी कानि बन्त फला पर उनकी मृजनात्मक गति का अतिक्रमण नहीं हो सका। छत्रमान का जीवन वाग्म्य में गीय एक पराश्रम के क्षेत्र में एक मिश्रणरी भावना का जीवन था। अपने उद्यम का प्रतिफल उद्देश्यर भक्ति से यथेष्ट प्ररणा एक गति प्राप्त हुआ था। इन कारण रतिकान का अने ता इनकी रचना का टान भक्तिकाल का है। वियागा हरि शारा मयास्ति छत्रमान प्रया बना में उनका आठ रचनाओं का मण्डलन किया गया है। वे रचनाएँ हैं (१) रामावनार के कवि (२) रामचन्द्राष्टक ( ) अनुमान पचागा (४) आ रावाट्टण पचागा (५) कृष्णावनार के कवि (६) महाराज छत्रमान प्रति अने अनेय के अने (७) दृष्टाना और पुत्रक कवि (८) दृष्टाना तथा राजनति का मण्डल ।

छत्रसाल म भक्ति वा साम्प्रदायिक आग्रह नथा था । यद्यपि व मुख्यत रामभक्त । पर वृष्ण क प्रति उनका श्रद्धा कम नथी थी । प्रणामा सम्प्रदाय क प्रवक्त प्राणनाथ जी उनक गुन्तुल्य थ तथा पना म ही रहत थ । उम सम्प्रदाय वा एक मुख्य पीठ बहा पर आज भी है । प्राणनाथ जी मव धम-समन्वय म विज्ञान रगत थ । मभवत उन्ही क प्रभाव म छत्रमान म धार्मिक महिष्णुना एव समन्वय वृत्ति आइ हागा । एम वृत्ति का मुन्दर निदान उनक निम्नावित्त वचित्त म दृशा है

सीतानाथ मेतुनाथ, सत्यनाथ मधुनाथ  
 नाथ नाथ दय नाथ दीननाथ दीनगति ।  
 रघुदेव ज दय जच्छदय, दय दय  
 विश्वदेव, वामुदय व्यासदेव, देवरति ।  
 रनबीर रघबीर जवुबीर ब्रजबीर  
 बलबीर बीर बीर ब्रतबीर चारुमति ।  
 रागपति, रगपति रमापति छत्रापति  
 राधापति, रसपति रसापति रासपति ।

ऐसा लगता है कि एम एव राग क स्वामा वा रमिक माधना का एन पर पर्याप्त प्रभाव था । यन् प्रभाव चित्रकूट की स्थानगत निवृत्ता का भा हा गवता है एव मया सम्प्रदाय का रमिक भावना का भी परिणाम हा मरता है । छत्रमान क हृत्प म राम की मधुर सीता क प्रति पयाप्त आनपग था तथा उनक वृत्ति म गम विहार मवधी रचनाए पयाप्त हैं । एन उदाहरण लें —

सौज पथ पावनि मुहावनि है आई धाजु,  
 पूजन को सोमबट गोठि धनितानि को ।  
 माना धनयाम को रिन्हाइये अनेक थप  
 धाई धात्र मुली तुय तखितान को ।  
 कर्षो कर्षित दीपमालिका को धद्रमालिका को,  
 एक धोर है बरोर एक धोर है जानकी ।  
 जोरि जोरि पानि सीता कह राम छत्रसाल,  
 राम कहै साता स क बोदर सतान को ।

—छत्रमान मयावना पृ० ८८।

वृष्ण की माधुय सीता का एन प्रगत वचित्त एम नाथ उन्पुन कर रह है का धपन कमाय गोन्ध एव एम माधय का वृत्ति म दय एर दम्मावर वा धनापरिया वा गुनना म सहज हा उपस्थित किया जा शकता है

स्याम स्याम रग एक ग्याल ग्यालिनी अनेक  
 गोद ल गुलाल लाल धाल मुरि मुरि क ।  
 बोलत धमार मजु फाग और फयोली राग  
 स्यामा बनी स्याम स्याम स्यामा नह धुरि क ।  
 कह छत्रसाल ऐसो बूकिब न दांव अाज  
 कीज अनराग फाग वाही ठौर जरि के ।  
 रूप रस रग की हिलोरनि मे घोरो अ ग  
 जोरो नवनेह लाल रग म हिलुरि के ।

### महामा सूर किगोर

१८ वीं गती का मध्यभाग में ही कीलह स्वामी का पौत्र गिष्य सूर किगार जा हुए हैं। मधुराचाय जी का यह समकालीन था और उनके गतता छाड़ दन पर यह भी गलता छाड़ कर सीकर रहन गग। सीता का यह पुत्री का समान मानत था अन वात्सल्य भाव से राम और सीता की भक्ति करत था। कहत है कि राम को जामाता मानन का कारण यह अयोध्या में जन भी ग्रहण नहीं करते थे। सीता की बान्नाडाया का यह चित्र दन्विय

जनक लली मधुरे मुर गाव ।  
 कोइ सखि रन दिवस मुधि भूलों कोइ सखि पाह की बात चलाय ।  
 कोइ सखि रोभि रोभि गन गावें कोइ सखि मख पर भयर उडाव ।  
 कोइ सखि मपर मधुर मुर गावें चण्डला अलिबीनि बजाव ।  
 सूर किगार बलया नहीं बिन सखिया कोउ जान न पाव ।

अवधा भाषा में इनका मिथिला विनाम नामक ग्रन्थ उपलब्ध है। शेष पुत्रवरण उनका मित्रता है। कवि का रूप में उह उनना प्रमिद्धि नहा मित्र सखा है त्रिना कि अपनी वात्सल्य निष्ठापूण भक्ति भावना का निष्ठा प्राप्त हूइ है। मिथिला में रत्न का यह निष्ठा दन्विय। अवधी एवं ब्रज दाना हा भाषाओं का रग छत्र म मिना अा ।

नय का गह बाल विहार करे निय की पत्र रन जहां सहिय ।  
 मनिवृद्ध उपासक राम विवाह सोई त्रिजठोर हिय गहिय ।  
 कह सूर किगोर विदार वहा हिय वा तप वा बरषो सहिय ।  
 चिउरो चवि का पन्डितो भाव का मिथिल महा बांधि कुटी रहिय ।

जगर उन्धुन दाना छत्र मिथिला विनाम स निय गए है ।



## हर्षाचाय 'हरि सहचरी

राम भक्ति का रसिक गाथा व प्रमुक्त व्याख्याया मधुराचाय व लिप्य थ । तथा उन व बात गलना गद्दी की आचाय पीठिका पर प्रतिष्ठित हुए थ । राम की रास लीला य बड़े धूम धाम स मनाया करत थ । हिंदी म इनका एक छन्दयाम तथा कुछ स्फुट पद मात्र मिलत ह । सस्वृत म गीत गोविंद व अनुकरण पर 'जानकी गीत' नामक एक ललित ग्रंथ की रचना की थी । उनकी ब्रजभाषा व कृत्तिलेख का एक उदाहरण निम्नलिखित है

माई री रास रच्यो सरजू तट साम थवन बट छाहीं ।  
नाचत राम गोपाल कुज मे व सोता गर बाहीं ।  
रागिनि मे जन राग लता खिली वन प्रमोद क माहीं ।  
हरि सहचरि मुत घहल पहल म लोह बंद मुधि नाहीं ।

१८ वी गती का उत्तरार्ध एक १९ वी गती का प्रथम चरण इनका रचना काल है । इनके बारे म निश्चित तिथिया का जानन का कोई साधन उपलब्ध नहीं है ।

## गुरु गोविंद सिंह

सिक्खों व प्रसिद्ध दसव गुरु गाविंद सिंह जा बचत लडाकू वीर याद्धा ही नहीं थ व भ्रातृक भक्त भी थ । यद्यपि सिक्ख सिद्धान्त व अनुसार व तिगुणा पासक थ परन्तु वास्तव म उनका मुक्ताम पूरा तरह गगुणापासना की प्रार था । मभवत दवा दवतामा का श्रद्धा उनर भीतर उस मानसिक शक्ति की स्फुटित करती थी जिमकी उस मकट म समय व उह प्रत्यधिक धाव द्यवता थी । उनका जन्म मवत १७२३ म हुआ था और मवत १७६५ म मृत्यु हा गई थी । व म्बय ता किये हा कविया का आर भा बहूत दत थ । उनक दरवार म बार रस क छन्द बहन बाल मनक कवि सम्मान प्राप्त करत रहत थ ।

प्रथम ग्रंथ गाविंद रामायण म रामकथा का सुन्दर और प्रभावगाला चित्रण उहां किया है । मभवन राम का प्रतापी एवमगाली चतुर दमनकारा एक मर्यादा पुरुषात्तम रूप उनका आर्य भावना व अधिक निकट था । इनरी रचना सुद्ध हय स रसिक भावना व अन्तगत नहीं आती । वास्तव म व तुलसी की परम्परा व कवि थ । उनका एक कवित्त हम उन्पत कर रह है

निजन निरप ही, कि मुबर खल्प ही

कि भूपन व रूप ही कि दानी महावान ही ?

प्राण व बचया दूध पूत व बसया

रोग सौग के मिटया किधी मानी महापान ही ?

विद्या के विचार ही कि अद्वैत अवतार ही  
 कि मुद्धता की मूर्ति ही कि सिद्धता की सान ही ?  
 जीवन क जाल ही कि कालहू के गाल ही  
 कि सनुन क साल ही कि मित्रण के प्राण ही ?

इसी प्रकार निम्नलिखित सबय म उ हान प्रभु प्राप्ति म प्रेम का महस्व  
 बताया है

बाहू भयो दुहु लोचन भूपि क बठि रह्यो बर ध्यान लगायो ।  
 हात फिरयो लियो सात समुद्रन लोरु गयो परलोक गवायो ।  
 बामु कियो बिलियान सो बठि के ऐसिहि ऐस सु बस बितायो ।  
 साचु कहौ मुनि लहु सब जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभु पायो ।

रामप्रसाद वि दुकाचाय

आपका जन्म सन् १७६० म अवध प्रान्त क मन्दिहासद नामक स्थान  
 म एर कायकुञ्ज ब्राह्मण कुल म हुआ था । तत्कालीन स्थान क प्रारम्भ म हा य विरक्त  
 हाकर अयाध्यायन आय । कहत है कि एक बार जानकी नवमी क दिन सम्बत  
 १७८७ म स्वयं जानकी जान अपन हाथ स एनक तिनक लगा लिया था । मृत्यु  
 एनकी सम्बत १८६१ म माना जाता है । एनक नाम स शिक्षा पत्री श्री  
 गीता तात्पर्य निगम दा रचनाए कता जाती हैं । परंतु एनका महत्व कवि क  
 नात न हाकर भावना एव प्रभाव का दृष्टि स बहुत अधिक है । अपन समय क य  
 अत्यन्त प्रसिद्ध एव प्रभावशाली मत थ ।

मामा प्रयागवास

सायना एव निष्ठा की दृष्टि स एम युग क एक अत्य प्रसिद्ध महात्मा ना  
 गय है ।

१८वीं शती का निगु रामागोय ब्रजभाषा काव्य पृष्ठभूमि तथा  
 सनिप्त स्वरथा

निगु ना भक्ति-भाग प्र म प्रताक भावना का आधार पर विकसित हुआ  
 है । मत्तय साधारण मानवता का परम्परा एव अवनारवाट की अस्वादि क

कारण रागानुगा पद्धति का व्यवहार की आवश्यकता निगुण मागम नहीं था। राधा गोपी सदा नन्द मुवल या हनुमान अथवा वर्णपटल का भाव का बलना करके जमहा भाव या काय की याजना का स्वीकरण निगुणिया का पद्धति का अनुबन्ध नहीं था। इसी कारण उनका सार सम्प्राधन एक अभिव्यक्तियों सामाजिक सम्बन्ध का प्रतीका पर आधारित है। इस दृष्टि से वे सूफी गिद्वाना का अधिन निकट हैं। ईश्वर का नामासन इन जागान स्वामी पिता माना अथवा पति का रूप में देना है। यह परम्परा १८ वा सता का निगुणिया कविया में पूरा तथा सुरक्षित रही है। यारी बुलना मनुकदाम मुत्तरनाम रज्जुर सभा कविया न भगवान का स्वरूप का भावित किया है।

उस समय का निगुण्यमार्गी कविया में एक समवय का वक्ति और भी मिलती है। सगुणापासना एक अवतार तत्त्व का एका तीसरा विराधनम रहा है जसा कि हम कबीर में प्राप्त होता है। चरणदास एक प्राणनाथ का वारमता यह कहना ही कठिन है कि वे सगुणापासक थे या निगुणापासक।

निगुण्यो कविया का वारम एक तथ्य और भी दृष्ट्य है कि वे याता पूर्वीय प्रत्याम कीर्तित रहे या फिर राजस्थान उनका मुख्य केंद्र रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि गुद्ध ब्रजभाषा में काय रचना निगुण्यमार्गीया द्वारा कम हो गई है। पूर्वीय प्रत्याम का भाषा याता भाजपुरी रही या फिर ब्रजभाषा में भी पूर्वीय प्रयोग का स्पष्ट उपयोग किया गया। राजस्थान में राजस्थानी प्राणनाथ का भाव अत्यधिक मिश्रण ब्रजभाषा में किया गया। रज्जुरदास जस कविया में यह राजस्थानी छाया अच्छी तरह देना जा सकता है। गुद्धदास का भाषा अत्यंत स्वच्छ एक प्रवाहनीय ब्रजभाषा बना रहा है। संभवतः मता में सर्वाधिक अधान व्यक्ति श्री कही थे। प्राणनाथ जस मता जहाँ तथ्य का धर्म में समवयवादी हैं वही भाषा में भा तरह-तरह का मिश्रण उद्दान किया है। गुजराता मिथा फारमी तुर्की ब्रजभाषा बुद्धि राजस्थानी प्राणनाथ भाषा का सार उन्नत उपनयन हुआ जाता है। कभी कभी ता उगवा समभना भा कठिन हा जाता है।

उस युग की एक अन्य विशेषता है कि सान मन अनन छोट छोट मन्त्र दाना में बटना है। यह रिघटन का प्रवृत्ति था और एक प्रकार का धार्मिक पुनरुत्थान भी। इस प्रवृत्ति का समानांतर स्थितियों राजनतिक जावन में भी देखी जा सकती है।

### दादूपय का कवि

राजब जी—मन सम्प्राया में कबीर-यय का सर्वाधिक महत्वपूर्ण सम्प्राया में एक दादूपय है। दादू का व्यक्तित्व एक महत्व सगभग कबार

जसा ही ह। दादू के सक्ती गिप्य थे उनमें से तान—रज्जव जी सुन्दरदास एव जगन्नाथ प्रमुख है। उनमें से प्रथम दा का वायकाल विष्णु की १८ वां शताब्दी तक रहा ह।

रज्जव जी का जन्म सागानर के एक प्रतिष्ठित पठान वंश में स १६२४ में हुआ था। रज्जव अती लाम इनका वाम्बतविक नाम था। रज्जव जी के विरक्त हो जान के बाद में एक बड़ा विचित्र किंवदन्ता है। उस किंवदन्ता के अनुसार २० वर्ष का वय के तरुण रज्जव अली खा अपना विवाह करके वर वंश में सागानर से आकर जा रहा था। रास्ते में दादू जी से साक्षात्कार हो गया। दादू ने उनके मन का इतना प्रभावित किया कि तत्काल विवाह का विचार छोड़ कर उन्होंने उनका गिप्यत्व ग्रहण कर लिया तथा दादू के साथ ही रहने लगे। रज्जव जी के बाद में यह भी प्रसिद्ध है कि आजीवन के दूल्हे के वंश में ही रहे। वे कहा करते थे कि जिस वंश में मृत्यु के दणन कराकर उचित राह पर लगा लिया उस छात्रना उचित नहीं है। मध्यकाल के सभी वाक्यों में हम गुरु के प्रति आदर का भाव प्राप्त होता है परन्तु रज्जव जी जसा निष्ठा के दणन कम ही हात हैं। दादू दणन जा की मृत्यु का रह बहूत कष्ट हुआ था। उनकी मृत्यु के पश्चात् कहा हुआ रज्जव का यह वाक्य प्रसिद्ध है

दोन रयाल जिनो देख दोना दादू सो दीलत हाय सो लीनी ।  
रोय अनोतन सो जु कियो हरि रोजी ज रकनि की जग दीनी ।<sup>१</sup>

रज्जव जी का बाना पान सागर में स बम्बई में सन्वत् १६७१ में प्रकाशित हो चुका है। उसमें १८४ अंशों में विभाजित उनका ५४२८ सातियाँ हैं।<sup>१</sup> तथा २१८ पं ११६ सवय में भरिलेन ८६ छापय तथा कुछ शिभगा छाप का पुस्तक कविता में मशहूर हैं। कुछ प्रथम छापी छापी रचनाएँ भी उस प्रथम प्रकाशित हैं। उस बाना के अतिरिक्त उपाध दा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रथा का सम्पादन भी किया है। दादूजी की रचनाओं का सक्ती में सम्पादन धगबधू के नाम से एक विभिन्न महात्माओं का रचनाओं का सक्ती में सवगी के नाम से रज्जव ने किया है। सवगी अधिक महत्त्वपूर्ण प्रथम है। उस कारण उस समय के मना के वाणिज्य का सामाजिक रूप से प्रभाव पड़ा जाता रज्जव जी का उपाधना बाना विचारधारा भी प्रकाशित है।

रज्जव जी के साहित्यिक महत्त्व का आकलन करने हुए आचार्य श्याम प्रसाद त्रिपाठी ने कहा है— रज्जवजीय निश्चय ही दादू के गिप्या में सवय

१ परमाराम चतुर्वेदी उत्तरा भारत की सन्-परम्परा पृ ४२५।

२ वहा सन्त वाक्य पृ ३० पर दो गर्भ मन्था के आधार पर।

अधिक कवित्व लेकर उत्पन्न हुए थे। उनका भाषा म राजस्थानापन और मुमन मानापन अधिक है तथा कथित गान्ध्याय काव्य गुण का मम अभाव है फिर भी एक आश्चर्यजनक विचार प्रौढ़ता वगवत्ता और स्वाभाविकता है। और नाग जिसका कर्तृपत्ता म कहते ह रज्जव उम तत्व का मज्ज हा छाट छाट दा म कह जाते हैं। इनक वक्त्रव्य विषय भी वहा है जा साधारणत निगुण भावा पन साधकों क हात है पर माफ और सहज अधिक ।<sup>१</sup> एमा उगता है कि रज्जव जी कया-खाना का गली क ममन थ वसी शरण हृष्टान्ता क बडे भात्मिक प्रयागा गारा एक प्रकार का नाटकीयता की स्थापना उहनि अपन काव्य म की है।

धकित होत पाका मुमन ज्यू कण हांडी माहि ।

पाका डूब ऊधल निहचल बठ नाहि ।

मुमनमान हान क कारण मम्भवन क सूफी प्रभाव का अधिक स्वाभा विन रूप म ग्रहण कर सत थ, एमा कारण उनक काव्य म प्रेम का वग अनि रिक्त रूप म तीव्र एव प्रवाहगील है। बिरहिणा की मर्मन्तक बदना का विविध करन वाना पत्ताच हम उद्ध त कर गक हैं—भाषा का राजस्थाना रग भी उत्तराय है

भारो मदिर मूनो राम बिन बिरहिण नौद न आव रे ।  
पर उपगारी नर मित्त, काइ गोबिंद आन मिलाव रे ।  
घती बिरहिण चित न भाज अविनासी नहि पाव रे ।  
बहु विषोग जाग निमवासर बिरहा बहून सनाव रे ।  
बिरह बिधो बिरहिणी बोधी घर बन कछु न मुहावे रे ।  
दह दिमि ब लि भयो चित चपरित यौन दसा बरसाव रे ।  
ऐमा सोच पइया मन माहो समभि समभि धू घाव रे ।  
बिरहवान घटि अतर लाग्या घायल यू घुमाव रे ।  
बिरह अगिनि तनपिजर दीनां पिब डू कौन मुनाव रे ।  
अन रज्जव जगदास मिल बिन पल पल बय्य बिहाव रे ।

बिरह क मन्स का प्रतिपादन करन वासा निम्ननिमित्त दाहा तो ठर मूफा म्भावना एव भावना का हो व्यञ्जित करता है

१ हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य पृ० १७७।

२ सत काव्य पृ० १२२।

३ कल्याण सतवाणी अ ४, पृ० २५७।

दरद नहीं दीदार का, तालिब नाही जीव ।  
रज्जब विरह विपोग बिन कहा मिल सो पोव ।

रज्जब का मृत्यु सम्भवत १७४६ म मानी जाती है इस प्रकार उह १२२ वष की लम्बा आयु मित्त थी ।

### सुन्दरदास

आचार्य राम चन्द्र गुक्कन ने अपने साहित्य का इतिहास म सुन्दरदास का महत्त्व का स्थापन करते हुए कहा है निगुणपथिया म यही एम व्यक्ति हुए हैं जिह समुचित शिक्षा मिली थी और जा काव्य कला की रीति आदि से परिचित थे । अत इनका साहित्य रचना साहित्यिक और सरस है । भाषा भी काव्य की मजी हुई ब्रजभाषा है । उहान मिद्धहस्त कविया का समान बहुत से कविता और सबय रच है । मत ता यथ ही पर कवि भी थे इससे समाज की रीति नानि और व्यवहार आदि पर भी पूरी दृष्टि रखन थे ।<sup>१</sup>

एम महत्त्वपूर्ण व्यक्ति सुन्दरदास का जन्म वरम कुल म जयपुर राज्या नगत चौसा नामक कस्बे म म० १६५३ चम्र गुक्कन का दृष्टा था । ६ वष का आयु म ही इनका पिता न दादी जा क चरणा म डाक्टर इनको दीक्षा दिला था । उसके बाद से अधिकांगत वे दादा जी के पास हा रहन लग । जग जीवन जा इनका अच्छे गुरुभाइ थे और वे स्नेहपूर्ण ढंग से सम्प्रदाय की साधना का मम उनका सम्मुख उत्थाटित करन चरते थे । दादू का मृत्यु के पश्चात वे जगजीवन जा के प्रपत्नी म सवन १६६२ म त्रिचाध्ययन के लिए काशी आय । काशी म त्रिविध गायत्री का गभार अध्ययन करके म० १६८२ म वे जतहपुर (जन्तावाटा) चले आय । काशी म चले के बाद उहान जगमग १२ वष यागाभ्याम किया तथा फिर तमाम दंग का पयत्न कर अनुभव प्राप्त करते रहे । यागाभ्याम एव दगात्न तेन जाना के अनुभव उनके काय म म उपन ध हा जान है । धूमधाम कर के फिर मागतन (राज्य जा ना जमनूमि) चले आय । रज्जब जा के प्रति उनके मन म अत्यधिक स्नेह एव आदर का भाव था । कया जाता है कि सवन १७८६ म रज्जब जा का मृत्यु का वरना म हा इहान अपने प्राण त्याग गि । म प्रकार म १७८६ म उनका ना मृत्यु सबूत है ।

सुन्दरदास द्वारा रचित साहित्य का परिमाण विमान है । दा भागाम अध्ययन मुहविपुल ढंग से सम्पादि करके उनका रचनाप्रा का गप्रह सुन्दर प्रयावला के नाम म पुराहित हरि नारायण नामा न प्रकाशित कराया है । उनम

सकलित छाट बने प्रथा की सख्या ४२ है परन्तु जान समुद्र एव सुन्दर विलास  
 हा आकार एव महत्त्व दाना हा म बडे है। जान समुद्र म पांच उल्लास या  
 अध्याय है जिनम प्रमग गुरु नवधा भक्ति अष्टाग याग मश्वर सारथ मत एव  
 अद्वैत ब्रह्म जान का पाण्डित्यपूर्ण निरूपण किया गया है। प्रथम पूर्ण रूपण  
 सिद्धांतपरक कहा जा सकता है। सुन्दर विलास म सता द्वारा निरूपित विषया  
 एव आत्मानुभूतिया का ललित एव वाचात्मक शला म वणन किया गया है।  
 एम प्रथम का मवया भी कहा गया है। इसम कुल १६३ छन्द हैं। ५० परगुराम  
 चतुर्वेदी जी ने उनके सम्बन्ध म रज्जव जी स तुलना करत हुए एक टिप्पणी दा  
 है। उसम कहा है - अपनी विद्वत्ता म य अपन गुरुभाई रज्जव जा स भी बड़े चड  
 थ और माहित्यिक प्रवीणता भा एनम उनम अधिक थी। पण्डित हजारी प्रसाद  
 द्विवेदी क अनुमार जय कभा वदांत का तत्त्वज्ञान छाड कर य अथ विषया पर  
 लिखत थ तब निस्सन्देह रचना उत्तम काटि की जाती थी।

सुन्दरनाम की इन दार्शनिक यागपरक रचनाओं स हमार आलाच्य  
 विषय का सम्यक नहीं है। प्रस्तुत प्रसंग म य अनावयक ही कही जायगा।  
 परन्तु जहाँ पर प्रम और भक्ति की अनुभूतिप्रवण कलात्मक रचनाएँ उठाने की  
 हैं व हमारे लिय अवश्य ह। प्रामाणिक एव विवेचनीय हैं। नीचे हम उनकी एमी  
 हा कतिपय रचनाएँ उद्धृत कर रहे हैं। निम्न दाह म प्रम एव अनन्यता व साध  
 हो व्याकुलता का भा अनुभूति छिपी हुई है

प्रोतम मरा एक तू सुन्दर और न कोइ ।  
 गुप्त भया किस कारज काहि न परगट होइ ।

निम्नांकित सबम म उद्धान प्रम का गरीर एव तिस्रवृत्तिया पर एन  
 यासा प्रभाव स्पष्ट किया है। एम पराभक्ति की अवस्था म उनक अनुसार नवधा  
 भक्ति म भक्ति करन का भा अवधान शय नहीं रहना। प्रमाभक्ति का यह परि  
 भाषा भा है और उसका व्यावहारिक रूप भा

प्रम लण्यो परमस्वर सों तब भूलि गय सब ही घरबारा ।  
 ज्यो उनमत्त फिर जित ही तित नकु रहो न सरीर सभारा ।  
 सात उसात उठ सब रोम चस ह्य नीर अलक्षित धारत ।  
 सुन्दर कीन कर नवधा विधि छाडि परयो रस पी मनवारत ।<sup>१</sup>

१ सन्त वाच्य पृ० १८५ ।

२ हिन्दो साहित्य पृ० १४६ ।

३ जान समुद्र भक्ति निरूपण, १८ ।

न लाज कानि लोक को न धव को कह्यो कर ।  
न सक भूत प्रत को न दव यक्ष ते डरे ।  
सुने न कीन और की दसे म और इच्छता ।  
कह न कहू और यात भक्ति प्र म लच्छना ।<sup>१</sup>

गापी भाव और दम प्रेमा भक्ति का समानता और एकता दिखान हुए भी उन्हान कहा है कि

प्रम अधीनो क्यो डोल क्यो की क्यो ही बानी बोल ।  
जसे गोपी भूली दहा ता की चाह जासो नेहा ।<sup>२</sup>

उनक समस्त पाण्डित्य कलात्मकता काम्कारिता एवं प्रापक अनुभव का स्वाकार करत हुए भी हम यह कथन म सकाच नग है कि आत्मानुभूति की जिम तीव्रता व दगन हम राजव जा म हान है उसका मुदग्दास म अपेक्षाकृत अभाव है । परन्तु फिर भी व हमार आलाभ्य युग व कुछ अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं श्रेष्ठ कविया म स हैं ।

### सत्तनामी सम्प्रदाय क कवि

#### जगजीवन दास

सत्तनामी सम्प्रदाय का काटवा गाया क पुन मगठनवर्ती जगजावन दाम जा का जन्म म० १७२७ माता जाता है तथा इन्का दगान म० १८१८ म म्मा था । व बाराबका जिल व सरदहा नामक गाव व रहन वाल थ जा काटवा स ६ मात दूर है । जगजावन दाम जा यावतजीवन शृङ्ख्यो म हा र । शृङ्ख्यो परमात्मा का अतिकतर सत्त या सत्य क्य है उसा क प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शन का है । गरगागनि एवं प्रभु-कृपा का दम सम्प्रदाय म बहुत अधिक महत्व है । उनक काव्य की भाषा यद्यपि ध्रुवधा है पर कही-नग ब्रज क भी प्रयोग उनम उपनय ग जात हैं । यत्र-नत्र उनम सूरा भावना की भलक भी मिल जाता ह । उनका एक पं दम प्रकार है

पहिहै पीय पुकारेउ पछिन आग रोय ।  
सोनि लोक फिरि आयउ दिन दल सख्यो न कोय ।  
जोगिन ह व जग दूड़उ पहिरयो कु डल कान ।  
पिय को अत न पायउ लाजन जनम मिरान ।

१ जान सम भक्ति निरूपण ८ ।

२ वहा वहा ५१ ।



जगजीवन नाम के रचे हुए सात ग्रंथ कह जाते हैं जिनमें से १७ भाग प्रकाशित हो चुका है। अन्य ग्रंथों का नाम है—प्रथम ग्रंथ ज्ञान प्रकाश ग्राम पद्धति भट्टा प्रलय प्रमथ और ग्रंथ विनाग।

### दूलनदास

सत्तनामा सम्प्रदाय की काठवा गाँव के पुन मगठनवर्ती जगजीवन माहब के विप्य दूलनदान का जन्म नगनऊ जिले के समसा ग्राम में स० १७१७ माना जाता है। मृत्यु आपकी सन् १८२५ में हुई थी। यह एक जमादार कुटुम्ब में उत्पन्न हुए थे और जीवन का अधिकांश भाग गृहस्थ रूप में जमींदारों की व्यवस्था करते हुए बिताते रहे। हम साधारण जीवन के बावजूद उन्होंने अपना जीवन बड़े साधन में बिताया एक आध्यात्मिक चिंतन में सत्त्व लीन रहे। जीवन के अंतिम भाग में अपना साधनात्मक जीवन रायबरली जिले में एक गाँव में बस कर व्यतीत करते रहे।

अथर्वी भाषी प्रदेश में उत्पन्न दूलननाम के लिए यह स्वाभाविक ही था कि वे अथर्वी में काव्य रचना करते। फिर भी ब्रजभाषा में उनका कुछ-न कुछ पराक्रम प्राप्त हो जाना है यद्यपि इनमें भी पूर्वोक्त प्रयोगों की प्रचुरता रहती है। मन्त दूलनदास के सम्बन्ध में एक बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि वे निगुणमार्गी सत्तनामा सम्प्रदाय के अनुयायी थे पर उनका अभिव्यक्तियों सगुण भाव के रंग में पूरी तरह रंगा हुई हैं। उन्होंने सगुण नीला के अनेक प्रसंगों का बहुधा उल्लेख किया है। परन्तु वे उन्नी घटनाओं या जालाओं की ओर धारुष्ट हुए हैं जो प्रभु के रक्षण, परलगात प्रतिपालक दीनकधु रूप का स्पष्ट करते हैं। गजद्र माक्ष दीपद्री लाज रक्षा आदि प्रसंगों का उन्होंने कृतन एक धातुर भाव से उल्लेख किया है। इस प्रकार सगुण मनवाण का उन पर प्रभाव पड़ा रहा था। उनका गजद्र माक्ष का पर इस प्रकार है

जब गज अरुप नाम गृहराषो ।

जब लगी आव दूमर अछर, तब लगी आपुहि धायो ।

पाय पिपाद में बदनामय गरडासन बिसराय ।

घाइ गजद गोद प्रभु लीहो आपनि भक्ति दिङाय ।<sup>१</sup>

इस प्रकार उन्हें गज भाव का भक्त माना जा सकता है।

## शुक सम्प्रदाय क कथि

चरणदास

शुक सम्प्रदाय क प्रतिष्ठापक स्वामी श्यामचरण दास का प्रारम्भिक नाम रणजीत था। भाद्रपद शुक्ल तृतीया म० १७६० का उनका जन्म भागलपुर म हुआ था।<sup>१</sup> भागलपुर क गायक शुक शुक मुनि को य श्रमणा गुरु मानत थ तथा सरन माधुरी जी क अनुसार १६ वर्ष का अस्थाम ही उहाने गुरुशिक्षा ले ली थी। सभलत प्रारम्भ म व योग साधना म लग रह परन्तु उसम मन नही भरा और सम्वत १७६३ म श्रज चन श्राय यहाँ पर प्रमाभक्ति क गीतन जन ने उह मत्तुष्ट किया। एक स्थल पर उहाने लिखा है

चार बंद किये जास न अथ विचार विचार।

ता म निरुसी भवित ही रामनाम तत सार।

य बात सूचित कस्नी है कि उनका मन भक्ति म हा सत्तुष्टि प्राप्त कर सका था। यद्यपि इम सम्बन्ध म यह रहना कठिन है कि पढ़ने क भक्ति क माग म गय है या याग क। परन्तु तना निश्चित है कि उनकी रचनाश्रा म भक्ति याग ज्ञान का श्रमण गयाग है। भक्ति क इम क्षेत्र म भी उहाने विविध विचार शाराश्रा का समन्वय अपनी रचनाश्रा म किया है। पीढ़ चतुर्थ अध्याय म हम न मव वाता का विम्वन विवचन कर चुक है। साधनागत इन समन्वय क प्रतिरिक्त ननिक गुदता सन्तुष्टिकार श्रा का भी उह ने पयाप्त स्थान लिया है।

मन्त्र चरणदास क ग्रंथ का बार म कुश्र विवाह है। कुश्र नाग शुक १ १५ या १७ ग्रंथ मानत है। १५ श्रा का एक सग्रह ही वेकटर प्रस बम्ब म प्रकाशित हा चुका है। नन्दनऊ क नवनकिणार प्रम म शुक श्रा का मप्र भक्ति सागर क नाम म प्रकाशित हुआ है। उमम निम्नलिखित ग्रंथ सगृहीत हैं — श्रत्र चरित्र श्रमरनाक श्रमड धामवगन धम जगज ज्ञान स्वराज्य श्रष्टाग जाग पचापनिपट मन्त्र सागर भक्ति पत्थरथ बणन मन विरक्त करन सार गुत्वा ब्रह्म ज्ञान सागर भक्ति सागर। मन्त्र अनिरिक्त उन्मपुत्र क गरहयनी भडार पुम्नकातप म शुक श्रमनिम्नित श्रा का प्रामाणिक मानन उपनय है।<sup>१</sup>

१ भक्ति-सागर म सरममाधुरा द्वारा शणित चरणश्यामदास पृ० ६  
(नवनकिणार प्रम नन्दनऊ)।

२ डा० मानोलात्र मनारिया राजस्थान का पिणल साहित्य

इसम मगृहीत ग्रन्थ लगभग बड़ी है जो नवल किशोर प्रेस क मग्रह म हैं । अपन ग्रन्थ लेखन का रचना मग्रह सम्बत उहान एक स्थान पर सम्बत १७८१ बताया है । निगुण और मगुण भक्ति दीना का सूचित करने वाली हम वननी दा रचनाया का उद्धृत कर रहे हैं । प्रथम रचना निगुण प्रमप्रतीक भावधारा क अतगत परिगणनाय है

गदगद वाली कठ में आसू टपके नन ।  
 वह तो विरहन राम की तडफत हैदिन रन ।  
 हाय हाय हरि कब मिल छाती फाटी जाय ।  
 ऐसा दिन कब होयगा दरसन कर अधाय ।  
 पीव चही क मत चही वह तो पी की दास ।  
 पी के रगराती रहे जग सू होय उदास ।  
 आज्ञाकारी पीव की रहे पिया क सग ।  
 तन मन सों सेवा कर और न डूजो रग ।

चरणरास जी न राधा और कृष्ण की तथा कृष्ण और मापिया का अनेक लीलाया का गान किया है । राम-नृत्य म निरत राधाकृष्ण का यह चम्पि किगा भी युगलायामक क लिए स्पृहणीय हा सकता है

रास म निरत करत बनवारी ।  
 मदित मनोहर रग यदावत सग ययभानु दुलारी ।  
 और मकुट छवि गीग विराजत नाक मुलाक सुदारी  
 कर मरली कटि काछनि बाछ अलक धू धरवारी ।  
 राधा जी के गीग चित्रिका नीलाम्बर जरतारी ।  
 गाव सला न्याम न्याम सग नरनिगत रूप उजारी ।  
 तापिना तापिना धीन बज्रत पलापत्रताल बीन गति चारो ।  
 ठनन ठनन ठन नूपुर को धुनि नननभनन ननवारी ।  
 चरणरास गुणदेव दया सू पापो दरा मुरारी ।<sup>१</sup>

चरणरास क अनुगीनन स एगा गान हाता है कि क बन्धुन और बन्धु पटिन ध्यति थ । उनक काध्य म मद्यपि कृत्रिम धानकागिता का स्थान नहीं है परन्तु फिर भी अभिव्यजनागत चमत्कारा का उनम नितान्त अभाव नन है । या

सीधी सादी सरन गली म उहान अपन कथय का उपस्थित किया है। ब्रज क अतिरिक्त उनकी भाषा म राजस्थानी पंजाबी एव रेस्ता क भी प्रयोग है। प्रम और भक्ति क प्रसंगा म उनकी वाणी म एक अतिरिक्त भास्वरना आ जाती है।

### सहजो बाई

मन्जा बाई महात्मा चरणदाम की गिण्या थी तथा सन १८०० म वे वतमान था।<sup>१</sup> उनका रचनाकाल १८ वीं गती का अन्तिम भाग एव १९ वीं गती का प्रथम चरण माना जा सकता है। साधना एव भावात्मकता की दृष्टि म सहजा बाई क काव्य म निष्णा की एक दीप्ति प्राप्ति हाती है। अपन गुरु क प्रति उनके मन म अगाध निष्ठा था

निश्च यह मन डूबता मोह लोभ की धार ।  
चरनदास सतगुरु मिला सहजो लाई उबार ।<sup>१</sup>

सहजा बाई क काव्य म साधनानुभूति की तीव्रता और निष्ठा क साथ ही जीवन क अनुभव एव का य का चामत्कारिकता भी सजायी हुई है। उन्होंने साक्षात्क कष्टा क प्रभावगता चित्र उपस्थित करत हुय प्रभु भक्ति का उपदेश दिया है। यह अंग कवयित्रा की काव्य कुशलता एव कल्पनाशक्ति का प्रमाण है। या ता समार का असारता लिखाकर मभा सता न आध्यात्मिक पथ की आर मन का मार्गना चाहा है परन्तु उम अमारता का काव्य का परिपाटी पर जा बिम्बगहण हांना चाणि उम करान म या ता अस्विकार सत असफर हुए हैं अथवा उनकी प्रवृत्ति उम आर नहा रहा है। परन्तु मन्जाबाई न मनुष्य क जीवन म नकर मत्तु तक क अनक कष्टा क मार्मिक चित्र उपस्थित किय हैं। अथ सम्बन्धी कष्ट का एक चित्र लिख

द्रव्यहीन भटकत फिर -या सरांप को स्वान ।  
भिक्षादि दियो जेहि घर गया सहजो रह्यो न मान ।

सहजाबाई न प्रम माग क ना अनक मार्मिक वगन किय हैं —

१ सहजाबाई का बाना बल्बडिपर प्रम प्रयाग म सहजाबाई का जीवन चरित्र ।

२ वहा पृ १ ।

सहजाबाई का बानी पृ० २६ दाहा स० ७८ ।

प्रेम दीवाने जो भये प्रीतम के रग भाहिं ।  
 सहजो मुधि बुधि सब गई तन पी सोधी नाहिं ।  
 प्रेम दीवाने जो भय पलटि गयो सब रूप ।  
 सहजो दृष्टि न आवई कहा रक कहा भूप ।  
 प्रेम दीवाने जो भये कह बहकते बन ।  
 सहजो मुख हासी छूट कबहु टपक नन ।<sup>१</sup>

### दया बाई

दयाबाई सहजा बाई की गुरु वहिन तथा महात्मा चरणरस की गिप्या थी। इसीलिए इनका भी समय १८ वा गाना की का अंतिम भाग माना जा सकता है। दयाबाई म लगभग वही प्रवृत्तियाँ हम मिलती हैं जिनकी चर्चा हम सहजोबाई के प्रसंग में कर चुके हैं। बल्कि उनमें स्त्रियाँचित भावावेग का प्राबल्य अधिक है। उनका कुछ उदाहरण आदान राविया एव मोरा न समकथा रमे जा सकते हैं। कतिपय उदाहरण निम्नलिखित हैं

जनम जनम के बीछुरे हरि । अब रह्यो न जाय ।  
 क्यों मन कू दुख देत हो बिरह तपाय तपाय ।  
 काग उड़ावत धक कर नन निहारत बाट ।  
 प्रम सिध म परयो मन, ना निवसन को घाट ।  
 बीरी हूँ व चितवत फिर हरि आव केहि ओर ।  
 छिन उठ छिन गिरि परे राम दली मन मोर ॥<sup>१</sup>

दयाबाई के काव्य में सहजता एवं स्वाभाविकता का गुण बड़ी मात्रा में है। विद्वत्ता एवं व्यापक जावनानुभवा के स्थान पर सहज पारिवारिक चित्रा के माध्यम से उदात्त अपनी बात बही है। उदात्त भगवान् शीर भक्त के मध्य माना एवं पुत्र का संबंध भी उपमान के रूप में उपस्थित किया है

नहिं सजम नहिं साधना नहिं तीरथ छत दान ।  
 मात भरोसे रहत हूँ अर्थो बालक नादान ।  
 सात चूक गुन से पर तो कुछ तजि नहिं देह ।  
 पोय छुबब स गोद में दिन दिन दूनों नेह ।<sup>१</sup>

१ सहजोबाई की बागी पृ० ६ दोहा सं० २४४ ।

२ दयाबाई कात्यायन सतवाणी अंक पृ० ७१ ।

३ वही वही पृ० ७१ ।

### बावरी पय क कवि

#### यारी साहब

बावरी मम्प्रदाय के अनुयायी यारी साहब का पूरा नाम यार मुम्भदा था। अपने सामारिक जीवन में वे सभ्यता के अन्तर्गत थे तथा उस काल का छात्रकाल उन्होंने फकीराना के अन्तर्गत ही पारंपरिक चतुर्वेदी का अनुमान ही कि वे प्रारंभ में सूफी थे परन्तु बाद में बावरी पय के बावरी साहब के सम्पर्क में आने पर मत में परिवर्तन हुआ। यारी साहब की एक रचना रत्नावली नाम से बेनबडियर प्रेम से प्रकाशित हुई चुकी है। उनके सम्पर्क के अनुमान से १७२५ से १७८० के बीच बतमान रहें होंगे परन्तु परंपरागत जी का अनुमान है कि अठारहवीं शताब्दी के मध्य भाग में उनका स्वर्गवास हुआ होगा। उनकी समाधि दिल्ली नगर में अब भी बतमान है।

यारी साहब के काव्य के बारे में अपना मत प्रकट करने हुए परंपरागत चतुर्वेदी ने कहा है कि उनकी पंक्तियों में तत्त्वज्ञान का एक निरंतर धारा के भावविशेष रूप में प्रतिबिम्बित होना और अत्यंत ही गहरा अर्थमान होना है कि ये मनुष्य की ऊँचे भाव स्तर पर रचना करते थे। यारी साहब को कि तम बुद्धि के भी निरंतर सम्पर्क में रह चुके थे अतएव उनका काव्य में प्रेम का एक मार्मिक तीव्र प्राण होता है। यह हम पहले भी कह चुके हैं कि निरनुगुणिया एव सूफिया की प्रेम पद्धति अत्यंत ही गहरी होती है। कश्मीर का आचरण हटा देने के बाद अत्यंत प्रेममानभूति का दावा में अत्यंत रहना है। यारी साहब के निम्न पद्य में हम प्रेम की यही मार्मिकता मितना है। प्रथम छंद विरहिणी आत्मा का उद्बोधन है एव अन्त में प्रेममानभूति में पया आत्मा का अभिवादन उत्तम है।

विरहिणी मन्दिर दियना धार ।

निन बाती बिन तेल जगति सों बिन दीपक उजियार ।

प्राण प्रिया मेरे घर आय्या रचि पवि सज सवार ।

सुखमन सज परमतन रहिया पिय निरगन निरवार ।

गात्रहु रा मिलि आनद मगल यारी मिल्य धार ।

— रत्नावली गीत १०१

हो तो लती पिया सग होरो ।  
 दरस परस पतिबरता पियाकी छवि निरपत भई बीरो ।  
 सोरह फला सपूरन देखी रवि ससि मे इक ठीरो ।  
 जब त हृष्टि परो अविनासी लागो रूप ठगोरो ।  
 रसना रटत रहत निसिबासर मन सगो यहि ठीरो ।  
 बह पारो भवती कर हरि की कोई कहै सो कहो रो ।

—रत्नावला गान २ ।

### काव्यदास

यारी माहव क पाँच प्रमुख निष्पत्ति म एक काव्यदास थे । उनकी एक छाटा सी पुस्तिका प्रमा घूट क नाम म प्रकाशित हा चुकी ह । एम पुस्तक की भूमिका म १७/० स १८२५ क मध्य म स्वाकार किया गया ह ।<sup>१</sup> परन्तु यदि परगुराम चतुर्वेदी का यह अनुमान ठाक ह कि यारा माहव का रचना काल १८ वीं शताब्दी का पूर्वार्ध या ता फिर काव्यदास का समय अत्रिक स अधिक १८ वां शताब्दी का उत्तरार्ध माना जा सकता ह । प्रम एक पति-पत्नी क प्रताप का प्रयाग काव्यदास जा न भी किया ह

अविनासी डूल्ह बने मन मोहो जा की निगम बताव नेन ।  
 निरकार निरअक निरजन निर्विकार निरसेत ।  
 अगद अजोनि भवन भरि पायो सतगुरु क उपदेश ।

मारवाडा राजस्थाना गान क प्रयाग क समेत कुछ पत्तियाँ इम प्रकार हैं

पिय ध्यारे रूप भलाना हो ।  
 प्रम ठगोरो मन रह्यो बिन दाम बिकानी हो ।  
 नखर कमन रस बांधिया मुग स्वाद बलानी हो ।  
 दोषक मान पनग सों मिति जोनि ममानी हो ।<sup>२</sup>

### बुल्ला (बुल्ला) साहब

यारा माहव क एक अन्य प्रमुख निष्पत्ति बुल्ला माहव थे । इन्होंने बाकरा पप का प्रचार पूर्वी क्षेत्र में किया था । गाजीपुर जिले म मुरकुडा ग्राम इनका मूल काल था । इनका यार में प्रसिद्ध है कि वे कुनगा या कुनगा जाति क थे एक

१ अमी घूट (बलवद्विपर प्रस प्रयाग) जीवनचरित्र पृ० ४ ।

२ वही पृ० ४ ।

३ वही ६ ।

यारा साहब क सम्पक म आकर बराम्य क क्षत्र म आ गय य तथा गीघ्र ही पहुँचे हुए सता म उनकी गिनती होन लगी थी । परगुराम चुनवेंग क अनुसार उनका जन्म मवत १६८६ म हुआ था तथा मृत्यु १७६६ म । बल्ला साहब की रचना गानार क नाम स बेलवडियर प्रस प्रयाग सं प्रकाशित हुई है । इनकी रचनाओं म भी अपन गुण क ही ममान प्रम प्रताक प्रधान भक्ति भावना का प्रकाशन हुआ है । नीचे जा पद हम उक्त कर रत हैं उमम म यति गू य भवन जस कुछ गान निकाल लिये जाय ता यह जना कठिन न जायगा कि यह किसी गोपी का वचन है अथवा निगुण मार्गी भक्त का उगार । पर इस प्रकार है

आली आज कि रन प्रीति मन भावे ।

गाय बजावत हसत हसावत सब रस लेय मनावे ।

जन बुला हरि चरन मनाथ निरखि मुरति गति आपु में पावे ।

—गानार पृ० १५ ।

हरि हम देख्यो नननि बीच तहा बसत धमारि बीच ।

आदि अत मधि बयो बनाय निरगन सरगुन दोनो भाय ।

घोहेथ तिह को लियो लगाय अनबूभो रहिगो मुह बाय ।

मुन भवन मन रह्यो समाय तह अठत लहरि अन त आय ।

जगमग जगमग है अजीर जनबु ता है सबक तीर ।

गानार पृ १८ ।

आप्टर चौसठ घड़ी भरौ पियाता प्रम ।<sup>१</sup>

बल्ला कहे विचारि क इहे हमारो नेम ।

या अपन प्रियतम का ज्ञान निय एत रम तथा सबगुणमपन बनाया भा है ।

ना वह दूट ना वह फूट ना कबहीं कुम्टिनाय ।<sup>१</sup>

सबकला गण आगरो भोप बरनि न जाय ।

(तुलनाय किनार कृष्ण स ।)

गुलान साहब

बूला साहब और गुलान साहब क मध्य बला विचित्र सम्बध रहा है । कहन है कि अपन लौकिक सामाजिक जीवन म गुलान साहब मानिस

१ बल्ला साहब का गानार साह्यो २ पृ० १ ।

२ वही साह्यो पृ १ ।



ये और बूना साहब (बुलाकीराम) नीक । परंतु जब बुलाका राम सत मत म दाक्षित हाकर बूना साहब बन गये तब गुलाल साहब न भा उनसे सत मत का दाक्षा ली और वे उनक प्रमुख गिण्या म स गिन गये । गुलाल साहब का बाना भा वेलवडिपर प्रेस प्रदाग स प्रकाशित हो चुना है । 'सब अतिरिक्त जान गुण्टि और राम सहबनाम भी बहे जान है । गुलाब साहब का समय भी स० १७५० स लेकर स १८१७ तक माना जाता है । मुरकुडा की गद्दी पर वे स० १७६५ से लेकर स० १८१७ तक आसीन रहे ।' इनकी रचनाभा म भाषा का स्वर पूर्वी रचनाभा का है । परंतु ब्रजभाषा क प्रयोग भी उनकी रचनाभा म प्राप्त होन है । इनकी रचना एव प्रमाभक्ति का प्रकाशन एक पत्र नीचे उद्धृत कर र है

राम चरन चित अटको ।

सहज सरूप भेल जब की हेया प्र म लगन हिय लटको ।

सागि लगन हिय निरति निरलि छवि मुधि युधि बिसरो उर क नयन ।

उठत गुज नभ गरजि दसहुँ दिसि निरपट भरत रतन ।

भयो है मगन पूरन प्रभु पायो निमल निग नसत तटनी ।

बह गुलात मेरे वही लगन है उलटि गयो जसे नटनी ।'

भोजपुरी प्रवधो मिश्रित ब्रजभाषा म प्रमु अनुग्रह पर विश्वास प्रक करन वाली ये पत्तिया भी दृष्टव्य हैं

यह मन चंचल खोर प्रयाई

भक्ति न आयत एक किना ।

कृपा शिषी प्रभु दष्टि निहार या ।

सब बकि लागि रहल को ना ।'

१ परमराम अनुव बो उत्तरी भारत की सत परंपरा पृ० ४८८ ।

२ क दाण सतवाणी अ क पृ० २२२ ।

३ वही पृ० २२८ ।

## १८वीं शती के कतिपय अथ ब्रजभाषा काव्य की रचना करने वाले सत् कवि

### मलूकदास

मलूकदास का जन्म सन् १६२१ म इलाहाबाद के कान नामक ग्राम म हुआ था । जाति सये मन्त्री तथा पेश म पवमाया ये । प्रारम्भ स ही य कामन प्रकृति क थे । तथा बहूत कम आयु म हा य वराग्य की भार प्राकृतित हा गय थ । लडकपन स हा य साधुप्रा का स्वागत और सत्सग किया करत थ । उहान तार्या टन भी किया था तथा सबम अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि गुफ म दीशा नन क उपरान भी यावज्जीवन गृहस्थ हा बन रन । इनकी मत्यु सवत १७२६ म हुई थी । मलूकदास क रचे हुए नौ ग्र थ परगुराम चतर्वेदा न बताए है जिनक-नाम म प्रकार है ।

(१) नान बाघ (२) रतन खान (३) भक्त ब तावना (४) भक्त विरगावली (५) पुष्प विलास (६) रग रत्नग्र थ (७) गर प्रताप (८) अलख बाना (९) रामावतार लाला ।

मलूकदास का एक दाहा ससार म प्रसिद्ध है

अजगर कर न चाकरी पत्नी कर न काम ।  
दास मलूका कह गये सबके दाता राम ॥

परन्तु मलूकदास अलस्य का उपनाम कभी नहीं दना जानत । वास्तव म उह ई बर और उमक अस्मिन्व पर बहूत अधिक विन्वाग था । यद्यपि व मत मनानुदाया एव निगम उपामक थ परन्तु भावना क आवेग म निगु ए क व घना का त्याग कर एक परमावर स अचना निजा मन्त्राद्य स्थापित कर लन है । म्य एव विनय क भाव का व्यजना करन वाता उनका यम मवया म वान का स्पष्ट करन म समथ है

दोन दयाम मुना जबत तबत हिय म बुद्ध एमी बसा है ।  
तरो कहाय क जाऊ कहां मैं तरे हित का लव कमी है ।  
तरो एक भरोम मलूक की तरे समान न दूजो जती है ।  
एखा मुरारि पुकारि कहो अय मरो हसी नहि तेरो हमी है ।

१ उत्तरा भारत का मन परम्परा पृ । ८ ।

२ परगुराम चतुर्वेदा सत् काव्य पृ० ५८ ।

मनूकृतम पूर्वी प्रश्न में जन्म थ और क्या उनका कायम थ रहा । इस विषय उनका रचना पूर्वी भाषाया क अतन्त प्राती ह । ब्रजभाषा म उनका रचनाए कम हा प्राप्त जाता है । मनूकृतम न मनूकृतसा पथ का प्रवर्तन भी किया था ।

### सत तुलगादाम निरजनी

आपका समय मवत १७०० न आगपाय है । व राजस्थान न प्रसिद्ध निरजनी मप्रदाय क अनुवाया थ तथा एया प्रतीत हाता है कि दान तथा वदात का उनका अण्य अघ्ययन था । उनका रचनाया का एक बटा सप्रह डों व पत्रवाव क पाय था । मत तुलगादाम न नवधा मक्ति का बगन अपन सम्प्रदायानुसार किया है

तुलसी घट साधन भगति तरली सौची सोय ।

तिन प्र मापत पाया प्रम मुक्ति फल जोय ॥'

परन्तु मय विनाकर उनका रचनाया म भावात्मकता का अभाव मामूम पढता है । मिद्वान कयन बराग्य निगुण उपासना आदि का हा चला — इन अर्थिक का है । भाषा भी मधुर एवं सामत्वार्थिक न्था हा मकी है ।

### धरणीगत

बाया धरणादाम का रचनायान १७ वा गना का अन्तिम एक १८ वीं गनी का प्रथम चरण था । उनका जीवन मत्यु क मवना का प्रामाणिक विगय नती हा सता है पर उनका अर्थ प्रम प्रगाय म जान हाता है कि म० १७१ म उहाने बराग्य किया था । व धरणा क विमा वायम्य क पुथ थ । रामान्थ का विषय परवरा म विनागान्थ का उगान धरणा गुण वनाया है । धरणागम क धर्म प्रगाय प्रम प्रगाय तथा रत्तावला नामक तान अर्थ क जान हैं । इनम स प्रम प्रगाय अर्थ म एक प्रम काना ती हूइ है । मय कहाना का याजना य्थ वनाती है कि उन पर मूठा प्रभाव का स्पष्ट ध्याया था । इना अतिरिक्त नगुण अन्तर्धानिया म उगाने इन्वर क दयातु दानकभु वाव म्थ का प्रगा किया है । त्रिय एष त्रिया (परमात्मा एष आत्मा) न प्रताक क माय हा रक्षक प्रतिपादन आदि क्था का भी उहाने स्तावाग है

प्रभु जी अब जनि मोहि बिसारो ।

असरन सरन अघम जन तारन जुग जुग विरद तिहारो ।<sup>१</sup>

प्रम का प्रगाढ व्यजना उनक द्वारा रचित भाजपुरी क पदा म अधिक सुंदर हा सकी है । ब्रजभाषा का ता प्रयाग ही उनम अत्यंत विरल है ।

### प्रणामी सम्प्रदाय के कवि

#### प्राणनाथ

प्राणनाथ जी प्रणामी सम्प्रदाय क संस्थापक हैं । १८ वा गता की घम साधना क क्षत्र म उनका स्यान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है । उहान सबधम सम बय का अपूर्व प्रयास उस युग म किया था । कहते है कि औरगजब की घर्माघता से क्षुब्ध होकर क उस समभान दिल्ली भी गये थे परंतु वहा पर किसी न इनकी बात पर ध्यान नहा लिया । वहाँ से निराग होकर प्राणनाथ जी पन्ना चल गये एव छत्रगान का हिंदू राष्ट्रायता क पीछे भा उनका आशीवाद रहा है । इनक सम्प्रदाय का दो मुख्य गढ़िया म आज भी एक पन्ना म है और दूसरी सूरत म । १६७२ वि० क आमवास उनका जन्म हुआ था एव संवत् १७५१ म वे स्वगवासा हुए थे । प्राणनाथ जा क गुरु का नाम देवचन्द था और सम्भवत वे कृष्णोपासन हरिदासी (समा) सम्प्रदाय क गिष्य थे । राधाकृष्ण की युगत लीलाभा क गान की गिता उह मभवत अपन सत्ता भावापायक गुरु म ही मिली था । पर प्राणनाथ जा का मन्त्रप्राण व्यक्तित्व कवन गुरु द्वारा बनाई उपासना विधि म समा नहा सका । उह और भा जिनासा हूँ और अनन्य धमग्रथा का पारायण करके उहान अपन लिए जा राम्ना निवान किया है उसका समभना दूसरा क लिए भवने कठिन हा पर स्वयं प्राणनाथ जी अविचल विवाम क साथ अपन सामजस्यवाणी माग पर चलन रहे परन्तु कृष्ण प्रम माग का निरस्कार उहानि कभा नहा किया । उनक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ तारतम मागर (स्वरूप मागर) म चुनकर प्रम-पाठ नामक पुस्तक प्रकाशित का गई है । अधिकारिया क हाथ म हा वितरित की जान वाला म पुस्तक का एक प्रति हम प्राप्त हा गई है । उस गान हाता है कि राधाकृष्ण क लालागन का उहान बाप का भी प्रयाग्यान नहा किया । म वाली म दक्षिण निगुण अथवा अथ धम भावार्थन रचनाएँ प्रभुन<sup>१</sup> पर जाना मान का अर्थ ना कम नहा है ।

१ प० रा चतुर्वेदा सतकाम्य पृ० ५०० ।

प्रमसा (प्राणनाथ का बानी) प्रकाशक अमर दाम वनमापाशम नामः दार्जितिंग ।

प्राणनाथ जी की रचनामा क वार म कुछ भी कहना इस समय कठिन है । १४ स लकर २३ तक उनके ग्रंथ मान जाते हैं । (१) रामग्रंथ (२) प्रकाश ग्रंथ, (३) पटऋतु (४) कलम (५) सबध (६) किरतन (७) खुनास (८) खलवात (९) प्रकरण दलाही दुलहन (१०) सागर सिंगार (११) बडे सिंगार (१२) सिधि भाषा (१३) मारपत सागर (१४) क्यामत नामा । य १४ ग्रंथ ग्राउज न धपा मधुरा ममायस म पृ० २२१ पर गिनाए हैं । परगुराम चतुर्वेदी न (१) प्राट बना (२) ब्रह्म बना (३) बीस गिराही का बाव (४) बीस गिरोही की हकीकत (५) कीतन (६) प्रम पहली (७) तारतम्य (८) राज विनोद नामक इन ८ रचनामा का उल्लेख डा० बडधवाल क आघार पर किया है ।<sup>१</sup> चतुर्वेदी जी ने खोज रिपाट के आघार पर किराट चरितामत पदावली की भी चर्चा की है ।<sup>२</sup> परन्तु जमा कि हम ऊार कह चुक है कि कुलजम गरीफ इनका सबसे महत्वपूर्ण एक प्रामाणिक ग्रंथ है । डा० गरण बिहारी गोस्वामी न बताया है कि इस सम्प्रदाय क सत्वा भावापासक 'तारतम सागर' का उाका सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ मानत है ।<sup>३</sup>

इन रचनामा का न ता ठीक स प्रकाशन हुआ है एव न व्यवस्थित अध्ययन ही । मा उनक सबध म प्रामाणिक रूप स कुछ कहना कठिन है । प्राणनाथ जी म सम वय का एक विचित्र लिखडी रूप मिलता है । उहाने विविध धर्मों स प्रभाव ग्रहण किय पर लगता है कि सबका पचाकर एक व्यवस्थित साँच म ढाल नहा सक एव उसी प्रकार उहाने हिंदी (ब्रज लडी मारवाडी) उद्गु गुजराती फारमा मस्त्रुत सिधा माति विविध भाषामा का एक साथ प्रयोग किया है । इस कारण क दुम्ह ही नहा बन काव्य का रसात्मकता भा ग्या दी है । प्राणनाथ जी अपन युग के अत्यधिक महत्वपूर्ण एव विचित्र व्यक्ति हैं जो सबधम सम वय भी करत है एव छत्रसाल क हिंदू राष्ट्रवाक का भी गति दत हैं । तथा सत्ता भाव स (इद्रावता उनका सत्ता साधना का नाम था) दयाम यामा का लान सान की एकांतिक रहस्य साधना भा करत हैं । उनका ब्रजभाषा रचना का एक उाहरण निम्ननितित है

निसिबिन गहिरा प्र म सो, युगल स्वल्प क धरन ।

निमल मन होनायाही सो प्रीर धाम बरनन ॥

१ उत्तरी भारत की सत परम्परा पृ० ५२२ ।

२ वही, पृ० ५२ ।

३ डा० गरण बिहारी गोस्वामी हिंदी कृष्ण भक्ति काव्य म सत्ती नाव पृ० ३६० ।

प्रभु जी अब जनि मोहि बिसारो ।

असरन सरन अधम जन तारन जुग जुग विरद तिहारो ।<sup>१</sup>

प्रेम का प्रमाण व्यजना उनक द्वारा रचित भाजपुरा व पना म अविशुद्ध हा सकी है । ब्रजभाषा का ता प्रयाग ही उनम अत्यंत विरल है ।

### प्राणामी सम्प्रदाय के कवि

#### प्राणनाथ

प्राणनाथ जा प्राणामा सम्प्रदाय व सस्थापक हैं । १८ वां गता की घम साधना व क्षत्र म उनका स्थान अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है । उहान सवधम सम वय का अपूब प्रयास उस युग म किया था । कहते हैं कि श्रीरगजबकी धर्माचता स क्षुध हाकर व उम समभान दिल्ली भी गय थ परंतु वहाँ पर किसान इनकी बात पर ध्यान नही दिया । वहाँ स निराग हाकर प्राणनाथ जी पन्ना चल गय एव छत्रसाज का हिंदू राष्ट्रायता व पीछे भी उनका आगीवाज रहा है । इनक सम्प्रदाय का दा मुक्त गहिया म आज भी एक पना म है और दूसरा सूरत म । १६७२ वि० के आमपाम उनका जन्म हुआ था एव सम्बत १७५१ म व स्वगवामा दुए थ । प्राणनाथ जा व गुरु का नाम देवबज था और सम्भवन के कृष्णाभासक हरिदासा (सगा) सम्प्रदाय व गिण्य थ । राधाकृष्ण की युगत नीलाभा व गान का गिता उह मभवत अपन सखा भावापामव गुरु स हा मित्री था । पर प्राणनाथ जी का महाप्राण व्यक्तित्व कवन गुरु द्वारा बनाई उपामना विधि म समा नहा सका । उह और भा जिजासा हूँ और अनक घमग्रथा का पारायण करव उहाने अपन लिए जा रास्ता निकान लिया है उमका समभना दूसरा व लिए भन ग कतिन हा पर स्वय प्राणनाथ जा अविचन विश्वास व माय अपन सामजस्यवाणी भाग पर चलन रज परन्तु बध्गव प्रेम भाग का निरन्तर उहान कभा नहा किया । उनक अचल महत्त्वपूर्ण अर्थ तारतम सागर (स्वल्प सागर) स चुनकर प्रेम पाठ नामक पुस्तक प्रकाशित का गई है । अधिकारिया व हाय म हा कितरिन का जान वाला इम पुस्तक का एक प्रति हम प्राप्त हा गई है उमस पाल हाता है कि राधाकृष्ण व लालागान का उहान वाज की प्रयासवान नहा किया । उन वाणा म मदरि निगुण अथवा अर्थ घम भावारन रचनाए प्रभृत<sup>२</sup> पर लाला गान का अर्थ ना कम नहा है ।

१ प० रा० अनुबेदा सनकाय्य पृ ४०० ।

प्रमराज (प्राणनाथ का बानी) प्रकाशक अमर दाम बनमायादाम गमा राजतिग ।

प्राणनाय जा की रचनाप्रा क वार में कुछ भा कहना इस समय कठिन है । १४ स लकर २, तक उनके ग्रंथ मान जाते हैं । (१) रामग्रंथ (२) प्रकाश ग्रंथ (३) पटश्रुतु (४) कलम (५) सबध (६) निरतन (७) सुलास (८) गलवान (९) प्रकरण इत्यादी दुलहन (१०) सागर सिंगार, (११) बड़े सिंगार, (१२) सिधि भाषा (१३) मारफत सागर, (१४) क्यामत नामा । ये १४ ग्रंथ प्राञ्जल न ग्रंथ मधुरा ममायस म पृ० २२१ पर गिनाए हैं । परगुराम चतुर्वेदी न (१) प्रष्ट बानी (२) ब्रह्म बाना (३) बीस गिराहा का बाव (४) बास गिराहा का हकीकत (५) कीतन (६) प्रेम पहला, (७) तारतम्य (८) राज विनोद नामक इन ८ रचनाप्रा का उत्तम डा० बटवाल क आधार पर किया है । चतुर्वेदी जी न खाज रिपाट के आधार पर विराट चरितामत पनावली की भी चर्चा की है । परन्तु जमा निहम ऊपर कह चुके हैं कि 'कुनजम गरीफ इनका सबसे महत्वपूर्ण एवं प्रामाणिक ग्रंथ है । डा० गरण बिहारी गोस्वामी न बताया है कि इस मम्प्रणय के सन्धा भावावासक 'तारतम सागर' का उनका सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ मानते हैं ।'

इन रचनाप्रा का न ता ठीक स प्रकाशन हुआ है एवं न यवस्थित अध्ययन हा । प्रा उनक सबध में प्रामाणिक रूप में कुछ कन्ना कठिन है । प्राणनाय जा म सम वय का एक विचित्र लिचडी रूप मिलता है । उन्होंने विविध घमों स प्रभाव ग्रहण क्रिय पर लगता है कि सबका पचाकर एक व्यवस्थित सीब म डाल नहा सक एवं उमी प्रकार उहान हिन्ना (ब्रज लडा मारवाटी) उद्गु गुजराता फारमा ससृष्ट सिधा प्राप्ति विविध भाषाप्रा का एक साथ प्रयोग किया है । इस कारण व दुर्लभ हा नही वन काव्य का रसात्मकता भासा दा है । प्राणनाय जी अपन युग क ग्रंथधिक महत्वपूर्ण एवं विचित्र व्यक्ति हैं जा सबधम सम ग्रंथ भा करत हैं एवं छत्रसान क हिन्दू राष्ट्रवाज का भी गनि लन हैं । तथा सन्धा भाव स (इत्यावता उनका सन्धा साधना का नाम था) 'याम यामा का साट सडान की एकात्मिक रहस्य साधना भा करत हैं । उनका ब्रजभाषा रचना का एक उगाहरण निम्नलिखित है

निसिदिन गहिरा प्र म सों युगल स्वदय के धरन ।  
निमल मन होनायाही सा और धाम धरनन ॥

१ उत्तरी भारत की सत परम्परा पृ० ५ ।

२ वही पृ० ५ २ ।

३ डा० गरण बिहारी गोस्वामी हिन्दी कृष्ण नखन काव्य म सखी भाग पृ० २६० ।

प्राणनाथ जी की रचना का एक अर्थ उदाहरण है

यह सब इच्छा सो जो मगाव, पर सखिया को सवा भाव ।  
सया सेवा करन बेलि लाव लेव एक दूजी प छिनाव ।  
श्री राज बठ वार्ता कर श्री स्याम जी चित्त धर ।  
सखिया प्ररस परस कर हास लेव धनीजी को विविध विलास ।  
सखिया दौरि दौरि क जाव आरोगन को वस्तु लाव ।  
हुमा सध्या का अवसर श्री राज स्यामा जी बठ सिंगार कर ।

—प्रम पाठ पृ० २५

निगुण प्रम पद्धति क अनुमार भी इनकी रचनाए मिल जाता है

मरे धनी धाम क दूलहा, म कर ना सकी पहिचान ।  
सो रोज म याद कर कर जो मारे हेत के घान ।

—प्रम पाठ पृ० ११४

महात्मा मुकुन्द दास जी

य स्वामी प्राणनाथ क शिष्य थ । इनकी रचनाए अधिक उपलब्ध नहा  
है । कवन कुछ पद मिलन हैं । नीच कुछ पक्तियाँ हम उद्धृत कर रह हैं

वेव रिचा तलफत अज घोड़ी विरह दाह मे जारी ।  
वृष्ण द्वारिका काहे न बसा गोकुल गोप कुमारी ।  
सौता त्रिविध भई नाना विधि, बाल तदन भा बृध मारी ।  
कहत मुकुन्द सतगुरु समरथ कोई न सक निरवारो ।

—हस्तलिखित पत्र (गरण विहारी गोस्वामी क संग्रह स)

मयण दाम

प्रणामा धम क अनुयायी थ । अन्तः समय स० १७५१ क लगभग माना  
गया है । बुनान्त मन्नावना तथा बाय मागर उनक दो मुख्य ग्रन्थ हैं । दब  
चन्द्र ज्ञा (प्रणामा धम क मन्थारक) न गुप्तता ता कम ग्रहण के। एव गुप्त न उनका  
कोन मा माग बनाया अमका प्रवात्पूण वगन भूयगताम न किया है



अखण्ड नित्य वृन्दावन भाष्यो सो हरिदास चित्त म राख्यो ।  
 ताकी चर्चा कर प्रेम सो सेव नित आचार नेम सो । १३  
 निज गिमा गुरु श्रीर बताई सो देवचन्द चित्त सो लाई ।  
 अपनी सखी भाव करि लीज पुरुष भाव अपना तोज लीज । ७३  
 श्री कृष्णचन्द्र जान गुरु आपन "यामा निज उपासना आपन ।  
 सखा बिना इन पुरुष न पहुँचें कोटि कट करि जो मन गीच । ७८  
 तात सखी भाव करि लीज पुनियह नाम मय रस पीज ।  
 वही गिव्य स्वामी विधि नीकी, इच्छा पुण्य भाव की पीकी ।

—श्री सर्वेश्वर वृन्दावनाङ्क पृ० १०० ।

अथवा

नित्य वृन्दावन का वरण करत हैं

जहाँ छोड़ो श्रुति निगाकर युत विरह नाहि विजोग ।  
 जहाँ "याम श्यामासखिन सहित बटास प्र म सजोग ।  
 जहाँ हरष गोक न जरा धारति, सख रज तम नाहि ।  
 उद्वग विछुरन जहाँ नहि है सदा धानद भाहि ।<sup>१</sup>

### १८वीं गीती का अजभाषा सूफी प्रेमएधानक काव्य पृष्ठभूमि और सक्षिप्त स्परेखा

प्रथम अध्याय म सूफी मत का ऐतिहासिक रूपरत्ना स्पष्ट करत हुए हमन  
 कहा था कि भारतवर्ष म शिदा का भक्तिकाल तम-बुद्ध का स्वर्ण युग रत्ना है । वना  
 य भी कहा गया है कि इन्नुन अरबो का बहानुन बुद्ध मिक्षान भक्तिकाल क  
 मूकिया का प्रभावित कर रहा था । मह मिक्षान प्रम प्रपात व प्पाव अ तवाशिया  
 क निरट था—इसा कारण पारस्परिक सम्मिलन और प्रभाव का द्दना मभावना  
 ही गयी थी । परन्तु हमार धानाध्य युग तक धान धान म उन्तरनावा नि गप  
 ही बला । १७वा १८वां शताब्दी म धमाधता अपना महत्त्व उठाना प्रनात होना  
 ह । बहानुन बुद्ध म स्थान पर बानुन धुन् का मापना बढ़न लगना ह ।  
 महानुकी सम्प्रदाय (वि० का १७वा गीती का मध्य भाग भारतवर्ष म प्रवण का

समय है) को केंद्र बनाकर यह प्रेम भाग की अपेक्षा शरीरगत को प्रधानता देने वाली प्रवृत्ति भागे बढ़ती है। इस रुढ़िवाद को और गजब जसा सशक्त एवं दुराग्रही शासक-संरक्षक रूप में उपलब्ध भी हो जाता है। उदारतावादी के प्रतिम एवं सर्वोत्तम विचारक तथा संरक्षक द्वारा शिकोह के बंध के साथ ही मानो उस विचारधारा का भांग हत्या ही जाती है। हिंदू मुसलमानों के मध्य की खाई चौड़ी होने लगती है। यह भी दृश्य है कि इसी काल में हिंदू राष्ट्रवाद भी उभरता है। मराठा जाट गूजर सिक्ख एवं राजपूत शक्तियाँ मुगल शासन के विरुद्ध विद्रोह करती हैं। इसमें भी अंतरान बढता है। सूफी प्रमाख्यानका पर भी इसका प्रभाव पडता है। पूर्ववर्ती सूफी प्रमाख्यानको में भारतीय जन जीवन तथा अभिप्रायो एवं प्रतीको का जिस अकुठित भाव से स्वीकार किया गया था उसका अत्र अभांग हान गगा। अपनी हिंदू वंश परम्परा की पृष्ठभूमि के बावजूद जान कवि ने नला मजनु तमीम अन्नमारी खिखला देवल देवा आदि प्रेम कथाप्रा के कथानका का अडनाया है। प्रमाख्यानको का जो विगुद्ध भारतीय परम्परा (जायसी आदि की) थी उसका प्रवाह समाप्तप्राय था। उसके स्थान पर दक्की (हिंदी या उर्दू) सडी वाला म चनी अन्न वाली फारसी प्रभावित परम्परा से महत्वपूर्ण हो उठता है। जान कवि जस व्यक्ति प्रथम परम्परा से एकदम विगण तो नही हुए है पर दूसरी परम्परा के प्रभाव में आ अडय गय है।

### प्रमाख्यानक कवि

#### जान कवि

जान कवि उनका लखन सबधी उपनाम था। वास्तविक नाम यामनराी था। उनका पूव ज माकर के कुतान चौतान वगाय क्षत्रिय थ जा सवत १४४ म मुसलमान हा गय थ। अत परम्परागत सम्कारा का दृष्टि म के हिंदू हूय के निरुध। व समुत्त अरवा फारमा तव अन्नभाषा आनि अन्नक भाषाप्रा के अत्र जानकार थ। कहत है कि जान कवि म आगुकविथ भी था। उनका जन्म मृत्यु का ठाक निश्चय नहा है पर अथा पर जा रचनाकाल उगान निया है अमस जान हाना है कि सवत १६७१ म १७२१ तक लगभग ५० वर्षों के विम्नत अतरान म उनका रचनाकाल फना अघा है। उनका शारा रचित ७५ अथा म म १ अथ ता सूफी परम्परा म गुद्ध रूप म प्रमाख्यानक है। काश्य-वभव का दृष्टि म जान कवि सर्वोत्तम मूक्तिया म नरी ठहरत परनु एक मोनिकता उनका दृष्टव्य है। अहोन ममनकिया का दाहा चौतान वाना गता ता स्वाकार का परमाध्यम अडथा के स्थान पर अन्नभाषा का अडनाया। माध्यम का दृष्ट परिवतन कथा का स्वाभाविकता और अन्नका कर्ती म भा नरु नरी करना। कलना कलन का उनम सत्र एवं जन्मजन्म प्रतिभा जान हानी है। मरत

प्रचलित ब्रजभाषा में कहाना का प्रवाह नाककथा-गायक का मूठ मंचर गनि म निरंतर बन्ता रहता है। ब्रजभाषा के कवियों ने भाषा के मन्वय में बहुत अधिक स्वतन्त्रता पाई है। जान कवि का भाषा अधिक व्यवस्थित भा है और प्रमगाचिन्ता भा। एक उदाहरण में

पदमिनि कहै कहा भयो भू । नन सजन तत्र आवत स्वे ।  
 रतन कह्यो मो सीस पिरात । प्रगट न करत पमु फी बान ।  
 पदमिनि कह्यो मुनहु रतनावलि । जौनों मरा पीरिन पावति ।  
 तौ लौं तौ पीरि न जाइ । मरो पीरि चणी सिर छाइ ।  
 रतन कह्यो मुनि पदमिनिरानी । हौं तौ मोहन हाय विजानी  
 त मूटि दीनों कुवर दिपाइ । किर्पा दई त चक्क लाइ ।  
 पदमिनि को भाये ये बन कह्यो चलहु दखहु भरि नन ।  
 रतन कह्यो अछिरा सब जाये । चलयो न ज देखत इन प्राग ।  
 अरथ निगा अछिरा गई सोइ । पदमिनि रतन छती ये दोइ ।  
 प्राग बठी हो यहि मोहन । सग्यो दूरहु त अति सोहन ।

जान कवि द्वारा रचित ग्रन्थों की सूची निम्नलिखित है

(१) मन्त्र त्रिनो (२) जाननाप (३) रम मजरा (४) अन्तर्गतों की पत्नी (५) कायम रामा (६) पुद्गल वरग्या (७) कवना बनी कथा (८) वरग्या अर्थ (९) छवि मागर (१०) कनावना कथा (११) छोना की कथा (१२) रम मजरी (१३) माहना (१४) चन्द्र सन राजा मान निगान का कथा (१५) अरदमर पानिमाह का कथा (१६) काम रानाया पानमन्त्र का कथा (१७) पाहन परिच्छा (१८) शृंगार गतक (१९) भाव गतक (२०) त्रिगुण गतक (२१) बभ्रुविया विरही की कथा (२२) तमाम अन्तारा का कथा (२३) कथा कन्तर का (२४) कथा निमन की (२५) सनवती का कथा (२६) गीतवता का कथा (२७) कुनवता का कथा (२८) मित्रर ग्या माहिजाता कन्तर देवा (२९) कनकावता का कथा (३०) कौतूहली का कथा (३१) कथा मुमनराय की (३२) बधिमागर (३३) कामलता कथा (३४) अन्तनामा (३५) मित्र अर्थ (३६) गुणागिण अर्थ (३७) बुधियावक (३८) बुधियाव (३९) धूपनामा (४०) दरगनामा (४१) अन्तरनामा (४२) अन्तनामा (४३) बारह माग (४४) अन्तनामा (४५) अन्तनामा (४६) वाचनामा (४७) वाचनामा (४८) कवतर नामा (४९) पूर अर्थ (५०) दगाणा (५१) रम काय (५२) उन्म मन्त्र (५३) गिया मागर (५४) अन्तर मित गन्त्र (५५) शृंगार त्रिनक (५६) प्रम मागर (५७) विद्याग सागर (५८) अन्तर्गत पवगम अर्थ (५९) अन्त रागिना (६०) रतन

मन्त्री (६१) नन नमयती (६२) पमुनामा (६३) मान विनो (६४) विरही  
 क मनोरथ (६५) जफरनामा (६६) पदनामा (२७) भाव कल्लोल (६८) कदप  
 कल्लोल (६९) नाम माना अनेकार्थी (७०) रतनारली (७१) सुया सागर  
 (७२) खास मग्रह (७३) नना मजनु (७४) कवि कल्लभ और (७५) वक्क  
 मनि ।'

जान कवि क काय म तसत्रुफ क आध्यात्मिक आवेग के स्थान पर  
 परिपाटा विन्ति वगन का आग्रह अति प्रतीत होता है। यह भी एक प्रकार स  
 प्र मास्थानक क श्रम म रीतिकाल का प्रभाव कटा जा सकता ह ।

### दुल हरनदास

दुल हरननाम कायस्थ थे एवं प्रसिद्ध सत मसूक्तनाम क गिण्य थे। उन पर  
 मूला प्रम माग एव सिद्धाना का प्रचुर प्रभाव था। गाजीपुर जिल म इनका  
 जन्म हुआ था। यद्यपि जन्म समय का ठीक निश्चय नया है पर क्तना  
 प्रामाणिक रूप म जान है कि सवत १७२६ म पुद्गावती नामक प्रेमा  
 स्थानक का उद्गान रचनाकी। रम ग्रन्थ का आरम्भ जायमी की प्रम कथा  
 परमावत ह। स्थान देन योग्य बात य ह कि पदमावत के समान ही अवसर पाते  
 ही लेखक न आध्यात्मिकता क मक्त स्थिति क प्रम माग का कठिनाइया या  
 सिद्धाना की चचा का ह। सम्पूण ग्रन्थ अर्थात् म नाया चौपाई की परम्परा प्राप्त  
 गता म लिखा गया ह पर बाच बीच म घना तरी एवं मवया म अजभाषा का भी  
 प्रयोग रचन न किया ह। अजभाषा का एक कविन उदाहरण के निम्न नीचे हम  
 उद्धृत कर रह हैं

बन भयो भवन गवन जब कोहा पीय  
 तन नाग तवन मग्न लाइ तापनी ।  
 मून भयो मूनन था नूरी चुरइत भई  
 हार भयो नाट्ट करग धुंगी सांघ की ।  
 दु ल हरन पात्र विनु मरन की गति गर्  
 कामो में वरनि कहीं विधा कही घापनी ।  
 फूल भवा मून मूल कली भई काटा एमी  
 रान राकमिनी नई मज भई सांघिनी ।

१८वीं शती में रीति प्रवृत्तियों की छाया में पलने वाला ब्रजभाषा काव्य एवं उसके अध्ययन की दिशा । प्रेमाभक्ति की अभिव्यक्ति पृष्ठभूमि और रूपरेखा

प्रस्तुत प्रयोग व समय की सीमा सवत १७०० से सवत १८०० तक है । रीतिवादी का पूर्वार्द्ध भी यही है । ब्रजभाषा का काव्य ही हमारा भी विषय है तथा रीतिवादी की प्रवृत्तियाँ का ६० प्रतिशत काव्य भा ब्रजभाषा व माध्यम से ही अभिव्यक्त हुआ है । प्रेमाभक्ति व जिन विभिन्न सम्प्रदायों व सिद्धान्तों की विवरणा हमने पीछे की है उनमें हम दख चुके हैं कि कृष्ण राधा एवं कृष्ण गोपिका की मधुर नीला ही प्रमुख रही है । इन भक्ति सम्प्रदायों व १८ वीं शती व जिन कवियों का विवरण पीछे प्रस्तुत किया गया है उनमें भी हमने ध्यान दिया था कि यक्ष-प का स्वर शृंगारिक था तथा अभिव्यक्ति की विधि श्रान्तकारिक । इस तथ्य का अर्थ अत्राय में हम और अधिक विस्तार से दखेंगे । रीतिवादी में भी ठीक यही प्रवृत्ति है । शृंगार एवं श्रान्तकारिकता दोनों की रीति काव्य की प्रधान विधि है । फिर जिनके ही रीतिवादी भक्ति सम्प्रदायों व अनुयायी भी थे । इन कवियों का जीवन मकसद यही सभी तथ्य सामने आ जाये तो हमारा अनुमान है कि रीति काव्य व अधिराज रचयिता जिनके न किसी सम्प्रदाय (मुख्यतः कृष्णक सम्प्रदाय) में मन्वित किया गये होंगे । एसी स्थिति में प्रेमाभक्ति काव्य एवं रीतिवादी के मध्य एक सामान्य विभाजक रखा खोजनी पड़ती है । प्राचाय हजारी प्रसाद द्विवेदी ने रीति कवियों की कविताओं पर भक्ति का आवरण भी माना है<sup>१</sup> तथा उनकी ईमानदारी भी स्वीकार का है । इस ईमानदारी को खोजते हुए भा. डी० ब. ब. न. न. न. उम. शक्ति और अस्मिर कहा है ।<sup>२</sup> भक्ति भावों की यह ईमानदारी स्वीकार कर लेने व बाद सामान्य व सामान्य समस्या उठ गयी है कि क्या इन सम्प्रदायों अस्मिर शिष्टु भक्ति भावों के रचनाओं का रीति-काव्य में वृद्ध व करके प्रेमाभक्ति काव्य में अन्तर्गत परिगणित किया जाय ? हमारा विचार है कि इन विचारों एवं पृथक्करण व द्वारा ही इन कवियों का एक काव्य व प्रतिपाद्य किया जा सकता है । इन धारणाओं का हमें ध्यान है कि रीति काव्य व प्रणेतियों का रचनाओं का मूल्यनाम वितरण करके यह निश्चय किया जाय कि इनमें से कितनी ही शुद्ध भक्ति

१ हिन्दी साहित्य पृ० २०३ ।

२ हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ० ११६ (दूसरा संस्करण) ।

३ डॉ० ब. ब. न. न. रीतिवादी कवियों की प्रेम व्यंजना पृ० १०५ ।

भावापन है एवं कितना अश ऐहिक शृंगार का है जिसके साथ राधा कृष्ण के नाम भर जोड़ दिये गये हैं। वास्तव में सामाजिक कवच<sup>१</sup> हमारे प्रकार वाला काय है। जहाँ तक आत्म-मनुष्य या आत्ममनानि के दबाव में भक्तिपरक काय रचना का प्रश्न है वह काय मृजन प्रश्रिया में किसी भी प्रकार उपेक्षणीय या कम मूल्यवान नहीं है। मनावज्ञानिक आवश्यकता तथा सामाजिक कवच वाली बान के सद्व्यय में स्वयं घम के चार में क्या गया काल मावम का यह कथन विज्ञाप है— धार्मिक वेदना एक और वास्तविक वेदना की अभिव्यक्ति है एवं दूसरी ओर वास्तविक कष्ट के प्रति विराध भी। घम-दलित व्यक्तियों की आह है हृत्पटीन जगत का हृदय है एवं आत्मारणित परिस्थितियों की आत्मा है। यह जन का अहीन है।<sup>२</sup> रीति-न्यायिक भक्ति सम्बन्धी उदगार ऐसी ही आह हृदय या आत्मा स्व हैं और उनकी किसी भी प्रकार अवलना न होनी चाहिए। आश्रयता की शक्ति में अनुकूलित हानि को काय उमकी प्रवृत्ति ऐहिक शृंगार में आमुष्मिन् प्रेम के क्षेत्र में प्रयाण कर वास्तव में वास्तविक कष्ट की अभिव्यक्ति ही करती होगी।

परन्तु यहाँ पर यह कह देना भी आवश्यक है कि इन कवियों के प्रेम भक्ति सम्बन्धी उद्गारा में क्या महज अनुकूल वृत्ति तथा मितती जिसका कि भक्त कवियों में अभाव नहीं है।

रीति-कवियों ने मिथ्यात कथन के क्षेत्र में भी नीति वराम्य पराण वार आदि के वम नी वचन कए हैं जम कि पूर्व वर्णित कवियों में हम उपानेन हा जान हैं।

अन्तु प्रायः हम जिन रीति-कवियों का उल्लेख कर रहे हैं उनका नाम एवं रचनाएँ द्वापन में हमने उहाँ का स्वाकार किया है जिनमें सचमुच ही भक्ति भाव का अन्व प्राप्त होता है। स्थानाभास में यह विवरण हम बहुत धाडे में सामित करना पड़ता है—अथवा हम कमीटी पर रीति-वाक्य की विस्तृत समाना और मूपाकन मभव है।

१ डॉ० नगः रीतिज्ञान्य की भूमिका पृ १८ ।

तथा

आचार्य हजारा प्रमाँ शिवी शिवा साहित्य पृ० ०२ ।

२ डॉ० नगः इस ही मनावज्ञानिक आवश्यकता कृत है।

—रीतिज्ञान्य की भूमिका पृ० ८ । ४ ।

३ आज्ञा धाममन के एन एम धॉन रत्नजिन म पृ० ४ पर उद्धृत।

प्रमूल रूप से रीति और गीणत प्रेमाभक्ति कवि

सेनापति

सेनापति ने बार म बुद्ध विशेष विवरण पात नही है । अपने ग्रन्थ कवित्त रत्नाकर म उहोमे रिया का नाम गगावर तथा पितामह का नाम परगुराम दीक्षित बताया है । हीरामन दीक्षित क शिष्यत्व म उहाने विद्याध्ययन किया था ।<sup>१</sup> सेनापति उनका कवि नाम था तथा किसी भुसलमान दरबार स भी व सम्बन्धित रहे है ।<sup>२</sup> उहाने अपना ग्रन्थ कवित्त रत्नाकर किमी राजा का समर्पित किया था । सेनापति बडे ही स्वाभिमानी कवि थ । उनका कवित्त रत्नाकर ग्रन्थ मबत १७०६ म लिखा गया था । काल की दृष्टि म व भक्तिकाल और रातिकाल की सधि म पात हाते हैं । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उअ अपन साहित्य क इतिहास म रीतिमुक्त काय धारा म रखा है ।<sup>३</sup> आचार्य गुपल न उह भक्तिकाल का फुटकर रचनाधारा म स्थान दिया है । नागरा प्रचारिणा सभा काल हिन्दी साहित्य क बृहत इतिहास क रीतिवान वान खण्ड (अन्त भाग) म भी उह रीति-कवि न कहकर भक्ति काल का कवि कहा गया है ।<sup>४</sup>

वास्तव म सेनापति म रीतिकाल एव भक्तिकाल दाना की प्रवृत्तिया का सुन्दर समन्वय है । कवित्त रत्नाकर ग्रन्थ का पाचा तरंगो का नक्षिप्त विलेपण भी इस तथ्य का प्रकट करने क लिए पर्याप्त होगा । इस ग्रन्थ की पहली तरंग श्लेष वगण म प्रयुक्त हुई है । इस तरंग म प्रत्यक छन्द म सभग या सभग पद-संलय का अत्यन्त कुशलता से निर्वाह किया गया है । अन्त का गटा गामा और आग्रह रीतिकाल क किमी भी अलकार प्रेमी कवि क लिए ईर्ष्या का विषय है । दूसरी तरंग म शृंगार-वर्णन हुआ है । शृंगार वर्णन भी नायिका भेद नय गित्य वर्णन आदि की भांति रीतिकालीन पद्धति पर हा है । इतना अवश्य है कि शृंगार की अस्या विद्योग-वर्णन म उनका मन अधिक रमा है परन्तु विरह-वर्णन म मानसिक स्थितिया का वसा सूक्ष्म विनयण और अभिव्यजन सेनापति म नही प्राप्त हाता जसा कि धनानन्द आदि स्वच्छन्द धारा क

१ कवित्त रत्नाकर पृ० १४ ।

२ यही, यही पृ० १५ ।

३ हिन्दी साहित्य, पृ० ३४२ ३४ ।

४ हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० २०६ २१० ।

५ हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास पाठ भाग मपादक डॉ० नगेन्द्र पृ० २०५ ।

कविया क वाच्य हम म उपनय होता है। तीसरी तरग प्रकृति बरुण की है। यह उनकी प्रसिद्धि का मुख्य आधार है। प्रकृति क कुछ मन्त्रिण विषय उपस्थित कर उहान बहुत स सहृदया की प्रणमा प्राप्त की है। प्रकृति के उनके य चित्र उहें अवश्य रीतिकालीन परिपाटी से अलग धापित करते हैं क्यारि सनापति क य प्रकृति चित्र स्वतंत्र एव निरपेक्ष रूप स प्रभाव उत्पन्न कर सकने म समय हैं। परन्तु इम निरपेक्ष प्रकृति चित्रण क साथ ही एस छंदो का भी कमी नहीं है जिनम प्रकृति पठभूमि क रूप म ही उपस्थित की गई है।<sup>१</sup> चौथा एव पाचवी तरग म सनापति की रामभक्ति भावना अभिव्यजित हुई है। इनम राम का चरित्र वर्णित है परन्तु राम क शृंगारी रूप की अपक्षा पराक्रम और ऐश्वर्य से मण्डित विग्रह क प्रति ही उहाने अपनी रचि दिखाई है। भगवान क रूप क प्रति उनक मन म पूण श्रद्धा थी। उनके भगवान भवन-वत्सल थ विराट थे। उम भवन उत्सवना तथा विराटता क सम्मुख उनका हृदय आत्मग्नानि तथा पश्चात्ताप म भर जाना है। वह मावता है कि क्या हम सेवन का पन् भगवान न लिया है।

आलस की निधि बधि बाल मुजगतिपति ।  
सेनापति सेवक कहा धौ जानि कीनों है।

गरगागति म भक्त का अपनी रसा का पूरा विश्वास रहता है। यह बात हम द्वितीय अध्याय म भक्ति विवचन क प्रसंग म कह चुक हैं। सनापति भी कहते हैं

सोव मुख सेनापति सीतापति के प्रताप ।  
जाकी सब लाग पोर ताही रघुबीर ही।<sup>२</sup>

क्यारि उम विश्वास है कि

अनि अनियारे चक्कना स उजारे तई  
मर रगवारे नरमिह जू क मय ह।

१ कवित्त रत्नाकर ३।१६।१७।१८।१९।२० आदि ।

२ वहा ५।२४ ।

३ वहा ५।१६ ।

४ वहा ५।३६ ।



पंचमक्ति भावा की दृष्टि म मनापति गोस्वामी तुलसीदास की परम्परा म लग भास के उपामय मान जावगे । तुलसी क समान हा उहाने अपन इच्छा क अनिश्चित अथ दयताया क प्रति भी श्रद्धा व्यक्त की है । उनका निम्न पद दिया भी वृंदावन रमोपासन कवि की रचना म गग सनता ह

महा मोह कदनि म जगत जकदनि म  
 दिन बु ख ददनि मे जात है बिहाय क ।  
 मुग को न लेस है कलेस सय भौतिन को  
 सेनापति याहो त कहत अकुलाय क ।  
 आव मन ऐसी घर वार परिवार तजो,  
 डारो लोक लाज के समान विसराय क ।  
 हरिजन पु जनि म वृंदावन कु जनि म  
 रहो बठि कहू तरवर-तर जाय क ।<sup>१</sup>

अस प्रकार हम दयत है कि मनापति म भक्तिवान एव रीतिकाल दाना का प्रवृत्तियाँ समान रूप म मिला हुई है । प० उमाशंकर गुप्त का यह मन उचित ही मान्य पठना अ कि यद्यपि मनापति न' रीतिकालीन परिपाटी पर रचा नया की है परन्तु फिर भी रीति युग की प्रवृत्तियों की छाप उनका रचनाया म प्रचरता म पाया जाता है ।<sup>१</sup>

आज हम रीतिकालीन कुछ कविया का परिचय देने जा रह है जिनम रि प्रममक्ति की भावना अभिव्यजित हुई है । मनापति इन कविया स इम अर्थ म भिन्न है कि जहाँ रीतिकालीन कवि लौकिक काज और भक्ति-परक दाना ही रचनाया म शृण्ण त शृण्णारा स्वरूप का आश्रय ग्रहण करत हैं वहीं मनापति अपना भक्तिभावना म आत्मव्यक्त क पराक्रम और आज का व्यजित करत हैं एव स्वयं दास नाय क भक्त हैं न कि माधुय भाव क । परन्तु अपन मौखिक काव्य म उच्चानि शृण्णार एव उाण ल्या की परिपाटी का पूरा तरह से हरीशर किया है । हम प्रकार उनके काव्य क दा वदन स्पष्ट पक्ष सामन आ जात है । एक आमुक्ति और दूसरा पहि क ।

मनापति हमार आनाच्छ मुग क बहुत समय कविया म म हैं । उनका कव्य और उनकी अभिव्यजना दाना ही मशम हैं । उनका वार म आचार्य मुक्त जी

१ कवित्त रत्नाकर, परिशिष्ट ७ पृ० १२२ ।

२ कवित्त रत्नाकर भूमिका पृ० ४ ।

न लिखा है भाषा पर ऐसा अच्छा अधिकार कम कविता का देखा जाता है ।<sup>१</sup>

बनी

हिन्दी साहित्य का इतिहास ग्रंथ में ता बनी नामधारी कविता का उल्लेख हुआ है । एक ता बनी का भडौआ नाम बेना तथा दूसरे लखनऊ के बेनी प्रसीन । ये दोनों ही परवर्ती कवि हैं । प्रस्तुत तीसरे बनी कवि असनी के वंशज थे और सन् १७०० आसपास विद्यमान थे । उनका रचा हुआ कोई स्वतंत्र ग्रंथ उपलब्ध नहीं है परन्तु कुछ छन्द मिल जाते हैं । भक्तिमूलक अतिम भाग में हान नाम बेना में भक्ति का भाव पूरी तरह विद्यमान था । वे राधा कृष्ण युग के नित्यविचार गुण का आकाशी थे । हमारा अनुमान है कि उनका काव्य वास्तविक रूप से मात्र शृंगारपरक न होकर युगल दर्शन का विचार में भी सम्बन्धित है । बनी कवि की निम्न अभिराधा उनका भक्तिभाव का स्पष्ट चरन में सहायक मिश्र होती है

लहर तिरप छवि भोर पया उनरी तय के मुक्ता यहर ।  
फरर पिपरे पट बेनी त्त उनरी चुनरी के भवा भहर ।  
रस रग निर अमिह हैं तमाल दोऊ रस प्याल चह लहर ।  
नित ऐत सनह सों राधिका स्याम हमारे हिये मरदा बिहर ।

चिन्तामणि

चिन्तामणि राविकांत का प्राग्भिन्न रीति निर्यात आचार्यों में से हैं । धारका जन्म मजरा निश्चिन्त नाम का मरा है । धारपुर जिन का तिरवापुर ग्राम का यह रत्न बालक । प्रसिद्ध है कि भूपण और मतिराम इनके छोटे भाई थे पर इधर हम सम्भवतः मजरा प्रगट किया गया है । काव्य विवेक चरित्र का अत्यन्त वाक्य प्रकार मजरी सिंगर और रामायण उनका पांच ग्रंथों का उल्लेख मिलता है । मजरी काव्य का विविध अंग पर अत्यन्त ग्रंथ निम्न हैं पर उनका मजरा का कारण उनका काव्य है न कि काव्य निर्यात । भक्तिमूलक एक राविकांत का मजरी नाम का कारण उनका भक्ति का स्पष्ट दृष्टि मिलती है । मजरी का नाम मजरा नाम का प्रति उनका यह विश्वास का भाव दृष्टव्य है

१ चिन्तामणि का इतिहास रामचन्द्र गुप्त पृ० २०८ ।

२ चिन्तामणि का अर्थ इतिहास (द्वितीय भाग) पृ० (ना० प्र० समाचारमा) ।

राज रमा रमनी उदधान भ्रम बरदान रह जन नेरे ।  
 है बल भार उदड भरे हरि के भुजदड सहायक मेरे ।

## बिहारोलाल

बिहारोलाल का जन्म काफी विवाह का विषय रहा है। परन्तु भव लगभग यन् स्वीकार कर लिया गया है कि उनकी स्थिति मन्वत् १६५२ स १७२० के मध्य रही है। सम्भवतः उनसे काव्य के सृजन का सर्वोत्तम युग सवत् १७०० के आसपास रहा होगा। अभियन्ति का जो समय और अनुशासन उनके काव्य में प्राप्त होता है वह सूचित करता है कि प्रथम तारुण्य का आवेग न होकर प्रौढ़ हात हुए व्यक्ति की यह अभियन्ति है। उसमें भी नीति उपदेश, जीवनानुभव एवं तत्त्व दर्शन के जा अंग हैं। ऐसा हमारा अनुमान है कि वे सवत् १७०० के आसपास के हैं।

बिहारोलाल धर्म्य शास्त्रीय सोती घरवारी मायुर चोत्र थे। आर्य के रहने वाले थे। किशोरवस्था में ही बिहारी भवन पिता के साथ बृन्दावन आ गए थे। इस प्रकार उनका बचपन बुन्देलखण्ड में बीता था। किशोरवस्था में वे भ्रम में आ गए। बृन्दावन में हरिदासी संप्रदाय के स्वामी नरहरिदास का विप्यत्वं उत्पन्न स्वीकार कर लिया था। मुगल रूप की दीक्षा इस प्रकार उन्हें भवन जावन के प्रथम चरण में ही मिल गई थी। उनका काव्य के शृंगारी स्वरूप के नीचे यह दीक्षा मन्वत् लगातार काय करती रही है तो आश्चर्य न होना चाहिए।

नित प्रति एक ही रहत धस धरन मन एक ।  
 चक्षित जुगल किशोर सति सोचन जुगल अनेक ।

जिगका स्वरूप स्वामी नरहरिदास ने उनसे सम्मुख स्पष्ट किया होगा। उस रूप का ही पल्लवन भवनी कवि बल्लवना नशाण प्रया के दवाव एक आश्रय दाता की रचित अनुसूचि उत्पन्न किया है।

स्वामी नरहरिदास ने ही गार्हजटी से बिहारी का काव्य कला का प्रशंसा करत हुए उन्हें परिचित करा दिया था जिसके फलस्वरूप वे मुगल शब्दों में आ गये थे। इस सत्य में यह भी प्रकट होता है कि बृन्दावन निवास काल में

उन्होंने अपने गुरु के समक्ष कायकला का प्रदर्शन अत्यन्त किया होगा। इसी तथ्य की तार्किक परिणति यह भी है कि यह काव्य क्या श्यामा की लीलाभा से हा सम्बन्धित रहा होगा। विरक्त स्वामी नरहरि ने लौकिक नायक-नायिकाभा की काम चष्टाओं पर क्या मुग्ध होन लगे ?

आगर के मुगल दरबार की गान गीत एव फारसी प्रभाव लेकर य जाविका की खाज भ जयपुर के राजा जयसिंह के दरबार पहुँचे थे एव अपनी प्रतिभा तथा वाग्बद्धय के बल पर सम्मान भा अर्जित किया। पतनो-मुल सामन्ती व्यवस्था वाल राजपूनी जीवन की विलास शीलाभा न भी उनके काव्य को अनुकूलित (षण्डीगन) दिया है। इस प्रकार धार्मिकता की प्रारम्भिक भाव भूमि पर फारसी परम्परा एव सामन्ती विलासिता तथा लक्षण प्र की रीति बद्धता का आश्रय लेकर उनके काव्य का गीतमहान खडा होता है।

बिहारी के काव्य में मधरा भक्ति का पुत्र निश्चित रूप से प्रकट होता है। इस सम्बन्ध में एक पुरानी निवदन्ती हम वहाँ महत्वपूर्ण लगी। असनी के प्रसिद्ध टाकुर कवि ने अपने आश्रयता देवानन्द के लिए सनमया वणाथ नामक बिहारी सतसई का टारा लिखी है। इसमें बिहारी का विस्तृत वृत्तान्त भी दिया है। उसकी बर्णित एक घटना का घोर हम बिहारी का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। उस वृत्तन के अनुसार जयसिंह से अपनी सतसई पर पुरस्कृत हान के पश्चात् बिहारी राजा छत्रसाल के दरबार में पहुँचे। छत्रसाल ने अपने गुरु प्राणनाथ जा (धामा सप्रदाय के संस्थापक) के पास पराक्षा के लिए उस भजा। प्राणनाथ जा ने उसका शृंगारिकता का निन्दा करत हुए अस्वीकृत कर दिया। इस पर पत्नी के परामर्श के अनुसार बिहारी ने पराशा के लिए एक दूसरी कसौटी लभान। इस कसौटी के अनुसार पत्नी के युगल विहार मन्दिर में रात्रि का मनमं एव प्राणनाथ जा का घम-पुम्पन हस्ता कर के लिए रग दा गर्। प्रातः काल मनमं पर युगल विहार जा के हस्ता कर प्राप्त हुए प्राणनाथ का वाणा पर रहा। इस घटना का प्रामाणिकता का निगम हमारा काय रहा है। इसका शारा हम अनना मात्र निर्वचन करना चाहते हैं कि युगल रूप का मायुय भावना मनमं म के इस विचार का अस्ति-व काफ़ा पुरान समय में भी पाया जाता है। ध्यान रख कि यह टाका मवन १८६१ में लिखा गया था।

इस प्रसंग में यह भी स्पष्ट कर देना उचित होगा कि बिहारी विगड म म मानानुभूति का साधन नया विग रह्य। इसका कारण नीतिनता का

१ हिंदा माहिय का बदन इतिहास पृष्ठ भाग पृ० ५१० ५११ पर दा गई क्या के आधार पर।

२ धावाय रामचण्ड गवण हिंदा माहिय का इतिहास पृ १०१

प्राधान्यता है ही, साथ ही नित्य निकुञ्ज लीला का सीमित क्षेत्र भी उद्घाटन नहीं स्वीकार किया। गुरु परम्परा उनका निकुञ्ज लीला की थी परन्तु कवि-व्यल्पना का अधिक मुक्त आकाश के लिए ब्रजलीलाया का अविद्य उद्घाटन स्वीकार किया था। इसी कारण चौर हरण रास पूतना बध गावधन धारण दावानत पान भ्रमरगीत आदि अनेक लीलाएँ उनका काव्य में चित्रित हुई हैं। भक्ति संप्रदाय के कवियों के समान नतिक (व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों प्रकार की नतिकताएँ) एवं दार्शनिक सिद्धान्त-व्ययन भी विहारियों में उपलब्ध होते हैं। सत्र मिलाकर सतमई में लगभग १०० दाह प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप में भक्ति एवं नीति से सम्बन्धित हैं।

जहाँ तक विहारियों की काव्यकला अनुभूति विधान हस्तगायन वीणा भाषा का गीत चित्रमयता सागीतिकता नाटकीयता एवं ध्वन्यात्मकता आदि का प्रश्न है विहारियों के महत्त्व की स्थापना पूरी तरह से हो चुकी है। यही नीति काल के सर्वश्रेष्ठ पद्य कवियों में तथा हिंदा के सुन्दरतम व्यङ्गनाया काल कवियों में से एक गिना जाते हैं। नीचे हम उनका भक्ति मन्त्र का कतिपय दाह मात्र उद्धृत कर रहे हैं।

भरी भय बाधा हरी राधा नागरि सोई ।  
जातन की भाँई पर स्यामु हरित बति होई ॥  
स्याम मुरति करि राधिका तरुति तरुणिजा तीर ।  
ध सुवनि करन तरौस की लिनकु तरौहों नीर ॥  
उर लाग अति छटपटी मुनि मुरनी धनि धाइ ।  
हो निबसी हलसी मु ती गी हलसी हिय नाइ ॥  
जस अपजसु देखत नहीं देखत सावल गात ।  
कहा करी सातव भरे घपन नन चलि जात ॥  
कहा सइत दृग करे परे सात बेहान ।  
बहुँ मुरसो बहुँ पीतपट बहुँ मुकुट बनमाल ॥  
गोपिनु सग निसि सारव की रमन रमिकु रस रास ।  
सहा छह अति गतिनु की सदनु सख सय पास ।

१ बिहारी रत्नाकर १।

२ वही २६२।

३ वही, ५६०।

४ वही १५७।

५ वही १५४।

६ वही २६१।

जो न जुगुप्ति पिय मितन की धूरि मकुलि मुह दीन ।  
जो लहिये सग सजन तो धरक नरक हूँ की न ।<sup>१</sup>  
गिरि त ऊच रसिक मन बूढ़े जहा हुआ ।  
वहै सदा पमुनरनु की प्रम पयोधि पगारु ॥

आलाचका ने यह बात नाट का है कि बिहारा का बिरह बगन तो ऊपरमक हा गया है पर मितन क उनक चित्र अत्यंत प्रसन्न एव उस उल्लस को मजबूत करने वाला है। वस्तुतः इस तथ्य का मूल में बिहारी के सम्प्रदाय की नित्यविहारोपासना विद्यमान है। हम पहले ही कह चुके हैं कि नित्यविहारोपासना में चित्रन की ही स्वीकृति है बिरह की नहीं। यह तथ्य बिहारी ही नहीं रीति काल के अन्य कवियों के सम्भ्रम भी दूर तक कायम मृजन को अनुकूलित करता है।

### मतिराम

मतिराम बिहारी का कुछ बात का कवि है। उनका जन्म मवत् १६६१ के लगभग बनपुर जिला बानपुर में बरसगोत्रिय त्रिपाठी कायकुल ब्राह्मण के घर हुआ था। उनका पिता का नाम विन्दाय था। डा० महेंद्र कुमार ने मतिराम का मृत्यु मवत् काफी ऊँचाहक पश्चात् सवत् १७५८ त्रि० के ग्रामपाम निश्चित किया है।<sup>२</sup> मतिराम को देव की भाँति ही अनक आश्रयदानाभा की खोज में भ्रमणता पत्नी था। कहते हैं कि य मुगल दरबार का भी चक्र परपनी बहना वय में गया था य तथा अनक राजपूतों की भा जीउनचर्या के समीप पयव त्र बनन का अवसर उन्हें मिला था। अभा कारण उनका काव्य में याना प्रभाव मित जान है।

१ बिहारो रत्नाकर ७५।

२ वही वृत्त २५१।

३ (क) डा० महेंद्र कुमार मतिराम कवि घोर आषाढ पृ० २३ ५।

(ख) आषाढ हजारा प्रसाद शिवरी एव आषाढ रामचन्द्र गहन जस विज्ञानों ने उन्हें निश्चिंतपुर (त्रि० बानपुर) का निवासी माना है। मवत् जो न अपन इतिहास में इनका जन्म मवत् १६७४ माना है (पृ० )। डा० महेंद्र कुमार ने अपने शोध प्रबंध में इन समाप्तों का परामर्श करके उपयुक्त तथ्य निश्चित किये हैं।

उनके सात प्र य इस समय उरत-घ है पूल मजरी रम राज सलित ललाम सनगई अलकार पचागिका छद मार पिगन और वृत्त वीमुदी । मतिराम द्वारा रचिन साहित्य सार एव लक्षण शृंगार नामक दो ग्रंथ प्रया की भी चचा का जानी है । बरव नायिका भेन नामक रमर द्वारा सपादित एक ग्रंथ भी बनाया गया है । वस्तुतः यह प्र य उनके द्वारा संपादित नहीं है तथा साहित्य मार एव लक्षण शृंगार प्राप्त नहा है । उनकी प्रसिद्धि का मुख्य आधार रम राज नामक उनका नायिका भेन का प्र य है । इसमें दाहा म लक्षण एव कवित्त-भवया आदि छदा म उपाहरण दिये गय हैं । उनका दूसरा मुख्य ग्रंथ सलित ललाम अलकार सम्बधी है । उनकी सतसई क वारे म आचार्य रामचंद्र गुक्ल ने कहा है, इसक दाह सरमता म बिटारी क दाहा क समान ही है ।<sup>१</sup>

उपयुक्त ग्रंथा क वण्य विषया का अनुशीलन करन स ऐसा लगता है कि बिहारी रातिवद्ध काय रचना करन बाल शृंगारी कविया क अन्तगत परि गणनीय है । परंतु जमा कि रीतिकान क बहुते म कविया क लिए कहा जा सकता है, मतिराम का भी राधा और मोहन का नाम लेकर पवित्रता बोध जगाना पडा है । उनके धार्मिक मिद्धाता की चचा करत हुए डा० महेंद्र कुमार न उह गुदाद्ध त स प्रभावित माना है ।<sup>२</sup> हमारा बिचार है कि इन कविया का सदक किमा न किसा धार्मिक-आगनिक मन स जाटन का आवश्यक्ता नहीं है । इसका प्रतिरिक्त जिन तकों क आधार पर उह गुदाद्ध त सप्रदाय का माना गया है उही तसों क आधार पर मध्यकालीन गोपी भाव क किमी भी सप्रदाय क अन्तगत उहे रखा जा सकता है । या भूनन रीतिकान के कविया का एक बडा भाग म्मानमतानुयायी प्रनात हाता है । स्वयं मतिराम न गणन<sup>३</sup> गिव<sup>४</sup> गक्ति<sup>५</sup> सरस्वती<sup>६</sup> रामचंद्र आदि विभिन्न देवी-देवतामा की स्तुतियां लिखा हैं परंतु वातावरण (धार्मिक एव सामाजिक) म जा शृंगार स्याप्त था उसन उह माधुय भावपरक बतन म सहायता दी । इस स्थिति म किम समय क भाव बिभोर होकर राधा शृष्ण या गायी की बान कह रह हैं या सामान्य नायक

१ हिंदी साहित्य का इतिहास पृ० ५ ।

२ डॉ० महेंद्र कुमार मतिराम कवि और आचार्य पृ० १५७ ।

३ सलित ललाम छद १ ।

४ बही, ११६ ।

५ बही, ३७६ ।

६ छदसाह मगताधरण का छद ।

७ सनसई ७०३ ।

नायिका का यह कहना कठिन हो जाता है। नीचे हम एक सबया दे रहे हैं इसे क्या न प्रमद्विह्वला गोपी का वचन माना जाय ? मध्यकालीन समाज में नायक नायिका इस प्रकार के स्वच्छन्द मिलन की कामना तो कर नहीं सकते थे—ऐसी स्थिति में कृष्ण एक गोपी की मधुर लीलाएँ यदि उस आकर्षित करें तो अनुचित न कहा जाना चाहिए। भक्ति का भावमूलतः भक्ति का ही है—चाह वह किसी गनो वज्ञानिक आवश्यकता के बनीभूत हो या सामाजिक दबाव का परिणाम। अस्तु सबया इस प्रकार है

क्या इन प्रालिन से निरसक हूँ मोहन को तन पानिप पीज ।  
 नेकु निहारें कनक लग इहि गाँव बसे कहे कसे के बीज ।  
 होत रहे मन या मतिराम कहूँ धन जाय बडो तप कीज ।  
 हूँ बनमाल हिये समिये धरु हूँ मरली अधरा रस पीज ।<sup>१</sup>

एक सबय की शृंगार सजलित भक्ति के अतगत विवेचना करते हुए एक विद्वान ने कहा 'गदभक्ति भावना में भक्त भगवान के चरणा का सांनिध्य चाहता है। भक्त की दृष्टि भगवान के चरणा पर ही रहती है। किन्तु प्रमी प्रियतम के मुनारविन्द के मकरन्द पान करके ही जीवन रचना है। मतिराम की भक्ति भावना में शृंगार भाव का हा पुट है क्योंकि कवि की दृष्टि मोहन के चरणा पर नही अतन्तु उनका हृदय और अधरा पर है। 'म शृंगार भाव की पूर्ति के लिए हा वह बनमाना और मुरना बनन की अभिनाया कर रहा है।' परन्तु यही पर समीक्षक महान्त्य यह भूत गये हैं कि पुष्टिमाग में हा गो हरिराय जान गीतन और उष्य भक्तिया के दो विभाजन क्रियथ। 'गीतन भक्ति का भक्त प्रभु के चरण मरावर में निर्मात्रन नाकर गीतनना चाहता है तथा उष्य भक्ति का गाथक प्रभु के अधरो का प्रागवपान करना चाहता है।' वह सचमुच हा मुरना बनकर अधरा एक बनमान बनकर त्पिर में नगना चाहता है। यह भाष्यान नन याग्य है कि उष्य भक्ति हा पुष्टिमाग के भक्त के लिए काम्य थी। उनका कर्त्तव्य धन मधुर भावापन्न दाह नाच उद्घन हैं

मों मन तम तोमहि हरी राधा को मन्वधट्ट ।  
 बडु जाहि सनि मिथु सौं नदनदन घानद ।

१ राम राज ६० ।

द्वितीयो माहिन्य का बरन इतिहास पृष्ठ भाग पृ० १६२ ।

३ हिनिय द्वितीय अध्याय भक्ति के प्रकार पृ० १३ ।

४ सनम १



गुज गुज के हार उर मुकुट मोर पर पुज ।  
 कुज बिहारी बिहरिये मरे ई मन कुज ।'  
 राधा मोहन लान की जाहि न भावत नह ।  
 परिषी मठी हजार दस ताकी आंखिनि लह ।  
 मुरलीधर गिरिधरन प्रभु पीताम्बर घनस्याम ।  
 बकी बिदारन कस अरि चीर हरन अनिराम ।'

मतिराम का जन्म माप सुयरी प्रवृत्त ब्रजभाषा लिखन वाले कवि राति काल में भी कम मिलेंगे। भाषाय हजारी प्रमाण द्विदश क अनुसार मतिराम भाषा का नापी पहचानते थे। गुकन जी की सम्मति है कि भाषा के हा समान मतिराम के न ता भाव कृत्रिम है और न उनके व्यक्त व्यापार और चष्टाएँ मतिराम में चित्र निर्माण की अनुभूत क्षमता थी। साथ ही पारिवारिक जीवन में उनकी गहरी रुचि भी थी। उनका अलवार विधान इसीलिए अधिप मार्मिक एवं सहज हो सका है।

### कुलपति

कुलपति मित्र के बार में यह प्रसिद्ध है कि वे महाकवि विहारा के भागिनय थे। वे अगस्त के रहने वाले मायूर चतुर्वेदी ग्राहण थे। इनके रच पाठ प्रथा का उत्कृष्ट साहित्य के इतिहास में हाता है—द्राण पय मुक्ति तरगिणा नगणित सधाम मार और रस रहस्य। उनमें से अन्तिम प्रथ रस निम्पक प्रथ है। तलाय एवं चतुय भा शृंगार से हा सबधित प्रतीत जान हैं। प्रथम महाभारत के द्राण पय के आधार पर रचित काष्ठ प्रनात हाता है एवं दूसरे प्रथ मुक्ति तरगिणी का गायक के आधार पर अभिव्यक्ति का काव्य सिद्ध करता है। उनका रचनाकाल १८ वा शताब्दी का पूर्वार्ध है। रम रहस्य उद्गार गवत १७२७ में बनाया था। कुलपति मित्र भाषायत्व का इतिहास में हा महत्वपूर्ण है हा माय हा मुक्ति भाषा। गीषी एवं सहज ब्रजभाषा में हस्य के स्वाभाविक उद्गार उद्गार का उद्गार है।

भक्ति भावना का उनमें अभाव न था। रम रहस्य के प्रारम्भ में हा

१ सनसई २।

२ वही ४।

३ वही ७००।

४ हिन्दी साहित्य पृष्ठ १२।

५ हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० २ ४।

कृष्ण की वन्दना उह व एणव सिद्ध करती है। कृष्ण को आराध्य मान लने व बाद स्वाभाविक रूप से उनकी मधुर लीलाओं की ओर व्यक्ति का ध्यान आकृष्ट होता है। एस ही एक विहार प्रसंग का उल्लेख निम्न छन्द म प्रतीत हाता है

ऐसिय कुज बनी छवि पुज रहे अलि गुजत यों सुख लीज ।  
नन विनाल हिमे धनमाल विलोकित रूप मुधा भरि पीज ।  
जामिनि जान की कौन कह जग जात न जानिय यो छिन छोड़ ।  
आनद यो उमग्योई रहै पिय मोहन को मुख देखिबो बीज ।

वन्द

नीतिकार क रूप म वृद्ध कवि की हित्नी म पर्याप्त स्याति है। परन्तु वृद्ध कवल नीतिशार हा नही थे वे एन प्रष्ट कवि भी थे। वृद्ध कवि का जन्म सबत १७०० क आसपास मेरुता (जोधपुर) म हुआ था। ये जाति क सबक या भाजक थ। काशी म साहित्य दान तथा विभिन्न शास्त्रा का उहान विधिवत अध्ययन किया था। काशी से लाटन पर अपन पांडित्य एव प्रतिभा क कारण जोधपुर क महाराजा जसवंत सिंह (प्रथम) म आपना सम्मान भी प्राप्त हुआ था। बाद म ये औरगञ्ज क दरवार म भा पहुँच गये थे। औरगञ्ज की काव्य मगीत शानि कताया सबधी उत्साहीनता प्रसिद्ध है पर तु कहते हैं कि वृद्ध ने उसक मुख से भी प्रशंसा एव हाथा से धन प्राप्त कर लिया था। औरगञ्ज ने उह दरवार म स्थान देने क साथ ही अपन पौत्र अजीमुगान का अध्यापन भी नियुक्त कर लिया। अजीमुगान जब बगान का मूबदार हुआ तब वे उमक साथ बाना चल गये। डा० मनारिया का कवन है कि स० १७६४ क आमपाम किानगढ क मगराज राजसिंह न अजामुगान म वृद्ध का माँग लिया था और अछा भूमि दान अपन गृहा बसा लिया। किानगढ म हा वृद्ध की मृत्यु म १७८० म हुई थी।

वृद्ध कवि क रच हुय ११ ग्रन्था का सूचा हम प्रकार है

(१) समन मिमर छन्द (रचना १७२५) (२) भाव पद्यागिका (१७६ )  
(३) शृंगार शिखा (१७६८) (४) पवन पञ्चीमा (५) शिवाग्नेय मधि (६)  
वृद्ध मन्मथ (१७६९) शक्य निर्माण शक्य म अजामुगान क धनरोय पर श्रा  
या (७) वचनिका (१७६२) (८) सत्य स्वरूप (१७६६) (९) समन मन्मथ  
(१०) शिवाग्नेय शक्य (११) मारत कथा ।

हम रचनाया म विषय का बन्त व विषय है। वास्तव म वृद्ध का दान टन एव श्रावणनगावा का शक्ति करन का पर्याप्त धनमर मिया था। हम धन

भवों को उठाने अपने काव्य म राचक अभिव्यक्ति दा है । उनक नीति-विवेक पीछे भी जीवन का यही त्रिगाल अनुभव विद्यमान था ।

रीतिकाल क कविषा जमा शृंगार रस एव नायिका भेद का वण न उहान भाव पचागिका एव शृंगार शिक्षा म किया है । उनका वद सतसई अपने नीतिपरक दाहा क लिए प्रसिद्ध ही है पर उसक प्रतिरिक्त उनकी यमक सतसई भी है । यमक सतसई क अधिकांग दाह शृंगार रस क हैं एव प्रत्येक दाह म यमक अनकार का म्यापना हुई है । यह रचना भी आलंकारिकता का दृष्टि म रानि बढना हा सूचित करती है ।

बृद अपने जीवन क प्रारम्भिक भाग म चाह जस कवि रह ता पर बाढ कय की अवस्था म व भक्ति का आर उ मुख हा गय थे । त्रिगणग राय का पूरा पुत्रुम्ब ही भक्त और कवि था । राजपरिवार क प्रभाव म हा बृद भा निम्बा कीप सम्प्रदाय क प्रसिद्ध आचार्य एव कवि बदावन देव क गिष्य हा गय थ । बृद अपने स्वय गीतामृत गगा म आलंकारिक गनी म ब्रजलीलाभा का गान किया है । नाच हम बृद कवि क कतिपय भक्तिभावपरक छन्द उधत कर रहे हैं परन्तु इन पर भी रीतिकाल का चमत्कार यात्रना का प्रभाव न्हा जा सकता है ।

पटु पराग पट पीत मुसद मुबर तन सोहन  
बसो बस बनाप मुमन लग मग मन मोहत ।  
करि विलास रस कलि सता ललिता पुजन म ।  
सवन सदन सधरत धरि विचरत कुजन म ।  
जलहात पदमिनीयास हर चद्रत मुषिप कदम्ब पर ।  
माधव स्थरप माधव पवन कहत यद धान द कर ।

—पवन पचीमी से ।

कुज बिहारो कुज म धरो धरो दिगराइ ।  
बिन उाही वितवत धनी परतन परतन पाइ ।  
धनी माहि रापे धनी धनी धनी की भांति ।  
भई दगि तिर उनमनी सब उनमनी कांति ।

—यमक सतसई स ।

देव

देश कवि का पूरा नाम देवदत्त था । स्व उपनाम गव कविनाम त्रिगते प । डॉ० नगद न स्व क भक्त मास्य क छाया पर उनका जन्म मवन् १७०

माना है<sup>१</sup> वे ऋषिवा के रहने वाले कश्यप गाथीय कायकुञ्ज ब्राह्मण थे।<sup>२</sup> अपना जीवन निर्वाण के लिए देव का कई आश्रयमानाओं के पास भटकना पड़ा था। देव की मृत्यु सन्त १८२४ २५ के आसपास हुई थी।<sup>३</sup> देव के उपलब्ध ग्रंथों की मर्यादा अष्टांग हैं। या ५२ या ७२ ग्रंथ भी बनाये जाते हैं। इनमें से काय गाम्भीर्य ग्रंथ है एवं प्रम चन्द्रिका राग रत्नाकर देव गनक एवं चरित और देव माया प्रपञ्च भक्ति मगीन एवं अष्टात्म म सम्बन्धित हैं। प्रम चन्द्रिका में उक्तान प्रम का माहात्म्य प्रतिष्ठित किया है। हमें माधारण प्रम के अनिर्दिष्ट भक्ति व प्रम का भी महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। एवं गनक म प्रम पञ्चमीसी के अतगत भा प्रमतरन का उल्लेख करते हुए उक्ताने परमात्मा की कवन प्राप्ति द्वारा प्राप्य बनाया है। देव चरित म जन्मजीवन स सम्बन्धित विविध प्रमगा एवं नीलाभा का सगिप्त उल्लेख है।

एवं हमारे आश्रय काय व अत्यन्त समय कायाम म हैं। रागा और कृष्ण व गुण एव व अनेक मार्गित चित्र उनका प्रम उपलब्ध गये हैं। मधुर भाग्यन जिन भक्ति सम्प्रदायों की ललाहम इस प्रबन्ध म कर चुके हैं उनमें राधा तथा कृष्ण और गायिका व जो चित्रम प्राप्ति न हान ह उनमें एव के चित्र भिन्न नहीं प्रनातान और वना उम स्थिति म जयकि देव व काय म भक्ति मन्त्र की उत्पत्ति निश्चिन्ता म उल्लेख ग जाना है। जैतक अन्वकरण और अभिप्रेरणा की मन्त्र का प्र प्रनाम न म माध्यमिक कविता म भी व उल्लेख ग जाना है तथा इया गयी पर भक्ति का भाषित बना जाना है ता अभिप्रेरणा का मन्त्र एव रातिवदना तुनमीनाम म भी प्राप्त हाना है। अत एव जम कविता काममाणा म किमा एव दृष्टि का अपना वीक्षण प्रत्यक्ष पर एतन्त्र एव म विचार करत अति ममाचान गगा। उनका कल्पित प्रमा नति मन्त्रा एव नाच उल्लेख है

बहु ह नहु ह्य व रिभाव जिहें हरि देव कह धनियां तुतरी।  
विधि ईम व मोम वमो बहु वारन कोटि बन्ग रज सिधु तरी।  
जगमोहनि राध तू पा परों वपमान व मोन प्रम उतरी  
गन बाध नचावनि तानि साक लिये कर यों कर का पुनरी।

१ डा नगद देव और उनका कविता पृ० १७।

२ वही वही पृ० १८ ।

३ वही वही पृ० १९।

४ निम्बार्क माधुरी पृ ६८२ व मग्रह म।

देव में सोम चसायी सनेह क भात भगम्भद विदु क माण्यो ।  
 कनु की मे घुपरयो करि घौवा लगाय लियो उर सौं अभिलाष्यो ।  
 क मखतूल गहे गहने रस मूरतिवत सिंगार क चान्यो ।  
 सावरे लाल को सावरे हप में जननि म कजरा करि रान्यो ।'

### कालिदास त्रिवेदी

कालिदास अन्नवै क रहन वाले कायकुञ्ज ब्राह्मण थे । इनका जन्म  
 सवत् निश्चित नहीं है पर अनुमानत वे सवत् १७२५ क पूर्व ही उत्पन्न हुए थ  
 क्योंकि १७४५ का गालकुण्डा वाली चढाइ म व श्रीरगजव की सता क साथ गय  
 थ । उस समय उनका आयु कम स कम २० वष की ता रही हा हागा । इनक  
 ग्रन्थ इन प्रकार है —वधू (वार वधू) विना राधा माधव बुध मिलन विनाद  
 तथा सपादित ग्रन्थ कालिदास हजार । वारवधू विनाद नखगिन एव नायिका  
 ने का प्रसिद्ध ग्रन्थ है । पर प्रस्तुत विवरण म हम उसस अचिन्त मवधित न हानर  
 हमरे ग्रन्थ स मवधित हैं । राधा माधव-बुध मिलन विनो य छ्त्वा म एमा नात  
 होता है कि कालिदास युगलापामर किसी मप्रथम म दाशित हा गय थ तथा उमी  
 क अनुत्प व कविता (साधना) करत थ । रीतिवातान कविया न राधा कृष्ण क  
 विषय या सयाग की चष्टामा का दगन किया है पर नित्य विहार क वास्तविक  
 रूप के दगन उनम कम होत हैं । कालिदास त्रिवेदी की रचनाए ब्रजनीला की  
 अप्रथा दमी निबु ज-लीला क अधिर निकट हैं । उलहरगाय एक छंद में

एक ही सेज प राधिका माधव घाइ न सोइ सुभाइ सलोने ।  
 पारे महाकवि काह को मटि प राधा कहै यह बात न होने ।  
 छ्द हों न सावरो सावरे त अति सावरो बात सिगाई है कोने ।  
 सोने को रूप कसौटी लग प कसौटी को रग लग नहि सोने ।

निम्न छंद म उहांन अपना भक्ति भावना एकत्र स्पष्ट कर दी है

दाय रहै जू उहों रित जा घर प्रेम जजोर जकरि क ।  
 कालिदास राधा माधव क पुजो वाइ पकरि क ।

### उदपनाथ कथोत्र

प्रसिद्ध कवि कालिदास त्रिवेदी क पुत्र कवी का जन्म समय प्राचाय

१ टों नगत्र द्वारा देव और उनकी कविता पृ० १०२ पर उदपन ।

२ प्राचाय रामचन्द्र गजस हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० २४१ ।

रामचंद्र गुक्ल न स० १७५६ के लगभग माना है।<sup>१</sup> इस प्रकार उनकी कविता काल १८वीं शती का अंतिम चरण माना जा सकता है। रामचंद्रादय विनोद चण्डिका जोग लीला नामक ग्रंथों का उल्लेख भी गुक्ल जी ने किया है। रस चंद्रादय शृंगार रस का ग्रंथ है और वही इनकी ख्याति का मुख्य आधार है। प्रेम की बदना का अत्यंत मार्मिक रूप उन्होंने उपस्थित किया है। रस प्रेम विषय पर सूफी प्रभाव भी देखा जा सकता है

कसी ही लगन जाये लगन लगायो तुम  
 प्रेम की पगनि क परेख हिय कस क ।  
 कनिको छिपाय क उपाय उपजाय प्यारे ।  
 तुम तें मिलाय क बगये चोप घस के ।  
 भनत कबिन्द हमें कुज मे चलाय कर ।  
 बसे कित जाय दुप देकर अग्रस के ।  
 पगनि म छाने परे नाछिये को नाले परे ।  
 तऊ लान लाने पर राखरे दरम के ।

### महाराज बुद्धसिंह

हाराज राजपूत बूटा नरेण अनिन्द सिंह क पुत्र बुद्धसिंह का ज म स० १७४२ म एक मृत्यु म० १७६६ म हुई थी। सन्त १७५२ म बूटा की मृत्यु पर सामान्य। यद्यपि उनका मारा जीवन युद्ध एक राजनतिक उद्यम पुत्र म ही बाना पर फिर भा उनका बाना मर मन रचना क विषय अवसर निकानता ही रना। बुद्धसिंह का नर तरंग नामक १६ तरंग बाना रीति निरूपक ग्रंथ है। य एक मुक्ति साधन नान है। अमरगान क प्रेम पर लिखी हुई उनका यह घना धारा हटान है

ऊयो एक मुनिसे हैं अरज हमारी और  
 एत पर उनहूँ क मन में न घाना है ।  
 भौन भयो भावमा तो मावमी तो गिन भयो  
 राकमा मा रनि भई दख न मुहानी है ।  
 कहियो ज एतो दर्भ मन म जो भाव बयों हू  
 दखन जो पाऊ कना कहि न भाना है ।  
 बड़ि बड़ि नह निधि बड़ि-बड़ि साज हम  
 मन पाना मरना सौ बड़ि-बड़ि जाना है ।

## राजमिह

य विज्ञान गुरु क महाराज मानमिह क पुत्र थ । आपका जन्म मवत १७२१ म हुआ थ । देहान्तमान उनका म० १८०४ म हुआ । व निम्बाक मप्रदाय क अनुयायी थ । राजमिह बड़े ही गुण ग्राही कलाप्रेमी एव स्वयं कवि थे । अजी मुन्नान मवृत्त का व हा माग नाय थे । राजमिह स विज्ञानगुरु राज्य में एक काव्य परम्परा ही प्रारंभ हा जानी है । राजमिह स्वयं कवि थ । उनका पत्नी ब्रजभाषी जी क भागवत अनुवाक का चर्चा हम पाछ कर प्राय है । नागरादाम उनक पुत्र थ तथा सुन्दर कुंवरि जी उनका पुत्रा । उनका पोशा छत्र कुंवरि भी कविप्रा थीं । अस्तु राजमिह क लिख ना ग्रंथ है—बाहु विलास एव रमपाय । प्रथम ग्रंथ म श्रीकृष्ण कविमणी का विवाह वणिन है एव द्वितीय ग्रंथ म रीतिकान क प्रभाव क अन्तगत नायक क गुणावगुण वनाय गय है । आपन कविपय पुत्रकर पत्नी मिनत हैं

ए अलिषा प्यारे जुम कर ।

यह महरेरी ताज लपेटी नृदि नृदि धूमै भूमि पर ।

नगधर प्यारे होइ न प्यार हा हा तो सी कोटि कर ।

राजमिह की स्वामी नगधर बिनु देख दिन कठिन पर ।

## सूरनि मिथ

हिन्दी साहित्य क बहू इतिहास म सूरनि मिथ क बारे म कथा गया है कि इनक मवध म विभी प्रकार की सामग्री उपलब्ध नहीं है ।<sup>१</sup> प० रामचन्द्र गुप्त नरनका रचनाकाल विषय की अठारहवा गताली का अन्तिम चरण माना है । डॉ० भार्गवान मेनारिया न सूरनि मिथ का जन्म म० १७६६ क धामधाम अनुमानित किया है ।<sup>२</sup> मभा इतिहासकार हैं कायकुञ्ज दत्त एव तथा धागर का निवासा मानत हैं । जहानाबाद जयपुर वाकानर धात्रि राया स क संबंधित रह हैं ।<sup>३</sup> इनक निग ग्रंथ का मध्या १४ मे ऊपर है । रमिक प्रिया कवि प्रिया एव विनारी-गतमई की उद्देशेन ब्रजभाषा गद्य म टाकाणी भी का है तथा अन्त रीति ग्रंथ (अन्तकार माना नगणित रम मरग रम प्राप्ति काल रम रत्न माना काव्य सिद्धांत और शृंगार मार) हैं । मरुत क प्रबोध चंद्राव नायक तथा वनाय वचविगति क अनुवाक भी सूरनि मिथ न रिय

१ हिन्दी साहित्य का अन्त इतिहास पृष्ठ भाग पृ० ४० ।

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ० २६ ।

३ राजस्थान का विगत साहित्य पृ० १२० ।

ये । भक्ति विनोद राम चरित्र कृष्ण चरित्र रास लीला व दान लीला उनके भक्ति माग से संप्रधित ग्रंथ हैं । भक्तिमाल की दृष्टि से उनकी रचनाएँ भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होती हैं । एवं भक्ति काव्य का सरस रंग भी उन पर मिलता है । प्रभाभक्ति व कविया का हानी का उत्सव अत्यधिक प्रिय रहा है । नीचे उद्धृत छंद भी हालिकात्मक से ही संबधित है

फागन क दिन बावरे ये इनमे न सयानपना निबहै हैं ।  
काम बुझाई रहो घिरि क अब कोउन काउ की कूकलहै ह ।  
आय क रगनि सौ भरि ह हरिह नहीं नागर साँघो कहै ह ।  
घोरी नहीं बरजोरी नहीं होरी में कौन धी केरि रहै ह ।

—भक्ति विनोद

### श्रीपति

श्रीपति कवि का अधिक प्रामाणिक विवरण उपलब्ध नहीं है ।<sup>१</sup> वे जानपा व रहन वाल कायकुंज ब्राह्मण थे । उनका काव्य सरोज नामक ग्रंथ का रचनाकाल स० १७७७ वि० है । शत विन्नम की छटा रहवीं गती व प्रतिम चरण म व विद्यमान थे । उनका ७ ग्रंथ कह जात हैं पर वे सभी रीति निरूपण या रीतिबद्ध काव्य व प्रजात होने हैं । काव्यशास्त्र व आचार्य रूप में वे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं । यत्र-तत्र उनका कुछ पुस्तक भक्ति पत्रा में भाव संबधी उत्पार भी मिल जात हैं । एक उत्पारण निम्नलिखित है

तातहू की जानि नोकी निगम प्रतीति नोकी ।  
श्रीपति जू प्रीति नाकी साग हरिनाम की ।  
रेवा नोकी बानर खन मुदरो मुवा की नोकी ।  
मवा नोका काबूल की सवा नोकी राम की ।

### सामनाथ

सामनाथ का आचार्य व एक प्रबन्ध कवि की दृष्टि में शुक्ल जी न रीति काव्य का मन्त्र-पुत्र कवि माना है । उनका रामनाथुपतिप्रिय नामक रीति का विन्नम दिवचन करन वाला ग्रंथ मयन १७८४ में लिखा गया था । इस आचार्य का शुक्ल जी न रीति का रचनाकाल मयन १७६० म १८१० माना है । इनका

१ हिंदी साहित्य का इतिहास अष्ट भाग पृ ८८ ।

२ हिंदी साहित्य का इतिहास पृ० २६२ २६३ ।



'माधव विनोद' नामक नाटक सवत १८०७ में लिखा गया था।<sup>१</sup> ये मायुर ब्राह्मण थे तथा भरतपुर नरेश मदनसिंह के छोटे पुत्र के आश्रित थे। इनके पाँच ग्रंथ उपलब्ध हैं—रस पीयूष निधि शृंगार विलास कृष्ण लीलावती पचाध्यायी मुजान विलास। इनमें से प्रथम दो ग्रंथ काव्यशास्त्र से संबंधित हैं। कृष्ण लीलावती नाम ही कृष्णलीलाप्रो का सूत्रक है पचाध्यायी प्रकाशित हो गई है और भागवत की परम्परा में कृष्ण की रास लीला को चित्रित करती है। पचाध्यायी का रचनाकाल स० १८०० है। इस प्रकार यह रचना हमारे आलोच्य युग के अतिम बिंदु पर स्थित है। इनके अतिरिक्त मुजान विलास (सिंहासन बत्तीसी का अनुवाद) एवं 'माधव विनाय' नाटक दो ग्रंथ और कह जाते हैं।<sup>२</sup>

उपयुक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि सोमनाथ में प्रमाभक्ति का गहरा संस्कार था। गोपियाँ रास के समय कृष्ण से तिरमृत्त हाती हैं। उस समय गोपियाँ के मार्मिक वचन सोमनाथ जी के इस छन्द में पूरी वेदना के साथ उपस्थित हुए हैं

रावरी हाँसी बिलोकन साँ  
 अरु आँसुरो की सुन तान तरेरी ।  
 जागि उठी मनमथ की प्रागि  
 छिनोछिन बाङ्गति भाँति प्रमरी ।  
 सौँघों हमे अपरामत से,  
 गगिनाथ कही जिन बात बरेरी ।  
 नातरु या विरहानल में  
 जरिहोयगी बाह भभत की देरी ।<sup>३</sup>

यह छन्द भागवत के निम्न श्लोक के भावावग का पूरी तरह सुरक्षित रंग मका है

सिखांग अस्त्रवदपरामत पूरबेण  
 हासावसाककल गीतजहृन्द्याग्निम ।

- १ सोमनाथ रत्नावली की मुद्रिका में उनके १० ग्रंथ गिनाये गये हैं। सोमनाथ रत्नावली (आलोचक पुस्तक माला प्रमाण) पृ० ५६।
- २ वही वही।
- ३ वही पृ० ६८ पृ० ७।

नो चद्रय पिरहजागुपयुक्त बेहा

ध्यानेन याम पदयो पदवीं सख ते ।<sup>१</sup>

सोमनाथ या एक और सुन्दर छन्द निम्न है । नायिका का स्वप्न दग्ध प्रत्यत मनाहर एव नावपरर बन पडा है

प्राय गपाल सखी सपने म समीप हमारे रतीक डर नहीं ।  
हो कितनी समझा रही तऊ लाजतें नन उन ठहरे नहीं ।  
घान्न सो ममका कल्ल ललचाइ क वे ती घरीक टर नहीं ।  
में ही प्रपानपयो परस्थो जु नितक ह्य मोहन अक भर नहीं ।<sup>२</sup>

### घानम

घानम नाम से हिन्दी में दो कवियों का चर्चा होना है । मुघलकाल (उत्तराखण्ड) के आर्यभट्ट । बहादुरशाह का गणकाल मवन १७६४ से आरभ होता है । अतः घानम का भा १८ वा शताब्दी के उत्तरार्द्ध में माना जा सकता है । घानम के सबसे म एक मनाहर प्रसिद्धा कथा जानी है । कथन है कि वे ब्राह्मण थे पर किना शत्रु रगरजिन के प्रणय में उद्योग अपना धर्म त्याग कर स्नान प्रणय कर लिया था । उमम उद्योग विवाह कर लिया । रगरजिन भी कवियोगा था और कथन है कि घानम कवि म शत्रु को भगिनि वान छत्र उमा क है । पर शत्रु का मनाहरनाम गौड़ न मुक्तिपुक्त प्रमाणा के आधार पर इम मत का सहन किया है । उनक अनुमार शत्रु घानम कवि का पूरा नाम था और घानमकवि के समस्त छन्द उा क है । शत्रु उनका परना का नाम नहीं था । रगरजिन वाला मकथा मय न मवता है पर उमम कथा मत्री का शमनाम धारा जाता निश्चय न जाता ।<sup>३</sup>

घानम का सा रचनाए हैं—घानम कवि एव मुत्तमा चरित्र । इन दोनो रचनाओं में एसा उल्ला है कि घानम के पाय हृदय सिद्ध का था । मुत्तमा चरित्र का भाग म फारमा और मत्तमा का प्रयोग प्रव्यय मथा है पर मय कथानक का चित्रण न उनका मत्तमा का मूचक है । घानम कवि म शृंगार और विषय का विप्रमम मृगाव क प्रवय अनुसृति मवण चित्र उद्योग मय न । निम्न छन्द

१ धीमदभाषन १०।२६।३।

२ सोमनाथ रनायना मृदु कविता छन्द ।

३ मनाहरनाम गौड़ शत्रु घानम—हिन्दी घनगावत (द्विं धारेण वर्मा विदेशक) पृ ६५ ६ ।

करती है। वेना जय एसी अनुभूतियाँ रीति क म्यान पर भक्ति प्रवृत्ति को प्रकट करती हैं। दाना (विरह मिलन) ही म्थितिया का एक दूमरे क परिपा म रत्नकर अपक्षित विरह यथा का व्यजना कवि की गति का प्रमाण है

जा यल की हें विहार अनेकन ता यल फाजरी बठि चुयो कर ।  
जा रसना सों करी बहु बात मु ता रसना सा चरित्र गयो कर ।  
आलम जौन से कु जन म करी केलि तहा अब सोस धुयो कर ।  
ननन मे जो सदा रहते तिनकी अब कान कहानी सुयो कर ।

### भिलारोदास

प्रतापगढ़ क टयागा ग्राम क निवासा कायम्य थ। वे विरम की १८ वा गता क प्रतिम दगक एव १९ वा गती क प्रथम दगक म रचनाकाय म अधिक प्रियागीत रहे हैं। उनके सात ग्रंथ उपलब्ध हाते हैं—रस सारांग काय निखय शृंगार निखय छन्दोरोक निगल गाननाम प्रवाग विष्णु-पुराण भाषा और गतरज गतिका। भिलारोदास रातिकाल क सर्वोत्तम आचाय कविया म से एक हैं। काय सौठव का दृष्टि म भा दाम जी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कवि हैं। रूप सौन्दर्य म टगा राधा का यह चित्र दन्विए जिम विषम अननार क मायम स कवि न उभारा है

जहि मोहिबे काज सिंगार सयो तेहि देवत मोह म छाइ गई ।  
न चिनोनि छलाइ सकी उनहों की चिनोनि क भाय अघाय गई ।  
वधभान लसो की दसा यह दास जू दंत टगीरी टगाय गई ।  
धरमाने गई दधि बेचन को तह आपुहि आपु बिकाय गई ।

भिलारोदास यद्यपि प्रभुपूज रीति ग्रंथा क ही प्रणता थ। पर वाता करण म भक्ति का जा मधुरता और दानरम का जा प्राधुय था उम अभिव्यक्ति करन म ध्यान का रोक नगी थक। "धर उद्धृत छ" इमा भक्तिपरक अनुशास का व्यजक है।



षष्ठ

अध्याय

अठारहवीं शती के ब्रजभाषा  
प्रेमानवित्त-काव्य का साहित्य  
विश्लेषण और मूल्यांकन



षष्ठ  
अध्याय

अठारहवीं शती के ब्रजभाषा  
प्रेमाभक्ति काव्य का साहित्य  
विश्लेषण और मूल्यांकन





## १८वीं शती के प्रेमाभक्ति काव्य का साहित्यिक विश्लेषण और मूल्यांकन

### प्रेमाभक्ति काव्य की तीन परम्पराएँ सक्षिप्त परिचय

चित्रम की १८ वीं शती के हमारे समीक्ष्य साहित्य में तीन परम्पराएँ प्रत्यत स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। एक परम्परा निकुञ्ज-लीला या सखी भावोपासना की है। दूसरी परम्परा ब्रजलीला अथवा गापी भाव के साधका की है। यदानी परम्पराएँ रागानुगा भक्ति के अन्तर्गत परिगणनीय हैं। तीसरी परम्परा सगुण लीलागान की न होकर निगुण के प्रति प्रमाभाव की है—इस हम प्रेम प्रतीक भाव धारा भी कह सकते हैं। निगुण संप्रदायाएँ एवं सृष्टियाँ की भक्ति इसी प्रेम प्रतीकवाद पर मुख्यतः आधारित हैं। परन्तु यह ध्यान रहे कि ये प्रतीक प्रस्तुत युग तब प्रतीकात्मकता छोड़कर वास्तविकता ग्रहण कर लेते हैं। यन्तु इन तीनों परम्पराओं में दूसरी एवं तीसरी परम्पराएँ इस अर्थ में परस्पर अधिक निकट हैं कि उनमें वियोग-तत्त्व का ही मायता प्राप्त नहीं है बल्कि प्रिय का सीध-सीध काँत या काँता भाव से प्राप्त करने की चेष्टा भी है। पहली और तीसरी परम्परा में निकटता एवं दूसरे स्तर पर है। सूफा भी किसी कथा के पात्र में अथवा सौंदर्य प्रेम आदि के आदर्शों को कर्तव्य करके अभिव्यक्त करते हैं एवं निरत्यविहार के गायकान उन सारे सौंदर्य, प्रेम आदि का राधा कृष्ण (या राम सीता) के युगल में रागिभूत करके देगा है। प्रथम एवं द्वितीय परम्पराओं के पारम्परिक नकट्य या पायक्य का चर्चा हम चतुर्थ अध्याय में कर चुके हैं। तृतीय परम्परा (गापी भाव) के भाववाचक का ही चरम विकास हम प्रथम परम्परा के निरत्यविहार एवं सगीभावपरक उपासना में प्राप्त होता है।

यही पर इनका संबंध कर देना ठीक होगा कि हमारे साहित्य में काव्य मृत्तन के स्तर पर ये विषय के लिए तृतीय परम्परा का विकास मुख्य रूप में होता है यद्यपि अन्य धाराएँ भी इस परिणति में अपना योग दे रही थीं। इस सम्बन्ध विकास प्रक्रिया का विश्लेषण हम आगे विस्तार से करेंगे। परन्तु हमारा तात्पर्य यह नहीं है कि सगी भाव एवं प्रेम प्रतीक भाव का धाराएँ निरत्य है।



## १८वीं शती के प्रेमाभक्ति काव्य का साहित्यिक विश्लेषण और मूल्यांकन

### प्रेमाभक्ति काव्य की तीन परम्पराएँ सक्षिप्त परिचय

विश्व की १८ वीं शती के हमारे समीक्ष्य साहित्य में तीन परम्पराएँ प्रत्यक्ष स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं। एक परम्परा निकुंज-लीला या सखी भावाभासका का है। दूसरी परम्परा ब्रजलीला अथवा गोपी भाव का साधका की है। यदना परम्पराएँ रागानुगा भक्ति का अत्यन्त परिगुणीय हैं। तीसरी परम्परा मगुण लीलागान की न आकर निगुण का प्रति प्रमाभाव की है—इस हम प्रम प्रताप भाव धारा का कर्तृ सजन हैं। निगुण-म प्रत्याय एव सूफिया का भक्ति इसी प्रम प्रतापवात् पर मुख्यतः आश्रित हैं। परन्तु यह ध्यान रह कि प्रतीक प्रस्तुत युग तक प्रतीकात्मकता गानर वास्तविकता ग्रहण कर लत हैं। परन्तु इन तीनों परम्पराओं में दूसरी एव तीसरी परम्पराएँ इस अर्थ में परस्पर अपिच विरुद्ध हैं कि उनमें वियाग-तत्त्व का ही मायना प्राप्त नहीं है बल्कि प्रिय का मीध-मीध कात या काना भाव से प्राप्त करने की चेटा भी है। पहला और तीसरी परम्परा में निकटता एक दूसरे स्तर पर है। मूर्ती भी किसी कथा का पात्र में अतः सौन्दर्य प्रम आदि का आश्रित करके अभिव्यक्त करत है एव निरविविहार का गायका न उन सारे सौन्दर्य प्रम आदि की राधा-वृष्ण (या राम सीता) का युगल में रागिभूत करके देगा है। प्रथम एव द्वितीय पर परामा का पारम्परिक नकटय या पापकय की चर्चा हम चतुर्थ अध्याय में कर चुके हैं। तृतीय परम्परा (गाना भाव) का भाववाच का ही चरम विकास हम प्रथम परम्परा के निरविविहार एव सगाभावपरक उपासना में प्राप्त जाता है।

यह परम्परा गत कर देना ठीक रहेगा कि हमारे साहित्य में काव्य गृह्यन का स्तर पर से विषय का त्रिणै द्वितीय परम्परा का विकास मुख्य रूप में जाता है यद्यपि धारण धाराओं भी इन परिगुणों में अथवा योग्य रही थी। इस समस्त विकास प्रक्रिया का विश्लेषण हम आगे विस्तार में करेंगे। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि गाना भाव एव प्रम प्रताप भाव का धाराएँ निरविविहार

गई थी। हमारे आलाच्य काल में ता वे प्रत्यधिक उमंगी रहा है एव १६ वा गती तक उनका वेग कम नहीं पया। परन्तु एका उमंगता है कि मुख्य काव्य धारा से बटकर व मात्र रहस्यानुभूति क सरोवर बन गयो था। वस्तुतः य दाना (प्रथम एव न्तीय) परम्पराएँ मुख्यतः रहस्यानुभूति पर न प्राधुत हैं। इस रहस्यानुभूति की ऐकात्मिकता क कारण ही उनकी साहित्य-संगिता क मुख्य बहाव स घन हो जाना पडा था। अस्तु आगे हम घन आलाच्य काल की इही तीनों परम्पराओं क कथ्य एव गित्य क विद्वानपण तथा मूल्यांकन का प्रयास करेंगे।

### नित्य विहारोपासकों द्वारा सजित काव्य

निगुणियो एव सूफी प्रमाख्यानकारो का धाढकर नित्यविहार की स्वल्पाधिक अभिव्यक्ति हम इस युग क प्रत्येक सप्रणाय म प्राप्त हा जानी ह। यहा तक कि निगुण कह जाने वाले प्रणामी (धामी)<sup>१</sup> एव चरणदासी (चुक)<sup>२</sup> सप्रदाय भी इस भावना स बच नहा सक है। पीछे चतुय प्रध्याय म हम कह चुके हैं कि गोपी भाव वाले सगुणोपासक गौडीय ब्रह्मण तथा वल्लभ सप्रदाय एव मर्यादामार्गी रामभक्ति-सप्रदाया म भी राधावाद (सीतावाद) प्रमुखता प्राप्त कर लता ह एव नित्यविहारोपासना की भरपूर अभिव्यक्ति प्रस्तुत युग तक आते आते उन सप्रदायो म हाने लगता ह। पीछे के प्रध्याया म विभिन्न सप्रणाय क कवियो की चर्चा करते हुए हम इस तथ्य की ओर इगिन कर चुके हैं कि नित्यविहार की भावना बराबर बल पकडती गयो है। राधा और कृष्ण (सीता राम) सौन्द्य प्र म एव कलि क साक्षात रस विग्रह स्वीकार कर लिय गए थे। रीतिकाल की नायक नायिका सबधी कल्पनाओं म नित्य विहारोपासका की इन धारणाओ ने प्रत्यधिक बल दिया हागा।

चतुय प्रध्याय म हम कह चुके है कि नित्यविहारोपासक सखी भाव क अनुग हैं। साडिनी और नान क अहर्निश चलन वाल विहार म सवा एव उसी विहार का दान उनका एक मात्र काम्य लक्ष्य होता ह। अतः उनकी समस्त अभिव्यक्तिया इसी कन्द्र क चारा आर सदव रहती हैं। इस साहित्य में मुख्य रूप से जिन बातो दृया एव परिस्थितियो को अभिव्यजना मिली ह उनकी विवेचना हम कर रह है।

उन सप्रदाया म चूकि परात्पर-तत्त्व की कल्पना मधुर एव सुन्दर क रूप म ही हुई है<sup>३</sup> अतः परात्पर तत्त्व की अभिव्यक्ति जिन युगा (राधा कृष्ण एव

१ परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की सत परम्परा, पृ० ५२८ ५३८।

२ वही वही ५६६ ६०६।

३ दे० प्रस्तुत प्रबन्ध का चतथ प्रध्याय।

सीता राम) क रूप म हुई है व भा नितिन मोत्य की रागि एव परम मधुर रूप म ही चित्रित हुए हैं । ऐवय तज बल प्रताप श्रान्ति गुण इम क्षत्र म उप शित ही हैं ।<sup>१</sup> आवाय रामवद्र गुवन न गोल गक्ति श्रीर सीत्य का जिस वृत्त्रयी का विमु म देपना चाहा है उमम स ववन सी दय हा इन अभिव्यक्तिया म श्रात है । इसी कारण इन कविया न अपन उपास्य युगल क रूप का श्रयत विगद मनाहारी एव सर्वानिगाथा प्रभावकर रूप म चित्रण किया है । इम रूप स सन्निधी एव ममम्व जड चनन ता प्रभावित हात हा हैं व दाना परम्पर भी इस रूप की टगौरा म एक दूमर का श्रीर सनन श्राकपित रहते हैं । परम्पर का यह भावपण ही प्रेम ह श्रीर यह रगीला श्राकपण एव चटकीला प्रमउह निरन्तर मिलनो मुक बनाए रखता ह । मिलन की यह श्राकृतापलवान्तरया श्रवनकी श्राट म भी तीव्र विरह का उत्पन करन म समय हाती है तथा विहार का उल्लट वाछा ही तनिकभी बाधा प्राप्त हान ही मान का रूप ग्रहण कर नती है । पर तु विरह श्रीर मान क वान्तविक कारण का श्रभाव उह छद्म हा बनाए रखता ह । फिर अभिसार ह अभिसार का नाना चट्टाए हैं । मुरत एव मुरतान्त क मात्क मन्त्रि चित्र हैं रासत्रीटा का उत्कृल व भव ह तथा श्रय श्रनक भिनन लीनाए हैं श्रीर इन सभी म सगिया की प्रसन्न परिचर्या एव शेषाविधि है । इन सभी का युगलापामक प्रस्तुत कविया न अपन सहस्रा छन्ना म सजाया ह प्रकाशित किया ह । यह तो सासागान हुआ, पर श्म नीनागान का सहा परिप्र दय म ममभा जा सक वह भ्रमपूण धारणाया म न तपटा जाय श्मक लिए उहाने सिद्धान-नयन भी प्रभूत मात्रा म किया ह । रीतिकाल क लक्षण प्रय श्रीर प्रमामक्ति क मिद्धात एव ही मनाभूमि म उपज जान पडत है—समभन का दृष्टि दना हा इनका सत्य प्रनीत हाता ह । इम प्रकार इन कविया क तथ्य का सगिप्त सप्तमूत्री स्परमा या बनता ह—(१) रूप चित्रण (२) श्राकपण श्रीर प्रम (३) मिलनाकुलता (४) छद्म विरह श्रीर छद्म मान (५) विगद वाटा (६) सगिया का सेवा-परिचर्या (७) मिद्धान नयन । इम परम्परा म जमा कि पूव हा कहा जा चुका ह<sup>२</sup> राधा श्रीर कृष्ण श्रत्रमा नित्य विगार नित्य विहाररत मान गए हैं इना कारण न तो श्राव क रूपचित्र हैं एव न वानत्राटाए । बहु-वचनभक्त्य की श्राकृति न हान म नाना प्रकार क नागिबा भ्ना एव नायक रूपा का कलना का भा श्रभाव ह । श्मू म विरह श्रीर श्मूल मान का भा इग ग्यिति म चित्रण गभव नहीं ह । ब्रज

१ राम-सीता क रूप म एवय की भावना का मिधल प्रदश्य है पर यह मुख्य नहीं है । इमक अनितिकन एवय की इग समाविष्टि क कारण की शर्चा इम अनुप श्रप्याय म कर चुक है ।

२ दे० जनप श्रप्याय ।

सीताप्रा की स्वीकृति न हान के कारण साता का वविष्य भी नष्ट है । रामचरित्र म भी वन गमन प्राप्ति की स्वीकृति न हान से साता की प्रकृत रूपना म व्याधान पडा है । प्रस्तु प्रागे हम इस सप्त सूत्री का स्फुट करन का प्रयास कर रहे हैं ।

### (१) रूप चित्रण

इस अवध म कुद्य लिलन व पूव इतना याज्ञिना ज्ञाना प्रावश्यक है कि प्रम और माधुय का प्रधानता दन वान इम काय म राधा या सीता का महत्व रूपचित्रण की दृष्टि से कहा अधिन है । श्यामक रूप का चित्रण करन वाल मकत अपेक्षाकृत विरन भी है और कम कल्पनागीन भा । परन्तु प्रिया का वह रूप जो प्रिय को भी उमथित कर दना है प्रभूत मात्रा म अति हुमा है । यो सद्वातिक रूप स दाना एक ही है एव बिहार काल क जा गाभाचित्र है व दाना क मादक रूप को उपस्थित करते हैं । सद्वातिक एकता की प्रार भी यत्र तत्र सकत मिल जान है । सब मिनाकर बिहार से तटस्थ युग्म क रूप का प्रकन इस साहित्य म बहुत कम है । संभवत इसका कारण यह है कि इन कविमा क मन म नित्य बिहार से तटस्थ युग्म को धारणा का स्थान ही नहीं था । एक क्षण क लिए भी अलग है ता निश्चय ही विरह और मान की स्थिति है । इसा कारण युग्म क तटस्थ रूप सद्वातिक अधिक एव बिम्बाधायक कम है । बिहारी का प्रसिद्ध दोहा है

नित प्रति एकत ही रहत बस बरन मन एक ।  
चहियत जुगल किशोर ललि लोचन जगल अनेक ।<sup>१</sup>

इस दोहे म सखी की उस भासात्मक स्थिति की और सकत अधिक है जिसमे कि युगल की उस अनिच्छ रूपमाधुरी क ग्रहण क लिए दो नत्र पर्याप्त नहीं होत । रामोपासक महारमा बालमली न मखी की मन स्थिति स भी असम्पृक्त होकर युगल का उल्लेख किया है ।

एक चित्त दाउ एक बय एक नेहु इक प्राण ।  
एक रूप इक वग है श्रीडत कु वर सुजान ।

एक दूसरे रामोपासक प्रम सखी जी ने अवश्य ही दोना क युग्म रूप का बलून एक साथ किया है । परन्तु यह चित्रण अत्यधिक परम्परासक्त गली म हुमा-

१ बिहारी सतसई २३८ (रत्नाकर) ।

२ बालमली नेह प्रकाण (रामभक्ति साहित्य मे मधुर उपासना मे सगहीत अंग से, पृ० २६) ।

है। चन्दा जसा भाल कमान जसी भुकुटी एव कुद से दात कवि कल्पना की ममृद्धि नहा सूचित करते

गोरे श्याम रग रति कोटिन अनग सग  
जाकी छवि देखि होत लज्जित विचारे हैं ।  
चद कसो भाग भाल भकुटी कमान ऐसी  
नासिका सुहाई नन जोर छोरे वारे हैं ।  
घोठ घरणारे तसे फु द से दसन प्यारे  
ललित कपोतन प कच घुघरारे हैं ।  
अस भुज धारे दोऊ नील पीत पट धारे  
प्रेम सखी' राम सिया जीवन हमारे हैं ।

यद्यपि कवी कवि न इस भाग के कुछ पूर्व सीता की छवि का वहीं अधिव कलात्मक एव लिख्य जगन किया है।

हरिनामी सप्रणय क स्वामी पीताम्बर देख ने भी युग्म क शृगार का चित्रण किया है। यह शृगार ऐसा है कि परस्पर एक दूसरे पर रीझ कर विहार करने लगते हैं

आज सिंगार हमारी भाई सब दिन भांवते अधिकाई ।  
सूपन वसन कुमुम नहि भावत थी गुहमहननि सन वताई ।  
सावधान सहचरि सब देखत घोरि मुगध विविध विधि ल्याई ।  
कधि गयो रग अग सगी सुख दखत बना बनी सुखदाई ।  
घार यचाय प्रग तन लेपन सिख ते नख लीं चित्र बनाई ।  
रहि गये रीझ परस्पर दोई तन सा तन मन मनहि मिलाई ।  
यही गान समान भोग जल सरस सिंगार सेज सुखदाई ।  
रतिह मुगध मई पीताम्बर दखत यने कहो नहि जाई ॥

प्रस्तुत पत्र म रूप या शृगार का वस्तुपरक स्वरूप नहीं उपस्थित किया गया है कवन कुछ वस्तुवा (रग मुगध आदि) क माध्यम से किय जान वाले प्रभू शृगार का सङ्ग करके पुन उग स्थिति क दान क लिए कवि का मन प्रभावित हो गया है जहाँ वे एक दूसरे का नामा देकर बग रहि गये रीझते-तन स तन एक मन स मन मितन की प्रीडा प्रारम्भ हो जाती है। दोनों की एक समान स्थिति की घार राधावल्लभ-मप्रदाय क अनुपाया अनय भक्ति जी न

१ प्रेम सखी शीताराम नगणिय वचन (रामभक्ति साहित्य म मधुर उपासना क सप्त पृ ४०-१) ।

२ पीताम्बरदख का बाना पृ० ९८ (ह० लि० प्रति) ।

रगिन किया ह । भोजन (नासम) क सौन्दर्य की बहुधा प्रथमा की जाती ह पर युगल भी व गा ही ह । इमीनिए रम भाल धीर बायल युगल का देव तैव सगियाँ निहान गानी रहती है भोजन पर रोमना घनन घाप म निनायन राम शिष्टक धारणा ह

ये भोरे ये बावरे दोऊ एक हवाल ।

निरलि निरलि निज सखी सय कहत निहाल निहाल ।<sup>१</sup>

प्रिया एव प्रियतम सारी रात अनुराग क रग म रगे जागत रहत हैं उम समय उनक उनीदे नत्रो का सौन्दर्य रूप रसिक देव (निम्बार्कीय) का सहज ही प्र कपित करता ह । मदन क रग म भीन सत्रज हमीहा इगिन बाल सात ए, बान वणों से ममि जत डरारे एव अनियारे नेत्रा का सौन्दर्य दृष्टव्य ह

उनीदे नन मन रग मीने सलज हसोही सन ।

रतनारे वारे डरारे रु प्रति अनियारे ऐन ॥

भपकने दोने रस कस सहज सलोने मन हरि लन ।

रूप रसिक सगयो मुहागे अनुरागे जाग रन ॥

इस छंद म व्यजित आँखा का सौ दय मध्यकालीन साहित्य क नत्रो क न पठतम् वण ना स टकर न सकता ह । तरारे एव अनियारे जहाँ उनक आकार को यजित करते हैं वही रतनारे कान नत्र वण योजना को तथा अनुराग को भी प्रकट करत है । सलज हसोही सन एव उनीदे नत्रा का भपकने का स्वाभाविक गुण क्रियाशीलता को भलीभाति व्यजित करने म समथ हैं । मदन का रग एव रस क होने का उपमान आंतरिक रूप गुण लावण्य एव प्रभावात्मकता को प्रकट करने के लिए लाय गये है । इसक अतिरिक्त अभिव्यजना का जो साचा और जो ताना-बाना (टेक्सचर) अपनाया गया ह वह भी वक्तव्य को बिम्ब रूप म उपस्थित करने म नितात सक्षम ह । छंद क प्रथम दो गत हैं उनीदे नन एव प्रतिम गत है अनुरागे जाग रन । इन दाना का काय कारण सम्बध ह । रानभर अनुराग म जाग हैं अत नन उनीदे हैं एव इस सम्बध क भीतर ही छंद म चिहित अय समस्त गुणएव धम है । इसी कारण कवि ने इन दोनो क द्वारा छंद का सपुटित किया ह । फिर रस अनुराग क पीछे भी मदन का रग है अत अनुराग का नाल रग एव शृंगार का नील (काला) रग अगली पक्ति म कवि रगबाध को स्पष्ट करत हैं । तो अभिप्रायगत रग हुए पर स्वाभाविक रूप स भी उनीदे नयन लाल हाते हैं एव आँखा की पुनत्रियो को काला होना ही है । सुरतात म दम्पति मे सज्जा का



प्रागमन भी सहज एव मनाव नानिक है पर साथ ही आनन्द लाभ का स्मिति भी है इसनिग मन (चित्तमनि) का सनज्ज एव हमीही बताया गया है। या हास्य का उन्नत वण आवा की स्वत भूमि को भा इ गित करता है। डरारे एव धनि मार आकार क उम रूप का अत्यन गतिक माय स्पष्ट कर देन हैं जा अनायाम माव म प्रिय की धार लक कर नुकीलेपन क माय कटाक्ष करता ह। तीमरी पक्ति का प्रथम गण क्कानि पुन मारे मन्म का उनीदि स जोड देता है। है। नी स भरी आर्षि भन भा पडतो है तथा मन्म का रग भी आवा का भयका दता है। एक दूसरे की रूप मन्मि नी उहें क्कानि बना सकन म समय ह। क्कानि गण वास्तव म कवि की गण चयन मामय य का प्रताक ह। यह गण एव साथ अनक व्यजनाए भी कर देता ह एव नत्रा का एक त्रियागीन बिम्ब (functional image) भी खडा कर देता ह। इसक पन्वात कवि आवा क लिए जिम उपमान का ताता ह वह नत्रा क उम गुण की धार इ गित करता ह जा मया पात्र या दग पर पडता ह।। उनीने नन क्या हैं—मानो रस क दान हैं। दान आकार की धौर नी मूर्म मनेन कर जात हैं तथा रमात्मकता तो स्पष्ट ही ह। रम मामान्य मधुर हाता ह पर य सहज मलोन भी हैं। यह सावप्य नत्रा क आनरिक गुण रन विशपना को भा मकनित करता ह। एम नत्र यदि मन हर लेने हैं ता कोई त्रिचित्र वान नही हैं य तो मामान्य वत्तय हुमा। पर अभी कुछ छू गया था अत कवि न अनुरागे तागे रन क पहल दो विशेषण धौर जाट न्य—मगवग धौर मुग्ग। मगवग गण एव प्रकार का निर्बोयता गरमता एव आचयपूण गकित स्थिति की यजना करता ह। अ गरजी गण इनोमेम म जो धनि ह कुछ कुछ व मी ही ध्वनि इम गण म भी ह परतु सग बग हाता कोई बुराई नहा ह दुभाग्य भी नही ह इसी को अगता गण स्पष्ट कर देता ह मुग्ग—पौभाशगील। इम प्रकार यह छंद नत्रा की गुपभा वगिन करने वान रेणम छंम म स एक ह। आकार वण गुग धम त्रिया धानि मभा वाना का—पूरी चित्रात्मकता क माय इमम उपस्थित किया जा सका ह। यह ध्यान रह कि रम छंद का मौन्य रूपक रमा या धनुषाग का नही ह। पूरे छंद क सपटन म ही इम मौन्य को स्थापित किया जा सका ह।

हृष्य या राम का मोदय

जमा ति पीछ धभी सकत किया जा चुका ह अन भला न मुगत क पुरय-नस्व क रूपचित्रण की धौर कम प्यात न्या ह। बु कि यही पर मुक्ता त्रिया क रूप की ह अत त्रिय का रूप उहें बहुत आकषित नही कर मया। उमम एव साधनाए रम्य भी प्रतान हाता ह। जब भक्त पुरय भाव का द्वाडकर मया भाव का धनुषामी बनना है तब मनोव शानिक हृष्य मे य उचित ही हाया कि

पुण्य रूप की धार यह अधिष्ठान दे । यदि पुण्य क स्यात्सीत्य पर ध्यान देगी (देगा) ता बहुत मभावना है कि उसके मन में भी काम भावना जाग्रत हो जाय । परन्तु जसा कि तनुव श्रम्याय म मिद्वान विवेचन के प्रसंग में कहा जा चुका है मत्वा को निर्विकार होना चाहिये । ममयत्न स्य मापनायन आपत्ति क कारण इन सति भावयोगमक कविया न स्वतन्त्र रूप गलाल क रूप चित्रण की और अधिक ध्यान नहीं दिया है । अधिष्ठातन के या ता युगल रूप म दानीय हैं श्रमया उनका रूप प्रिया पर राभने वाला प्रिया क लिए व्याकुल प्रिया के साथ विहाररत ही विभिन्न हुआ है । फिर भी कतिपय स्वतन्त्र चित्र प्रकाण रूप म उपलब्ध हो जात हैं ।

हरिणामी सप्रदाय क स्वामी नरहरिश्च ने कृष्ण का परम्परा बढ़ गती म चित्रण करत हुए कहा है

सखी रो आजु बनें पीय सांवरे ।

रूप अनूप अधिष्ठ छवि राजत कटिल केस मनो भांवरे ।

टढी पाग घोषा कटि टढी चितवनि को बलि जाव रे ।

श्री नरहरिदास पीय की छवि निरखति प्यारी रूप सभाव रे ।<sup>१</sup>

यस पद्य की तनीय पक्ति अवश्य कृष्ण की त्रिभगी मुद्रा का एक चित्र उपस्थित करती है श्रमया समस्त पद स रूप और मौदय का बिम्ब न उपस्थित होकर कथन मात्र सम्मुख आता है । यही पर यत् भी यत् रचना उचित हागा कि स्वामी नरहरि देव के समय में सखी सप्रदाय (नरिदासा) में गढ़ विहार क स्थान पर ब्रजलीला की भावना धर करन गयी थी । अष्टाचार्यों की वाणी में सश्रुत हम उनका एक श्रम सिद्धांत का पद उपस्थित कर रहे हैं वह भी कृष्ण क रूप की सखी नहीं गापी भाव से उपस्थित करता है । पद इस प्रकार है

जाकी मनमोहन दृष्टि परे ।

सो तो भयो सावन को अधो सुभतर रग हरे ।

जड चेतन कछु नाह समभत जिन दहयो तित स्याम खरे ।

विह बल विकन सभार न तन की घूमत नना रूप भरे ।

करनी अकरनी दोउ विधि भूली विधि नियध सब रहे घरे ।

श्री नरहरि दास ज भय बावरे ते प्रम प्रवाह परे ।<sup>१</sup>

कृष्ण सौंदर्य क प्रभाव म विधि नियध का भूलना एव सावन के श्रम की हरियाली की भांति मारे ससार का कृष्णमय देवना नित्यविहार की युगलो

१ अष्टाचार्यों की वाणी नरहरिदेव की धानी श्रुगार रस के पद ३ ।

१ वही वही सिद्धांत के पद १ ।

पायना क अनुकूल नहीं है ।

गोपाय वपुण्व मनानयाया मनाहस्ताम क राधारमण रम मागर म उरुग  
का रूप चित्रण रम प्रकार हुआ है

बगर की भूमिका प जरी गिरकी की पाग

भूमिका बनक स्वच्छ मार पछ लटक ।

नगा बूटदार दोन्मी की कष्ट बार रघों

उपरेना पट्टका मुनेली चित्र चटक ।

दुगावलि वानूबद पट्टचीया अतलम

सूवन नूपुर सुर पग चूरी मटक ।

जगमग राधिका रमण सिहासन ठा

मनोहर मन मुसवान मोही अटक ।

वृष्णय रूप का यह अंतुपरक वर्णन प्रथम तो गौतम्य का उक्त भूमिका तक नही पट्टचना जिमरी कि अपेक्षा था । यह त्रिगुण रतिराजान नायक का वग भूषा का वर्णन प्रतीत होता है । दूसरे राधारमणरममागर म एम शब्द का वा अधिनता है जो नायक-नायिकाभंग भाषा भाषण ब्रजभाषा का वर्णन करने है । धन गढ़ विचारणापामक का दृष्टि म किया गया चित्र रम भा न मानना चाहिये ।

उपयुक्त विवचन म यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि इन कवियों म गूढ विचार क स्तर पर अरुण या राम क रूप गौतम्य का स्वीकृति नही है ।

प्रिया (राधा या मोती) रूप चित्रण

युगनायामक वपुण्व कवि जिम समय प्रिया जा का रूप उगा करने करता है उम समय उगता है कि उगका चित्त तरनादित शहर निष्ठावर हा उगता है । उस उगमाण इद नही मितना उत्प्रेक्षण हान प्रवान हा उगती है और रूपक अममथ । उमक मन म यह धारणा स्पष्ट रूप म चिह्नमान है कि स्वय परापर श्रद्धा जान जा (अरुण या राम) तक रम रूप पर यति-यति जान है ।

१ मनोहरदाम राधारमण रम मागर ११

२ रामोपायक राम सत्य इत्यादि म अत्र-तत्र राम का रूप वर्णन मिल जाता है । पर राम मय मरुप भाति क उपासक ध महत्त्व विद्वर अप्याय म कह सक है । धन उन चित्रणों को निम्न विचारोपायक क साथ मिलाना उचित न रहेगा ।

३ धी कन कान गिरि किय कान्दन कनक अनुप ।

उपमा मय विगला पर गुनि म हुनका रूप ॥

—धनय धना की वाग्ना (१० वि० प्र०) ।

इस रूप का व प्राया स पोते रहते हैं पर कभी तप्य नहीं जाते ।<sup>१</sup> राधा व समान राधा ही हैं अथ वार्द उनकी समता नहा कर सवना । समाप्ति मुगलायाम् उनके रूप-वर्णन म अपनी सारी शक्ति लगा देना चाहता है ।

इस नारी रूप-वर्णन म इन कविया स दय का वस्तुपरक अवन भी किया है तथा इसके उस पक्ष का भी अवन किया है जा मानसिक अनुभूति का विषय है ।

### वस्तुपरक सौंदर्यांकन

वस्तुपरक अवन म इन कविया न रूप उपमाना का अत्यधिक उपयोग किया है । उपमाना के इस अवन म सवदा यह ध्यान नहा लिया-गया कि रूप का साम्प्रतिक बिम्ब हमारे सामने उपस्थित हा सके । परम्परा निर्वाह व ढग पर अगो क उपमानो का उपस्थित कर दिया गया है । परन्तु कभी कभी आकार या व्यापार का चित्र अधिक मार्मिक एव चित्रात्मक हा सका है । उहा क अन्तगत य चित्र भी आते हैं जिनम प्रिया क उपमानो का प्रिय क लिए क्या महत्त्व है इस भी बताया गया है ।

वस्तुपरक रूप के चित्रण म नवगिन्य वर्णन अनिवाय रूप से आता विभिन्न अगो के लिए अनेक प्रकार के उपमान भारतीय कवियो न सदैव स जुटाये हैं । नीचे हम कनिषय व अ ग उपस्थित कर रहे हैं जिनम नारी अगो को चित्रित किया गया है ।

१ (क) फटिल लव कल चीकने घने मिही महकान ।

बार बार बर दत प्रिय बार बार निज प्रान ॥

(ख) यहा अनगो धनुष सम भूमगो नय बाल ।

जाकी भगो में नचत नवल त्रिभंगीलाल ॥

—रसिकदास सी दयलता ।

(ग) मगल प्रारति करत किशोर

दीप दृगन करि चरन डडवत चित्र जानकी रहिमन ठौर ।

—गीताम्बर देव की बानी पद ४२

२ तोसी तहो हरिदास दुलारी

तेरी सरिहू जीर्नाहि कोऊ तेरे रस वस कु ज बिहारी ।

तेरो रूप कहत नाहि भ्राव तसीये तेरी प्रीति महारी ।

तसी ये सलित के ल सुव रासी रसिक सिरोमनि प्रान अधारी ॥

—सनि? किशोर नेप सिद्धांत के पद ६८ ।

नेत्र

रघुवर मन रजन निपुण गजन मद रस मन ।

बजन प खजन किधौ अजन अजित मन ॥<sup>१</sup>

सीता व नन्दा का प्रभाव भा यद्यपि इसमें दिवाने की चेष्टा हुई है पर वास्तव में दोहा वाई अनुभूति जगा सकने में प्रथमय है । नन्दा राम व मन रजन में चतुर हैं तथा कामदेव व मद का खडित करन वाल हैं—तना ता सामाय कथन मात्र है । दूसरी पंक्ति में सटेह प्रलकार के माध्यम से रूप खना करने की चेष्टा है । नन्दा का आकार कमल में यकत हाता है एवं अजन अजित होन का जो वर्णन है वह खजन की श्यामता से परिलक्षित होना है । इसमें प्रतिरिक्त खजन की खचनता नन्दा-व्यापार का प्रकाशित कर देती है । परंतु यह सारी योजना रूप उपमाना व चमत्कार पर है । सहृदय व मन में कोई गहरा अनुभूति जगाने में यह समर्थ नहीं है ।

सूरजामजम कविया न परधरा मिद्ध अप्रस्तुत विधान का कथन की भिन्न भिन्न भगिमात्रा में रूप कर जिस प्रकार स्त्रियाँ हैं वह उपमाना को नवीनता प्रदान कर स्त्रियाँ हैं पर इन कविया में कथन की वे नाना रंगों भगिमाएँ प्राप्त नहीं होता ।

इसी प्रकार प्रेम समीप में सीता व नन्दा के लिए उपमाना का जो रस लगाया है वह चमत्कार प्रधान नहीं है अनुभूति प्रधान नहीं ।<sup>२</sup> इस उपमान राशि व भीतर में नयना का यथाय रूप मात्र निरूपण बहुत कठिन है । इस प्रकार व वर्णना में रीतिरान्त की चित्तवृत्तियाँ का समानान्तर रूप स्पष्ट ही देखा जा सकता है । निम्नांक मन व प्रमिद्ध नित्यनिहारोत्सव रूप रमिब दब के निम्नांकित छंद में नन्दा की निर्याई का वर्णन हुआ है

१ बाल घली नेह प्रकाश ।

२ नन घनिपारे तारे पु डरीक पान सारे

पुतरनि ये द्विरेपमन धारे है ।

बहु बजरारे सीत सागर मुषा मुषारे

घरनी विगास धारे जोर छोरधारे हैं ।

शोन प सनेह धारे प्रीतम व प्रात ध्यारे

उपमान पाजत विरधि रधि हारे हैं ।

मीन मग खजन बनाये विधि प्र म सारी

धारि बन ध्योम बस सगिजा विधारे हैं ।

—प्रेम मगा सीताराम नगनिश बरुना

एकजन तें नीचे है एकजन तें नीचे है  
 करगन ते नीचे है ए नन प्रति नीचे है ।<sup>१</sup>

पर काव्य र रगिता जानते हैं कि मात्र यन् बनाना कि यन् वस्तु उम वस्तु  
 म अच्छा है ताव्यचित्रण की परिपाटी नहीं है ।

घनानन्द ननशाम प्रशारो का वगन दिया है पर यहाँ भा परम्परा  
 सिद्ध उपमाना व जान म उनका विशेषता बहुत उभर रहा गयी है यद्यपि उनका  
 प्रभाव ही और व अधिमाभिन गवत रर सक है

वक् विसाल रगीत रसाग द्योने कटाक्ष कलानि म पडित ।  
 सांयल संत निरई निवेत हियो हरि लेत ह भारत मडित ।  
 वेधि के प्रान करे घिरिदान मुजान खरे भरे नह अपडित ।  
 आनद आसन धूमरे नन मनोज के घाजनि ओज प्रच डित ।

सीता की आग्या की चितवनि का एन प्रभावगाला आर अपेक्षाकृत नया  
 रूप प्रम सखी व निम्न छन्द म प्राप्त होता है । यद्यपि वमस नशा का गाभा का  
 भावन नयी जाता पर तु उमक तीन गुणा व वयन म कवि की मौलिकता  
 दृष्ट्य है

वा अनियारी बिलोकनि की छवि गाइये की विधि की बुधि हीन है ।  
 प्रम सखी मिथिलेग मुता की कटाक्ष के कोर भये गन तीन है ।  
 मोचु समान दशानन की मुर धेनु समानि मु पानत दीन है ।  
 रूप मुधा की तरगिनी सो निशद्योस जहाँ हरि की मन मीन है ।<sup>१</sup>

तान प्रकार क लोका क लिए उसम तीन गुण हैं । रावण क लिए वह  
 चितवनि सगरक हे एव हीन जन क त्रिण कामधनु सी प्रतिपानक पर प्रियतम  
 राम क लिए ता वह रूप मुधा का तरगिणी है जिसम उनका मन मीन बना  
 निवास करता रहता है । इसम उपमाना का नयापन अपेक्षाकृत वगन अधिक  
 प्रभावगारी बना सका है ।

अथ नारी अ ग

नारी क अप्रधान यौन अंगो म कुचो का अत्यधिक महत्त्व है पर मह  
 वात कुछ विचित्र सी नगणा कि प्रमाभविन व कविया नस्तना का बणन बहुत

१ रूप रतिक देव नित्य बिहार पत्तनलो ५६ ।

२ घनानन्द मुजान हित १८ (घनानन्द प्रभावलो पृ० ८) ।

३ प्रम सखी सीताराम नरसिंह वणन ।

नती किया। स्व रसिक देव न ता उनका गानाई ऊचाई एव कठारता प्राप्ति का चयता हुआ सकत मात्र किया है।<sup>१</sup> वान प्रती ने उत्तम प्रलकार क सार बुचा का सुंदर वगन किया है

हैं प्रति सुंदर उरज युग रह तय उर जु प्रसाग ।  
नवलनेह के फल द्व प्रति पिय सुख की रासि ।

एव वगन का विशयता यह है कि इस वगन म उदाभ शृंगार की मासयता नहा मान पाई है।

अस्तु कंग नासिका नय का माता भालपट्ट पीठ कति उर द्वय नाभि आदि क वगन परम्परा प्राप्त गला पर हा अधिक हुए ह पर वाच-वाच म अपनी मोनिकता क भी मथष्ट दान उदान लिय हैं। उदाहरणाय राधाउत्तभीय रमिकदास द्वारा मस्तक पर हुई पत्र रचना की गोभा दलिय

प्रति छबोलों स्वच्छ रचि वस्य लिलार नसाइ ।  
पियमम पक्षी लक्ष्यगति विहरत हित मडराय ॥<sup>२</sup>

इसी प्रकार नासिका का गय का माना हिनता हुआ एसा प्रतात गना है माना हास और अनुराग की गामा जिडाल पर चती है।<sup>३</sup> मून क लिए अमून उपमान उपस्थित करन की यह लाभगिन गना घनानक जम कविया म खूब मिनती है। इसी प्रकार दाता की उगने प्रगनता क वाज कहा है।

धानकृष्ण नायक वान प्रती न गाना का तन ज्ञाति का वन मामिन वगन किया है। यह वगन वास्तव म उपमान परत उनना नहा है जिनना नि अनुभूति परत। सीता क गदार का छवि ज्ञाति जिगामा ना क वचामय कर गना है एसा गगा है कि माना यत्र स्वयं गगार म नूर रग हा और जिन कि रग (चादा) अपने घग म रमा नता है

सब दिगि कवन मय करत तय तन ज्ञानि अनुप ।  
मनु भरि नरि अगन पर जग रमाय रूप ।

राम गाना क मोत्य पर अगन अगती का ज्ञा रागना उतामन रगन है एव भी मोत्य का अनुभूति परक वगन ही है

१ रूप रसिकद्वय नित्य विहार पदायता ५० ५१ ५५ ।

२ रतिरशत मोदय सता । २ ।

पही पहा ५ ।

४ पही पही ६ ।

बारि अपनपी हगन ते उरि अनि कपू कपून ।  
रहत उतारत हीप महि पियहू राई सून ।<sup>१</sup>

राधा क रूप का व्यापक प्रमाण दर्शाने वाला यह रूप भा हाट्य है । राधा दुःखिन क वेग म क्लेशतः पूजन जा रहा है । रूप वधूवेग की छवि का वर्णन करते हुए हरिदासा सप्रणय क स्वामी रमिअत्र कहते हैं कि जब अपने तूपुर की स्तुति श्रुति करती हुई पत्न रसती हैं ना पृथ्वी का उग छवि म छवि प्राप्त होती है

शुभ भगुरु पग धरति धरनि पर छवि पावति अवनो ।  
छिद्रि सुगध मूल तह पूयो फूलनि मान धनो ॥<sup>२</sup>

श्याम पीताम्बरधारी प्रसिद्ध है परन्तु एक दिन राधा ने पीत-शृंगार किया इस रूप शृंगार क आगे कृष्ण चरित हुए कि अरे यह कौन पीताम्बर धारी आ गया ? पीत रंगो की यह सज्जा उपमान रहित निररञ्जन निम्न पद म दर्शनीय है

पीरी सारी पहिरें प्यारी ।  
अ गिया सह गा तिहीं रग की तापरि जरद झिनारी ।  
पियरे ही भूपनि कसमनि के कर गेंडुआ लिये फूल हजारो ।  
प्रीतम प्र म प्रवाह परे ललि यहै कौन पीताम्बर धारी ॥<sup>३</sup>

ऐसा ही एक उपमान (रति क उल्लेख द्वारा प्रतीप अवश्य आ गया है) रहित पुष्प शृंगार राम ने सीता का किया था । पर सौन्दर्य का कोई मानसिक प्रभाव उसम उभर नहीं पाता कवल फूलो और उनसे बनाय जाने वाले वस्त्रा भूषणो का परिगणन मात्र हुआ है

धूम धमारी गुलाब को धाधरी पीत चमेली की ओत्नी भौनी ।  
कज की लाल कसे कल कचकी नील जही की सजा पुज दीनी ।  
चम्पे कः हार बनरि की चन्द्रिका दलि के चित्त भई रति हीनी ।  
फटिक गिला प रामसख पिय फूल सिंगार सिया छवि कीनी ।

१ बाल अनो नेह प्रकाश ।

२ रतिकदव रस के पद २२ (अष्टाचार्यों की बानी ह० लि० प्रति)

३ पीताम्बरदव की बानी पद ३३ ।

४ रामसख जानकी नी रत्न माणिक्य (राम भक्ति साहित्य म मधुर उपासना म सगृहीत पृ० ३२३) ।



ललित विंगोरी दब जी के एक सोरठे क बाद इस अंग को हम समाप्त करेंगे । इस दोहे म एक और तो वित्रात्मकता ह एव दूसरी ओर वह सूक्ष्मता है जो मपूग चेतना पर व्याप्त हो जाती है

राधे रूप रसाल क्षण क्षण उठत तरंग प्रति ।  
अवभुत नन विंगाल ललितकिंगोरी प्राण हैं।<sup>१</sup>

## (२) आकषण और प्रेम

रूप की यह अपार रागि प्रिय क मन म गहन आकषण और प्रेम को जन्म देती है । इस सम्बन्ध म यह दृष्टान्त है कि शू कि प्रेम की दबी एव सौन्दर्य की रागि क रूप म प्रिया जी की कल्पना हुई है अत आकषण एव प्रेम का आधिक्य कथन म दिखाना गया है । परन्तु सद्भातिक रूप स प्रेम रूप आकषण आदि की एकता दम्पति म ही मानी गयी है । राधावल्लभीय रसिकदास जी ने बनाया है कि प्रेम भी कहना सब काई है पर वास्तव म वह राधा और लाल क ही हृदय म पूगरूप म भरा हुआ है अतः तो उमकी लघु मात्रा ही दी है तथा रूप भी ममार म एक कण मात्र है वास्तविक अमाधिक शीत्य ता दम्पति म ही है तथा दम्पति का रम लाल को दूनह दुनहिनिया म धाढे काल के लिए हाता है पर यह दम्पति एस हैं कि कय भी इनक लिए पल क समान बीत जाता है । लाल म जो शृंगार का गन्ध रम कहलाना है यह नित्य एव एक रस राधा म ही है उन्ही म उम अपना महत्त्व प्राप्त होता है

और दुसहिनी दूतह दिन दस ही जू कहाव  
ये दिन दूतह याइ कलम पल सम जू विहाव ।  
गहवौ रस सिंगार लोब लोबनि जू कहाव  
नित्य एक रस थी राधा से यह कवि पाव ।  
प्रम प्रम सब कहै कहू सपु दरसि पर मो है  
पुरन राधा सात हिय नित रहतु भर मो है ।  
रूप रूप सब कहू लोब भा इक इक कए हैं  
सत चिस आनदरूप अमाइक दपति तन है ।  
सा रस रूप प्रेम आनद भोगता शोऊ,  
मेरी बिरसे रसिक और जान कहा शोऊ।<sup>२</sup>

दृश्य और राधा क पारस्परिक एकरत प्रेम आकषण आदि के लिए

१ ललित विंगोरीदब साक्षी ।

२ रसिकदास धी राधा विपिनचरी को परत्व (ह लि प्रति पृ० ६३) ।

जल-तरंग का अप्रमत्त बहुधा अन कविया न उपस्थित किया है ।<sup>१</sup> महावाणी म दाना क पारस्परिक आनपण एव अनाथा श्रयत्व का बडा हा उपाय प्रगन हुआ है ।

प्यारी जू प्यारे की जीवन प्यारी प्यारी प्रान अधार ।  
प्यारी प्यारे क उर माना प्यारी प्यारी क उर हार ।  
प्यारी प्यार रगमहन म रग भर बोऊ करत विहार ।

वास्तव म स्वयं एव उसकी नाला का जगा गृहज प्राकृतिक मग हाता है वही म्यति मग दम्पति का है

ज्यों लाली प्रण हम कों सग निरतर दलि ।  
तसें शित्य विहार सख लाल लाडली लेलि ।

गोपीय वपुणव मतानुयाया ब्रह्मगोपाल जी न एव दुमर का रस प्र मा धीनता का या वर्णित किया है

श्री राधामाधय रग सरति रग रस लीन ।  
प्यारी पिय क प्र म वग पिय प्यारी आधीन ॥

इस प्रकार युगल क पारस्परिक आनपण का अवत करन वाचकता बहुत स मिल जावेंगे परंतु राधा की आनपणजय विह्वलता का अनग म चित्रण म उपासना पद्धति क बहुत अनुकूल नहा है । युगनापासक जिन कविया म य चित्रण उपनय ही जात ह उ ह हम गोपीभाव वाली ब्रजलीला का उपा सना क अतमत्त विवचित करगे । इस अग म हम कपण की उरमुक्ता वाल अगा की हा चचा करग । पानाम्बर एव एपरसिकत्व न तो कपण क नया का

१ (क) "या जल और तरंग हैत्या पिय प्यारी रूप ।

पूण प्रम माधय मय श्रीव दायन भव ॥

—गा० रूपनाथ रस रत्नाकर (२० नि प्रति) ।

(ख) तू सिय पिय के रग रगी रग पीव तव रग ।

रह अली इक रूप ह व जन मिल तरंग ॥

—वानमना नह प्रकाश ।

२ महावाणी सेवासल पद सख्या ६ पृ० २६ ।

३ गो० रूपलाल रस रत्नाकर (ह० लि प्रति) ।

४ ब्रह्मगोपाल हरिनीला दोहा ४, पृ० ३ ।

राधा रूप का आगती उताग्न वाता कहा है ।<sup>१</sup>

उनका मन राधा के रजन वन म रमिक बना मडराया करता है ।<sup>१</sup>  
प्रिया दाम के अनुमार घनयाम कृष्ण चातक हैं एव राधा गारी घटा है ।

द्विग धिनास गत् दान गद् जीर मान गद् नाम ।

गोर घटा उनयति इहां धात्रिक वह घनस्याम ॥<sup>१</sup>

राधा के वान लव सचिक्वण मुग्धित कणा पर प्रिय वार-वार प्रपन प्राण रिछावर करन रहत है । बालप्रता जा के राम स्वय मीता म कन्त है कि जमा धान ल तुम्हार मुख कमन के मरर पान म मुभ मिनता है व सा धान ता मुभ काटि प्रह्लाड मिलन पर भा नया प्राप्त जाता है । तनित विगारा लव न राधा रूप का कृष्ण पर पडन वाला प्रभाय बडे सगन गणा म प्रन्नुत किया है । कतिपय अनुभावा के माध्यम से मन का प्रमत्ता का व्यजना म यह दाहा विगारा या मनिराम किया के भा कनात्मक गह के माध मुद्रिया म रखा जा सस्ता है

हरप हरप मुस्रान ए भरि भरि दलत नन ।

पुलकि पुलकि अ गनि उठे बल बल भरि रति सन ।<sup>१</sup>

### (३) मिलनाकुसता

इम रूपारपण एव प्रम भावना का गृहज विकास है कि मन म मिनन की नीत्र आकुनता उत्पन्न हो जाय । यत् आकुनता प्रिय के प्रमग म धत्यधिक भावावेग के साथ चित्रित की गई है । रामसग के राम माता का स्वप्न म त्यन हैं उन उम स्वप्न वाच रूप का वगन करत हुए कन्त हैं

१ (क) मगल आरति करत बितोर

दोष बगन करि धरन डडवत चित्र जायका रति मन डोर ।

—गानाम्बर ल १०४० ।

(ख) करत कधनीय विगार कु घर वर नीराजन नाति मों ।

—रूप रमिता ल नि० वि० पनावता ६६ ।

२ रूप रतिक दष नि० वि० पदावता ५४ ।

३ प्रियादास रमिक मोहनो डोहा २ ।

४ रमिकदास सौन्दर्यलता ।

५ आतपना नह प्रकाश रामजी के वचन तोनाता ९ प्रति ।

६ सनितविगोरो दष की घाना माया ।

बसे मिले प्रसिद्धि प्रिया यह क्यों हो जनन बाई ।  
रामसख बहि-बहि है सोते सुधि बुधि सब विसराई ॥<sup>१</sup>

राधा के मोहन रूप में मान्य हुए मोहन राय उस रूप की प्राप्ति के लिए ललचाते रहते हैं।<sup>१</sup> वास्तव में मान्य का मन मग्न है जो प्यारी प्यारविन्द के मकरन्द को चरतन चरतन इस पदे में फस गया है

मोहन को मन मधुप है पर यो घानि इहि फद ।  
प्यारी पद अरविन्द की छाति छाति मकरद ।

कृष्ण स्वयं राधासे निवेदन करते हैं कि चना प्यारी किसी एकान्त निभृत कुज में विहार करें जना पर कि किसी पक्षी तन का खटना न हो और फिर शत्रु भी विहार की है

एक बात कहीं श्रवण लगी चित्त द सुनहु पियारी ।  
सुभग फूल फूले ब-बाबत तसो ये सरद उजियारी ।  
चलि राधे अतर सुख सूट सखी रहै सब प्यारी ।  
मोहि तोहि जहाँ अपनुपो भूले रह न सुरति सभारी ।  
जहाँ न परवों होइ पद्यी को यों दुरि कहत बिहारी ।  
नरहरिदास पीय मन की जानी भाग सेज सवारी ।

सिद्धान्तत दाना नित्य एक रस विहार में विमग्न माने गये हैं ऐसी अवस्था में सहज ही यह प्रश्न उठ सकता है कि मित्रन की यह आकुलता कसी ? पर यही तो इस प्रेमी युगल की विशेषता है कि गौर स्याम तन मन से मिले रहते हैं पर फिर भी मित्रन की चाह बनी ही रहती है ।

छिन छिन उत्सव रसिक के महाकेल के भा ।  
गौर स्याम तन मन मिले मिलन को चाइ ॥<sup>२</sup>

प्रिया को तन मन से श्रियतम मिले रहने हैं और लाल को तन मन से प्यारी पर इस मित्रन और नेह की बात कुछ अनोखी ही है इसके बारे में कुछ भी

१ रामसख पदावली (भुवनेश्वरनाथ मिश्र साधव रा० भ० प० उ० मे सगहीत पृ० ३२५) ।

२ रूप रसिकदव नि० वि० पदावली पद ५ ।

३ वही लीला विगति प्रममजरी' ५ ।

४ स्वामी नरहरि दव रस के पद ६ (अष्टाचार्यों की बानी) ।

५ ललित किशोरी दव साखी १३८ ।

बह पाने म ललितकिंगारी दब अपने को असमय पात हैं । है भी तो यह अनिवचनीय मिलन और प्रेम

कहा कही या मिलन की जो मिलियो जिय होइ ।  
तन मन सो प्रीतम तऊ मिलन की छोइ ।<sup>१</sup>  
परम नेह की बात यह मो प कही न जाय ।  
तन मन सो प्यारी मिली तऊ लाल अकुलाय ।<sup>२</sup>

यही दगा राम की भी है । दशपि दम्पति सदा रसलीन रहत हैं पर प्रिय अपना अपनपौ त्याग कर अधिक् अधीन हा गय हैं । वे सीता के नीलाम्बरा के पुण्य की सराहना करत हैं (कि उहा क समान तन स लिपटे रह) उनक नेत्र अ गराग हो जाना चाहत हैं <sup>३</sup>

यद्यपि दम्पति परस पर सदा प्रेम रस लीन ।  
रह अपन पौ हारि क प पिय अधिक् अधीन ।  
श्यामवरण अम्बरन को सुकृति सराहत लाल ।  
छराहरा अ ग राग भो चाहत नन विनाल ॥<sup>४</sup>

#### (४) विरह और मान

साहित्य शास्त्रिया न विरह क चार अ ग मान हैं —पूव राग मान प्रयास और करण । इनम म अजर अमर, अजमा निर्य विहार रत दम्पति क मध्य पूव राग प्रयास एव करण का प्रसंग ही नहा उठता । ब्रजलीलाभा क अस्वीकरण क कारण इनम म किसी भी अवस्था क स्वीकार करन का प्रश्न ही नही उठता था । इसा कारण विरह की बदल मान वाली स्थिति ही यहा पर स्थापित है । पर चतुथ अध्याय म हम यह कह चुक हैं कि मान क बस काई स्थूल कारण यहा पर नही है जम कि ब्रजलीला गायका द्वारा स्वाकार किय गए हैं । साहित्य दपण म मान क दो भेद किय गय हैं ।—प्रणय मान और ईर्ष्या मान ।<sup>५</sup> प्रणयमान व प्रमय म विदनाय कविराज न कता है कि नम की बुटिलगति हान स अकारण हा काय हाता है । ईर्ष्यामान नायक का अय किसा पर अनुरक्ति

१ यही कही १३६ ।

२ ललित किंगारी दब तातो १४० ।

३ बालमली नृप्रकाश ।

४ विदनाय कविराज साहित्यदपण ततोप परिच्छेद, 'लोक' १८७ ।

५ यही कही ३।१६८ ।

जानकर जाना है। प्रथम नायक और नायिका जाना म स्थापित किया गया है। इन रगापागाता म साम्प्रदाय दृष्टि म प्रणय माता की ना स्वीकृति के पर उभयपक्षीय न हारर यह नायिका म हा चित्रित किया गया है। मन्वत म एव सूचित प्रतिष्ठ है

मदीना घ वधूना घ भजगानां व रावदा ।

प्रम्यामपि गतिवन्ना कारस तत्र नेप्यत ।

नन्दिया वधुना सपों एव प्रम की गति प्रसारण ना वक्र जाना है (साहित्य दण्डकार ने प्र म की वक्रता बनाई है।) प्रम एव वधुजन की यह प्रसारण वक्रता इन नित्य विहारी विहारिणि म मान क रूप म प्रस्त हुई है।

राधा भवानक ही मान कर बठा एव सग्री प्राकर उन्हें समझती है और उनक दन वक्रस्वभाव क लिए कुछ डाँटती भी है। उमर अनुमार यामा का तो स्वभाव ही मान का पट गया है कौन यह निणय करे कि अपराध किसका था—इनका या तुम्हारा? वास्तव म य ता तुम्हारे रूप रम क नाभा हैं मुग्ग दखत ही उनका दिन बीतता है। तुम ता क्षण मात्र म ही रस का विरम कर दती हा। राध ! जरा समझ बूझकर लवा तुम ता प्रिया पाना की नाव चला रहा हा (बिना कारण ही मान किय जा रही हा।)

तुम्हारी तो पर यी मान की सुभाव ।

तुम्हारी खोट कइनकी कहिय कौन करे यह याव ।

य तो तिहारे रूप रस लोभी मुख जोवत दिन जाय ।

छिन मे रस बेरस करि डारत कोप करे करवाय ।

समझि दख राधे मन माहीं बिन पानी क नाय ।

री रसिक बिहारी रस दरा कोने अपने अपने दाव ।<sup>१</sup>

यहा पर यह याट दिना देना अनुचित न रहगा कि सन्धरिया यद्यपि प्रिया प्रियतम जाना का समान प्रिय हाता है पर मान क समय व प्रिय का पन लकर प्रिय क मान माचन का प्रयास करता है। उपरोक्त पद म सखा यथा काय कर रही है—उसन याम का पक्ष दिया है। इस सखा न बुद्ध गिक्वामत एव आक्षय क स्वर म मान माचन करना चाहत हा दूसरी सखी साम नीति का सहारा नकर प्रिय की बचालत करती है और सफ न भी हा जाना है

१ विश्वनाथ कविराज साहित्य दण्ड ३।१६६ ।

२ वही वही ३।१६८ ।

३ स्वामी रसिकुव (हरिदासी सप्रदाय) तिगार रस क पद स० १३ (घट्टात्रायों की बाणी) ।

मान न कीज रसीले स्याम सों ।

तुम तो हो लालन की अ तिया बधे तिहारे दाम सों ।

बिन भ्रागस जिय दोष धरति हो निरति आयु सी वाम सो ।

श्री रसिक विहारो जानि अपुनपौ बिहसि मिली पोष घाय सो ।<sup>१</sup>

विश्वनाथ वविराज न मान भग व छह उपाय (साम भक्त दान नति उपमा और रमानर) माहित्य दपण म बताना है<sup>१</sup> उनम म भेद और साम का अलक्ष ऊपर हा चुका है । स्वामी नरहरिचन्द्र न नति का एक मनाहर उदाहरण दिया है । कई बार मनान का प्रयाम किया गया पर वह अपना हृदय और कृति बनाकर मान गह रही । तब प्रिय न पर पकड़कर आधीनी करक विद्वानस सिनाया कि मरी प्रिया एक मात्र तू ही है जा कि मानिनी बन बठी है । जब प्रिया न (प्रिय व हृदय म) अपना ही रूप देवा और निमी स्त्री को वहां न पाया तब जानर क्या मन म मान की छरक गयी और मुय की वह राति हमार प्रिय ग वाली था । छत्र या है

केहू बार पही मानित न मान गही

हियो कठिन कष्ट और हो ठईरो ।

पाइ गहि मना आधीन कोये माई सु

तू एक ध्यारी मानिनि भई रो ।

जय बहयो आपनो रूप और न कोई श्रीय

अनूप मान की छरक त हो हीय त भई रो ।

हगि डोली मुख की राति मन भाई

नरहरिदास याइ प्रीति तई रो ।<sup>१</sup>

पर तुमव मित्राकर मान मबधो रचनामें १८वा गती व नित्यविहारा पागका म बिरस हा है । अनरा ध्यान विचारन युगन का नाना चप्याप्या का चित्रित करन का धार ही प्रपिक रना है ।

(५) विहार श्रीदास

एक वविषा की प्रतिभा और प्रख्या का मुख्य शक्ति स्मृति की नाना विहार प्राशदा और धानन व तिए का रग निभर मन्-मद् मान है । विहार श्रीदास म भी अनरा मन अधिकांत गया व हा धामधाम महराना रना है । मुरत एक मुरता न व समस्य मनार रित्र इग बाण म मजान हूण है । मत्र व बाण मग प्राणों व विषण म ना उनका मन रमा है । अनरा म हाता एक

१ १५० रसिकदय विहार रग व पद १८ (अप्यावापों का वाणी) ।

२ माहित्य दपण १२०१ ।

नरहरिदय पद ८ (अप्यावापों की वाणी)

हिंसात्मक उनका सबसे प्रिय उद्देश्य है। वसन्त एक वर्षों के चित्रों का इम्प्रीशन बस काय में बाह्य है। दम्पति का लेकर ही प्रेम का प्रथम परिहास एवं शीघ्र भा उपलब्ध हो जाती है। इस मारे साहित्य को प्राधुनिक नविक मानदण्डों से नापने पर बहुसंख्यक मूल्यों के स्थान दियाई पड़ गे। सधारा शृंगार व निरावृत्त ऐम वगण बहुत से मिलेंगे जिन्हें 'गुदतावाणी' (प्यूरिटन) प्रतीत भाचना चाहें। पर इम सबध में यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि इन कवियों की अनुभूति साधना की है। य समस्त कवि साधना पथ के सक्रिय परिणाम एवं प्रिया प्रियतम के इस नित्यविहार का प्राध्यात्मिक मानसिक स्तर पर अत्यन्त उन्नत भाव से स्वीकार करते थे। वास्तव में यह सारी साधना एक प्रकार के प्रेम रहस्यवाद (Love Mysticism) की है। इसमें बौद्धिक उन्नयन नहीं भावात्मक संवेग की एक मन संस्कार (Mental Culture) जन्म स्थितियों की है। य समस्त रचनाएँ किसी प्राशय्यता को रिक्त करने के लिये भी नहीं लिखी गयीं। दम्पति के संस्कार का भाजन ही इनकी मुख्य प्रेरणा थी। अतः लौकिक नीति के मानदण्डों पर यह परखना ठीक न रहगा। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मन ही इनमें काम की अनुभूति मानी जाय पर साधना के क्षेत्र में इससे काममें धूँय रहना ही उचित होगा।

आगे हम कतिपय इन शीघ्रों के रूप को स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।

### अभिसार —

जसा कि अभी हमने कहा है इन कवियों का मन सर्वाधिक प्रिया प्रियतम के अभिसार उगण ही में लगा है। अभिसार शीघ्रों की अनन्त रस निभर स्थितियों की चर्चा इन कवियों में की है। विहार का ऐसा ही अनुभूतिपरक परभाव ही ऐन्द्रिक चित्र रसिकदास (राधावल्लभों) का है। रस के सिद्ध में भ्रूणों लग रहे हैं भाव की तरफ उठ रही है एक प्रेम में पगे हुए अभिसारों की मरोड़ में अचल भ्रूणों होते हैं पसीने की घोड़ी योनी व भ्रूणों आई हैं। एक दूसरे पर नेत्र लगे हुए हैं सुख के रोम में वधन छोड़ते हुए रात जगे हैं। ऐसी बुद्धि कहाँ जा इस सबका वगण किया जा सके

रस सिद्ध भ्रूणों भाव हिलोर जाव मरोड़ प्रेम पग  
अचल भ्रूणों भ्रमण धोर पटलो भोर अग लग।  
वग वहु शोर अति सुख रोम वधन छोड़ रन जग  
सुखहामन भोर सावर जोर त्रिभवन शोर शोर नग।'

कभी-कभी तो यह मिनत लीना मन ही मन हो जाती है। सतियाँ जान भी नहीं पाती। मन ही मन एक दूसरे की अक में भरकर आनन्द भी ले लेते हैं



घोर चोरा चोरी कटाक्ष भी चला दते हैं । कह भी लेते हैं नट भी लेते हैं, रीभते भी हैं खीभने भी हैं एव हिलमिन भी नत हैं

दोउजन ननन ही बतराव ।

स्यामास्याम सतिन के सगहि भेद न कोउ पाव ।

रहसि रग राते रसभाते विजिभ्रावत हिलत मिलत लुगि जाव ।

मन ही मन विव भ्र क भरत पुनि हिय भानद बढ़ाव ।

घोरा घोर, चलत कटाछनि सबकी दीठि बचाव ।'

अभिसार समय की अभिलाषा का अत्यंत मार्मिक दृश्य अनन्य अली जी ने प्रस्तुत किया है । दा अशा की पारस्परिक प्रतिद्विधिता दिखाकर विहार की उत्कट लालना और त्राकुनता असम प्रकटकी गई है । स्पग करन क लिए हाय तरसते हैं एव देवन क लिए दृग ललचाते हैं इस प्रकार भुजाभा एव नयनो क मध्य हाठ परी है । इस दाहे म प्रम की उस गहन अवस्था का संकेत है जब बिना देस भी नहा रना जाता और दल लन पर स्पग आलिंगनादि भी अनिवाय हो जात हैं ।

काव्य की सर्वोत्तम सिद्धि हाती है जब किसी एव मूक्षम संकेत क द्वारा किसी पूरे दृश्य का विम्ब उपस्थित कर दिया जाता है । यजना गक्ति की पूरे सामध्य हान पर ही यह उपलब्धि कवि का मिलती है । रूप रसिक दव का निम्नांकित दाहा एमी हा व्यजना गक्ति स भरपूर है । कवि सुरति का चित्रण करना चाहता है पर उस स्पष्ट तैदिक रूप म न करके एव संकेत द णता है विप्यारी जब प्रिय का अपन चरण कमला का माला पहनाती है तब अनिवचनीय धान मिलना है

बहा बही तिहि सभ की मुख भानद रसाउ ।

पहिरायति प्यारी जवाहि पियाहि पवभुज माल ।'

परिरम्भन घादि की दगी प्रिया का ब्रह्मगोपाल अत्यंत स्पूस रूप म वणित कर देते हैं

१ रूप रसिकदव नि वि० पदा० २६ ।

२ परसन की कर तरतही बरसन दुग घपलाइ ।

होइ परी भुज नन सो सपट अति तरलाइ ॥

—काव्य धनी का वाणी (डॉ० विजयन्त स्नातक द्वारा राधावल्लभ सप्रणय निर्दाल घोर मार्मिक म पृ० ४६२ पर उद्धृत) ।

३ रूप रसिकदव सीता विगति पूल विलास, ७ ।

प्रिया प्रिय पोट्टि रह पवक ।  
 प्र मयिबन लसे निग सारी भरि भरि निजु निज घ क ।  
 परिरम्भन चम्भन घालिगन करत सट्ट नि गक ॥'

अभिमार लमा मधा गुफित है रि प्रिय वा तुष्ण प्रिया की अवन म  
 एव वर वा वरण माना म एव मन म मन तथा नया म नय परम्पर उनम  
 गय हैं

पिय कुण्डल तिय अलक सा कर कबल सो मान ।  
 मन तो मनीहगन तो रह उरभि दोउलाल ॥

मिलन समय क हास परिहास एव पारस्परिक छेड छाड

राभन क साथ लीभना और विभाता टुगार-तरु क अनुपम पत्र है ।  
 यत् स्वाम एव छ छाड रति गारा पुण्ट होता है एव रति वा और अविज पुण्ट  
 करता है । ऐसी अपेक्षाकृत सूक्ष्म एव आतुरिक श्रीलामा की आर भा न रमो  
 पामका वा ध्यान गया है । स्वाम स्वामा रूप रम चय रह है । बुज मन्त्र म  
 अवन है वाई भावता भा गहा है । ऐम एकात म राधा बठी है तान ठा है  
 एव रति व निण वार गार तर पत्रते है । पर राधा है वि विभा रती है—  
 मधुर म्त्र म वन्ती है वि अभी लडे रहा एव विवनी सगरो यद्यपि एव दूमर  
 अग एव दूमरे व निण नलवा रहे ह हृदय म अभिवापाए उमड रही हैं

स्वामा स्वाम रूप रत चाल ।  
 कु जमहल अकेले बीउ तहान कोऊ भाल ।  
 बठी आय ठाढ़ लाल पकरि पकरि कर राल ।  
 ठाट रहो विवनी सवारो मद मधर मुर भाल ।  
 अ ग ज ग ललचाइ रह मन उमगी उर अभिलास ।

पर स्वाम भा विभान म पाछ नही है । प्रिया जा साना चाहती है—  
 नयन मद लता है पर प्रिय पव देवर जगा दन है भन नी प्रिया भोतरेर ।  
 वभी वभी चुटकी भी बजान गगत है । अतत प्यारी भी रतिवग हाकर नलक  
 कर प्रिय व कठ नग जाती है

- १ ब्रह्मगोपाल हरिलीला ६ ।
- २ बाल अली नह प्रकाश प्र म विलास ।
- ३ स्वा० रतिकदव सिंगार रत क पद ३ ।

पलक भ्रमकति प्रियाजू की ज्यों ज्यों पिय द फूक जगाव ।  
 त्या त्यों तरनि तरेरे तयोरे सों सोंहनि भोह चढ़ाव ।  
 क बहूक कर पलबनि सा कोमल चट चटकी चटुकाव ।  
 रूप रतिक जब ध्यारी पिय क ललकि कठ लपटाव ।<sup>१</sup>

प्रम की यह सीचातानी भाजन व समय भा देखी जा सकती है । यमुना  
 श्रुति पर कुज में दोनों भाजन कर रहे हैं और एक दूसरे व कर स भुक् भुक्  
 व कर और छोड़ लत हैं । इस प्रकार हसते हुए बहुत प्रकार से मनभाषा करते हैं ।<sup>२</sup>  
 जलक्रीडा में डूबती लहर पानी व भीतर ही भीतर प्रिया व भ्रमा का स्पर्श कर  
 मान हैं कोई इस भ्रम का जान ही नहीं पाता ।<sup>३</sup> समीत और मान की गालिया  
 का भी बगन इनमें मिल जाता है ।

अभिहार व चित्र बहुधा मामल और ऐन्द्रिक् हो जाते हैं पर नीचे हम  
 मया मप्रणय व स्वामी रतिकदेव का एक पद उद्धृत कर रहे हैं । इस पद में  
 अभिहार का ऐन्द्रिक् चित्र नन्ही है पर उसमें एमी गहन अनुभूति का ऐसा सप्र  
 ण कराया गया है जा सारी चेतना पर अनायास ही छा जाता है

लत परस्पर अ ग सुवास ।

मन तरग जठति मन मय की और न कछु प्रवास ।

रोम रोम तन यह मुख विलसत भोजन भूय न प्यास ।

श्री रतिकविहारी मगन रहत नित गहत न लटक उसास ।

धम की मध लन से मन में मगन की तरग उठता है और किसी बात व  
 लिए धक्का नहीं रहता । राम रोम में यहा मान व विलगता है न भाजन की  
 भूय है और न प्यास । नित्यप्रति समस्त गटक और चिन्ता में दूर हमी में व मगन  
 रहत है । मगन चित्र गहन मानसिक अनुभूति का उपस्थित करता है ।

मुरतात एव जागरण

मुरतात एक जागरण-जान व अरुण-गीर्ण्य का भी अत्यंत सुगम एव  
 धारिक रेखाया में अरुण न कविया न किया है । मुरति व मंज पर उठकर जाग  
 हूए सुगम का यह पारोरिक चित्र अगिण

१ रूप रतिकदय नि० वि० पदावली ६७ ।

२ रतिकदास कालिदास भाग ३ प० २६१ ।

३ रूप रतिकदय नि० वि० पदा० २५ ।

४ स्वा० रतिकदय गिगार रण क पद ७ ।

प्रिया प्रीय मुरति सेज उठि जाग ।

धूमत नन घटन अलसाने मनहु समर सर लाग ।

सिधिल अ ग छुटी सिर अलक बदन स्येद बन लाग ।'

यह अभिगार वस्तु चित्रण रूप में हुआ है पर अधिक मूयम रूप में पीताम्बर देव न रूप उपस्थित किया है। कठिन मुरति की भार उठाने वाली छबीली का मूर्तिमती रागिनी (राग की गवरी) कहा है जिसके कि गोप्य का नीराजन स्वयं विगार करत हैं

तब छबीली तान मुनि कठिन मुरत की भोर ।

उठी राग की सरवरी आरति करत किसोर ।

राघव भार हान पर जागत हैं पर छाँवा में नींद भरी है। मद मत्त मुम कान हैं एव आलस्य में मिया तन की घोर झुक झुक पत्त हैं। सिया तन की घोर झुक झुक पटना जग नींद भर हाने का मकन करता है वहा राम की गवरी अनुराग यजना भी हानी है। ऐतक विम्वक साथ मानमिक पक्ष का मणि काचन संयोग समम हो मवा है

राघव भोर ही नौंद भरी अखियन मन भावन ।

वठि उठ फूलन गय्या पर कोटिन काम लजावन ।

मृदु मसक्यात जम्हात सिया तन भकि भकि परत सुहावन ।

राम सख या मघर रूप ल० मो जिय अतिहि जिवावन ।'

हाना एव हिडाल आनि उतमवा क भी प्रभूत वरण इन वविया न विय है। एम छदा की सरया सहस्रो में पहुच सकती है जिनमें वमत होनी वर्षा एव झूठन का गोभा वर्णित है। गरु ऋतु एव रासलीला क भी पर्याप्त चित्र उपलब्ध होते हैं। विस्तार भय से हम इनके उत्पत्त्य यहाँ पर नहीं दे रहे हैं।

(६) सहचरी सवा

नित्य वि आरोपामका की साधना सखीभाव की होती है यह हम पहले ने कह चुके है। सखीभाव में सविद्या युगल दम्पति की मुख सुविधा की सारी व्यवस्था करती हैं उनमें नित्य विहार का दान मुख नूटती है एव इस सवा तथा

१ स्वा० नरहरिदव ३ गार रस के पद २।

२ पीताम्बरदेव परमोवल ३ गार रस की साखी ५।

३ रामस । पदावली (रा भ०सा म उ० पृ ३२५)।

इस दान म ही व अपनी कृतायता मानती हैं । रामापागवा को स्वमुखा गाथा का छोड़कर अथत्र मवत्र वे तत्मुखा भाग से हा साजना करना हैं । अष्टयाम का मवा विधियाँ गी की मवा व लिए स्थापित हैं हैं । व उह मवरे गा गाकर जगाना हैं मुख धुनात हैं भाजन करानी हैं गृहार करानी हैं उन्हें मिहामन पर पत्रता हैं पान गितानी हैं विहार व लिए कुज म चवन व लिए प्ररित करना हैं मगीत नत्य व आयाजन करना है राम ग्वाती हैं गया विद्या दती हैं एव गयन ममय मान ना अनुराग करनी है । मान व ममय वे मान मोचन करनी हैं विहार व ममय मना । म्याम दूल्हा है एव मगिया बरानी बन जाना ५

सखी बरान पिय स्याम कत ।  
 अरण साज बन राज धाम पीत फूल तन पहिरि धाम ।  
 अ व भोरि ले सिर धारि भोरि द्रुम मुद्गत्रपति पत्र पोरि ।  
 फल प्रवाल तोरन बनाय छुवत पवन बसि परसि धाय ।  
 पिय प्यारी बन तन मुवात सहचरि भ्रमरी सब आस पास ।

मगिया गाय म अम्भुत प्राण भा करता ह । एव वार मगिया कृष्ण का अपन समान म्त्री वग पहना वनी व छाड़ जहाँ जतिना विगावा चपकता एव चित्रा धारि मगिया था । व मव उचित है

सखी सखी सिरमोर रूप इह बोन वधू किन आई ।  
 सबके मन को करत हरत बस निरखत सृधि बिसर आई ।

परन्तु एक चतुर मया जान गई—व गौवर गई घोर प्रिया का प्रिय का रूप वर से आई घोर उम वधू कृष्ण म बना

- १ सखियाँ सज रचना करव राधा से अनुरोध कर रही हैं  
 निज करि मज सवारी पछि पछि  
 पौड़ियेजू प्यारी बलि जाऊ ।  
 गुमन गुमन बिधि रधि रधि पछि-पछि  
 मुभग से सारा बलि जाऊ ।  
 गोरभ-गाना धनी पन हित  
 चिन द चनुरारा बलि जाऊ ।  
 रूप रसिज मुख बिसगट्ट टुलमट्ट  
 हा बलि बलिगारी जाऊ ।  
 —रूप रसिज रूप नि० वि० पञ्चदशी ६४ ।
- २ पाताम्बरद्वय पद ५१ ।

ये पतिनी ये पीव तिहारे मिलि विलतो मुण्डार् ।

मब सपिया उतमाहूवक विगाह वा कम ठान न्नी ह तव धूम घाम म दाना  
वा विवाह करा दती है ।<sup>१</sup>

राम की मखियाँ तो घोर भी डीठ मात्रम ाता है । वे राम से कहती ह  
कि तुम्हे स्त्रीवग म सगावर हूँ लग लाडना जी क हूँर म नचावैपी

कचन की गुजरी विद्यिया तुमको लहगो म गिया पहिरान्हो ।

कचकी साज लवाइ विरी पहिराय चुरी जइतस दनान्हो ।

माग सवारि क प्र म सखी गिर से दुर म फिरि अ क लगाइहो ।

द तिय को छवि मुन्दर जू हम लाडिली जू के मजूरि नवाइहो ।

वास्तव म पीताम्बर दव ने ठीक ही कहा है

तपत पीव सीतल प्रिया प्र म म्र घ अ धियार ।

सहचरि रस जल बरसहीं प्रीप्म रति सुखसार ॥<sup>१</sup>

### (७) सिद्धांत-कथन

इस युग क समस्त कवियों की यह सामान्य विशेषता है कि उहनि  
सिद्धांत कथन अलग म किया है । गुरु निष्ठा परोपकार वराग्य विषयो स  
अहचि श्यामा याम की एकता मचरी भाव म्रानि क सबध म उहान खूब  
लिखा है । चतुय अध्याय म हम उन म्रगा को उन्तून कर चुके ह अन महा पर  
दोहराना ठीक न रहेगा । उदाहरण क निम्न हम ललित किगोरी दव की कतिपय  
साखियाँ उदधृत कर रहे ह

१—ललित लाडले ललित वर ललित मुकेल उदार ।

ज ज थी हरिदास को अदभुत नित्य विहार ।

२—तन करि मन करि पवन करि फोज पर उपकार ।

ताही मे हरि मिलत है निहवै करि उर धार ।

३—भजन करो भोजन करी सोवौ पाइ पतारि ।

कुज बिहारिनि लाडिली कु न भूल पारि ।

१ पीताम्बर दव पद ३६ ।

२ म सखी सीताराम नल्लिखणन (रा०भ म०उ० पृ० ४ २) ।

३ पीताम्बर दव परमोवलध गार रस की साखी १ ।

४ ललित किगोरी दव साखी ८८ २२२ २७७ ।

## २ ब्रज लीला-गायको द्वारा सृजित काव्य

राधा और कृष्ण (सीता और राम) यद्यपि आलम्बन यहाँ भी रहते हैं पर उनका परिकर का विस्तार बन्द जाता है। बल्लभाद्या की सत्या बढ जाने के कारण भिन्नता की मात्रा बहुत बन्द जाती है। नाना प्रकार की नायक एवं नायिका सम्बन्धी धारणाएँ जम जाती हैं।<sup>१</sup> नायिकाया के बढने के साथ ही स्वकीया पर काया विरह मान कृत्यान्ति की स्वीकृति अनिवार्य हो जाती है। दूता या सम्बो का दायित्व भी किंचिन् भिन्न ही है। किशोर लीलाया के अतिरिक्त ब्रजलीला की स्वीकृति के कारण बान एवं पीण्ड लीलाएँ भी इस साहित्य में चित्रणीय हैं। एवं उपास्य के साथ युगल तत्त्व पूरी तरह आरापित नहीं हाना। यहाँ राधा भी हैं तथा श्रय गायियाँ भी हैं। राधा की स्थिति अधिक स अधिक प्रधान गायी की रहती है। इस अन्तर के पड जान के कारण विहार लीलाया में भी बडा अन्तर पड जाता है। नित्य विहारापामका में हमने दा बाना को विनाय रूप से लीत किया था

(१) कृष्ण-सौन्दर्य का चित्रण अत्यन्त विरल है।

(२) राधा की प्राकृतता मिलनवाद्या आन्ति का चित्रण भा  
पूजनम हुआ है।

कृष्ण का रूप एवं राधा की अभिनायाएँ वेचन युगल स्वल्प चित्रण के समय ही कविता का ध्यान आकर्षित करता हैं श्रयया रूपवता राधा हैं एवं अभिलापमय कृष्ण। परन्तु इन नागा में यह बात नहीं है। ब्रज-लीला (गायीभावोपासक) गायका ने राधा एवं गायियाँ के रूप के विवरण भी न्यि है पर मोहन के जिस भुवनमान्न रूप और रूप प्रभाव का उन्होंने चित्रित किया वह उट्ट पूव विवचिन गायता और काव्य में नितात अनम कर देता है। इसा प्रकार यद्यपि माहन की भिन्न एवं अभिमान का प्रावागा व्यक्त करने का भा चण्य की है परन्तु उनका अधिक ध्यान गायिकाया या राधा के तन मन का प्रकृति का चित्रण करने की धार अधि रहता है। हाना भूतना आन्ति उगवा तथा सयाग बान का आढाया के अनिरिक्त विरह की विभिन्न स्थिनिया कुत्रा के प्रति ईर्ष्या प्रपवा मुरला उपा मन्म आन्ति के भा मार्मिक चित्र इन कविता शरा उपस्थिन किय जा गव हैं। हम

१ गोपक हमने ब्रजलीला-नायक दिया है पर इसका अन्तगत हम विवेचना के लिए राम भक्ति-साहित्य की भी ब रचनाएँ ले रहे हैं जो पुढ नित्यविहारोपासना या तरमुली गारा से भिन्न हैं। इने आवरण सीता भी कहा जा सकता है।

२ अनुप अप्याय में इन बानों का हम विस्तार से विवेचन कर चुके हैं।

इन कवियों के कथ्य के प्रधान प्रधान भाग के विनयन एवं उद्घाटन का मूल्यांकन करते हैं।

### (१) रूप चित्रण

जमा कि धमा ऊपर गतत किया जा चुका है म्ना और पुष्प गाना हा तत्त्वा के रूप का चित्रण करने का प्रयास एवं कवियों ने किया है। परन्तु चित्रण की प्रगाती और अभिव्यक्ति का गाना बना है जिसे कि पाठ्ये म विरचित कर चुके हैं।

#### कृष्ण का रूप सौन्दर्य और उसका प्रभाव

परम्परा प्राप्त उपमानों के आधार पर कृष्ण के रूप के वर्णन चित्रण के ये कविपय उदाहरण हमें दे रहे हैं

इंद्र नील इंदोर घन छवि छनित श्याम शरीर रो।  
मौहें चाप सर कु कुम टोकी नासा राजत कीर रो।  
अधर बिंब मृदु हास चन्द्रिका दगन सिपिर मनि पाति रो।  
चार बिंबुक भ्रम्ब फलवादी शोब कम्बु मणि कान्ति रो।<sup>१</sup>

ऊपर की पंक्तियाँ विभिन्न अंगों के लिए उपमा जुटाती हैं परन्तु इनसे इन अंगों का कोई कल्पनाप्राप्त रूप हमारे मनों के सामने नहीं आता। चतुर्थ मत्ता नुयायी मनाहर नाम ने भी कृष्ण के रूप का वर्णन करना चाहा है। परन्तु न ता उस रूप का कोई बिम्ब हमारे सामने उपस्थित हो पाता है और न उस रूप के अनुभूति का हमें भना प्रकार हो पाती है। उपमानों का मधुर कल्पना के स्थान पर म छत्र म केवल वस्त्राभूषण ही गिनाये गये हैं

केसर की भूमिका प जरी खिरकी की पाग  
भूमिका कनक स्वच्छ मोर पच्छलटक।  
भ्रगा बू देदार दोदामी को कष्ट बार रम्यो  
उपरेंना पटक सुनेनी चित्र चटक।  
पुत्रावलि राजूबंद पहचोया अनलस  
सूयन म्पुर सुर पग चूरी मटक।  
जगमग राधिका रमण सिहासन ठाड़  
मनोहर मुसकान माही अटक।<sup>२</sup>

देव का छन्द ठीक म्ना परम्परा में है। यह बात हमें दे कि उन्होंने अपने छत्र म केनागत वाचन का अधिक प्रयोग किया है तथा देव का छत्र म उनका प्रभाव की श्रार भा संकेत करना चेतना

१ कृदाबन देव गीतामृत गंगा ४१६६

२ मनोहर दास राधारमण रस सागर स ११



पायन नूपुर मज्जु बज कटि किंकिन मे धुनि की मधुराई ।  
सावरे अग लस पटपोत, हिये हुलस धनमाल सुहाई ।  
माये किरोट घडे दृग चचल, मद हसी मुख चद जुहाई ।  
अ जग मन्दिर दीपक सुवर श्री अज दूनह देव सहाई ।<sup>१</sup>

इम प्रकार क वस्तुगत अलंकार प्रधान रूपचित्रण म यन-तत्र कल्पना का भा म्बिर प्रयोग मिल जाता है । दृष्ण की पीती पगरी वाम भाग का भुकी हुई है और उमक ऊपर मार का चि द्रवा मुसजित है । एमा प्रतात हाता है कि मुमर पवत पर अम्बण अन्धनुप उगा हुआ है । रत्न जन्मि मणि कुण्डल मुत पर एम प्रनात हान है माना नशत्रगण अचना राजा समभ कर चद्रमा की मया कर रह हा

पीत पाग रही वाम भाग भुकि तापर गिली गिलण्ड री  
मानुहु भए शृग पर ऊयो मधवा धनुव अलण्ड री ।  
रत्न पेच मणि कुण्डल राजत छाजत उपम अनूप री ।  
मनु उडुगण सेवत मुख चर्दाहि जान आपन भूप री ।<sup>१</sup>

रूप का वह चित्रण सर्व अधिक मार्मिक हाता है जिसम वस्तुगत स्वरूप क स्थान पर प्रभाव की व्यजना हाती है । मायनाथ का निम्नलिखित छन्द रूप का प्रभाव हा अधिक उपन करता है ।

मोहन पकज से दृग हैं इतन,  
य तर्षो तिरछे मुमवाय क ।  
कोणि मनम्मय के मयि प्रात  
फरी कल बान गटर गराय क ।  
श्री गगिनाथ सग अचर्षो जय  
बानन बाँसुरी की धुनि छाव क ।  
को यह नारि जु धीर धर उर  
प्रम की पीर गभीर पचाव क ।<sup>१</sup>

— राम पचाप्यायो पृ० ४१ (दृ ६५)

बिरारा का निम्नलिखित श्लोक भा गव गण विनाय क शारा हा रूप का व्यजना करता है

- १ बय मृज मापरी तार पृ० १०२ ।
- २ वृदावन बय गीतामृत गगा ४।६६ ।
- ३ गोमनाथ राम पचाप्यायो दृद ६५ पृ० ४१ ।

मृदुटी भटवनि पीत पट घटक सटवती घाल ।  
 चल चल चितवनि घोर चित तिमो बिहारी लाल ।<sup>१</sup>

सौन्दर्य का वस्तुपरक एवं अनुभूतिपरक रूप मर्मज्ञान रूप पर मतिराम का निम्नांकित संवय म यज्ञत हुआ है । प्रारम्भिक पक्ति म बाह्य शृंगार का चित्रण हुआ है । दूसरी पक्ति म मुखान चप्पा तथा कुन्तन क हिनन म उत्पन्न हान बानी गत्यात्मक गोमा चित्रित हुई है । तृतीय पक्ति म गारार क अग विनय नेत्र क आकार एवं नेत्रा क व्यापार का प्रभाव कवि न चित्रित किया है और अन्त म न सभी को समेट कर मन म जा अनुभूति जगता है उमर निए नायिका विराध मूलक उक्ति को अपनाती है । बटुघा जहाँ बाणा गिणिन और अममय हान जगता है वही य अलकार उमकी सबसे अधिक सहायता करत है

भोरपला मतिराम किरोट म बठ बनी बनमाल मुहाँई ।  
 मोहन की भुसवानि मनोहर कु डल डोलनि में छवि छाई ।  
 सोचन लोल बिसाल बिलोकनि को न बिलोकि भयो बस माई ।  
 था मुख की मधुराई कहा कहीं मोठी लग अ लियान सुनाई ।<sup>१</sup>

समय कवि कमा कमी रूप का वस्तुगत अकन गली का छात्रकर प्रभाव का व्यञ्जित करने वाला किसी सूत्रम रत्ना स मा बहुत बड़ा काम ने सकता है । ब्रह्मदेव न निम्न पक्तिया म यही किया है । कृष्ण क अग शृंगार आन्ति क निए उपमान का वर्णन न जुटा कर नायिका मान प्तना कह दना है कि उस रूप रागि क एक अग का अवनतान ससार की जिंसा भी नारी का अपनपन म बाहर कर देने क निए पर्याप्त ह

आजु भली विधि देखि क मारु सु भाई गोबधननार्थाह हौं री ।  
 एक ही अ ग निहारि जो नारि रहै अपनपन ताहि बढौं री ।<sup>१</sup>  
 पतिव्रत क सार अभिमान उस रूप का निहार नन क बाट घर रह जात है

सुरी किनरी नरी विश्व मे को है ऐसी नारि री  
 रहै आपनोपन पतिव्रत लिये एक ही अ ग निहारि री ।

वात बडी कट्ट दा गया है । बाइ कर क्या यह रूप टा एसा है—नायिका की

१ बिहारी लाल सतसई स ३२ (बिहारी रत्नाकर प्रयागर बनारस) ।

२ मतिराम रत्तराज छन्द ४१० ।

३ बृहदावन देव गीतामृत गंगा २।२२ ।

४ वही वही ४।६६ ।

धृतीता है कि प्र नाक्य म न्मुक प्रनाथ म बाद बच हा नहा सकता फिर उमा क  
 कर पाव बना ?

नायिका रूप चित्रण

नायिका का रूप चित्रण परम्परागत आन्तरिक गाना म हा उन कवियों  
 न भा किया है। नायिका क कथा का यह आन्तरिक वर्णन रीतिकान के विद्या  
 भा वर्णन क समकाल है

सुकुमार निवार म मकत तार स कञ्जल सार से धार निवारि  
 मुक्तावलि दाता ।

मार क जार तिगार क चीर स एही दिये पुनि एम विस्ताना ।  
 याम घटा त भनी निरस मुखवत् दिप तन दामिनि भाता ।  
 वृंदावन प्रभु भ्रात भये सखि बोनिय रीमन नद क साता ।<sup>१</sup>

सामनाथ का निम्न वर्णन भा कथा का उमा गाना का वर्णन करता है। उमावती  
 भा मिनता जुमता है कवन त्रिवारमकता का अंग बन गया है

तिमिर क तार हैं बसाकरन हार हैं,  
 काम करतार हैं कि प्यारी तर धार हैं ।<sup>२</sup>

उम आन्तरिकता क माय ग मोन्य का अन्तर्गति उन कविया म मिन जानी  
 है। वृंदावन उम का हा निम्न पक्ति है

तन जोवन यो जगमग यो लघ्यो रतन प्रभोल री ।  
 रूप धुधानो सी पर ज्यो मुख रघ्यो तम्बोल री ।<sup>३</sup>

धनान का सम्पूर्ण काव्य धनन मूम तव अनुभूतिमक चित्रण क विना  
 प्रसिद्ध हा है। निम्न मवन म मोन्य का आन्तरिक गानि उपस्थित का म  
 है

भयक सनि मुदर धानन गौर छर हय राजन बाननि छर ।  
 हृमि बोननि म छवि पूजन का वरपा उर ऊपर जानि है हृष ।  
 सटसोल कपाल कसाल करे, कम कठ बना जलजावनि है ।  
 धम धम तारा उठ दुनि का, परि है मनो रूप धर धर धर ।<sup>४</sup>

१ वृंदावन रूप गानामृत गगा, ४।८८ ।

२ सोमनाथ रतनावता मकुट छन्द स० ५० ।

३ वृंदावन देव गानामृत गगा, ४।३१

४ धनानर प्रकाशक स० ५ ।

(२) नायिका भेद

जसा नि उगरे म सहन कर चुकै प्रजनाता म बसु बानमापा का धारणा क कारण म माहिय म मा नायिकाभ क अनुस्य चित्रण पाव जा सकन ह । परनाया प्रपाधिका नायिका क य निवर्गिय

(क) लई कहैया ने हो घरि ।

खोरि साँकरी मोँक सभोक आइ गयो स्तितु त हेरि ।

बीरी मरी उर धरी श्रीचका अकली कहि गुनाऊ डेरि ।

आनद घन घरि सराबोर करि पठै घर नी निपट लपरि ।<sup>१</sup>

(ख) पाछ गोपाल आगे गुरुलोग रही अति लाजनि सों दबि नोठ म ।

प्रीव फिरायन चाहि सकी मुरि सो क न आये थे मरी ए दीठ म ।

नागर प्यारे के देखि की सति यास म आनी यहै उर नोठ म ।

आल भई मुखप किहि काज या बेर कयो आल भई नहि पीठ म ।<sup>१</sup>

(ग) कसे जस लाऊ म पनिघट जाऊ ?

होरी खेलत न दलाडिचो कयो कर निबहन पाऊ ।

तो निवज पाग मदमाते ही कुलबधू कहाऊ ।

जो छुव रसिक बिहारी अचर तो धरती फार समाऊ ।<sup>१</sup>

सा प्रकार मनाहर दास जी द्वारा चित्रित 'गुरनाभिसारिका नायिका का यह चित्र'

सरद की रनि उजियारी अभिसार प्रिया

प्रीतम प सेत सारी खोर अ ग कीने हैं ।

मालती मुक्ता मल्ली माला अ ग अ ग सोहे

आभूषण हीरनि जडित रग भीन हैं ।

चादनी म मिनि चली देखन न पाव आली

अ ग को सुगधि अनुसार के हू चीने हे ।

राधिका रमन मिने मनोहर भाति भाति

सिने मन भिने मानो शोभा जन मीने हैं ।

१ घनानद आनद पदावली १६७ ।

२ नागरी दास निम्बाक माधरी पृ ६२१ पर उद्धृत ।

बलीठणी जो (रसिक बिहारी) निम्बाक माधरी पृ ६४ पर उद्धृत ।

४ मनोहरदास राधारमण रस सागर छंदस १६ ।

बृदावन र्व का निम्नाकिन छत्र गडिना क बचन उपस्थित करना है

पतंग को रंग है नह तिहारो ।

दिन धार ली चटकीली लाग बहुरि यों परिजाइ मु फीकी फिकारो  
ऐसाये पाटी पड़े धुरने तन मन सावरो है मन त सोई कारो ।  
बृदावन प्रभु कारे प रंग न दूजो चढ़ तिहारो कहा चारो ।<sup>१</sup>

गतिना नायिका का उदाहरण मतिराम क निम्न पाह म रखा जा सकता है

सतरौहीं मोहन नहीं, दुर दुरायो नह ।

होत नाम नदलाल के नौपमाल ली बह ।<sup>२</sup>

बन्धुन र्व प्रकार क शृ गारो काव्य म नायिकाभक्त क विभिन्न रूप दूरे जा सकते हैं । या नायिकाभक्त का गान्धीय आधार पर र्व काव्य म नायिकाभा का चित्रण नहा हुआ है ।

भावपण एव मिलन-दा ।

उन कवियों न नायक और नायिका क पारस्परिक भावपण एव एक दूसरे क लिए व्याकुलता क अत्यन्त मनारम चित्र उपस्थित किये हैं । नाच हम नागरी नाम का एक अत्यन्त उन्नत उपाख्यान कर रहे हैं । नायिका (राधा) पर काया है अपनी अंग पर क्या अनु म मन्मन् बना मनारमा र्णी है अर्ध-याम दूर म गये यथा आगा उगाय है कि कर एक ही गाय प्रकृति का ता गतियों उनका महायता कर । पवन हृषा करक उनका धूप उघात र घोर उगा ममय र्णा करक किये न तापिगा बन कर उम मुग्ध क र्णन कर द—यथा प्रना ता घोर यथा आकुलता अनुराग क गन्ध रंग का अत्यन्त मगत्त र्णाभा म उपस्थित करन म ममय है । यथा चित्र मर मिता कर र्णना गतिगात्र है कि चित्रकता का स्थिर र्णाभा गारा निगताशन । जा सकता र्णन लिए भाषा क मधुप गति का भावपणता पणा है

भारो को कारा घ प्यारी निमा भुक्ति बादर मद फुला बरसाव ।

यामा जु आपनी ऊचा घटा प हृषी रम राति मनाररहि गाव ।

ता मम मोहन क हृग दूरि ते आतुर र्व की मीन यों पाव ।

पीन मया करि छू घट टार र्णा करि दामिनि दाप दिताव ।

१ बृदावन देख गानामृत गंगा ८। ७।

२ मतिराम रसराज ७८।

३ भावरोदास निम्बाक भावरो पृ० ६२० पर उद्धृत ।

रूप का उत्तरणा का यह दृश्य भी दृश्य है। एक ही उपमा में ता ता अग्रस्तुता का सम्मिलनकवि का रचना शक्ति का भी प्रमाण है और अत्रार का सायकता का भी। अत्रार द्वारा ध्वनि दृश्य गापिराधा का मन स्थिति और गारादिक अवस्था का पूर्णतया भावन करा तन म ममथ है और यही वाध्य का सायकता होनी है। प्यागा जिम प्रकार तार क समान जन पर दूटना है वम ही अत्यन्त आनुरता से व प्रिय म मित्रनी है। यह त्रिम्ब पुन भावप्रति कल्पना द्वारा प्रमून है एक भाषा ही इम मप्रपिन कर सकने का एकमात्र माध्यम है

सालहि देखन बाल चली हैं ।

गृह गृह त सजि भूषण अम्बर भूलत कामलता सो फली हैं ।

प्यास्यो यो नीर प तोर ज्यों दूटत यों अतिघातुर जाय मिली है ।

श्री वृंदाबन प्रभु को मकतोकृत मानहु मन की सनफली हैं ।<sup>१</sup>

इसा प्रकार भतिराम<sup>२</sup> देव घनानन्द सामनाथ<sup>३</sup> चरण दाम<sup>४</sup> मनाहराम आदि म अमितापा एव उत्कठा क प्रभूत चित्रण उपन च हो जावगे। सीमित क्षेत्र एव सीमित उपमानों के माध्यम से भी इन कवियों ने अमिताप तथा उत्कठा जमी शक्तियों के आक्षेपक अनुभूतिप्रवण विम्ब उपस्थित किये हैं।

### (३) मिलन और अभिसार की सीलाएँ

एक कवियों ने मिलन एव अभिसार के वसे रसीत चित्र नहा सीच हैं जम कि विरह वन्ना के। इस वन्ना के घनीभूत प्रवाह को उहान अपन काव्य म और उसवे द्वारा उत्प न करना चाहा है। सयोगवान के जा चित्र य कवि उपस्थित करत हैं व तत्त्वत युगनापासना के क्षेत्र म पच जाते है परिणामत पीछे विवेचित चित्रा न तनिक भा मिनता हम दृष्टिगाचर नही हानी। पर अभिसारो मुख बुद्ध अथ श्रीडाए जिनका रि या ता नित्यविहारापासवा म अभाव है या फिर मात्र राधा और कृष्ण क मय के छद्म श्रीडाए है उनका सखिया रम के लिए आयाजन करता है। यह आयाजन कृतिम सा नगने के कारण उनना रस निभर नही हा पाता

१ वृंदाबन देव गोतामृत गगा २।१०।

२ रसरज ६०।

३ अजमाधुरी सार पृ० ३१२ छंद ३२।

४ घनानन्द प्रकीर्णक १३।६।

५ सोमनाथ रत्नावली स्फुट, ३४।

६ भक्ति सागर पृ० ५००।

७ राधारमण रससागर छंद २५।

जिना कि ब्रजलीला उपलब्धा में राधा कृष्ण के बीच होने पर भी प्रिय लगता है।  
 इसका कारण है कि परबोया प्रसंग के भीतर ही तन लीला आदि मार्मिक हो  
 पाता है। इसके अनिश्चित वहाँ पर कबल राधा और कृष्ण ही भाग नहीं लेते कृष्ण  
 अथ गोपिकाएँ भी नग भी गोरम तनलीला का नाडाए करते हैं।

ब्रजवन देव के गीतामृत गंगा में उस दानलीला का अत्यन्त नाटकीय  
 एवं मन्थ वणन हुआ है। ब्रजागनाश्रा का एक समूह गोरस बेचने निकलता है  
 कृष्ण के सखा रामन में टार कर पूछते हैं—तुम लोग जिसकी बहू और बेटियाँ  
 हैं। बिना गोरम तन के जा नहीं सकागा। गोपिकाएँ भी मुह टाड उत्तर देती है  
 कि तुम्हारी बोन भी धानी हमने रख ली है जो तुम एसी बातें करते हा। वे  
 कहती हैं

अपन अपन घर ठाकुर हैं सब आधि करत काप तुम रातीं ।<sup>१</sup>

(अध्यात्म पत्र में इसका अर्थ या भी लग सकता है कि सभी ब्रह्म रूप ही हैं फिर  
 ऊँच नीच का कोई अर्थ ही नहीं है) और फिर यदि ठाकुर हा ही तो

मायो तो देव न भौति को लेव कहा भयो जानि बडो जो नयो जू ।<sup>२</sup>

जगता है कि तुम नागा के निमाण बन्त गय है—आँसा में मूद चन्त गया है। गापियो  
 और सखाश्रा में और भी तमाम भ्रम हानी है आखिरकार चित्कर कृष्ण सखा  
 कहते हैं

समभो कहा आखिर होई गवारि करी बहुत हम जानि तिहारी ।

ज्यो ज्यो गहो नरमो हम त्यो ही त्यो मूड चढी बड़ि बोलत सारी ।

बोहनी तो कर जाहु न बोलत आई बडे घर की जु सकारी ।

कृदावन प्रभु गोपनि राव हैं नव जु की घर छोनी कहा रो ।<sup>३</sup>

तुम गवारिया की भर्त्सना का निवाह अब तक हमने बहुत किया हम नरमा में  
 बोलने में हमने मर पर चढ़कर आई हो पर बिना बान्नी किय जा नहीं सकती  
 हा। गाया के राव नन्त जू के पुत्र हमारे भाय हैं।

पर गापिया पर इस भिडका का कोई प्रभाव नन्त पटना के मन्तोड  
 प्रभुत्तनमन्त्रिण में भगा हुआ उत्तर देती है कि हाँ जो हम ना गवारिने हैं हाँ पर  
 सखाश्रा के राव तुम नो ता हमारे हाँ बीच पद हाँ (और बन्नी म्यात नन्त  
 मिला) और हमारे हाँ ममान गवाग्गन का काय रामना राककर कर भी रहे

१ गीतामृत गंगा ३५ ।

२ वही ३७ ।

३ वही ३१२ ।

हा अन रात गीते भा वग ?

तुम तो जदुयगिन राव हुते तउ प्राय गवारिन मांभ पने हो ।  
 पूछ बड़ी मु उडाए व प्रायकी लाम तुम्है जु प्रबोन मत हो ।  
 हमें तो सब जान गवारि हैं ये सब तो तुमहू हम मांभ रते हो ।  
 वृदावन प्रभु बसे रहो तुम रोके गवारनि घात चते हो ।<sup>१</sup>

इस प्रकार ये नाटकीय गद्यांश चरन गान ह और फिर चतुराई पूजक कृष्ण गान  
 व भी गत है । टूटाने के का यह अंग अत्यन्त नाटकीय एवं मवात्कीर्ण म  
 भरा हुआ है । उत्तर प्रत्युत्तर एवं पुनः उमका उत्तर अत्यन्त कुशल गद्यांश-कला क  
 आधार पर है । कान का छाया-र एसा मवात् गना भक्ति-गान क उबिया म भी  
 कम हा ऐसन का मिनगी ।

चरणगाम द्वारा चित्रित गान गीता म भी नाटकीयता एवं मवात्कीर्णता  
 का सुन्दर मयाग हा मका है ।<sup>२</sup> इस दान गीता के अन्तगत चित्रित एक प्रसंग  
 गीताग । ग्याम का जबरन्ती म गीभ (रीभ) कए एक गापी कृती है कि  
 अच्छा । आक यनाथा ना हम तुम्ह पर भरकर गारम पिनाती ह । कृष्ण बठ  
 जाते है ना गृही की मन्की म गका कर व अगूठा निवा देना है और पूछनी हैं कि  
 जरा स्वाद ता वनाय मन भाया माठापन है न ?

उठ बोली एक गवारिनी भौह मट कर मुसकाय ।  
 पीवो गोरस पेट भर तुम दोऊ कर ओक बनाय ।  
 बठ जकहू घाव सौ कीनी ओक बनाय ।  
 पीवन की इच्छा करी मन मे अति ही ललचाय ।  
 मटकी सो डहकाय के गुठा दियो दिखाय ।  
 कही स्वाद बतलाइये कछु मीठो है मन माय ।<sup>३</sup>

कृष्ण की इन दान गीताया क अनुकरण पर राम भक्ता म रामसम्बन्धी ने भी  
 दान गीता का ठीक एसी हा कल्पनाए का है । यहाँ पर गीताजी अकेली ही राम  
 का मिन जाती ह

विपिन प्रभोद से बोरि महा ह व आवो दही ल बडी अलबेली ।  
 मानत ना डर काहू को नेकहू पाई अचानक आशु अकेली ।

१ गीतामृत गगा ३।३३ ।

२ दानलीला वएन भक्ति सागर पृ० ४८६ ४८६ ।

३ चरणदास भक्ति सागर पृ० ४८८ ।



दीजी हभ करि नग तु है भावतो चित्त की चोर ही रूप नवेली ।  
बात हमारी सुनी सब कान व ही तुम तो दय जोग सहेनी ।<sup>१</sup>

रास-लीला

गान गाना क समान ही इन गाना प्रकार क समुष्ण/पासका (निबु ज एव  
प्रावरण नीना क गायक म रामनीना म भी यह अंतर है । त्मार प्रभुन  
समाप्त्य वाच्य की रामना भागवत की परम्परा म है । शरद की छिन्की हु  
चाँना म गाविकाएँ मुग्गी का अनि सुनत ना अपने अपने घर म कृष्ण की ओर  
गोड पत्नी है

तसी रही जोइ सोइ चली है तमकि तसी,  
काहू की न मान कोऊ आतुरता चढ़ी है ।  
अस्त घस्त भूपन बसन मन मन फाज  
मनमय राज चटसार मानो पढ़ी है ।  
मनमुख नाद मुधी गति मन नइ बाधा  
आगे पूनी साधा प्रेम गजराज चढ़ी है ।  
रगण सा मिली राधा गोभा सिंधु ते अगाध  
मानो हर भूरति सनेह साचे गढ़ी है ॥<sup>१</sup>

गाविकाएँ जस नम कृष्ण क धाम पहुँचना ह पर वरुद त्म म पूछन है कि तुम  
कम दर्श आइ ? उत अपना अपना धम यात्र निराकर घर नीतन क निग प्ररित  
करन है । त्म पर व उत्तर त्ना है

रासरी हाँसी कि चोकन सा,  
घर बासुरी की सुन तान तरेरी ।  
जाग उठी मनमत्य की आगि  
दिनोदिन बान्ति भानि अनेरी ।  
तोची ह्म अघरापुल सी  
गणिनाय' कही जिति बान बरेरी ।  
नातर या बिरहानन म  
गारि होयगी काहू मनुति की डेरी ।<sup>१</sup>

१ राम सने जानकी नीरत्न माणिस्य (रा०म०म०उ० पृ० ३२३ पर  
संगृहीत) ।

२ मनाहरदास राधारभण राम सागर, म २५ ।

सोमनाथ राम पचाप्याथी पृ३७ ।

बिहारी न रागनाता क उम घन का घाट गहन जिया है जिमम गाणिया कृष्ण  
क गाण मन्मत हातर राग कर्ना है गन प्रपत गापी का यन अनुभव जाता है  
कि कृष्ण उमा क पाग ३

गोपिनु सग निसि सरद की रमत रसिकु रसरास ।  
सहादेद अति गतिनु की सबनु सने सब पास ।<sup>१</sup>

गन गद्भुन गनि म हान धान परम रमगाय राग का दगन क तिए न्व बघुएँ  
भी ध्यातुन हा रनी है । गन्धन क ऊपर मुरा क विमाना की भाड नग गई  
है

बृदावन कानन प भीर है विमान की  
देव बधू देखि देखि भई है मनचला ।  
बगी कल गान क बितान धुनिवाय बघ्यो  
रमातोक लोमित ह व भूलो उर अचला ।  
द्व द्व बिच गोपिन क ललित त्रिभगी लाल  
नागरिया पदयास बाज छनछदला ।  
रास रग मडल अखड नत्य होन लाग्यो  
सग ह व भ्रमत मानो भेषचक्र चचला ।<sup>१</sup>

### जल क्रीडा

रास के पश्चान् जलक्रीडा म धकावट दूर करने का प्रसंग भागवत म भी  
आता है ।<sup>१</sup> बृदावन देव ने वहा स प्ररणा नकर अपन रामनीना वाग अग म  
उसका बरणन किया है । यह बरणन निगयन परम्परामुक्त एव भावगूय प्रतीन  
हाना है । इस तरह क बरणन एक प्रकार क संस्कार (Ritual) जसे प्रतीन हाने है ।

क्रीडत कालिंदी तट गोपिन सग लीन ।  
मुंदर विंगाल नन सुरत रग भीन ।  
मनौ मीन बाल उपय लोहित वपु कीन ।  
उरसि तिय नल प्रकार सोहत अति नीकी ।  
जाहि देखे द्वज चत् लागत अति फीकी ।

१ बिहारी रत्नाकर दोहा २६१ ।

२ नागरीदास निम्बाक माधुरी पृ ६२० ।

३ श्रीमद भागवत १०।३३।२३-२५ ।

४ बृदावन देव गोतामृत गगा ५।१६

होती

बसन्त ऋतु में हाता का मन्मथ उन्मथ मायुय भाव व उपासक सभी कविया व मन का आकर्षित कर मका था । आगे चलकर रीतिकान्त में श्रवारी कविया न हाती व अनक रग भर चित्र उपस्थित किये । पद्यावर का लला फिर आइया येन नारी वाता छत्र प्रमिद न है । रीतिकान्त व हाती सम्बन्धी घणा के पीढ़ वस्तुन उन कविया का हाती वगन विद्यमान था ।

उन कविया न हाती व खेन का ही वगन नहा किया है गाना खेनने की अमितापा का भी पञ्चिना है । हाती मनभाया वगन का ख्यौहार हाता है एमी स्थिति में नायिका यत्नि प्रारम्भ में ही उम दिन की प्रतीक्षा करता हुई हाती खलन का यात्रना बनाव ता व नानान स्वामाविक गगा । पुष्टिभार्गीय जगनाय कविराय का पत्र अमी आनाशा का व्यक्त करता है

अहो हरि होरी में तब जो गये तुम भाजि ।  
गारी देह भर मराज  
मुल माझोंगी आज ।  
हों अल्पनो मन भायो करि हां  
मुनि अज राज कुमार ।  
जगनाय कविराय व प्रभु  
भाई सकल घोष सिरताज ।<sup>१</sup>

बनोना जा व पत्र में नायिक नायिका का वर्जित कर रही है कि मेरे ऊपर रग न जाना । धमकाया मा है कि यत्नि न मानागे ना पिचकारी छीन लगी । पर कृष्ण गायन नया मानन ना करता है कि अत्र तुम मुझग गानी मुनता चाहत न । इम वजन एवं नियम में अनुग एवं स्वीकार की गय्या व्यजना है यत्र रमिका म लिना नया है —

ए जु ! नीक सुम जाठु खेने जिन नरो मेरी सारो ।  
मुनि याम सनि याम सौं है निहारा नाहो छिनाय लठु कर लें पिचकारी ।  
अब कष्टु मोप मुपो चाहत हो गारी घरम मोले दग रमिक बिहारी ।<sup>२</sup>

हाया व चित्र नियम बिहारापामरता में उनन सतिन नया बन पते है जम कि इन कविया व है ।

१ जगनाय कविराय बीजन सपह भाग २ पृ० ४५ ।

२ बन टनाती (रमिक बिहारी) निःशाप मापुरो का सपह, पृ० ६०४

एमी प्रकार अथ उलगा व पन भा जान गपना आति म गिरे पने हैं । अष्टयाम मजा विधि ग मप्रघिन पना की मस्या भी विगत है ।

### (४) विरह

नित्य विहारापामका एव ब्रजनाता गायका व मध्य विरह मरधा एक बडा अतर है । निकु ज नीनाआ म विरह अत्यन्त मून्म (मन का वृत्ति विगप) स्वीकार किया गया है क्याकि राधा और कृष्ण व मध्य वियाग की स्थिति युगना पामना की आत्मा के विपरीत है । पर ब्रज नीना-गायका न म्यून विरह का जम कर गायन किया है । मूरत्याम का — उगो विरहो प्रर कर हम चतुथ अयाय म उद्धत कर चुक है । वना पर हमने एम मम्भावना की धार भी मकन किया था कि विरह का मूल्यवान् मानो के पीने मूफ़ी प्रभाव भी हा मकता है । गोपिया के अनुग भाव से प्रभु के प्रति सीने विरह एव प्रम निवन्त तथा किमी नीकिर प्रम कहानी व माध्यम से प्रम एव विरह की तीव्र अभिव्यजना म वना अतर प्रतीत नही होता ।

अस्तु भौनिक विरह के विविध रूप एम एम मान्त्य म उपनय हा जाने है । घनान्त ने निर्भान्त गना म घापिन किया था कि यति मन म गोपिया की सिसक और कमक न आयी ता रसिक वनाना यथ ही है । रमिकता कुद्ध और ही वस्तु है ।<sup>१</sup> एसी कारण एम सिसक आर कमर का बगन एन कविया ने अत्यधिक मन लगाकर किया है ।

काथ गान्धिया ने विरह के पूवराग मान प्रवाम और कल्या य चार भेद किए है । रतिकानीन कविया न एन सभा का चिथए परिपाटा निर्वाह के लिक् किया था । प्रमाभक्ति के इन कविया म इनम से प्रथम तीन स्थितियाँ मिल जाएगी पर उताहरण दन क त्रिण नगी है । कल्या विप्रनम की भगवान के परि कर म स्वीकृति नही है । पर गय तीना का उहाने यथाथ के स्तर पर भावित किया है ।

### पूवराग

विरह का प्रथम प्रकार पूवराग माना गया है । मान्त्य एपण म इसकी परिभाषा नेते हुए कया गया है कि इसम अभिप्राय है रूप सो-दय आति व श्रवण अथवा दान मे परम्पर अनुरक्त नायक नायिका की उम दगा का जोकि उनके

१ गोपिन की ससक कसक जो न धाई मन रसिक कहाए कहा रस कहू ओरई ।  
— प्रकीणक ३१ ।

समागम मे पल हुआ करती है ।<sup>१</sup> घनान<sup>२</sup> द्वारा वर्णित यह विरह पूर्वराग ही है जा रूप नान म उत्पन्न हुआ है

आलि हो मेरी प चोरी भई सखि फेरी फिर न गुजान की छेरी ।  
रप छकि तित ही बियकी अब ऐसी अनेरी पत्याति न बेरी ।  
प्रानन साथ परी परहाय विकानि की बानि प कानि बसेरी ।  
पायन पारि लई घन भानद चायनि बायरी प्रीति की बेरी ।<sup>३</sup>

सामनाय का यत् प्रिरहिणा भी प्रिय क लान म उमन बनी चना प्रायी है

सामनाय आतिक जित्ताकि छवि छाकी छकी,  
वोही अ चि गौसी पचवान बलियान म ।  
गागरि गिराय बिसराइ कुल कानि ग्यालि,  
त्याई भरि माहन की नह अ लियान म ।

प्रयास

ब्रज नाता क अनगत उष्ण ता ब्रज छावर मधुरा गय द्वारका चल जाना विरह-बाध्य का अभय मान रहा है । अपना प्रीति बदाकर वृष्ण चन जात हैं । प्रान की अपि भी न जान है पर प्रान नहा । गापियाँ इम कठिन नियोग म रम्य ज्ञाना रानी है । इम घटना न अगणित बरिया क मानम का आत्मानि किया है एक मन्मथ छात्रा म वियाग की यत् गाथा पूटा है । ब्रजवन देव का द्रव्यमा नुन का व्यक्त करना है

आयो है मास सावन न आय मन भायन जे साथे गुन गावन ए  
घातक हू खरूदिग ।  
दुग की निगानी इह ठानी विधि विरहित की पीव पीव घानी  
मुनिहोत मन महारिग ।  
ये तो महान्तानी बधु मन मे न घानी प घोर नही प्राणी अय  
जीव लागि बीन मिग ।  
बुदावन प्रभु पानी जान न बिरानी पीर मोन की बहानी इह  
याहि तो अधिक् तिग ।

बिरा का यत् नाग भी प्रयाग जय विरह का बन्ना का अमिष्यत करता है ।

१ विष्णाय कविगत साहित्य रूपण ३।१८८ ।

२ घनानर मुजात हित २ ।

३ सोमनाथ रत्नावली, स्तु ३६ ।

४ गोतामृत गगा ८।१८ ।

राधा यमुना के किनारे स्याम की यात्रा करनी हुई जा प्रीतम बहा रती है व यमुना के जल को भी गारा बना देत है

स्याम सुरति हरि राधिका तक्ति तरणिजा तोर ।  
अमुनि करत तरौस की खिनकु खरीहों नोर ।<sup>१</sup>

चन्द्रमयी के इन पात्र गीता में भी प्रवाम जय विरत ताप प्रकट हुआ है  
पलक न लग स्याम बिन पलक न साग मेरी ।  
हरि बिन मधुरा ऐसी लागत है चन्दा बिन रन अघेरी ।  
इत मधुरा उत गोहृत नगरी बिच बिच जमुना गहरी ।  
सावरे की खातिर जोगन दूगो घर घर दू गो फेरी ।  
चद सखी भज बालकृष्ण छवि हरि चरनन की चेरी ।

### मान

निय विहारोपासका के काव्य विवचन के प्रथम में मान की चर्चा हम कर चुके हैं। प्रथम के क्षेत्र में मान का बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान होता है। मान का इन कवियों ने बहुत चित्रण किया है। अंतर इतना है कि अकारण मान के साथ ही मकारण मान भी इन कवियों ने चित्रित किया है। परन्तु एक समानता है — प्रिया का ही मान इन कवियों के लिए भी चित्रणीय रहा है। यह सम्भवतः काव्य परिपाटी का दबाव था। हिन्दी काव्य की परम्पराओं में प्रियतमा के मान की ही परिपाटी रही है।

प्रिया मान किए बठी है पात्र की सखी आकर समभानी है कि रात छाटी है यह मधु कामिनी यो हा बीत जाणगो इराणि कु ज भवन चनकर रमण करा। यह सत्य है कि प्रिय के निकट अनाधिक कामिनिया हैं परन्तु सचाई यह है कि तुम्हारे बिना के सारी सनानी कामिनिया अलोनी लग रही है। उनके साथ तो तेरी ही शोभा हायी है जैसे कि स्वयं के साथ माणिक्य या कि सावल बाटला के साथ विद्युत शिवा ही शोभा पाती है। अतः हे मानिनी मान घाड़ी देर के लिए ही अच्छा है। वह उपमा ऐसी है कि दूध के उपान के समान ही मान करना ठीक है (दूध का उपान पानी के छोड़े पड़ते ही गान्त हो जाता है वसी ही दूती वचन की प्रीतलता छान का समझत कर त्त के लिए पर्याप्त होनी चाहिये) मान के लिए दूध के उपान की उपमा देना स्वतन्त्र निरी तण शक्ति का प्रमाण है

१ बिहारी रत्नाकर २६२।

२ चदसखी के भजन और लोक गीत (प्रभु दयाल मिश्र) १२६ पृष्ठ ४५।

दूध को उफान ऐसी मान कीज मानिनी,  
 बड़े कुज मदन रमन गमन कीज,  
 बीती जात बातन ही मधु यामिना ।  
 तो बिनु सलोनी सब लागत अलोनी,  
 जदपि निकट हैं अनेक गत यामिनी ।  
 बृदाबन प्रभु सग तूहों यों विराजति है,  
 जसे हेम मानिक और याम घन दामिनी ।<sup>१</sup>

दूनी मनात मनात थक जाती है पर वह प्यारी माननी नहा है । कुशल वाक्यपटु  
 दूनी अनेक कौशल करव हार जाती है नोटकर वह स्पष्ट कह दती है कि तुम्हारी  
 प्रिया रूपवती तो बहुत है एसा लगता है कि वह रूप का प्रकाश है स्वयं विधि  
 के हाथ का वह सवारी हुई है परंतु (मुझे क्षमा किया जाय) ऐसी अनसवारी  
 नारा मैंने नहा देखी है । यह तो तुम्हा जानने हागे कि तुमन अपनी प्रीति अयत्र  
 कहा विस्तारित की है पर वह सुकुमारी आपका नाम लेने ही माली दन लगती है ।  
 उसके (दूनी क) अनुसार आज तो उसके रूप इतना निपटुर है कि पर पड़ने पर  
 भी वह मानने क लिए प्रस्तुत न हागों

हों तो पचिहारी बिहारी मानति न प्यारी तिहारी ।  
 रूप की उजारी मारी विधिना सवारी प  
 ऐसी अनसवारी नारि में न तिहारी ।  
 तुम जानों प्रीति प्यारी और कासी विसतारी  
 गि की गये त यारी देति मुहुमारी ।  
 बृदाबन प्रभु ऐसी देखो म निटुर आज  
 मानिहै न पाइ पर कहै तू हहा री ।<sup>२</sup>

प्यार का माने जाना हा प्यता है । व नति का आश्रय नकर मानवनी प्रिया  
 का धरण मवा करन है । एमी म्यति म मान का दृटना ही चाहिए वह  
 दृटना है

मान कियो मानिति मनायो तू न माने ।  
 नैक मानहुं म सोय रही मानिति न मान क ।  
 उन्कि पिय बेने घाय चापत धरण ।  
 सली सन ब उदाई पिय बटे पगपान के ।  
 पिय को परस जान जान क भई अजान ।  
 चतुर बिहारी जु सों बोली मिय मान के ।

१ बृदाबन देव गीतामृत गगा ६।५ ।

२ धरी धरा ६।१६ ।

रहो रहो रसिक राय दिनहु म होठु यारे  
हम तुम पौड़े दोऊ एव पत् तान के ।<sup>१</sup>

### प्रम वचित्य

गौडीय बध्नाव आनवाग्निा न कर्ण विप्रनम व स्थान पर प्रम वचित्य नामन एव नया प्रकार स्वीकार किया है । प्रमात्तप क कारण स्वाभा विव रूप से ही प्रिय क निवट हान पर भा जय विरह जमा अनुभूति हाती है तब उमे प्रम वचित्य कहा जाता है<sup>१</sup> । प्रेम-काव्य का अमूल्य निधि घनाना व काव्य म प्रम वचित्य क हृत्स्पशी चित्रण हम मित्त है । एक उदाहरण —

द्विग बठे हू पठि रहैं उर में धरक खरक दुल दोहतु है ।  
हग भागे ते बरी कहू टर न जग जोहनि अन्तर जोहतु है ।  
घन आनद भीत मुजान मिल बसि बोच तऊ मति मोदतु है ।  
यह कसी सजोग न बूझि पर जु वियोग न क्यों हू विद्योहतु है ।<sup>१</sup>

### (५) उपासम्भ

प्रम और वियोग क क्षेत्र म उपासम्भ काव्य भी महत्वा के मध्य सत्त आदर पाता रहा है । भ्रमरगीत क नाम पर लिखा गया उपासम्भ काव्य हमारे साहित्य के सर्वोत्तम अंश म से एक है कुजा और मुरली के प्रति लिये गए उलाहने भी वृष्ण काव्य म कम नये हैं ।

अत्यन्त सहज स्त्रियाचित शशावता म वृत्तबन देव ने ब्रजबालाआ म यह शिवायत कराई है । गापिया का प्रिय क प्रम पर वस विवास आव—मथुरा कौन बहुत दूर है पर तनिक मा सन्धे भी उगाने नये लिया । हृदय एवम् निष्पुत्र कर लिया उस प्रम का वान उहाने साची ही नही । सके ऊपर भी एक विनय काम उहान किया है—कुजा क प्रम रग भरग गये है । कुजा क लिए उलाहना चत्सला न भा लिया है ।<sup>१</sup>

नागराजस न मुरली उपासम्भ सम्बन्धा अत्यन्त मार्मिक टाट निख है ।

१ गो० हरिराय (रसिकराम) कौत्तन सग्रह तीसरा भाग पृ २०८ ।

२ उ नो०म० पृ ५४८ ।

३ सुजान हित १ ४ (घन आनद प्रयावली) ।

४ ब द्वाबन देव गीतामृत गंगा ८।४६ ।

५ चत्सली और उनका काव्य (सम्पाटिका पद्मावती शबनम) पृ०

४ ४७ ।



गापिकाएँ मुरली से कहती हैं कि हम क्षमा कर हम तरे परा पत्नी है तेरा स्वर लहरी और सबको प्रिय हाथो पर हम नहीं । हम तो उमस और तुम्ही हाथो ह । गापिकाएँ बशी का धपन पण में करने के लिए एक बड़ा मनावनामि धर्म्य फेंकती ह । उनका कहना है कि हम मोना ही ब्रज की है अत एक स्थान में रहने की बात तो साचनी ही चाहिए । फिर बशी और ब्रजनारी उनकी महिमा तो नानामय में हैं यह मानना भी बशी के निय विचारणीय है

तुह ब्रज की मुरलिया हमहू यज का नारि ।  
एक वास की कानि करि पढ़ि पढ़ि नय न मारि ।  
गत मार गार तानि के नातो इतो विचारि ।  
तीन सोक सग गाइये धनी अरु धज नारि ।'

पर बशी मानती नहा है । गापिकाएँ खीझकर कहती हैं कि जल्द स हमारी बुद्धि गतता है ? यह मोन गहतो ही नहा —

हम हारी गारी जु ब जड सी कहा बसाय ।  
मोन गहत नाह मुरलिया हाय हाय फिर हाय ।'

धरणा वास की गापिया न भी मुरली का उनामनामिया है कि तनिज में बाग की बनी हुई यह धामुरी गव में भरी गजना करता पत्नी है तथा उनका ब्रजवा लक्ष्य करती रहता है

ताक बांस की बनी बमुरिया गव भरी अति गाज री ।  
त धन बियो शुभदेव हमारो सतत काजो बाभरी ।'

ऊपर के विवरण में स्पष्ट हो गया है कि त्रिरामम्बका काव्य एक परम्परा में प्रयुक्त नमूना है । वह अपने कथ्य को उगमग उगुक्त गिला में प्राप्त करता है ।

### (६) धानसीनाए

यह विवरण माधुय भाग को दृष्टि में किया गया है पर ब्रजनाना के धानगन धान्य मति-भाषा का भी समावेश है । यत्रमन्मथराय का उनामना का प्रथम धान गार के धनुर्वन प्रकाश । अग कारण अम सुग में भा वागमय नाय मम्बका कतिपय रचनाएँ प्राप्त हो जाती हैं । नागरा नाम धान्य ममानुषाया ध उ तनि कण्य का धान-नामनाया का भा विवरण किया है । परन्तु धान-नामना

१ धामाधुरी सात पृ० २२ ।

२ श्री गवेंदर में नागर समुच्चय में गकतिन (बध ३ धक १२ म० २ १२ वि०) ।

३ धरारादाम गड्ड धगन मति सागर धय पृ० ३५८ ।

के चित्रण में इन कर्मियों का मन बहुत न । जगा है । नागरा नाम निम्न पत्र में कृष्ण के वाचस्पति का वस्तुगत रूप पर चित्रण करके रह जाते हैं उम मानसिकता की स्थापना नहीं कर पाते जा गूरे या परमानन्द नाम के नाम में हम उपलब्ध होता है । पत्र रूप प्रकार हैं

कबहु गहि फिरत पूछ बद्धिमान की  
किकिनी बनक कति मधुर बाज ।  
गोप-गोपिन हृदिनि से खिलोना खिलत  
मुख-कमल मुरि हसनि भ्राज ।  
बदन दधि-ध्रुवि धूरि घूसरित भ्रग  
अर्वाह ते मदन-गति पगनि पेल ।  
कठ बघना दिये पाय पजति भनक  
दास नागर हिये अगत खेल ।<sup>१</sup>

हरिदामी सम्प्रदाय में यद्यपि बाल नीला की स्वीकृति नहीं है पर स्वामी रसिक देव ने बाल लीला नामक ४६ छन्दों की एक छान्दी-मी पुस्तिका भी लिखी है जिसमें बाल लीला की अथवा वाचक कृष्ण एवं वाचिका राधा के मिनन पर अधिक ध्यान दिया गया है । इसमें बाल भाव का माधुर्य भाव की ओर मोड़ने की चेष्टा की गई है ।

निम्बार्किय कृष्णदेव की रचना गीतामृत गंगा का प्रथम घाट बाल नीलाश्री का है तथा द्वितीय घाट पौगंड लीलाश्री का । कृष्णदेव का भी मन इन लीलाश्री में अधिक नहीं रमा है । जन्म का बधाइयाँ गा देने अथवा मूचना रूप में कुछ कह कर वे आगे बढ़ जाते हैं भावात्मक चित्रकर्म ही उपलब्ध होने हैं। ऐसा ही एक पत्र निम्न कहा जा सकता है

बजरानी की गोद विनोद कर हरि  
मोठ भरी यों लडावति मया ।  
नये गावत गीत नचावति द चुटकी तिहि  
जो तिहु लोक नचया ।  
समात न नद आनन्द मे बेखि सुत  
स मनोरथ पूरयो है बया ।  
कबहु दिन शै बहू मो लला स  
बदावन ज हैं चरावन गया ।<sup>२</sup>

१ नागरीदास ब्रज माधुरी-सार पृ० २ २ ।

२ गीतामृत गंगा १।२२।

इसा प्रथम घाट में ही उहान श्याम सगाई में उपस्थित कर दी है ।<sup>१</sup> चण्डसखी के भजना में भावान नाता के कतिपय पद उपनयन ही जाते हैं ।

### (७) सिद्धांत कथन

पूर्व विवक्षित नित्य विहारापामका के समान सिद्धांत कथन-सम्बन्धा साहित्य इन भक्ता में भी उपनयन ही जाता है । परंतु ध्यान से अनुशीलन करने पर एक तथ्य नितांत उजागर हो उठता है कि नित्य विहारापामका में अनिवाय रूप से सिद्धांत-कथन किया है परंतु इन कवियों में यह अनिवायता नहीं है । इसका परिणाम यह भी हुआ है कि परिमाण की दृष्टि में नित्य विहारापामको में सिद्धांत-कथनकी मात्रा बड़ा अधिक है । इसका कारण हम यह प्रतीत होता है कि जिस एकात्मिक (रहस्यात्मक) भक्ति-पद्धति को उन्होंने स्वीकार किया था उसका बार में नीतिकता एवं ईश्वरता का भ्रम ही सक्ने का प्रवकाश था । इसी कारण के सिद्धांत-कथन के लिए विवक्षित हो गए थे । इन लोगों का सिद्धान्त-कथन एक प्रकार में अपनी रचना की व्याख्या ही है । निबन्धन ने बताया है कि ईरानी सूफियों का भी इस भ्रम में बचने के लिए अपना रचनाशैली का प्रयत्न स्पष्ट करना पड़ा था ।<sup>२</sup> अस्तु ब्रजभाषा-काव्य के समस्त ऐसी कवि ममस्या नहीं थीं । पुराण हमारे यहाँ धर्म-ग्रन्थों के रूप में मायबध तथा पुराणों में यह श्रृंगारिक की सीता मनी भक्ति चित्रित एवं व्याख्यात हो चुकी थी सामान्य जन के हृदय में उनकी यथेष्ट प्रतिष्ठा हो चुकी थी । इस कारण सिद्धांत-कथन द्वारा अपने युग के एक उनकी कवि के मतव्यक्त स्पष्ट करने का प्रयत्न इन कवियों के सामने नहीं उठा था । फिर भी यत्र-तत्र हम सिद्धांत-कथन के कुछ-न-कुछ पद उपनयन ही होते हैं । गंगा में विराग गुरु का मन्त्र-व्यापन<sup>३</sup> प्रेम धर्म का मन्त्र एवं गापिया का महिमा-गान<sup>४</sup> आदि सिद्धांत-सम्बन्धी धर्मक वार्ताएँ इनमें बनी गई हैं । गापिया के मन्त्र को स्मरण करने वाला गा० हरिराम का निम्न पद दृष्टव्य है जिसमें माध हो माध बन्धुभावाय एवं विद्वन्नाथ जी के स्तुति भी है

हो धारी इन बन्धुमियन पर ।

मेरे तनका करों विद्योना सास धरों इनके धरलन तर ।

१ गोतामृत्त गंगा १।२८ ।

२ परमात्मनी गहनम् चण्डसखी श्रीर उनका काव्य पृ० १० ।

३ धार० ए० निबन्धन दि मिस्टिक धार इस्ताम पृ १०२ ।

४ मागरीदास ब्रज मापुरी गार पृ० १६०-१६१ ।

५ बोलन सपह भाग ३ पृ० २५७-२५८ आदि ।

६ वही वही पृ० ५६ ।

नह भरी देखो मेरी ध्र लियन मण्डन मध्य विराजत गिरिधर ।  
 यह तो मरे प्राण जीवनधन दान दिय श्री बल्लभ वर ।  
 पुष्टि प्रकार प्रगट करिबे की फिर प्रकटे श्री विन्टल वधु घर ।  
 रसिक सदा प्राप्त इनकी कर बल्लभियन की चरण रज अनुसर ।<sup>१</sup>

गा० हरिराय जान एक अय पत्र म कहा है कि <sup>२</sup> 'मनुष्य तुम्हें न जाना माना चाहिये यदि तूने गापान-लाना का गान नही किया गमान जाना म मन नही लगाया सुबाधिना सुनी नही घडी आध घना हरि की सुम्बादु मग नही का तथा कृष्ण का नाम रटा नही बल्लभ एक विन्टन प्रभु रा शरण म जानर नून शान नही भुकाया ।<sup>३</sup>

#### (४) सत परम्परा के अतगत रचा गया प्रभावित-काव्य

चतुर्थ अध्याय म सगुणापामक प्रमा भक्ति-सम्प्रदाया म उपाम्य लाला धाम एव परिकर आति का चर्चा करते हुए हमन दसा था कि य सभी तत्त्व नित्य स्वीकार किए गय है । ब्रह्म वृदावन साकत आति स्यन भी भगवान की स्वल्प शक्ति के ही विलास है—<sup>४</sup>म धारणा न उन सप्रदाया म प्रतीक पद्धति का स्थापना नही हान दा । प्रतीक म मून वस्तु का परिचय किमी अय वस्तु के द्वारा लिया जाता है । अब प्रस्तुत पर अप्रस्तुत का अभेन्ाराप हा और प्रस्तुत स्वय निगीण रह तब अप्रस्तुत ही प्रस्तुत का स्थानापन बन कर प्रतीक का काम दता है ।<sup>५</sup> परंतु राधा कृष्ण या गाप गापी वृदावन अयाध्या आति किसी परो । प्रस्तुत के लिए प्रयुक्त हान वान प्रतीक नहा है । व स्वय नित्य हैं । अत प्रतीक सकन या अयाक्ति पद्धति का इन सगुण भक्ति सप्रदाया म नितात अभाव है ।

निगुणभाव धारा क भक्तो की स्थिति वचन जाती है । वहाँ पर ब्रह्म नित्य ह परंतु उसका आकार रूप धाम या परिकर अथवा लीला रूपा की काइ धारणा प्रकल्पित नहा हुई है । जब म परो । सत्ता का अनुभूति या उमने विषय म किमा विचार को व अभिव्यक्त करत है तब उह एस अप्रस्तुता का आवश्यकता पडती है जा उका पहुँचक मानर भा हा तथा उस अनुभूति का अभिव्यक्त भी कर सक । इस प्रकार अप्रस्तुत हा प्रस्तुत का स्थानापन बन जाता है । स्पष्ट है कि यह पद्धति प्रतीकवात् का है । भक्ति का प्रम सम्बधि घना इसा विगपता क कारण व उपाम्य का विविध सामाजिक सम्बधा क रूप म प्रत्यक्ष भावित

१ कीतन सग्रह भाग ३ पृ० २५६ ।

२ वही वही पृ० २५७ ।

३ डा० ससारचंद्र हिन्दी-काव्य मे अयोक्ति पृ० ६६ ।

करत है। प्रेम के आवरण में वह प्रिय बन जाता है। माहात्म्य-वाचक ममय स्यामा बनता है। प्रभु अनुग्रह का भावना जल बन परडनी है तब प्रभु शत्रुत्व त्यागता। मानव शरणागत शक आति गुग्गा में विभूषित कर दिया जाता है। अपना मापना का अनुभूति वह नाना प्रकार के रूपका उपमाप्राप्त होता है। कहता दत्ता है।

असह्य का अनुपादन करने पर असह्य का शत्रुत्व स्वरूप हम दिखाते हैं। असह्य कहते हैं जो वसन्त का अमरता का मकर बनने में त्याग एवं वराग्य पर जाते हैं। गुण के प्रति अपना श्रद्धा एवं निष्ठा चिप्रित करत है एवं प्रभु में प्रेम करने का मन्ता है। अमरता का चर्चा मगुण नातावाणी मत्त भा करत है। उनके मिथान-मन्व-धो वचन कहा जाता है मन्व-धन है। परन्तु फिर भी इन शाना प्रकार के कथना में एक गुण प्रकर है।

मगुण धारा के कविता के ये कथन मिथान वाक्य है पर निगुण भक्ति के कवि के कथन शान भक्ति के अनगत परिगणनाय हान चाहिए। प्रभु में उगाय रगन के निगुण मन्व-धन का आत्मगना हाना है। मगुण भक्ति के कवि करत प्रभु प्रेम की शक्ति (या उगाय) का शान निगुण नती करत। प्रभु का शाना भा यनाता है एवं उम शीता में प्रवण करने के निगुण विषय प्रकार का भावनाप्रा वाय प्रवणार भा। निगुण मार्गी का शक्ति शीता धाम तक नती पहुचना हाना शानित वह भाव-मन्व-धन की छानदान में भी नती पत्ता। वन् मात्र प्रभु प्रेम की बात करता है। क्या प्रेम शान—अमरता उम चिन्ता नती है। धन वराग्य शानि का शाय प्रभु प्रेम का स्वाकरण उम शान मत्त मिथ करत है। शान कारण य मिथान कथन निगुण मार्गीय काव्य में अघित मह-उपूण भा शाना है शौर उदका परिमाण भा कही अघिक शाना है। मिथान-कथन मन्व-धन कथन उगायन कथन के अमर का अघिक अछा तरत शान कर सकगे। सुन्दर दाम कहत है कि ह मन्व-धन उम सुम शान गेह धन परिशर गधक शाना शानि में मर धन का शान है। कुशन वग का अघिमान करत शान शौर मम-धन शानि धरना तरत। शाना के सुम शान शान पर

मन्दर कहत धरी मरी कर जान म  
 अग नहि जान मैं तो जान हा की धारी हो।<sup>१</sup>

१ शक्ति शानि अघ्याय शान भक्ति विद्वान पृ० १०५ १०३।

२ शानि सुन्दर शाना शान शानि की शान धर १५।

इसी कारण महजा वाई भी कहनी है

पानी का सा बुलबुला यह तन ऐसा होय ।

पीय मिलन की ठानिये रहिये ना पड़ि सोय ।<sup>१</sup>

ईश्वर का प्राप्ति व त्रिण अत्यन्त सहज साधन है—नाम जप । मन गुनान सान्ध का कहना है कि तू अथ मार व्यवहार छाडकर केवन नाम जप का अपना न

कह मन सहज नाम ध्योपार, छोडि सकल ध्योहार ।

निसु धासर दिन रन दहत हैं नेक न धरत करार ।<sup>२</sup>

नाम जप के साथ मन गुडि का भी बडा महत्व बताया गया है । मत रजरत्नम का कहना है कि

रजब अजब राम हैं कहे मुने मे नाहि ।

यह अशुद्ध अरत करण यह देख दिल माहि ।

इस साधना म गुरु का अत्यधिक महत्त्व है । गिण्य वनराजि क समान है त्रिम पर गुरु ज्ञान का जल बरसाता है । जिसम कि छोटे-बड विविध स्वाना वाले अकुर स्वाभाविक रूप से उग आते है

जन रज्जब गुह ज्ञान जच संचि सिल धनराय ।

लघु दीरघ अरु स्वाद विध ह व अ कूर स्वभाव ।

इसी प्रकार नम्रता साधु सगति परोपकार आदि नविक वलियो को इस काव्य म बार-बार उपस्थित किया गया है ।

उपास्य के सम्बन्ध म विचार करत समय या तत्सम्बन्धी स्वानुभूति का यजना करते समय इन कवियों का काव्य एक विणय भास्वरता स दीप्त हो उठता है । उपमा और रूपक प्रतीक और सनेन बार-बार उस प्रकट करने का प्रयास करत है । राजब कन्ने है कि गरीर घट घटा के समान है जिसम कि ब्रह्म रूपी विद्य न का निवास है पता नहा कब वह अतर म प्रकट हा जाय

रज्जब बू द समद की कित सरक कहू जाय ।

साभा सकल समद सो त्यू आतम राम समाय ॥

चरणवास एकम कबार क स्वर का ही अपना कर कहत हैं न वह सामा के भीतर है न बाहर

१ सहजोवाई की बानी पृ० ४३ ।

२ गुलाल साहब कल्याण सतवाणी अ क पृ० २२६ ।

३ सत काव्य पृ० ३७५ ।

४ वही पृ० ३७४ ।

५ वही पृ ३७६ ।

हृद कहता है नहीं बेहद कह तो नाहि ।  
हृद बेहद दोनों नहीं चरणदास भी नाहि ।<sup>१</sup>

अपन अतिमानुभव का स्पष्ट करन हुआ सुन्दरनाम न बना कि अतिमानुभव का  
प्राणतः अनिवचनाय है । जा अमृत पी नना है बड़ा उमका स्वाद बना मकना है  
बिना पिय ता बकना नना है

मुख तें कह्यो न जात है अनुभव को अनाद ।  
सुन्दर समझ आपकी जहां न कोई हृद ॥  
सुन्दर जिनि अमृत पियों सोई जान स्वाद ।  
बिन पीये करतो फिर जहां तहा बकवाद ।

इम ब्रह्म के माय अपन भाव सम्बन्ध का स्पष्ट करन समय तन कविया न प्रिया  
प्रियतम के प्रतीक बहुत अपनाम हैं । कुछ उदाहरण हम नीचे दे रहे हैं

- (१) अविनासी दूलह मन मोह्यो  
जाको निगम बताय नेन ।<sup>१</sup>
- (२) बाग उडावत कर धके, नन निहारत बाग  
प्रेम सिंधु में परयो मन ना निरसन को घाग ।
- (३) पतिप्रता के पीव बिन पुरुष न जतम्यां कोई ।  
एतु राजह रामाहि रच, तिनके बिल नहि कोई ।<sup>२</sup>
- (४) जो हरि कीं तजि अान उपासत सो मतिमद धर्मीनहि होई ।  
ज्यों अपन भरतारहि छाडि नई विमचारिनि कामिनी कोई ।  
सादर ताहि न सादर मान फिर विमुखी अपनी पति सोई ।  
बूझि मर किनि रूप अन्भार कहा जग जीवत है सठ सोई ।<sup>३</sup>
- (५) अजटु मिलो मेरे प्राण पियारे ।

परन्तु यहां पर यह कहना आवश्यक होगा कि यह माधुयभार का नसिन नना है ।  
प्रिया प्रियतम यों उपमान भर हैं उपमय ना वत परम्पर तत्र है त्रिमक प्रति  
य कवि प्रेम रगत हैं । या मगुग मारपाग के प्रभाव के अतगत कना-कना पिय

- १ चरणदास ब्रह्मज्ञान सागर बालन (मणिमापर) पृ० ३११ ।
- २ सासी अतिमानुभव को अग १ और १० ।
- ३ बगवदाग अमोघूट पृ० ४ ।
- ४ बयाबाई कल्याण मतवाली अक पृ० २७१ ।
- ५ मतवाप्य पृ० ३७७ ।
- ६ सुन्दर बिसाग पतिप्रन को अग १ ।
- ७ परनादास मत वाप्य पृ ४०१ ।

महानिरीक्षण की भी योजना बननी है। यारी मात्र अरुणाम घाति कविया न होनी मिनन की अभिप्राया प्रकट का है। पर वास्तव म नाना एग प्रमया म प्रनीत्या का भी नना गमातीन नगा।

मान भक्ति एव प्रमपक न प्रनीत्या अनिरिकन त्याग भाव क भा यथष्ट प्रमग न कविया म उपनय हा जान ह। मन भीया माह्य प्रायना करन

प्रभु जी करहु अपनो चेर ।

मे तो सदा जनम को रिनिया नहु लिखि मोहि कर ।<sup>१</sup>

सामान्यतः प्रभु का वाग या मया भाव म भजन का धारणा इन मप्रत्याया म नहा है।

न निगु शिया प्रममार्गी भवना का काव्य नम प्रकार पिछती न प्रनार की रचनाया म मिन है परतु यनी नर प्रम का महत्ता का प्रन है वह ममान भाव म विद्यमान है। एर दूसरी ममानता य भी है कि अभियजना कौन का अपशावृत्त निखार निगु ग प्रममार्गी काय म भी उपनय हान लगता है या कि उमकी भाया उतनी नहा है जिनकी कि मगुण परम्पराया म दृष्टिगोचर हाती है।

## १८वीं शती के ब्रजभाषा प्रेमाभक्ति साहित्य का मूल्यांकन

आनाय युग क प्रमा भक्ति साहित्य की भाव मपना एव वक्तव्य का विशरण करते समय तथा कविया का परिचय देते समय नम बीच बीच म अभि यजनागत विनोपताया का बराबर उल्लेख करत गय है। वास्तव म रचना म एक एती शक्ति विनोप हाती है जिसक कारण भावपक्ष एव कथापक्ष का अत्य न्तिक विभाजन सम्भव ही नही हाता। पीछे रूप रमिक नव नारा लिखे छन की ऐसी भी न्तिव रन्ति मीमासा हमन की है। अत यहा पर अभियजना कौन पर विस्तृत विनार करना उचित न नगा। वसक अनिरिकन यनि मात्र अनकार छन मुनावरे गिना दन स ही काय सम्पना का महत्व निर्धारित हो सकता है तो हम कना चाहते कि नम काव्य म अधिकांग अलकार एव वनी सख्या म छन रूप तथा भाषा सम्बन्धा विनोपताए उपनय हा जावगी। या वस साहित्य म काय क बुद्ध न्पनम अग भी मिन जावगे और एकनम हीन काति की तुक



वर्तिका का मर्म या भाव नही है। पर हम हम समय माण्य का उसके पूर्ववर्ती एवं समकालीन माण्य के मन्त्रों में मूल्यांकन करना चाहते हैं।

### मूल्यांकन निष्पत्ति

विद्या भावनि रचना या युगविशेष के माण्य का धारण करत समय एक प्रकार का तुलनात्मक दृष्टि प्रतिवाप हो जाता है। जिस समय हम यह मानना चाहते हैं कि वह क्या है जो रचना का विशेष तथा मन्त्रवृत्त बनाना है उस समय हम स्वाभाविक रूप से उस समयमान या नया कवि विद्यार्थी पात्री या परम्परा के परिष्कार में लगते हैं। प्रस्तुत काव्य का मूल्यांकन करत समय भाव यह कभी-कभी हम अनिश्चित रहता है। रचना का विशेषण करत समय उस एक प्रकार का मान कर रचना का मर्म है परन्तु जहाँ मूल्य घोषण का प्रश्न आ जाता है यह प्रतिवाप प्रक्रिया कि हम अर्थवत्ता या वाच्यता तुलना वस्तुओं के साथ तुलना कर रहे हैं।

### पूर्ववर्ती भक्ति-काव्य से १८वीं शताब्दी के प्रेम-भक्ति-काव्य की तुलना

(१) रक्ति काव्य के माण्य के परिष्कार में लगते हैं एक बात एक ही रूप में मानते आते हैं कि १८वीं शताब्दी के प्रामाण्य कवि अनुगामी हैं। भक्ति-काव्य के कवियों ने जो नये-नये परनामों कायाध्यायों का प्रयोग करके और विशेष गौरवपूर्ण पद्यों में रूपा है जो काव्य कवि को उपस्थित करा है। परिष्कार रूप में कि यह माण्य विशेषण जमा प्रदान होत रहता है।

(२) हम विशेषण का कारण अनुभूति वृत्त का धारण या विद्या प्रकार की धारणा नया है। कारण है जाना के अर्थ में माण्य क्षेत्र का स्थापना करना। काव्यानुभूति के लिए कवि मानते हैं कि क्षेत्र में विद्या या वाच्य विशेषण माण्य का। विशेषण-परिष्कार का मर्म एक ही मर्म क्षेत्र उपलब्ध रहता है। राधा और कृष्ण का विहार विद्या का प्रथम एवं नियत नया मान्योप भाषा और उच्च। धर्मिकता धारण या धर्मिक है कर्म अस्तु कर्म मर्म का अस्तु का विद्या मानते नया धारणा उपर विद्या नया मान्योप एवं नये विद्या की धारणा नया है। अन्तिम राधा कवियों ने हारण पद्य का रचना एवं धर्मिक मर्म का है पर धारणा नया है कि राधा-कृष्ण के रूप में विहार मर्म का मर्म मर्म नया काव्य का दृष्टि मर्म धर्मिक का धारणा या और मर्म धारणा की दृष्टि में धर्मिक विद्या का उपलब्ध।

(३) अने गोमिन भेद म गोमिन रहने क लिए कोई अज्ञान होना चाहिए और हमारी समझ म य अज्ञान सम्प्रदाय निष्ठा का था । सामन धर्म अन्धानि जब साहित्य का नियम बनन लगत है ता निश्चित रूप म रचनाकार का क्षमता म हानि होता है । यह स्थिति हम समय उत्पन्न हो गयी थी । इस युग तक अने अने सम्प्रदायों क बंधन कड़े हानि पहुँचे थे । अब काय मुक्ति क प्राप्ति क विकास का माग प्रबल होन लगा था । तबिन यही पर य था रूढ़ि कि अन्धानि का मुख्य प्रयाजन था साधना काय्य मुक्ति नहीं । चिन्तन मनन की दृष्टि म जड़ बन गये तेन म प्रत्येक धर्म म भी नये आयामों का उद्घाटन हो गया था धर्म धर्म फिर कर उन्ही विचारों क आसपास उलट रहना पड़ता था । अस्तु परिवर्तन क लिए आवश्यकता थी कि पतनोन्मुख सामाजिक व्यवस्था बनन । उत्पादन वितरण विनियम क साधना का रूप बनन बिना सामाजिक संगठन म परिवर्तन सम्भव न था । स्वयं समाज की विविध इकायों भी बनन का बजाय अधिकाधिक प्रस्तरीकृत (Fossilized) हो रही थी । अज्ञान की प्रक्रिया अज्ञान कारण उन्नीसवीं शती म आकर प्रवृत्त करती है जेन नया सामाजिक शक्तियाँ सामन आती है और तभी काय्य म नयी अभियोजनाएँ भी रूप ग्रहण करती हैं ।

(४) सम्प्रदाय निष्ठा क साथ ही यह भी स्मरण रखना होगा कि हम समय सखी भाव का क्षेत्र बनता जा रहा था । बल्लभ धर्तय निम्नांक अन्ध विविध सम्प्रदायों म सखी भाव म युगलापामना बन रही थी । पतनोन्मुख सामाजिक व्यवस्था के हीनवीय प्रेम और विनाश म यह स्वाभाविक भी था तथा अन्धकार क खुन वातावरण म ऐसा प्रेम एक आदर्श भी था ।

(५) भक्तिकाल के प्रामाणिक के कवियों म सम्प्रदाय के सिद्धांतों की विवेचना बहुत कम हुई थी परंतु अज्ञानाच्य युग तक अने अने सिद्धांतकथन की मात्रा बढ़ गई । ऐसा लगता है कि अन्ध कवियों के मन म यह शक्ति उठने लगी थी कि पाप उनका बान को सही परिदृश्य म नहीं ममभा जा रहा है । शृंगारि कता का जा भ्रम उनके काय्य म उत्पन्न हो सकता था सम्भवतः उन्नीसवीं के निवारण क लिए यह प्रभूत सद्भक्तिक साहित्य रचा गया है । हम साहित्य का पतने समय बहुधा रीतिकान क लक्षण प्रथम था आ जाते हैं । दाना ही प्रकार की रचनाएँ लक्षण प्रथम हैं । कभी कभी ता प्रामाणिक के सद्भक्तिक विवेचन म शरी भी रीतिकान की ही स्वीकार की गई है । रूप रसिक श्रेय द्वारा सम्पन्न युगन गतक तथा महावाग्गी म आहा म लक्षण एष पदा म उनकी निवृत्ति की गई है । चतुर्थ मतानुयायी ब्रह्मगोपान की हृदिरीता का भी प्रथम यगी है । जहाँ पर य शरी नगी भी स्वीकार की गई वनी सिद्धांत कथन अलग म किया गया है । अस तथ्य स यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भक्ति का य तीव्र आवेग कम पड़ने लगा था जिसकी शक्ति क कारण भक्ति काल के कवि का सिद्धांत कथन म

अपना गति नहीं कहा करती पत्नी थी ।

(६) भक्ति का आवग की गिविन्ता का एक और प्रमाण दिया जा सकता है । गुरु का महत्त्व भक्तिमान में भी बहुत था । गाविन्त स वंश गुरु का मान दिया गया था । परन्तु पूरी गुरु परम्परा का तब तक सम्मान पत्नी में उमकी स्तुति प्रणाम या बघाई गान की परम्परा भक्तिमान में हम उपलब्ध नहीं है । १७वाँ गनी के प्रारम्भ में हरि राम 'याम' 'व्याप्ति' न ज्ञान अज्ञान गुरु का प्रणाम की थी तब बघाया का यह अनिश्चित था । 'मके अनिश्चित इच्छाम या श्चि इच्छि' अज्ञान समय का श्रेष्ठतम महात्मा था एवं उनका विराट् 'यति' का श्रद्धा भिन्ना प्रामाणिक था । परन्तु १८वाँ गनी का कवियों में गुरु भगत आवाय यो अथवा बघाया का उल्लेख जाता है । एसा जान जाता है कि स्वयं का मामध्य का अपेक्षा उच्च पूजा का गरिमा पर अधिष्ठान विद्याम या और वनी उनका प्रणाम मान था । 'म प्रणम म मूर्त्तम क मन्त्र' म कथा जान जाता वह कथा या' हा जाता है जिसमें कि मृत्यु समय उनसे कहा गया था कि तुमने जाया प' गाय पर ब'भावाय जी का गुणदान किमी प' म न' किया । मूर्त्तम न मरणा दृष्ट प' चरने करा प' बना कर गुना ता दिया पर उनका उत्तर उनका गति का वंश प्रमाण है । मूर्त्तम न र' था कि 'न जाया प' म गुरु की हा स्तुति ता मैं न' है । गुरुमुख गि'य का मयम बरा श्रद्धा यनी है कि गुरु का म' अज्ञान अपना रचना गति में आगे उदाव । अस्तु आता 'य युग म य' रचनापानता धांग हान मगती है और गुरुचरन का अपेक्षा गुरु का 'यति' का गान अधिष्ठान हान गयता है । आधुनिक भाषा में य' एक प्रकार का पमनिका ब' है ।

(७) भक्तिमान्तीन काव्य एक प्रकार आताच्य काव्य का मध्य धारे धार एक अन्तराल और बनता गया है । प्रस्तुत काव्य में अस्मिन्पञ्चना का अधिष्ठान अज्ञान कथन का अर्थ है । गुरुचरन 'य गाविन्त' 'य मना' 'य पाना' 'य र' 'य रमित' 'य आ' अधिकांश कवि अज्ञानि क प्रति आकषित प्रानत हान है । 'म हम मममामयित कथायुग का प्रभाव मान सकते हैं । 'मके अनिश्चित य' प्रशंसा सूचित करता है कि अनुभूति का वंश में 'य' 'य' 'य' या धार 'म अनुभूति का अर्थ का कथा मज्जा का आवरण में लिखा जान गया था । 'म तमाम काव्य का मध्य इच्छामाय 'चित्त' विद्यार्थी का काव्य अपना अन्वयण-पानता एवं आदगा भवता में अज्ञान जान जाता है तथा पना' का काव्य अनुभूति और अधिष्ठानता का अर्थरचन मय में अधिष्ठान ।

## समसामयिक रीति काय से १८वीं शती के प्रेमाभक्षित-काय की तुलना

पूर्ववर्ती मतिवाक्य में तुलना करके समय-मन-रति-वाक्य के साथ समकी समानता-रति की थी। वस्तुतः इन दोनों प्रकार की रचनाओं के मध्य इतनी समानता है कि तनिक भी प्रमावधानी उनके रूप-मन्-अंतर का मित्र नही है। हमें पूरा है कि हम इस सम्बन्ध में और कोई स्थापना करके इन दोनों वाक्यों के कुछ समानता सूचक अंग उपस्थित कर देना उचित रहेगा

- (१) प्यारी तू कमनता नित पनी ।  
विन नी पनचि धधि न्यि नार भौह रहन नित चनी ।  
— रूप रमिक देव नि० वि० पन्नावना ३६

### तुलनीय

निय कित कमनती पनी बिनु जिहि भौह कमन ।  
चल चित बभ चुकनि नहि कर विनारनि वान ॥  
— गिहारी सतसई ५६

- (२) अनोखे बनी गूयन हार ।  
नागे नीर चुचान पुनक तन नीति सुवाय वार ।  
— रूप रमिक देव नि० वि० पन्नावना ४२

### तुलनीय

रहा गुह्यो बेनि नखे गुह्यि के स्योनार ।  
नागे नीर चुचान जे नीठि मुनाए वार ॥  
— गिहारी सतसई (रत्नाकर) ४८

- (३) लान उर बसी उर बसी प्यारा ।  
मनि भूपन की घरत उनारी ए कबहू नहि प्यारी ।  
रूप रमिक देव नि० वि० पन्नावनी ६३ ।

### तुलनीय

नो पर वारी सरवसा मुनि राधिके मुजान ।  
तू माहन के उरबसा हू उरबसा समान ।  
— गिहारी सतसई (रत्नाकर) २५

(४) मुहुमां गिवारं म मरुत नारं म वजल-मारं म वारं  
निरारि मुदावति क्षाता ।

मारं व जाणं गिवारं व चौरं म  
गलीं लिए पुनि गगं विनाता ।  
म्यामथनं तं मनो निवमं  
मुषं चणं लिए तनं शमिता माता ।  
शण्डवनं प्रभुं धाणं मणं वणिं  
पीनि परां गुनं नणं व नाना  
— शण्डवनं श्यं गीताश्रत गगा ६/८८

### तुलनीय

मुहुंर मुदांर मुषं मरं व गिवारं तिथी  
राजलं गिवारं व चमरं निरुधारं है ।  
माणं मयूरं पशुवानं किं जमुनं चारं  
शण्डधं धणारं ति पणिं परवारं है ।  
गामनाथं मण्ड्रं मुगधं मुनवारं द्रव  
नणं व तुमारं गं निणारं एकं वारं है ।  
निमिरं व नारं है बगीरं नारं है  
वामं शरतानं है विप्यागं मरं वारं है ।

— गामनाथं मण्ड्रं वकिता शण्ड ५०

### धधरा

भौरं चौरं गणानं तमं जमुनां वा जयं मण्ड्रं  
मारं पण्ड्रं ममं वरुणिणं वमवं मण्ड्रिणं मण्ड्रं ।

— वण्ड्रणामं वविं प्रिया

य धधरा वण्ड्रविषयं गवं भावगतं लक्षणां व मूत्रकं है । श्यां प्रहारं उपायानां व भाव  
म धधरापिणं ममानां मिणं जाणगा । श्वं वविं न दूषं व उरानं वा ध्याणारं  
गवं म्यां परं उपायानं श्यं मं श्यां है

पायां न गिवारं मविणं शिमां शण्डं मा  
दूषं मा वनमं विणं ज्ञानं शण्डाण्डा ।

— श्यं (ब्रजभाषुगं मारं १० ०६ परं मण्ड्राणं)

### धधरा

शण्डनं गौरं न दूषं गो वेषनं शिं मा धधरां श्यं श्यं

उत्पन्न नैव ने इमी उपमान का प्रयोग एक दूरस्थान पर किया है। जो कि प्रामाणिक व कारणात्माना म्याना पर उमान अतः अतः मी न्य का यजनात् करता है। मानवनी नायिका म दूनी बन्ती है कि अघिक न्य तन मान न करना चाण्य उमने अनुसार -

दूष का उपान एमी मान कीज मामिनी

गीतामृत गगा ६१५

य कुछ अग अनायास ही कविताया म उता निय गय है परन्तु यत्नि प्रयासपूर्वक समान अग दूने जाय ता भाव भाषा औपम्य विधान एव गिल्प की प्रभूत समान ताए मितगी। केवन यत्नि छन्द का निया जाय ता प्रभाभक्त कविया म पना के साथ न कवित्त सबया राता नोना सारठा चौपाई पदरी अरिल्ल छप्पय अत्नि छन्द प्रयुक्त हए है। इतम मी नाना नन कविया का अत्यधिक प्रिय छन्द है। पीछे एसी अथाय म हम नैव चुके हैं कि प्रभाभक्ति के कविषा क काव्य म नायक नायिकाभेद के उत्तरण मी मित जाने है। यह नायिका भेद उत्पन्न-नील मणि के अनुकरण पर न होकर काय गाम्त्र क अनुकरण पर है। नना अवश्य है कि यत्नपूर्वक नन भेदा प्रभेदा क उत्तरण उ गने उपस्थित न। करने चाह है।

इतनी समानताया के हाने हुए भी एक वया अन्तर मी मित जायगा। हम इस अन्तर पर प्रकाश डानने के पूर्व कुछ अथ तथ्य उपस्थित कर रह है

(१) प्रस्तुत प्रबंध म ही गुद्ध प्रभाभक्ति क अस्मी म अत्रिक कविया का परिचय किया गया है जब कि िनी साहित्य क बृहन् नित्यान (प्रथम भाग नागरी प्रचारिणी ममा) म रीति कविया की सख्या कवल पचासी ही है। स्मरणीय यह है कि प्रबंध का आनाय का न केवन सौ वर्षों का ही है जब कि नित्यास म न गतात्त्या के कविया पर विचार किया गया है। इसक अनिर्दिक्त भक्त कविया क साहित्य की साम्प्रदायिक गोपीनयता और कृतिवात्ता के कारण अनुपलब्ध एव रीति कविया के समान रात्या नम के अभाव के फलस्वरूप दरबारी पुस्तकानया की सुरक्षा के अभाव म कृतित्व की विनष्टि न न मात्र म कितन कविया का प्रकाश म ही नहीं आने दिया। अतम बात है कि जहा प्रभाभक्ति सम्बन्धी गोध काय अपनी प्रारम्भिक अवस्था म है एव जिसकी सीमाया म यह प्रबंध भी पर नना है वहा यह इतिहास अज्ञान खोज की चरम परिणति और विस्वास क साथ सामने आता है।

(२) कविया की सख्या ही ननी कविया की रचना का परिमाण भी रीतिवादीन कविया का अपक्षा बन्ती अघिक है। प्रत्येक पृथक भी कविया ने प्रभूत साहित्य का सृजन किया है। अनयअना रमित्याम हित रूपनान नागरात्ताम आनन्दन स्परमिकतेव जम कविया की रचनाया की सख्या काफी बन्ती है। सम्मिलित रूप म भी इम साहित्य का याम सम्पूर्ण रीतिवादीन क कवियो स अघिक

हा सिद्ध हागा ।

इन तथ्या स दा निष्कप बिना किमी विज्ञान व सामने आ जात है— (१) अधिकां मक्त जन कवि भा थ तथा (२) इन कविद्या व सम्मुख अभिव्यक्ति मयम का कोई अनुगामन नहा था । इन ज्ञाना वाता की हा विवचना उचित हागी

(१) अधिकां मक्त कवि थ -भक्ति व क्षेत्र म नीला-गान चरम माध्य है । इसक लिए जित माधना माग का रवोवार किया गया है उमम लीला-गान अत्यंत महायत् हाता है । बल्लभ सती चतय राधावल्लभीय निम्बार्क भ्राति ममी सम्प्रदाया म कातन एक संगीत का पूजा विधि एक सदा प्रणाली म महत्व पूण स्थान है । परिणामस्वरूप मक्त व चारा धार एक एसा वातावरण बना रहता है जिनक कारण उम भी काव्य रचना क लिए प्र रणा धोर उत्साह रहता है । इसक अतिरिक्त काय मृजत प्रक्रिया म उम युगतरूप या अय उपासना सम्बधा तथ्या का भावन भी करना हाता हागा । एसी स्थिति म मक्त-कवि को अपना रहस्यानुभूति म सहायता भा मिलती हागी । काय रचना से लीलागान ही नग हाता लाना ध्यान भी हा जाता है । अत काव्य साधन हा जाता है एक रहस्यानुभूति साध्य । मूकिया क वार म भा कहा गया है कि प्रत्येक मूषा विचारक कवि था । यनी यान वप्यन मक्त क लिए भी कहा जा सकनी है । परन्तु रीति कवि इसी स्थान पर एक निम्न भूमि पर खडा खिगाई जता है । उमक सामन रचना करन का न ता एगी काई तात्कालिक प्र रणा हा था नि प्रतिमा हा या न हा पर बुद्ध पन् दिले ही जाये धोर न किमी मानसिक माधना म ही उम महायता मना थी । परिणामस्वरूप रीति-कवि व हा जन हैं जिनम प्रतिमा का बुद्ध न बुद्ध विनाम प्रकाश था । इसक अतिरिक्त रीति-कवि क सामन अभिव्यक्ति व अनुगामन की समस्या था । उम एसा यान कनी थी जिन समभवार मराह एक मुक्ति रीके । पर मक्त कवि क सम्मुख श्राना-गमाज या पाठक-गमाज का एसा तनिक भी साधन नहा था । व म न चाण डग म टूटनी तय एक विगरेत गण म भा धपनी बाव क सकता था । प्रणामा उा कवि एम म अजिन करना नग था जीविता का मापन क या नही । एसा स्थिति म अभिव्यक्ति सेवारन-गजात का काम करने का उम कना साव्यकता ही नग परी ।

इन तथ्या का परिणाम यह हुआ कि जनी रति कवि एक कविताया का मस्या कम है वहा काठ रता क । दृष्टि म व अक्षिक समृद्ध है । प्रभाभक्ति का एक मापाय कवि रति काव्य क मापाय कवि का धन । एसा कारण काव्य कता का कमी । पर हान उतरता है । पनाम न जा फावा । का यान का अयग

ही रचना चाहिए ।

ऐसी अवस्था में एक प्रश्न उठता है कि फिर रातिकाल के असंलग्न भाँति के प्रभाव कम आ गये ? हमका मन्त्र हा उत्तर है कि एक तावतव समस्त वातावरण में व्याप्त था दूसरे प्रामाणिक के भी अच्युत कवि रातिकाल के अच्युत कविया के कुछ न कुछ सम्पर्क में आता है रहता था । किशोरावस्था जयपुर जायपुर के दरबार पर वृत्तान्त देव का प्रभाव था । उक्त राजमिह प्रजापति सुन्दरि कुंवरि जय कवि उनका निकट सम्पर्क में था । विहारा नरहरि देव के सम्पर्क में आये थे । घनानन्द एवं नागरीनास तो दरबार में सम्बन्धित या दरबार के स्वामी रहे हैं । फिर रातिकाल के कवि स्वयं जय भक्तिपरक रचनाएँ करते थे ता उनका वागम सच्युतता स्वभावतः आ जाती होगी । कभी कभी भक्ताने एतिकाय को स्वयं पारमार्थिक अर्थ में भी ग्रहण किया (चतुर्थ मन्त्रप्रभु विद्यापति एवं जयदेव की रचनाओं के गहरा समर्थक थे) । हम प्रकार के आत्मन प्रदाना न पारस्परिक प्रभावों को गति दी होगी ।

ऊपर विवेचित अंतरों में दोनों प्रकार के काव्यों के मूल स्वरा का अन्तर समझना समझने के लिए कठिन न होगा । एक के मूल में साधनानुभूति का स्वर है एवं दूसरे की जड़ में काव्यानुभूति । या नवीन सिक्का की कमी पाना हा क्षेत्रों में नहीं है उनमें भावधान रहने का आवश्यकता है । और युत्पन्न पाठक में ऐसी सावधानता की अपेक्षा सदा की जाती है ।

अभिध्वजना के क्षेत्र में रातिकाल ने इन कवियों का यति प्रदान किया है ता ग्रहण भी कम नहीं किया है । रातिकाल की रचना परम्पराओं - ब्रज भाषा एवं निकुंज भाषा - की समस्त स्थितियाँ दृष्ट्या घटनाओं के ऊपर स्वरूप का साक्षात्कार के नाम के साथ ही रातिकालीन कवियों ने प्रामाणिक के कवियों से न किया है । मूल साहित्यिक दृष्टि उन्होंने छोड़ दी थी एवं उन रातिकाल का अपने रातिकालीन शृंगार परक अर्थों का अर्थ उन्होंने छोड़ दिया था । हम परिणति का एक शुभ प्रभाव भा हुआ कि रातिकाल का काव्य उक्त भाषाओं का चित्रित करते हुए भा भक्तिकाल में एक भिन्न रसात्मक स्तर पर प्रतिष्ठित दिखाई देता है जब कि प्रामाणिक का साहित्य उमा स्तर पर पूर्ववर्ती भक्ति की अपेक्षा नाच स्तर पर उतर आता है ।

परन्तु इसमें इस प्रामाणिक-काव्य का महत्त्व नविक भी कम नहीं होता । प्रारम्भिक भक्ता एवं रातिकाल कवियों का मध्यवर्ती कवि य कवि है । भक्तिकाल का परिणति रातिकाल में जाना है यह बात साहित्यिक साहित्य के इतिहास अर्थात् मध्यकाल के गुरु हैं । परन्तु इस विकास की प्रक्रिया क्या रहा है इस स्पष्ट करने के उपयुक्त प्रयासों का कुछ अभाव भा दृष्टिगोचर जाना है । अतः यह धारणा बन जाना है कि मूलतः तुलसीदास के वार या मीरा का काव्य ही देव प्रताप साहि



या मित्वा रोषस म परिणत हा गया था । पर वास्तव में मन्त्रिज्ञान व पयायवाचा ममभे जाने वान कविया एव रीति कविया की मध्यवर्ती वया प्रामाण्य का मायुर्वेदासना वान य विविध सम्प्रदाय है । इहा सम्प्रदाया का विविध लाना परम्पराएँ आपस में टकरा कर धुनती मिलती रहा हैं । और उहा का ममवित रूप १६वीं शती तक आन आन उमर की नहा आना जनप्रिय भा हा जाना है । प्रामाण्य व सम्प्रदाया का प्रचार प्रसार हाता है तथा दूसरा धार युगन-यानाया मयवा ब्रज लानाया व तत्त्व-ज्ञान का प्रयक व्यक्ति न ता ममभ पाता है और न वगा मानसिक माधना की कर पाता है जिमम कि यह ममस्त अभिव्यक्तियाँ तोकिर काम से ऊपर उठ जाती है ।

म स्थिति में राधा वृष्ण का मूल रूप एव भक्ति भाव आता हा जन मानस में एक साथ चरन रहत हैं । लोक मानस एम विराधामामा का लिए वया आगे बढ़ता रहता है । म प्रकार धम माधना एव लीलागान एव विकास प्रक्रिया में हाकर आगे बढ़ता है एव इम प्रक्रिया का जन भय सामाजिक राज नतिक परिस्थितिया से सयाग होता है ता अपवादक का एक अपूर्व कलात्मक रमान काव्य रीतिवादीन काव्य के रूप में प्रादुर्भूत हाता है ।

परन्तु इमका तात्पर्य यह नहीं है कि यह माहिय रीतिवाद्य का अपनी कविमय विचारनाएँ ममपित कर नि गय हा जाना है । बकि जगा कि ऊपर मवन किया जा चुका है यह रीतिवाद्य में मय भी प्रभाव प्रयोग कर ममाना-तर गति से आगे बढ़ता है । १६वीं शती व उत्तरार्ध में भक्ति व य विविध सम्प्रदाय एक बार पुन मगलित हाकर पुनःपुनः का प्रयोग करत है । नतिनक्तिगारा-म स्वरगिक-व विवनाय चरनर्ती गा० हरिराय वया प्रति जा चरणलाम वान घना घाति मन् और कवि विघलित हाता ह भक्ति भावना एव सम्प्रदाया व पुन मयता का प्रयोग करत है । यह पुनःपुन १६वां शती व मध्यभाग तक विगय गतिगातर । मम-सम्प्रदाय की रमिक आगा इमा वान में पचना पुनता है — परन्तु १६वां शती व उत्तरार्ध में नय युग का परिस्थितिया में टकरा कर य पुनःपुन भा ममाप्त हा जाना है । यानु मधुवना-वाम धम भावना का य प्रतिम सो था और १६वां शती व ममाज की न गतिगा न मवत पर इमा का ममात करन का भाग की । वया ममाज घाम ममाज घाति मागारिक गामिक घा-पान प्र मानति का मव घा-ना व निक्क वया म ना नय । विहृति-म मया पाना-पुन नामना-मरणा न म प्र मानति व मरणा का ना पना घधित विहृत मरग गानाविक आगा म दूर हा गिया था रि स्वप्न नावत एव पुन मम-वचना व विग इहा हाता म-वयक भावना था । या प्रया-नित जग का मोति मात्र भा म परम्परा में माधना और भाव वना हा व । है पर हाता है रि वत आगत प्रमाणन म-वित्तिना है ।

## उपसंहार

अठारहवा गती के ब्रजभाषा व प्र मामकिन काव्य का अध्ययन करन क उपरान्त कतिपय बात हमारे सम्मुख अत्यन्त स्पष्ट रूप म उभर कर आ जाता है। उह सभेप म इस प्रकार उपस्थित किया जा सकता है

(१) भाव की दृष्टि स प्र मामकिन का पाच प्रमुख भविन भावा गान दास्य सत्य वात्सल्य और मधुर म विभाजित किया जा सकता है। नम भा अठारहवा गती के साहित्य म प्रधानता गान गम्य एव शृ गार का ही है।

(२) नीला की दृष्टि स अठारहवी गती व ब्रजभाषा के प्र मामकिन साहित्य म तीन परम्पराया की स्पष्ट स्थिति दखी जा सकती है

### (क) ब्रजलीला (आवरणलीला)

नम लाना प्रकार म समस्त शास्त्रपुराणाणि दणित कृष्ण चरित्र का घटनाए एव अभिनयविनयाँ स्वीकार की गई हैं। काव्य चित्रण की दृष्टि से इस लीला की प्रमुख विगपताए निम्नलिखित है

- (एक) इसम कृष्ण क रूप चित्रण की आर अधिक् ध्यान लिया गया है।
- (दो) नम परम्परा क काव्य चित्रा क अनुसार कृष्ण बहु-बलनभा पनि है।
- (तीन) नम काव्य म भिन्न प्रमगा म आवश्यक रूप स राधा का ही बलन नहा किया जाता। जन्म पर राधिका चित्रण की आर ध्यान भी न वहा उनका रूप परकीया नायिका का अधिक् है — स्वकाया पत्ना का गृहस्थ रूप विरलता म ही उपसंघ होता है।
- (चार) ब्रजनाला काव्य म परकाया भाव का बहुमान प्राप्त हुआ है।
- (पाच) ब्रजनाला म विरल पूवराग मान प्रवास एव प्र म बचित्व— नम मभा का स्वाकृति है। वास्तव म विरल तत्व का भूयान रूप ब्रजनीताया म है।
- (छह) ब्रजनाला म प्र म का आन्त गायन प्र म है। नस प्रकार मधुर भाव क क्षेत्र म भा यह नाना गायी भाव पर अधिक् बत दती है। नमी कारण नम परम्परा के काव्य म गायीभाव का अभि व्यक्ति नाना प्रकार स हु है।

- (सान) गायी भाव में भगवान् के प्रति प्रत्येक कान्ता जमा प्रेम निवृत्ति विद्या जाता है। रामापामका की रमिक शाखा का स्वमुखा भाव गायी प्रेम का ही प्रतिरूप है। कृष्ण या राम को कान्ता रूप में पान की अभिनायात्म साहित्य में प्रचुर मात्रा में प्रकृत हुई है।
- (घाठ) इन आवरण या ब्रज-नालाया में उद्धव हनुमान मुवल अजुन नन्-यगाता अरथ-कीर्तना आदि का भावा का अनुगामी बन कर भी उपामता की जा सकता है। इसी कारण आवरण साता परम्परा के काव्य में मधुर भाव के अतिरिक्त अर्थ प्रेम भाव भी प्राप्त हो जाते हैं।
- (नो) कृष्ण की ब्रज-नाता का एकत्र समानाधिक म्यनिया रामापामका में भी स्वीकृत है। गावन साता ब्रजलाना का ही पयाप है।
- (दम) ब्रजनाता एवं मावन नाला का मुख्य अंतर है कि सावन साता में एतय का अनिवाय स्वीकृति है पर ब्रजनीला में एकमात्र माधुय भाव ही माय है।
- (ग्यारह) नाला नालाया का यह अंतर कृष्ण एवं राम सम्बन्धा पौराणिक आख्याना के कारण हुआ है।
- (बारह) अंतरहवा नाला में वल्लभ निम्बाक एवं गुब मुष्यन ब्रज लानाया का अभिभक्ति देन वान सम्प्रदाय है। एक अति रिक्त स्वामा नरत्ति एवं स्वामा रगिक एवं जम मला सम्प्रदायानुयायी जन भा ब्रजनाता का स्वाराज करते प्रतात हान है। राधावतनीय गा० हितरूप सात में भा गायामात्र का स्वार्ति का अभाव नाला है।
- (तरह) राति वान का शृ गार्गिक प्रवृत्तिया एवं विनाम चलाया में ब्रजनाता का अतिम परिणति हुआ है।
- (घोह) काव्यगुण का दृष्टि में इस साता के गायका का साहित्य अधिक मग्न न है।

### (ग) निरुज-साता

निरुज-नाता नाम्य पुगगाति में वर्णित कृष्ण-नाता का एकत्र अन्वा कृत करके विकसित हुआ है। नाला-गान का एक कतिव का मुख्य प्रत्य निम्न निमित्त है

यहाँ पर नया उठाया जा सकता। परन्तु माना न हम प्रेम प्रतीकवाचक का अन्तर्गत एक दूरीय प्रतीक पवित्रता उपस्थित किया है। हममें प्रतीक जाना है कि प्रेम का अनयना व क्षम म व स्वकीया की नतिव दृष्टि का स्वाकार करन थ।

(मान) विरहानुभूति इस परम्परा व काव्य की एक मुख्य विशेषता है। आवरण नाता (अज्ञानता) व गायका न विरह वृत्ति का जा मान लिया है सम्भवत उमक मूल मयह विचारधारा विद्यमान था।

(३) साधना का दृष्टि स यह काव्य प्रेम परव रहस्यवाचक के अन्तर्गत परिगणित किया जाना चाहिए। बाह्य प्रतीकपामना व साथ ही नित्यनीता का एक नितात मानसिक साधना इसमें अर्पित है। निरुजनीता व गायक ता गुड रूप स इस प्रेम रहस्यवाचक के अन्तर्गत माने जा सकते हैं।

(४) अठारवा गती का व्रज भाषा का प्रामाणिक काव्य अपने कथ्य एव गित्य की दृष्टि स भक्ति जाल एव रातिकाल का मयवर्ती है। इस सम्बन्ध म मित्र तथ्य ध्यान म रखन हागे

(क) इस साहित्य म यवन नातामा का रूप एव उनकी मूल विचार वस्तु भक्तिजाल का ठाक अनुसरण है। इसा कारण काव्य का दृष्टि स पाने वाने यक्ति का यह काव्य पिष्टपपण मुक्त एव एक सीमा के बाह्य उवान वाना प्रतीत हाता है। परन्तु यह ध्यान म रखा जाना चाहिए कियत काव्य गुड काव्य रचना की दृष्टि स न रचा जाकर साधना साधन व रूप म लिया गया था।

(ख) मूल तत्व ज्ञान का समानता हात हुए भी १८वीं गती का यह साहित्य अनुभूति की आवगतमकता की दृष्टि स भक्तिवादीन प्रामाणिक काव्य की अपे ता हीनतर है। एसा प्रतीत होता है कि वयवितक साधना म पूववर्ती ताव्रता एव आत्म विश्वास का अभाव हात गगा था। इस काव्य म सम्प्रत्याया चयों व गुणगान का वचना दृष्टा स्वर इस आत्मविश्वास की गीणता का छातक है।

(ग) अलकृति भाषा व परिवरण एव अभियजना व उपादाना प्रसाधना का अधिक मचण प्रयाग हम काव्य म है। इस दृष्टि स प्रस्तुत साहित्य क गित्य विधान पर रातिकालान प्रवृत्तिया का स्पष्ट छाया है।

(घ) रातिकालान काव्य न नायिका भूत नायक व रूप और रूप प्रभाव विरह की विविध नातामा वयवल्भाया व साथ नाना प्रीणामो आति क प्रमग एव भाव प्रामाणिक की व्रजनाता (आवरण नीता)—परम्परा स प्राप्त किय है। मयाग एव भितन का घनाभूत सवगात्मकता नायिका का सौन्द्य एव

गौतम का प्रभाव नायक की मितनाकुलता आदि दशाण्डु निकु ज-लीना परम्परा में ग्रहण की गई हैं। त्रिहारी जस कविया में आनाचका न धिनन प्रमगा का जो उत्कृष्टता ऐसी है उसके मूल में कवि का साधनागत भाव विद्यमान है।

(३) प्रम प्रतीक वाली भावधारा न रीति काव्य का बहुत प्रभावित भी नही किया एवं अतः गित्य रिधान में यह धारा रानि काय स कम में कम प्रभावित भी होती है। सुन्दरनाम या परगनाम जस कवि कम ही मिलगे जिन पर कि कता युग का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर हाता है।

(४) इस प्रकार भक्तिगत का प्रवृत्तिया का सम्पूर्ण प्रभावित का विविध स्थितियों के मायमें रानिकाव्य में हाता है। १६वीं शती का यह साहित्य रन राना काता की प्रवृत्तिया की मध्यवर्ती कथा ही नही अपितु रीति काव्य की समकालीन समानांतर प्रवृत्तमान जावन धारा भी है जो १६वीं शती तक अनसुद्ध गति में मचरिता जाता रहती है। यदि रन दाना प्रकार क साहित्या का समीची एवं तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो इस सम्बद्ध का राना एवं काय परम्परा क एतिसमिर वराव का अधिक साफ रूप साभन आ गवगा श्रीर बहुत सम्भव है कि रानिरान-सम्बधी वत म विवादा का सम परिगमन मा ले सक।



- (क) शब्द सक्षेप सूची
- (ख) सहायक ग्रन्थ-सूची





## ग्रन्थ मे प्रयुक्त शब्द-संक्षेप-सूची

घ०	घघ्याय
घप्र० प्रव०	घप्रकाशित प्रवच
घ० का०	घरण्य-काण्ड
घटि० स०	घटिबु घय-सहिता
घा०	घाचाय
उ० नो० म०	उज्वल-नीलमणि
रि० का०	रिदिघा काण
च० च०	चतय चरितासूत
चौ०	चौवाना
जी० गो०	जीय गास्वामी
रा०	डॉक्टर
त० दी० नि०	तत्त्वगीतारण्य
०० वि०	०० गिण विभाग
०० ०० गुण टा	०० ०० गुण गुण
००	०० गिण
ना० प्र० ग०	नागरी प्रशासकी सभा
ना० भ० गृ०	नागर भगि-गुण
ना० ०० गर्मा टा	टाक्टर नागण ०० गर्मा
नि० वि०	निग विग
नि० ग० हृ० भ	निष्ठाक-अप्रनाय क हृ ल भग
रि० क०	रि ० कवि
वृ ग० मि०	वृ ग गणव गिण
व० ग० पदुदे ।	वृ ग गण वृ ग ।
००	वृ ग ० (वृ ग गण क री ०० ग व ००)
	वृ ग ० ० ०
दु० रि०	दु व रिदग

पृ०  
 ब० ली०  
 वा का०  
 म० र  
 म० प्र० मिह डा  
 (ह ) म० र० सि०  
 म० नी  
 रा प्र० वि  
 रा० च० म  
 रा० त प्र०  
 रा म म० उ०  
 रा० भ र० म०  
 नी वि  
 व  
 व एण० न  
  
 व प० मू  
  
 श भू० गुप्त डा  
 गा भ० मू०  
 सि०  
 मु० वा  
 मु० म० स०  
 मू० सा०  
 स०  
 स्वा  
 स्वा० ह० स० वा० सा  
  
 श्री वृ स०  
 ह प्र० द्विवन्ती  
 ह० स०  
 ह नि० प्र०  
 नि० मा०

पृष्  
 बयालीस नीना  
 वात-वाण  
 (भगवत) भक्ति रमायन  
 डॉ० भगवती प्रसाद मिह  
 (हरि) भक्ति रसामृत सिधु  
 मध्य लीना  
 राधा का श्रमिक विकास  
 रामचरित मानस  
 राम-तत्त्व प्रकाश  
 राम भक्ति म मधुर उपासना  
 राम भक्ति म श्रमिक सम्प्रदाय  
 नीला विशनि  
 वपणव  
 वपणविक्रम गविक्रम एण० अन्तर माइनर  
 रिनिजस सिस्टिम्स  
 अर्दी हिस्ट्री आफ् नि वपणव केय एण०  
 मूकमण्ट इन बंगाल  
 डॉ० शशि भूपणनास गुप्त  
 गणित्य भक्ति-सूत्र  
 सिद्धात  
 सुदर काण  
 सुदर मणि सदम  
 सूर सागर  
 सत्या या सम्बत्  
 स्वामी  
 स्वामी हरिदास का सम्प्रदाय और उसका  
 वाणी-साहित्य  
 श्री वृष्ण सन्म  
 हजारो प्रसाद निवन्ती  
 हनुमत्सहिता  
 हस्तलिखित प्रति  
 निम्बाक माधुरी

## सहायक ग्रंथ-सूची

- |  |   |
|--|---|
| १ मन-य-तरंगिणी   | श्री रमिक भन्ना                           |
| २ मन-य निचयारम ग्रंथ                                       | श्री भगवतरमिक                             |
| ३ मन-य मास्त्रिनी  | श्री प्रिमादास                            |
| ४ समीपूट—वेगवत्तास   | यन्वन्वियर प्रस प्रयाग                    |
| ५ मष्टछाप घोर बलनम<br>सम्प्रदाय (दा भाग ०)                 | श्री० दानव्यानु गुप्त                     |
| ६ मष्टछाप परिचय  | श्री प्रभुव्याल मानत                      |
| ७ मष्टछाप सिद्धान्त के पत्र                                | स्वामी हरिदास                             |
| ८ मष्टछाप सिद्धान्त के<br>पत्राकी टीका                     | श्री प्रमानक राम                          |
| ९ उत्तरा भारत की<br>संज्ञ परम्परा                          | श्री परगुराम चतुर्वेदी                    |
| १० कहेयावान पाहार धर्मिनन्त<br>ग्रंथ                       | मपालक डॉ० वामुनेत्र शरण धमरान             |
| ११ कबीर प्रयासनी   | डॉ० वाममुन्दर शरण                         |
| १२ कर्णान्त (बगला-ग्रंथ)                                   | श्री यदुनन्त                              |
| १३ कबित्त रत्नाकर  | श्री मागपति                               |
| १४ कालन-मण्ड (भाग २ ३)                                     | श्री चतुर्मासि दानवान दगाई<br>धर्मशास्त्र |
| १५ कविमान  | स्वामी हरिदास                             |
| १६ गीतामृत गंगा  | श्री श्यामदास                             |
| १७ गुजराती घोर ब्रजभाषा कृष्ण<br>बाण्य का तुलनात्मक अध्ययन | डॉ० जगन्नाथ गुप्त                         |
| १८ गायत्री सिन्धुहरिका<br>सिद्धान्त घोर साहित्य            | श्री सतिशारण श्यामा                       |
| १९ गौरीग भूषण मखारना                                       | गौरांगनाम (बाबा कृष्णानन्द प्रकाश)        |

२ घनानन्द (प्रयावनी)	सपाठक श्री विष्णुनाथ प्रसाद मिश्र
२१ घनानन्द और स्वच्छन्द काव्यधारा	डा मनाहर लाल गौड़
२२ चन्द्रसखी और उनका काव्य	सपाठिका सुश्री पद्मावती शबनम
२३ चन्द्रसखी के भजन और लोकगीत	सपाठक श्री प्रभुत्यान भीतन
२४ चिन्तामणि भाग १	आचार्य रामचन्द्र गुप्त
२५ चतुर्थ चरितामृत (बगला ग्रन्थ)	श्री कृष्णदाम कविराज
२६ चतुर्थ चरितामृत (ब्रजभाषा)	श्री सुबल श्याम (बाबा कृष्णदास)
२७ चौरासी वर्षावन की वार्ता	विद्या विभाग काकरोली
२८ जायसी प्रयावनी	सपाठक आचार्य रामचन्द्र गुप्त
२९ तसबुफ और सूफीमत	श्री चन्द्रवली पाण्डेय
३० तुलसी प्रयावली भाग ७	आचार्य रामचन्द्र गुप्त
३१ देव और उनका कविता	डा नगेन्द्र
३२ दोहाकोश	राहुन साकृत्यायन
३३ नागर समुच्चय	नागरीदास
३४ निजमत सिद्धांत	विशोरदास
३५ नित्यविहार पदावली	रसिक देव
३६ निम्बाक माधुरी	सपाठक ब्रह्मचारी विहारीशरण
३७ पद्मावत भाष्य	डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
३८ परमानन्द सागर	सपाठक डा गोबिन्दलाल शर्मा
३९ प्रियादास प्रयावनी	प्रकाशक बाबा कृष्णदास
४० प्रमपाठ (प्राणनाथ वाणी)	अमरवास बनमानीदास शर्मा (दार्जिलिंग)
४१ प्रममक्ति-चन्द्रिका	श्री वृन्दावन दास
४२ प्रमयोग	स्वामी विवेकानन्द
४३ बयानीस लीला	ध्रुवदास
४४ बिहारी रत्नाकर	सपाठक जगन्नाथदास रत्नाकर
४५ ब्रह्मसूत्रा के वर्षावन भाष्यो का तुलनात्मक अध्ययन	डा रामकृष्ण आचार्य
४६ भक्त कवि व्यास जी	सम्पाठक वासुदेव गोस्वामी
४७ भक्त नामावली	श्री वृन्दावन दास
४८ भक्तमान	श्री नामादास

४६ भक्ति का विकास	डा० मुशाराम गर्मा
४७ भक्ति-शास्त्र	डा० सरनाम मिह
४८ भक्ति याग	स्वामी विवशान द
४९ भक्ति विलास	महाराज रघुराज मिह
५० भक्ति भागवत	श्री चरणनाम
५१ भक्ति सिद्धांतमणि	श्री रमिक दत्त
५२ भागवत-सम्प्रदाय	श्री वनदेव उपाध्याय
५३ भारतीय-शास्त्र	डा० उमंग मिश्र
५४ भारतीय-शास्त्र	श्री वनदेव उपाध्याय
५५ भारतीय दर्शन का इतिहास	ग० दत्तराज
५६ हिन्दुत्व	श्री रामनाम गौड
५७ भारतीय साधना और मूर साहित्य	डा० मुशागम गर्मा साम
५८ मतिराम और उवाका का प	डा० महेंद्र कुमार
५९ मध्यकालीन धर्म-साधना	डा० हजाराम प्रमाभक्ति
६० मध्यकालीन धर्म-साधना	श्री परशुराम तनुज
६१ मध्यकालीन शृंगारिक प्रवृत्तियाँ	
६२ मध्यकालीन हिन्दु-व्यवस्थितियाँ	डॉ० नाबिना गिरा
६३ मन्त्रवि जायन्ता	श्री जयदेव कुन्धर
६४ महाकाली	श्री हरिव्यास दत्त
६५ माधुरा वाणा	श्री माधुरा नाम
६६ मुन्शी धर्मिन-का प्रथ	गणेश दत्त श्रीमान श्रीत
६७ मुक्तक काव्य-परम्परा और विहारा	डॉ० रामभागत विवादा
६८ मुक्तक गतक (धार्मिकवाणी)	श्री भट्ट (म व्रजयत्नम चरण)
६९ रम-गार	रमिण दत्त
७० रमराज	श्री मतिराम
७१ रात्रम्यात का विगत-साहित्य	डॉ० भावानात मनारिग्या
७२ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धांत और साहित्य	डॉ० विजय-स्वान्त
७३ राधासमग रम-भागत	श्री मन्तरनात (डॉ० बाबा-कृष्ण दास)
७४ राधा मुपानिधि	श्री शिवहरिवं

७८ रामकथा उत्पत्ति घोर विवास	डा कामिन बुल्क
७९ रामचरित मानस	गोस्वामी तुलसीदास
८० राममक्ति म रसिक सम्प्रदाय	डा० भगवती प्रसाद सिंह
८१ राममक्ति साहित्य म मधुर उपासना	श्री भुवनेश्वर नाथ मिश्र माधव
८२ राम रस रग स रामानन्द-सम्प्रदाय तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव	श्री रमरगमणि
८३ रास पचाध्यायी	डा० बदरीनारायण श्रीवास्तव
८४ रीतिकालीन काव्य म प्रम व्यञ्जना	श्री नन्ददास
८५ रीतिकाल की भूमिका	डा बच्चन सिंह
८६ लीला विभक्ति तथा नित्य विहार पदावली	डा नगेन्द्र
८७ विद्यापति	श्री रूप रसिक देव (प्रकाशक माधुरीदास)
८८ विलाप कुसुमानि	डा० शिवप्रसाद सिंह
८९ वष्णव धम	श्री दाबन दास
९० ब्रज माधुरी सार	श्री परगुराम चतुर्वेदी
९१ गणसार	श्री वियोगी हरि
९२ गव मत	श्री बुलना साहब
९३ श्रीमद वष्णव सिद्धांत रत्न सप्तह	श्री यदुवर्गी
९४ श्री राधा का नम विकास	हकीम श्यामदान दूदाबन
९५ श्री हरिनीला	डा शशिभूषण दास गुप्त
९६ श्री हरियास यशामृत	श्री ब्रह्म गोपाल (प्रका० बाबा कृष्णदास)
	श्री रूप रसिक देव (प्रकाशक रामचन्द्रदास)
९७ सहजावाई का बानी	वेनवेन्डियर प्रस प्रयाग
९८ साहित्य रत्नावली	किशोरी नरण अलि
९९ सिद्धांत रत्नावली	निम्गाक नाथ मन्त्र
१०० सिद्ध साहित्य	डा० धमवीर भारती
१०१ सीताराम नक्षत्रिण वरुण	प्रमसखी
१०२ सुन्दर ग्रन्थावली	पुरोहित हरनारायण नर्म

१०३	सदक-वाणो	मवक जी
१०४	मूफीमत श्रीर हिनो माहित्य	डा० विमल कुमार जन
१०५	मूफीमत मापना श्रीर साहित्य	रामपूजन निवारी
१०६	मूर श्रीर उनका माहित्य	डा० हरवतातान शर्मा
१०७	मूर की भाषा	डॉ० मलयद्व
१०८	मूर निगण	द्वारिकाशम पारित्व प्रभूत्यान मातन
१०९	मूरपूव ब्रजभाषा-काव्य	डा० गिनप्रमाण मिह
११०	मूरभागर	मूरणाम
१११	मूर माहित्य	डा० हजारा प्रमाण द्विवि
११२	मूर-मोहन	डॉ० मुनीराम शर्मा साम
११३	मोमनाथ रनावना	मामनाथ
११४	मन काव्य	परगुगम चतुर्वेदी
११५	स्फुट वाणी	श्रित हरियश
११६	स्वामा हरिणाम धमिनन्तन प्रथ	स० छयीनवल्लभ गाम्बामा
११७	हित श्रीरामा	हितरिवग
११८	हिना श्रीर वनड म नक्ति घाणानन वा तुननात्मक धष्यया	डॉ० हिरण्मय
११९	हिना श्रीर बगारा क धष्यव कवि (१६ वागवी)	डॉ० रत्नकुमारी
१२०	हिना काव्य म धष्याति	डॉ० गमारचन्द्र
१२१	हिनी काव्य म शृगाण परम्परा श्रीर महारवि बिहारा	डॉ० गणरति चन्द्र गुज
१२२	हिना-माहित्य [श्रियाय भाग]	डॉ० पारद्व शर्मा (गपाच)
१२३		डॉ० हजारा प्रमाण श्रिवी
१२४	हिनी-माहित्य का वृहत् रुणाम (पठ भाग)	डॉ० नगे
१२५	हिना-माहित्य का वृहत् रुणाम (प्र० भाग)	डॉ० गत्रवता पारद्व
१२६	हिना-माहित्य का वृमिता	डॉ० हजारा प्रमाण श्रिवी

१२७ हिन्दी साहित्य का	१०० घाटवर्मा (संग्रह)
१२८ हिन्दी साहित्य का इतिहास	भावाय रामनाथ गुप्त
१२९ हृदय सवस्व	योगी शक्ति (सं० एव प्रकाशित नृसिंहचन्द्र मिश्र)

### अप्रकाशित हिन्दी ग्रन्थ

- १ अन्तर्गत अन्तर्गत की वाणी (बाबा तुलसीदास बाबा योगीदास का रूप  
नान जो स बुद्ध गामग्री प्राप्त)
- २ अष्टाचार्यों की वाणी (डा० गणेश बिहारी मास्वामी क संग्रह म)  
विशारी शक्ति की वाणी
- ३ विनोददास का वाणी (बाबा कृष्णदास क संग्रह स)
- ४ मुनामलान कृत अष्टक (गा० हित रूपनाथ)
- ५ गौतमीय तंत्र (गा० ग० वि० गा० क संग्रह म)
- ६ निम्बाक सम्प्रदाय और उसका  
हिन्दी कृष्ण भक्त कवि (डा० नारायण दत्त गर्मा)
- ७ पीताम्बर देव की वाणी (गा० ग० वि० गा० क संग्रह स)
- ८ रस कदम्ब धूडामणि ग्रन्थ रसिकदास (बाबा कृष्णदास क संग्रह स)
- ९ रसिकदास का अष्टक (गा० रूपलाल क संग्रह स)
- १० रसिक विलास सानुचरण दास (बाबा कृष्णदास के संग्रह स)
- ११ रस रत्नाकर हितरूपलाल (गा० ललिता चरण क संग्रह म)
- १२ कृष्णवन गतक भगवत् मुक्ति (डा० श० वि० गा०)
- १३ बृहदुत्सव मणिमान रूपरसिकदेव (ब्रजवल्लभशरण वंशात्ताचाय के  
संग्रह से)
- १४ स्वामी हरिदास जी का संग्रह  
और उसका वाणी साहित्य — डा० गापानदत्त गर्मा
- १५ सौन्दर्यता — रसिकदास (बाबा वंशीदास क सौजन्य स)
- १६ हिन्दी कृष्ण भक्ति-भाष्य म संगी भाष्य — गणेशबिहारी मास्वामी
- १७ श्री कृष्णदास जा भावुक के कतिपय पत्र मास्वामी ललिताचरण जी से  
प्राप्त हुए ।
- १८ रसिक अतिरिक्त कुछ पुस्तक पत्र कुछ पुस्तकानया के संग्रह से भी  
प्राप्त हुए ।
- १९ भक्तवर नागरीदास— इनके वाक्य विकास से संबंधित प्रभावा और  
प्रतिनियोगी का एक अध्ययन ।



२ अप्रची प्रथ

- १ एलिगरी आफ लव सी० एस० लविम
- २ भान रिलिजन भावम एण्ड  
एगेल्स मांम्बा पतिवगान
- ३ आन्वधार रिलिजम बल्डस डा० शनिभूपगताम गुप्त
- ४ आस्पवत्स आफ मक्ति वे० सी० वरदाचारी (१९५६)
- ५ इडियन साधूज जा० एस० पुर्वे
- ६ ए काप्पीहिसव हिस्ट्री आफ  
इडिया भाग २ सपात्र—ब० ए० एन० शास्त्री
- ७ ए जनरन इण्ट्रोडक्शन टु  
सांकोणनानिसिम फायर
- ८ एनसाइक्लोपीडिया आफ रिलि  
जन एड एथिकम भाग १२
- ९ ऐन आउटलाइन आफ रिलि  
जस निटरचर आफ इन्डिया—जे० एन० फुडर
- १० इन्धटिक एवगपारियस इन  
रिलिजन गडिस मक् प्रगर
- ११ ए हिस्ट्री आफ इडियन  
फिनासरी एस० एन० दामगुप्त (१९५५)
- १२ मिम्पमज आफ मडीवन  
इन्डियन कल्चर यूयुफ हुसन
- १३ चतय भूयमण्ट एम० टी० कनडी
- १४ टवनयमट आफ इन्डू  
आन्वनाप्रापी जे० एन० बनजी
- १५ इन्डारियम करान एम० निवयन
- १६ इन्डरियन मिम्बम एफ० एच० टविम
- १७ इन्डियन चतय मटजिया  
कांफ बगान मणीन माहन बाग कनकशा मुनि०  
(१९५०)
- १८ इन्डियन एड हाट ऑर लव— एम० मी० डार्मी (फवर एड फवर  
सन्त)
- १९ इन्डियन ऑर इन्डियन धार ए निवयन
- २० इन्डियन ऑर रिलिजन  
एवगपारियस विनियम जम्भ

- २१ मि साइकॉनाजी आफ रिनि  
जस मिस्टीसिजम जे० एच० ल्यूवा
- २२ पायवेज दु गाड इन हिन्दी  
लिटरेचर आ० डी० रानडे
- २३ क्रान एण्ड सासांगी डेनिस डि म्जमा (फवर एण्ड फवर  
सन्त)
- २४ फाउडेगन आफ करक्टर ए० एफ० सण्ड
- २५ बँगाली लिटरेचर जे० सी० घाय (आकमफोड सन्त)
- २६ भक्ति-कल्ट इन एंग्लिण्ड इडिया वी० वे० गोस्वामी
- २७ मिस्टीसिजम इन महाराष्ट्र आर० डी० रानाडे
- २८ मटिरियल्स फॉर मि स्टडी  
आफ मि अर्ली हिस्ट्री आफ मि  
वर्णव सक्त हेमचन्द्र रायचौधरी
- २९ रिलिजस काशसनम जे० बी० प्रट
- ३ एसज आन मि रिलिजम सक्तस  
आफ हिंदूज एच० एच विल्सन
- ३१ लिटररी हिस्ट्री आफ मि  
ग्रस आर० ए निकल्सन
- ३२ वर्णव फथ एड मूवमट एस० वे० डे०
- ३३ वर्णाविज्ञम गविम एण्ड  
माइनर रिलिजस सिस्टम्स डा० आर० जी० भडारकर
- ३४ स्टडीज इन परशियन लिट  
रेचर हादी हसन
- ३५ सूफीजम ए० जे० आरबेरी
- ३६ हिंदूइजम एड बुद्धिजम चार्ल्स इलियट
- ३७ हिन्दूइजम थू मि एजेज डी० एस० शर्मा

### ३ सस्कृत ग्रन्थ

- १ अणुमाध्य बलनभाचाप
- २ अत करणप्रबोध कवि कणपूर
- ३ अलकार-कौस्तुभ ऋग्वेद
- ४ अहिबुध्न्यसहिता अमोलक राम, शास्त्री
- ५ आचाप-स्तव माना

६ चञ्चल-नीलमणि	रूप गोस्वामी
७ वृष्ण कर्णामृत	लीलागुण
- काव्यप्रकाश	प्राचाय मम्मट (डा० सत्यव्रत सिंह का अनुवाक)
८ गीत गाविन्द	जयदेव
१० तत्त्वाय-नीप निणय	श्रीवल्लभभाचाय
११ दारूपक	घनञ्जय (डा० गाविन्द त्रिगुणायत का अनुवाक साहित्य निबन्धन बानपुर)
१२ दशमनाकी	निम्बार्काचाय
१३ नारद भक्ति-सूत्र	गीता प्रस गारगपुर
१४ पद्म-पुराण	
१५ पद्मावली	सम्पाक रूप गास्वामी (वृत्तायन)
१६ प्रमेय रत्नावली	श्री बन्धु विद्याभूषण मसूत साहित्य परिषद बनकता । मन् १६०७
१७ ब्रह्मसहिता	गौडीयमत मद्राम
१८ भक्ति द्विष्य निरूपणम्	गोस्वामी हरिराय
१९ भगवद् भक्ति-रमायन	मधुसूदन सरस्वती (प्र० साह ग व विद्यालय वाराणसी मन् १६५०)
२० हरिभक्ति रमाष्टत मिथु	रूप गाम्बामा
२१ भक्ति रम-नरगिणा	नारायण भट्ट
२२ रम-गगाधर	पण्डितराज जगन्नाथ
२३ सप्तु भागवतामृत	रूप गास्वामी
२४ विष्वक्भूषामणि	गवराचाय
२५ विष्णुपुराण	
२६ बृहदारण्यकोपनिषद्	
२७ वृष्णवभक्ता-त्रभास्कर	रामानन्द
२८ शिवपुराण	
२९ मुद्गात मातष्ट	गाम्बामी गिरधर जो
३० श्री दधीभागवन्	
३१ धा राधा सिद्धातम्	महामा वगा धनि
३२ श्री स्नात्र रत्न	समुताचाय
३३ पञ्च-तन्त्र	जीवगाम्बामी (प्रकाशक श्यामलान गोस्वामी बनकता)

३४	पोडण ग्रन्थ	बल्लभाचार्य (भट्ट रमानाथ शर्मा तथा कल्याण सतनाणी ग्रन्थ)
३५	साहित्य-संग्रह	श्री विश्वनाथ कविराज
६	सुवाधिनी भाष्य	श्री बल्लभाचार्य
३७	सुन्दर मणि सङ्ग्रह	श्री मधुराचार्य
३८	हनुमत्सन्निता	
३९	हरिराय वागमुक्तावली	प्रकाशक पुष्टिमार्गीय पुस्तकालय नडियाड
४	श्री राम-सत्त्व प्रकाश	श्री मधुराचार्य
४१	विशिष्टाद्वैतवाण	स श्री० टी तानाचार्य
४२	रामनवरत्न सार सग्रह	श्री रामचरणानन्द

### पत्र पत्रिकाएँ

- १ आलोचना
- २ कल्पना
- ३ कल्याण
- ४ नागरी प्रचारिणी पत्रिका
- ५ भारतीय साहित्य
- ६ मडारकर प्रारियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट जनल
- ७ व्रज भारती
- ८ बल्लभभीय सुधा पत्रिका
- ९ श्री सर्वेस्वर
- १० सम्मेवन पत्रिका
- ११ हिन्दी अनुशीलन एव ग्रन्थ लोज रिपाट स तथा विवरण इत्यादि ।

